हिन्दी पुस्तक एजेन्सी माला सं० २३

सन् १८५७ के
गदरका इतिहास



लेखक—

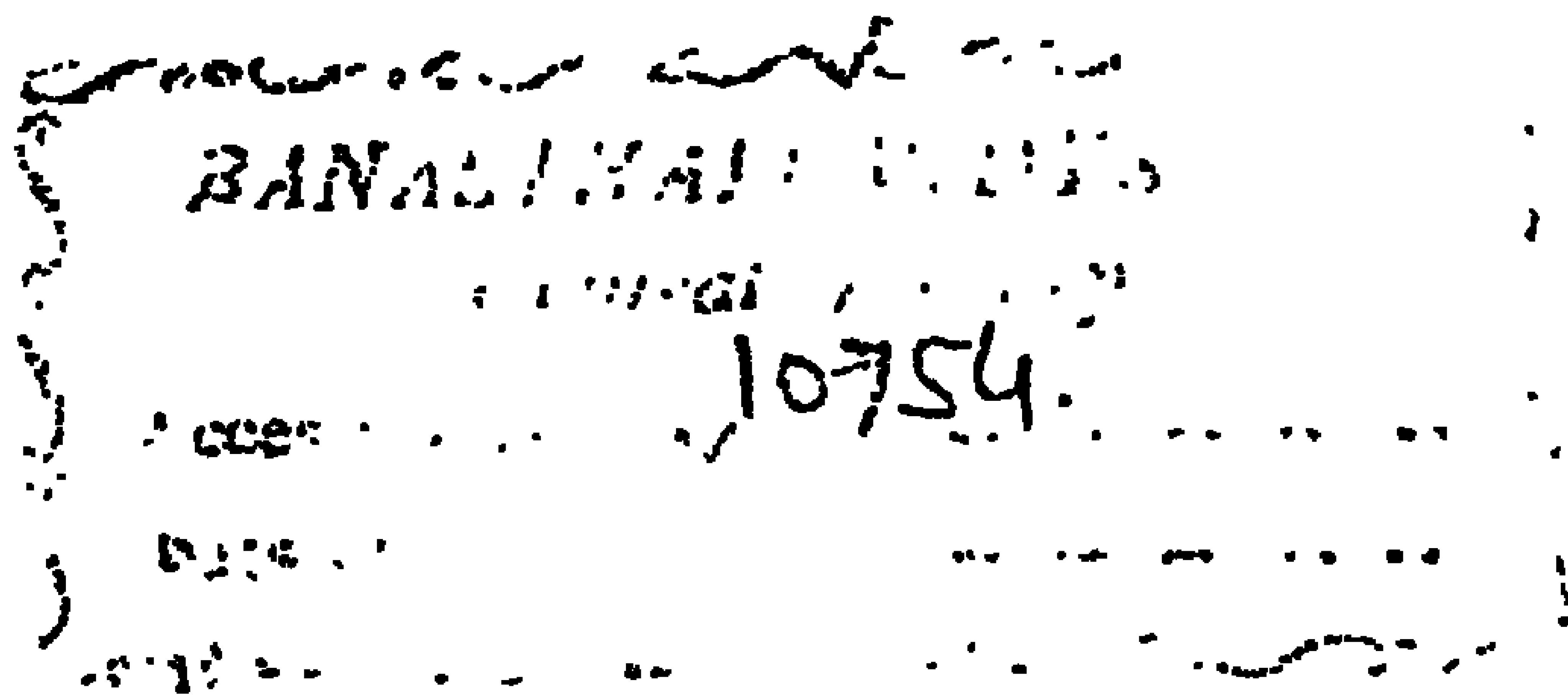
शिवनारायण द्विवेदी।

हिन्दी पुस्तक एजेन्सी
१२६, हरिसन रोड, कलकत्ता

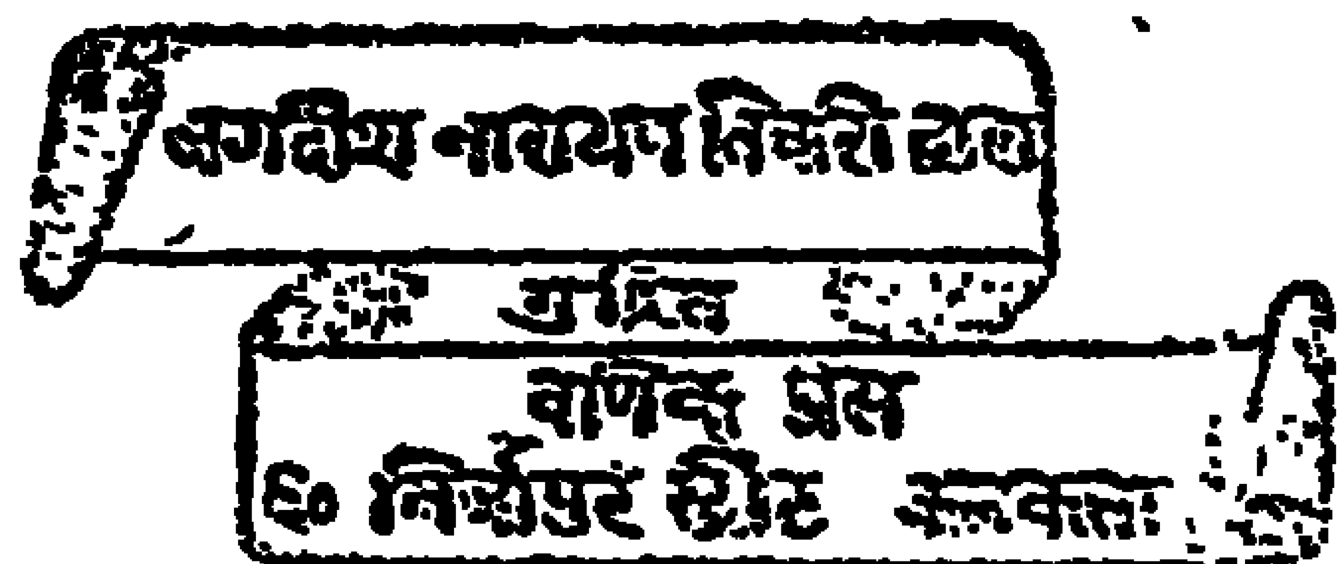
प्रथम बार] आश्विन १९७९ [मूल्य ३॥)



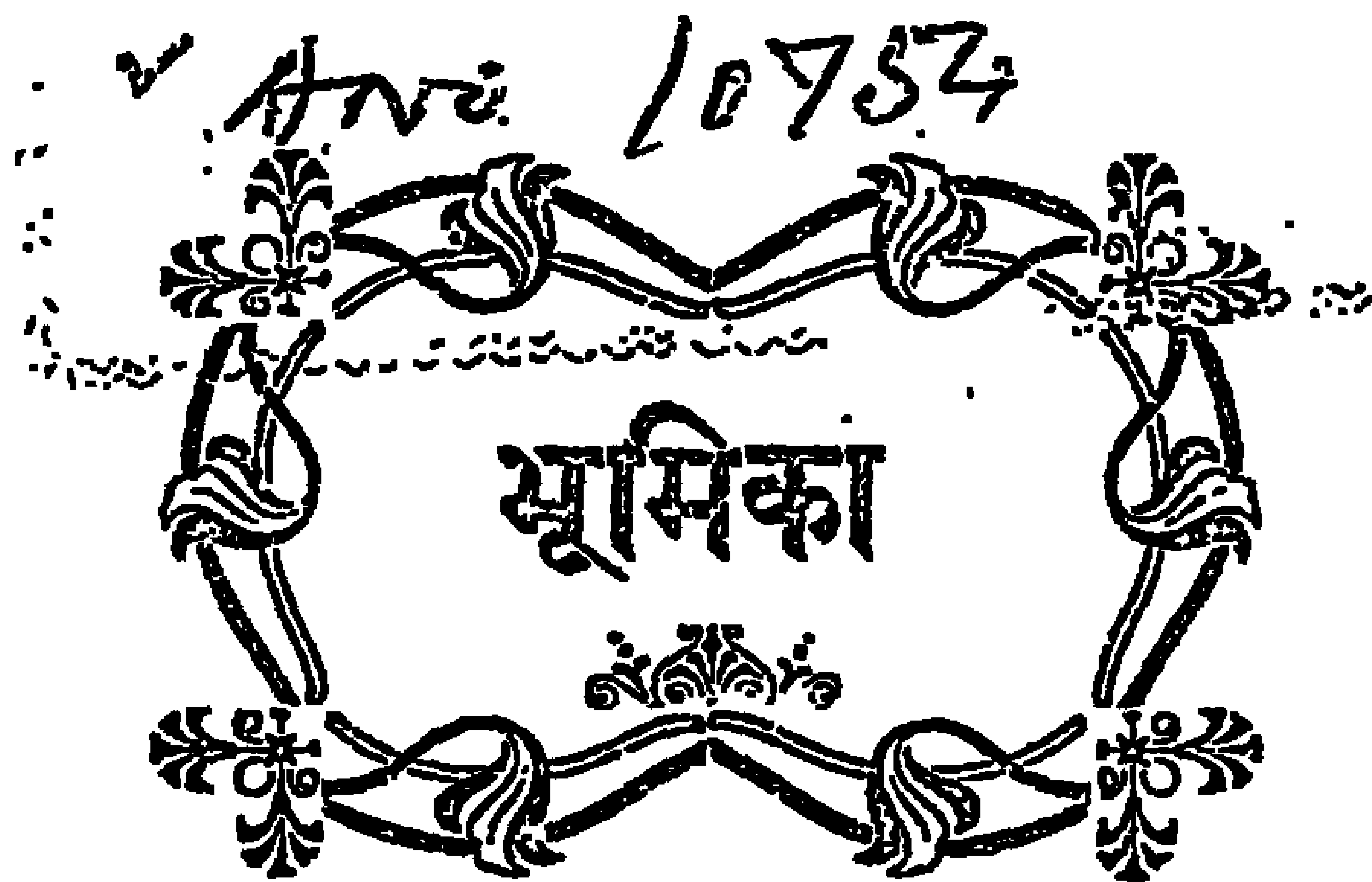
प्रकाशक
बैजनाथ केडिया
प्रोप्राइटर
हिन्दी पुस्तक एजेंसी
१२६, हरिसन रोड
कलकत्ता



BANA
10754.



जगदीश नारायण तिवारी द्वारा
मुद्रित
वणिक् प्रेस
कलकत्ता



ग़दर, वर्त्तमान भारतकी प्रधान घटनाओंमेंसे एक प्रसिद्ध घटना है। अंग्रेज़ी शासन ग़दरके बादसे ही मजबूत हुआ। कम्पनीका राज्य लुप्त होनेपर पार्लमेंट और महारानी विक्टोरियाने शासन अपने हाथमें लिया। उस ग़दरके क्या क्या कारण थे और फिर कहाँ कहाँ क्या क्या हुआ इसका इस ग्रन्थके चारों भागोंमें यथासंभव संक्षेपसे वर्णन किया गया है। उन कारणों और घटनाओंका वर्णन करना यहाँ उचित नहीं।

इतिहास उसे कहते हैं जो निष्पक्ष होकर लिखा जाय। जिसमें किसी पक्षको विशेष रूपसे पुष्ट किया जाय, उसे इतिहास नहीं कह सकते। साथ ही जिसकी भाषा नियमित हो, वर्णनके शब्द आडम्बरपूर्ण न हों, सचाईकी खोज की गई हो, न्यायका सदा पक्ष लिया गया हो, उसे इतिहास कहते हैं। यथासम्भव इतिहास शब्दकी इस व्याख्याको इस पुस्तकमें पूरा करनेका यत्न किया गया है। सफलता कहाँतक हुई यह पाठक ही निर्णय करेंगे।

हिन्दी भाषामें ऐसे ग्रन्थकी आवश्यकता समझकर, ही इसे

लिखा गया है। जिन महानुभाव इतिहासलेखकोंके ग्रन्थोंकी सहायतासे यह पुस्तक तैयार हुई है वे इस लेखकके धन्यवाद-पात्र हैं। स्थान स्थानपर उनके प्रति कृतज्ञता स्वीकार की गई है। वे ये हैं:—

1. Kaye's Sepoy War (three Vols,).

सिपाही युद्धेर इतिहास (बंगला) श्रीरजनीकान्त गुप्त ।

3. Martin's Indian Empire, (three Vols,)

4. Malleson's Indian Mutiny of 1857. (two Vols,)

5. Arnold's India under Dalhousie and Canning.

ये ग्रन्थ प्रामाणिक हैं। उक्त चारों अंग्रेज़ लेखक ग़दरके समयमें थे। के साहबने सरकारी कागज़ पत्र देखकर और हर जगह जांच करके बड़ी निष्पक्षतासे वर्णन किया है और कर्नल मार्टिन तथा मालेसन सेनाओंमें ही थे। श्रीयुत रजनीकान्त गुप्तने बड़े परिश्रमसे उक्त ग्रन्थ लिखा है। मैंने इस पुस्तकमें आपके ग्रन्थके आधारपर ही सब प्रमाण दिये हैं। बहुत स्थानोंपर आपकी रोचक भाषाका अनुकरण भी किया है।

इस प्रकार, यथासम्भव इतिहास शब्दकी व्याख्याके भीतर रहकर यह ग्रन्थ तैयार किया गया है। यह कैसा हुआ और कितनी सफलता प्राप्त हुई, यह हिन्दी भाषा भाषियोंपर छोड़ता हूं। मेरा काम, मातृभाषाकी सेवा करनेका था, मैंने वह इसके द्वारा पूर्ण करनेका यत्न किया है।

दिल्ली,
जून, १९२२ } शिवनारायण द्विवेदी

सन् १८५७ के

ग़दरका इतिहास

प्रथम भाग

सन् १८५७

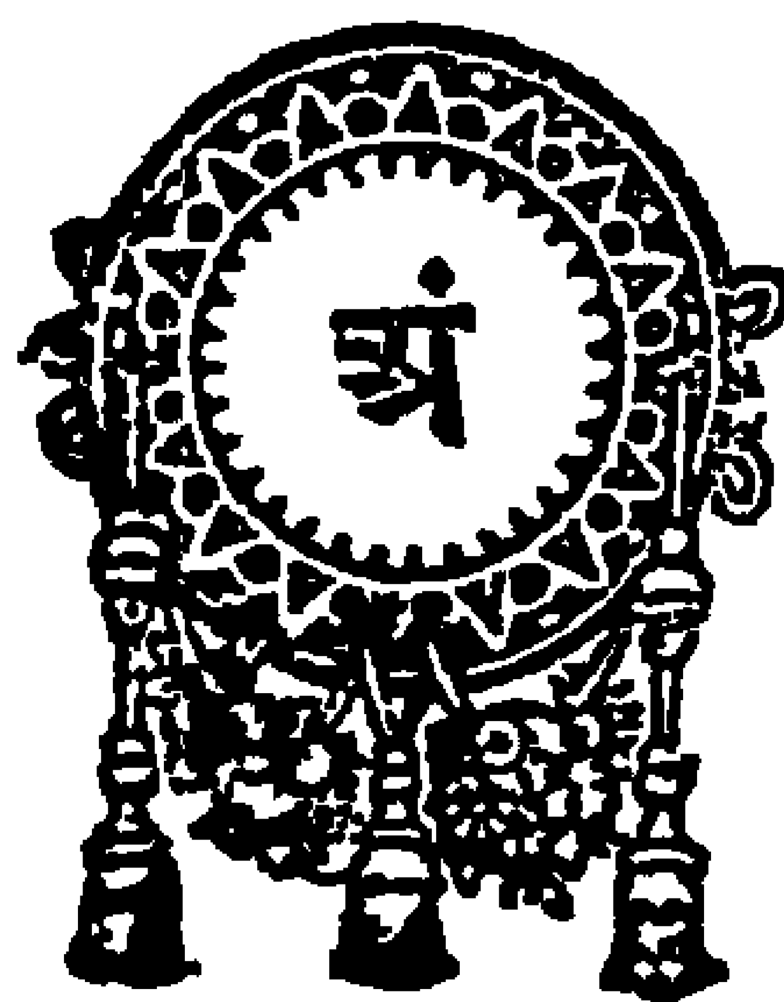
के

ग़दरका इतिहास

प्रथम खण्ड

पहला अध्याय

[ग़दरके पूर्व कारण--लार्ड डलहौज़ीका शासन--प्रथम सिक्ख-युद्ध--कसूरकी सन्धि--राजा लालसिंहका पतन--बैरावलकी सन्धि--प्रतिनिधि शासनप्रणाली--महारानी जिन्दांका निर्वासन--मुलतान-विद्रोह--द्वितीय सिक्ख युद्ध--पंजाबपर अंग्रेज़ोंका अधिकार ।]



अंग्रेज़ी शासनमें सन् १८५७ का ग़दर सबसे बड़ी ऐतिहासिक घटना है। अंग्रेज़ोंपर इस ज़मानेके बराबर कभी तबाही नहीं आयी और पिछले दो सौ वर्षके इतिहासमें, भारतमें, ऐसी

देशव्यापी अशान्ति नहीं फैली। यह इस अशान्तिका शृंखलाबद्ध इतिहास है। अंग्रेज़ शासकोंके द्वारा जिस तरहकी घटनाएं हुईं उनका परिणाम क्या होना चाहिए था, यही इस पहले भागमें लिखा जायगा। कहा जाता है कि, इस देशमें अंग्रेज़ोंपर जो अत्याचार हुए उनमें सबसे पहला, १२३ अंग्रेज़ोंको एक छोटी सी कोठरीमें क़ैद करना है। इसमें वे विना पानीके तड़प तड़प कर रातमें मर गये, आठ या नौ बाक़ी बचे। लार्ड कर्ज़नने इस घटनाकी यादगार भी बनवा दी है। पर अबकी ऐतिहासिक खोजसे पता लगा है कि यह घटना असत्य है—उस ज़मानेके एक अंग्रेज़ लेखकने इसे तिलका ताल बनानेकी कोशिश की थी। ठीक इस घटनाके सौ बरस बाद, सन् ५७ का ग़दर हुआ। इस ग़दरका इतिहास बड़ा करुणाजनक बतलाया जाता है। भारतवासियोंके सिर जितना कलंक मढ़ा जाता है वह कहां तक ठीक है यह हम इसके इतिहाससे देखेंगे। इतिहाससे पहले इतिहासका कारण देखना आवश्यक है। क्या कारण हुए जिनसे यह भयानक लहर उठ खड़ी हुई? क्या कारण थे कि जिनसे भारतवासी अंग्रेज़ी शासनको उखाड़ फेंकनेके लिए पागल हो गये थे? जिस देशके निवासी राजाको देवताके समान मानते हैं उन्होंने राजशक्तिके नाशके लिए क्यों कमर कसी? पहले इस कारणका मालूम करना आवश्यक है। इसके बाद ग़दरकी घटनाका विवरण होगा।

आठ बरसकी गवर्नरीके बाद लार्ड डलहौज़ी इंग्लैंड वापिस चले

गये। इन आठ बरसोंमें हिन्दुस्तानकी हालत बहुत बदल गयी। लार्ड वेलज़लीके ज़मानेके अतिरिक्त और किसी शासकके समयमें इतना परिवर्तन नहीं हुआ। एक ओर रेल और तारका विस्तार बढ़ कर एक प्रान्तको दूसरे प्रान्तसे जोड़ रहा था, दूसरी ओर अपूर्व राजनीतिक कौशल एक राज्यके बाद दूसरेको ब्रिटिश जातिके अधीन कर रहा था। लार्ड डलहौज़ीके ज़मानेमें पंजाब, अयोध्या आदि स्वाधीन राज्योंपर अंग्रेज़ी झंडा लहराया। जिस दिन लार्ड डलहौज़ी इस देशमें आये, उन्होंने इन प्रान्तोंको स्वाधीन देखा था और जिस दिन वापिस गये उस दिन अंग्रेज़ी अमलदारीमें शामिल कर गये थे।

सन् १८५६

सोब्राहनकी लड़ाईमें प्रसिद्ध वीर लार्ड हार्डिंजने सिक्खोंको हराया। अंग्रेज़ अफ़सरोंकी चतुराई और सिक्ख सेनापतियोंके नीच विश्वासघातसे सिक्खोंकी हार हुई *। पर इससे भी

---

* सोब्राहन नामक स्थानमें सिक्खोंकी अंग्रेज़ोंसे सबसे पहली लड़ाई हुई। सिक्खोंके सेनापति सर्दार तेजसिंह और राजा लालसिंह बेईमानीसे पहले ही अंग्रेज़ोंसे मिल चुके थे। इस कारण, फ़ीरोज़शहरके नज़दीक, अपनी फ़ौज लाकर लालसिंह लड़ाई होनेसे पहले ही भाग गया। इसी समय २५ हजार फ़ौज लेकर तेजसिंह मौके पर आया। अङ्गरेजी फ़ौज थकी हुई पड़ी थी—अगर वह आक्रमण करता तो अङ्गरेज़ी फ़ौज मुक़ाबलेपर न टिकती पर उसने आक्रमण ही न किया। लालसिंहको उसकी फ़ौजने हमला करनेके लिए बहुत जोश दिलाया था पर वह मैदानमें ठहरा ही नहीं। सिक्ख सेनापतियोंके इस विश्वासघातके कारण सिक्खोंकी हार हुई। सन् १८४६ के फ़रवरी मासमें लालसिंहने जो चिट्ठी पत्री कप्तान लारेंसके

सिक्ख राज्योंकी स्वाधीनताका नाश नहीं हुआ। सिक्खोंको सुलहकी शर्तोंमें बाँध कर लार्ड हार्डिंजने महाराज रणजीत सिंहके राज्यको स्वाधीन रहने दिया। ९ मार्चको मियांमीरके मैदानमें यह सुलह हुई *। इस सुलहसे सतलज और रावीके बीचकी भूमि अंग्रेज़ी अमलदारीमें आगयी। इसके विरुद्ध जो खालसा सेनाएं खड़ी हुईं उनके हथियार ले लिये गये और सेनाओंकी संख्या कम करके २०००० पैदल और १२००० सवार कर दिये गये। इसके अलावा लार्ड हार्डिंजने लड़ाईके ख़र्चके डेढ़ करोड़ रुपये सिक्खोंसे लिये †। महाराज रणजीत सिंह अपनी मौतके समय ख़जानेमें बारह करोड़ रुपये छोड़ गये थे, पर सिक्ख सर्दारोंके अपव्ययके कारण आधा करोड़ बाक़ी बचा था। हार्डिंजने लड़ाईके तावानमें यह आधा करोड़ नक़द लेकर बाक़ी एक करोड़के लिये काश्मीर ले लिया। महाराज रणजीत सिंहके प्रियपात्र—जम्बूके शासन-कर्त्ता—राजा गोपाल सिंह इस समय लाहौर दर्बारके प्रधान मंत्री थे। इन्होंने एक करोड़ रुपये देकर हार्डिंजसे काश्मीर मोल

पास कलकत्ते भेजे थे उससे साफ मालूम हो गया था कि सिक्ख सर्दार पहले ही मिल चुके थे। Cunningham's History of the Sikhs, P. 268—299. Comp, Macgregor's History of the Sikhs Vol II P. 80—81. Calcutta Review for June 1849. P. 550. Edwards] Arold Dalhousies Administration of British India Vol. I. P. 45.

* Arnold's Administration of Dalhosie Vol I. P. 46.

† Cunnighm's History of the Sikhs, Appendix XXXIV, P. 428-433.

ले लिया। इस प्रकार महाराज रणजीत सिंहके बड़े भारी राज्यका पतन शुरू हुआ *।

जिस समय यह कसूरकी सुलह हुई और काश्मीर बेचा गया राज्यका वारिस, महाराज रणजीत सिंहका बेटा, दिलीपसिंह नाबालिग़ था। उस समय देश और अंग्रेज़ोंकी जैसी दशा थी उससे एक दूसरे रणजीत सिंहकी ज़रूरत थी, पर पंजाबमें वैसा तेजस्वी और बुद्धिमान् दूसरा आदमी ही पैदा नहीं हुआ था। दिलीप सिंहकी माता महारानी ज़िन्दांके हाथमें शासनकी बाग-डोर थी †। हिन्दुस्तानके इतिहासमें वीरनारियोंकी कमी नहीं है। महाभारतके लेखक वेदव्याससे लगाकर राजस्थानके लेखक कर्नल टाड तकने भारतकी महिलाओंका गुणगान किया है। भारतकी स्त्रियां जैसी तेजस्विनी थीं वैसी ही समय समयपर वे अपनी शासनकी क्षमता भी दिखाती थीं। ‡ रणजीत सिंहकी रानी ज़िन्दां भी भारतकी वीरनारियोंमेंसे एक थी। अबला होकर भी ज़िन्दां तेजस्विनी थी और जन्मसे पराधीन होकर भी शासक होने योग्य थी। ऐसी योग्य स्त्रीके हाथमें शासन होते हुए भी राजा गुलाब सिंहके समान नीच विश्वासघातक उसका प्रधान मंत्री था।

---

* Arnold's Administration of Dalhousie, Vol. I P. 47.

† कई इतिहासलेखकोंने महारानी जिन्दांका नाम चन्दा लिखा है।

‡ Calcutta Review, 1869 No. 65. P. 39.

राजा लालसिंहमें प्रधान मंत्रीका कुछ भी गुण न था। दरबारमें जैसे वह सबकी आंखका कांटा था वैसे ही अपने मित्रोंको भी वह अपना नहीं बना सकता था। इसमें शक नहीं कि एक छोटेसे वंश और दरिद्र मातापिताके घर पैदा होकर लालसिंह इतना ऊपर चढ़ा था, पर एक योग्य मनुष्यमें जिन गुणोंका होना ज़रूरी है वे उसमें न थे। वह लंबे चौड़े डीलडौलका खूबसूरत जवान था पर यह सुन्दरता उसके हृदयमें प्रवेश न कर सकी थी। हृदय उसका उतना ही बुरा और बदशकल था। उसका शासन सिर्फ़ घरकी औरतपर था वह अपने खुशामदियोंके घरभरका इन्तज़ाम कर सकता था—बहादुरीका उसमें नाम भी न था। लालसिंह जैसा आदमी वीर सिक्खोंका नेता बननेके सर्वथा अयोग्य था। इसीके विश्वासघात और बेईमानीसे महाराज रणजीत सिंहका विशाल राज्य टुकड़े टुकड़े हो गया और इसीकी नीचतासे थोड़ीसी अंग्रेज़ी फौजसे वीर सिक्ख सेना हार गयी। कसूरकी सुलहके बाद, ऐसे क्षीणबुद्धि, क्षीणबल और नीचहृदय वाले आदमीके हाथमें, पंजाबके शासनका भार दिया गया। ऐसे नीच आदमीके हाथमें वीर पंजाब अधिक दिन न रहा। एक करोड़में कश्मीर ख़रीद कर गुलाबसिंह उसका क़ब्ज़ा लेनेके लिए गया, उस समय लाहौर दर्बारकी तरफसे शेख़ इमामुद्दीन कश्मीरका शासक था। लालसिंहने इमामुद्दीनके साथ मिलकर, ब्रिटिश गवर्नमेंटके खिलाफ़ जाल रच कर, गुलाबसिंहका रास्ता रोका। रेज़ीडेंट हेनरी लारैंस अपने किसी कामको

अधूरा न छोड़ते थे। गुलाबसिंहको क़ब्ज़ा देनेमें मुख़ालिफ देख कर लारेंस दस हज़ार सिक्ख और थोड़ीसी गोरी फौज लेकर कश्मीर पहुँचे। * लारेंसकी ताक़त देख कर इमामुद्दीनका सिर नीचा हुआ, उसने गुलाबसिंहको कश्मीरका कब्ज़ा दे दिया। मंत्री लालसिंहने गुलाबसिंहका रास्ता रोकनेके लिए जो पत्र भेजा था वह हेनरी लारेंसके सामने पेश कर दिया। ब्रिटिश रेज़ीडेंटको लालसिंहका यह भाव बहुत बुरा लगा; इस विश्वास-घातकका विचार करनेके लिए उन्होंने कलकत्तेके बड़े बड़े अंग्रेज़ राजनीतिज्ञोंको बुलाकर एक कमीशन बैठाया †। कमीशनने जो फैसला दिया उसके अनुसार लालसिंहको पेंशन देकर आगरेमें रक्खा गया। दिसम्बरमें लालसिंहको यह देशनिकाला मिला'। इस प्रकार इस विश्वासघातीके ज़हरसे पंजाबका पीछा छूटा। इसने अपने देश और अंग्रेज़ दोनोंसे विश्वासघात किया।

राजा लालसिंहके पतनके बाद महाराज रणजीत सिंहके राज्यकी रक्षाके लिए पञ्जाब दर्बारसे ब्रिटिश गवर्नमेंटकी फिर एक सन्धि हुई। यह सन्धि बैरावल नामक स्थानपर हुई थी इसलिए यह बैरावलकी सन्धिके नामसे यह प्रसिद्ध है। इस सन्धिके लिए लाहौर दर्बारसे कई योग्य आदमी चुने गये थे

* Life of Sir Henry Lawrence, Vol II P. 73.

† लालसिंहके विचारके लिये जो कमीशन बैठा थी उसमें सब अंग्रेज थे।

Lifl of Sir Henry Lawrence, Vol. I1 P. 82

Comp-Edwardes, A year on the Punjab Vol I. P. 10.

और हेनरी लारैंस इनके सभापति थे। दिलीपसिंह सन् १८५४ की ४ सितम्बरको बालिग़ होजाते, यह सभा इनके बालिग़ होनेके दिनतकके शासनकी सन्धिके लिए विचार करने बैठी *। सभामें निर्णय हुआ कि दिलीपसिंह जबतक बालिग़ न हों तब तक ब्रिटिश गवर्नमेंट राज्यकी हिफाज़तके लिए ट्रस्टीके तौरपर पञ्जाबका शासन-भार ले। महाराज रणजीत सिंहने जिस राज्यको अपनी भुजाओंसे स्थापित किया उसे वैसेका वैसे बनाये रखनेके लिए लार्ड हार्डिंजने यही व्यवस्था की। इतना बड़ा राज्य हाथमें आजाने पर भी हार्डिंजने यह न चाहा कि इसे अंग्रेज़ी अमलदारीमें शामिल कर लें बल्कि उन्होंने इस राज्य-, की सुव्यवस्थाकी ओर ध्यान दिया। वे सिक्खोंकी चञ्चल प्रकृतिको समझ चुके थे और इस बातको जान गये थे कि जबतक इनके सिरपर एक कड़ा हांथ न होगा तबतक यह शान्तिसे न रहेंगे। सुलहके अनुसार ब्रिटिश गवर्नमेंटके ट्रस्टी बननेसे हेनरी लारैंस पञ्जाबके कर्ता धर्ता हो गये। हेनरी लारैंस एक योग्य और वीर आदमी था, वह तेजस्वी और बुद्धिमान् था। लड़ाईके मैदानमें हेनरी लारैंसकी सूरत देखकर दुश्मन घबरा जाते थे।

सौभाग्यसे परमात्माने एक योग्य आदमीके हाथमें पञ्जाबका शासन-भार दिया। अपनी ज़िम्मेदारी अच्छी तरह समझ कर हेनरी लारैंसने काम शुरू किया। उसकी योग्यतासे फिर

* Cunningham's History of the Sikhs, Appendix XXXVII P. 337-442. Comp. Life of Sir Henry Vol II P. 90.

पञ्जावकी उन्नति होने लगी। इसी प्रकार शान्तिसे सन् १८४७ का वसन्तकाल बीत गया। जो खालसा सेनाएं एक दिन अशान्तिकी आग उछालती थीं वे शान्तिसे अपने दिन विताने लगीं। रेज़ीडेंटने अपने विज्ञापनमें प्रकाशित किया कि "जो खालसा सेनाएं एक दिन अंग्रेज़ी शासनके भयका कारण थीं वे शान्तिके साथ ज़मीन जोतती और आनन्दसे अपना समय बिताती हैं। "ऐसी दशामें भी पञ्जाबका रेज़ीडेंट अपने कर्त्तव्यसे शिथिल न था। वह और भी अधिक पञ्जावकी उन्नतिमें भाग ले रहा था और चारों ओर शान्तिकी व्यवस्था करनेमें लगा हुआ था।

सन् १८४७

महारानी ज़िन्दां मानवती, वीर नारी थी। वह इस बातको अच्छी तरह समझ चुकी थी कि मेरा राज्य सात समुद्र पारके विदेशियोंके पैरोंपर लोट रहा है। उसे यह सहन नहीं होता था कि परदेशी उसके राज्यपर शासन करें। ज़िन्दां समझ रही थी कि ब्रिटिश गवर्नमेंटके लोभी नयन पंजाबपर पड़ रहे हैं! इससे बहुत जल्दी यह राज्य ब्रिटिश सिंहके शिकार हो जायगा। उसका यह ख्याल बहुत कुछ सच होता दिखाई दिया। ब्रिटिश गवर्नमेंटने उसके प्यारे बेटे दिलीपसिंहको कठ-पुतली बनानेमें कोई कसर न रक्खी। परदेशियोंकी यह अनधिकार चर्चा वीरमाता ज़िन्दांसे सहन न हुई। बेईमान कह कर वह अंग्रेज़ जातिसे घृणा करने लगी। कोमल नारी-हृदय अपमानकी ज्वालासे काला विष उगलने लगा।

इस वीर नारीकी वीरताको खर्व करनेका रेज़ीडेंटने दृढ़ निश्चय किया। जो आग हृदय हृदय और रोम रोममें व्याप्त होकर अस्थिमज्जाको जलाती है उसकी गतिको कौन रोक सकता है? अपने स्वजन बन्धुओंसे अलग करके लोहेकी कोठरीमें उसे रखनेसे ही अमंगलसे रक्षा हो सकती है। रेज़ीडेंटने अमंगलसे बचनेके लिए अन्तमें यही उपाय किया। बिना क़ानून, बिना विचार, केवल शकपर आधार रख कर ब्रिटिश रेज़ीडेंटने महारानी ज़िन्दांको क़ैद किया। उसका भाई उसकी क़ैदका आज्ञापत्र लेकर महलमें उसके पास गया। ज़िन्दांने सिर झुकाकर इस कठोर और अपमानभरे दंडको ग्रहण किया। इस दंडके विरोधमें एक उफ़ भी उसके मुंहसे सुनाई न दी। अटल भावसे महाराज रणजीतसिंहकी पटरानी क़ैदके लिए तैयार हुई। मुसलमान-प्रधान क़स्बा शेख़ूपुरा इनका कारागार बना। १६ वीं अगस्तको यह वीरपत्नी और वीरमाता इस तुच्छ स्थानके तुच्छ जेलख़ानेमें गई *। विधाताने ज़िन्दांको अपार सुन्दरता दी थी, जैसा उसका रूप था वैसा ही उसका हृदय भी था। उसका हृदय कोमल था पर कड़ा भी था, वह सुन्दरी थी पर वीर भी थी। विपत्तिसे वह न घबराई, न डरी, वैसी ही धीर गम्भीर बनी रही। विदेशी लेखकोंने इस महारानीके चरित्रमें बड़ी बड़ी नीचताएं दिखाई हैं, बड़ी लालसा प्रकट की है। इसे बदनाम

* A General Proclamation of H. B. Edwards, Assistant to the Resident.—Life of Sir Henry Lawrence, vol II, P. 99.

करके सबकी सहानुभूति इससे हटा दी। विदेशी चित्रकारोंके हाथमें पड़कर इसका चित्र चाहे जितना भद्दा दिखाया गया हो पर इसकी धीरता, अटलता नारी समाजका गौरव है।

इस प्रकार जिन्दां राजपद और राजसम्मानसे च्युत होकर कारागारका अतिथि बनी। राजमाता और राजवनिताके इस अपमानसे इतिहासके पृष्ठ सदा काले रहेंगे। जो सर हेनरी लारेन्सकी सचाई तथा न्यायप्रियतासे परिचित हैं वे उसीके द्वारा जिन्दांकी क़ैदसे चकित हैं। ग़दरका इतिहास लिखनेवाले अंग्रेज लेखकोंने लिखा है कि जिन्दां गवर्नमेंटके ख़िलाफ षड्यन्त्र रच रही थी और हेनरी लारेंसको जानसे मरवानेका जाल उसने बनाया था *। पर लालसिंहको सज़ा देनेके लिए जैसे कमीशन बैठी थी, वैसे जिन्दांका विचार न हुआ। ब्रिटिश रेजीडेण्टने विना विचारे केवल शकपर दलीपसिंहकी माताको क़ैद कर दिया। जहां केवल शकपर काम हों उस राजनीति और शासक-को कोई भी भला कहनेके लिए तैयार नहीं। न्यायके द्वारा अच्छी तरह छानबीन करके अपराधी साबित होनेपर सज़ा देनी चाहिये—न्याय ही सभ्य देशकी सभ्यताका मूल है। पर इसमें किसीको एतराज़ हो ही नहीं सकता कि हेनरी लारेंसने जिन्दांके साथ अन्याय किया।

महारानी जिन्दांकी क़ैदके पहले तो यह मालूम हुआ कि

* Kayl, Sepoy War, Vol I, P. 16. Comp. Life Sir Henry Lawrence. Vol II. P. 98—100.

पंजाबमें अमन हो गयी, शान्ति हो गयी। इस तरह बिना किसी तरहकी गड़बड़ और अशांन्तिके सर्दीकी मौसम आयी और चली गयी। वसन्तकी मौसमके साथ साथ पंजाबकी शासनसमितिमें भी उलट फेर हुआ। हेनरी लारेंस कई बरस गर्म देशमें रहनेके कारण अस्वस्थ हो गये थे इसलिये स्वास्थ्य सुधारने वे शिमले चले गये। पर डाकृरने उन्हें इंग्लैण्ड वापिस जानेकी सलाह दी। सर फ्रेडरिक कारी नामक एक सिविलि-यनके हाथमें पंजाबका शासनभार देकर हेनरी लारेंस विलायत गये। इसी समय लार्ड डलहौज़ीके हाथमें भारतकी बागडोर देकर लार्ड हार्डिंज भी इंग्लैण्ड गये। भारतका शासन लार्ड डलहौज़ी और पंजाबका शासन सर फ्रेडरिक कारीके हाथ पड़ा। पर इस परिवर्त्तनसे भी पंजाबमें किसी प्रकारका भेद आता दिखाई न दिया। नया वर्ष आनन्दके साथ शुरू हुआ। पंजाबमें किसी प्रकारकी अशान्ति न होने पर भी एक कोनेपर विपत्तिका बादल उठा और देखते देखते वह आकाशमें फैल गया।

महाराज रणजीतसिंहने जबसे मुलतानपर कब्जा किया था तबसे यह क़ायदा बना दिया था कि लाहौर दर्बारसे एक शासक वहांके लिए नियत कर दिया जाय। सन् १८४४ में मुलतानका शासक सावनमल, दुश्मनके हाथसे मारा गया। बापके मारे जाने पर उसका बेटा मूलराज दीवान बना। लाहौर दरबारने मूलराजके ख़ज़ानेमें बहुत रुपया समझ कर ३० लाख रुपया उससे नज़रानेका मांगा। जान लारेंस (बादमें लार्ड) के मता-

नुसार अगर पं० ज्वालाप्रसाद और उस समयके मंत्री हीरासिंह ज़िन्दा रहते तो यह रुपया ठीक समयपर भुगत जाता पर इन दोनोंकी मौत हो जानेके कारण लाहौर दरबार इस प्रस्तावको अमलमें न ला सका* ।

मियांमीरी सन्धिके बाद लाहौर दरबारके मंत्री राजा लालसिंहने मूलराजसे यह रुपया अदा करनेके लिए एक छोटी सी सेना मुलतान भेजी थी । झंग नामक स्थानपर मूलराजकी सेनाने दरबारकी इस सेनाको पराजित किया † । लाहौरके रेज़ीडेंटने बीचमें पड़कर इस झगड़ेका निर्णय कर दिया । यह फैसला हुआ कि मूलराज झंग स्थानका अधिकार छोड़ दे और पहलेकी बाक़ीके बीस लाख रुपये मय नज़रानेके दरबारको दे । इस अवसरपर मूलराजने कुछ न कहा, बल्कि ब्रिटिश रेज़ीडेंटके निकट कृतज्ञता प्रकट की ‡ ।

इस फैसलेके बाद एक साल मूलराजने शान्तिके साथ विताया । इस शान्तिसे यह ख़याल हुआ कि लाहौर और मुलतानमें जो झगड़ा हो गया था वह ठंढा पड़ गया—अब भविष्यमें किसी तरहकी अशान्ति न होगी । पर मूलराजने जो सन्तोष

---

* Blue book, 1847—94, P. 88. Edwards, A Tear in the Punjab
§ सर जानके की लिखी "सिपाही संग्राम" पुस्तकमें यह घटना कुछ बदली हुई है । Korntill. Vol II. P, 38.

† Kayl, Sepoy War, Vol I. P. 18—19,

‡ Grounds of the consts Fundment in convicting Dewan Moolraj of Murder—Edwards, Punjab Frontier Vol II. P. 39—40.

दिखाया था वह बहुत जल्द शूल हो गया। लाहौर दरबारका फैसला उसे दुःख देने लगा। इस दुःखसे छूटनेके लिए उसने मुलतानकी दीवानी छोड़नेका इरादा किया।

नवम्बरमें मूलराजको समाचार मिला कि शीघ्र ही हेनरी लारेंस पंजाबसे विदा होंगे। इनसे मिलनेके इरादेसे वह लाहौर गया, पर ठीक समयपर न पहुँच सकनेके कारण रेज़ीडेंटसे वह न मिल सका। उस समयके रेज़ीडेंट जान लारेंससे मिलकर उसने अपने पदत्यागकी इच्छा प्रकट की। जान लारेंसने मूलराजको ऐसा न करनेकी सलाह दी। कुछ दिन बाद मूलराजने फिर उनसे भेंट करके अपना त्यागपत्र दिया। इस त्यागपत्रके दो कारण मालूम हुए थे। एक तो लाहौर दरबारने जो नये बन्दोबस्तके मुताबिक टैक्स बढ़ाया था वह, दूसरे दीवानकी कार्रवाइयोंकी अपील लाहौर दरबारमें होती थी इसलिए मूलराज शासन न कर सकता था। ख़ैर जो कुछ हो, इन्हीं कारणोंसे तंग आकर मूलराजने अपना त्यागपत्र लाहौर दरबारमें भेज दिया*। दरबारने त्यागपत्र मंजूर किया और एक सर्दार ख़ां सिंह नामक आदमीको उसकी जगह मुलतानका दीवान नियत किया। ख़ांसिंहको मुलतानके अधिकार दिलानेके लिये वेन्स अग्नर नामक एक अंग्रेज़ सिविलियन और बम्बई सैनिकदलका लेफ्टिनेंट एन्डर्सन पांच सौ सैनिक लेकर मुलतान गये।

* Evidence of Johan Lowerence on Moolraja's trial Edwards Punjab Frontier, Vol II. 42—44.

सर्दार खांसिंह जब दो अफसर और इस छोटीसी सेनाके साथ मुलतान पहुंचे तब मूलराजने किसी प्रकारका विद्वेष प्रकट, न होने दिया। बल्कि बड़े आदर सत्कारसे वह सबको किलेमें ले गया। वहाँ उसने नये दीवानके हाथमें अपने सब अधिकार दे दिये। इसके बाद जब सर्दार ख़ांसिंह अपनी छोटी फौजके साथ किलेसे वापिस आ रहे थे तब दोनों अंग्रेज कर्मचारी भयानक रूपसे आहत हुए। मूलराजने इस अचानक हमलेके विरोधमें कुछ न किया बल्कि घोड़ेपर बैठ कर वह अपने बागकी ओर चला गया। इधर खांसिंह घायल अंग्रेज़ोंको अपने ख़ेमेमें ले आया।

दूसरे दिन तमाम मुलतानवासी लड़ाईके लिए तैयार दिखाई दिये। चारों ओरसे मुलतानियोंने ख़ांसिंहके उस स्थानको घेर लिया जहां दोनों अंग्रेज़ घायल थे। दोनों घायल अंग्रेज़ उसी हालतमें कमर कस कर अपनी हिफाजतके लिए लड़नेको तैयार हुए पर मुलतानियोंकी तादाद बहुत अधिक थी, वे न बच सके। दोनों अंग्रेज़ मौतकी गोदमें जा सोये।

इस घटनाके बाद मूलराजने अपना दूर रहनेका भाव छोड़ दिया। वह फौजोंकी तैयारीमें लगा। वह जानता था कि अंग्रेज़ों-की मौतका बदला लेनेके लिए शीघ्र ही सेना आवेगी, उस सेना-का सामना करनेके लिए वह एकाग्रतासे फौजी तैयारीमें लगा। वीरता उसकी नस नसमें जाग उठी। अपने भाग्यके निकट उसने सिर झुका दिया, फौजका सर्दार बन कर वह भाग्य-लक्ष्मीका कांटा देखने लगा।

इस प्रकार मुलतान युद्धका सूत्रपात हुआ। इस युद्धके ज़मानेमें ही इतिहास प्रसिद्ध दूसरा सिक्ख-संग्राम हुआ। दूसरे संग्रामका वास्तविक कारण यहाँ दिया जाता है। इन लड़ाइयोंके बाद किस प्रकार पंजाबकेसरी महाराज रणजीतसिंहके पुत्रका अधिकार लोप हुआ, यह यथारीति लिखा जायगा।

ब्रिटिश गवर्नमेंटकी आंख पंजाबपर पड़ी। लार्ड डलहौज़ीका हर एक काम अब पंजाबको ले लेनेके लिए होने लगा। जो शक्तिशाली और तेजस्वी सर्दार लाहौर दरबारमें थे वे एक एक करके अधिकारसे गिराये जाने लगे। यहां तक कि पंजाबकी औरतें भी गवर्नमेंटकी कड़ाईसे न बचीं। महारानी ज़िन्दां इस क्रोधकी आगमें पहले ही स्वाहा हो चुकी थी। महारानीकी जलती आगपर राख डाली गई थी पर बुझी न थी, एकाएक वह फिर दहक उठी। इसी कारण महारानी दुबारा रेज़ीडेंटके सामने अपराधिनी बनी।

जुलाई महीनेके क़रीब लाहौर दरबारके रेज़ीडेंटके पास मुलतानमें फौज भेजने और उसे दबानेकी सूचना आई। इससे पहले मई महीनेमें महारानी ज़िन्दांका भाग्यचन्द्र फिर डूबने लगा। अंग्रेज़ लेखकोंने जो पंजाबका इतिहास लिखा है, उसमें वे लिखते हैं कि मुलतानमें जो घटना हुई उससे पहले लाहौर दरबारमें अंग्रेज़ोंके विरोधमें एक षड्यन्त्र रचा गया। महारानी ज़िन्दांके कुछ आदमी गवर्नमेंटके भीतर घुसे थे, सरकारी फौजों-को सरकारके खिलाफ भड़काना ही उनका उद्देश्य था। पर यह

बात अधिक दिन गुप्त न रह सकी। ७ नं० सेनाके कुछ आदमियों-ने यह बात अपने अपने अफसरोंसे कह दी। एक सिक्खसेनापति खांसिंह, महारानीका आदमी गंगाराम और दो तीन ख़ास आदमी पकड़े गये। झटपट इस मुक़द्दमेका फ़ैसला हो गया, छः सातको फांसी दी गई, कइयोंको देशनिकाला दिया गया। * इस प्रकार मुख्य अपराधियोंको सज़ा देकर रेज़ीडेंटका ध्यान महारानी ज़िन्दांकी ओर खिंचा। रेज़ीडेंट इस बातको अच्छी तरह समझ गये थे कि जब तक यह वीरनारी लाहौर दरबारके निकट रहेगी तब तक ब्रिटिश सरकारका मंगल नहीं है। इसलिए उसे पंजाबसे बाहर निकालनेका इरादा किया गया, पर कोई बहाना न मिलनेके कारण महारानीको देशनिकाला न दिया जा सका। इस षड्यन्त्रके कारण रेज़ीडेंटको मौक़ा मिल गया। अब महारानी ज़िन्दां शेखूपुरेमें भी न रह सकी, रेज़ीडेंट पंजाब-केसरीकी रानी और पंजाबके मालिककी माताको पंजाबसे बाहर निकालनेपर तुला हुआ था। महारानीके विरुद्ध बहुतसी नीच और लज्जाजनक बातें फैला कर नाबालिग़ दिलीपसिंहको पहले ही हाथमें कर लिया गया था, इसलिए सर फ्रेडरिक कारी-के रास्तेमें कोई कांटा न था। बहुत जल्द महारानी ज़िन्दांके देशनिकालेकी आज्ञापर दिलीपसिंहकी मुहर लगी। दरबारके कई कर्मचारी दो अंग्रेज़ सैनिकोंके साथ यह आज्ञापत्र लेकर

* Kaye. Sepoy War, Vol I. P. 29—30, Comp, Arnolds Dalhousie's Administration Vol 1, P. 85—86.

शेखूपुरेमें महारानीके सामने जा पहुँचे। * महारानीने दृढ़ता और गम्भीरताके साथ अपने प्यारे बेटेके दस्तख़त किये काग़ज़को सिरसे लगाया। वह पंजाब छोड़नेके लिए तैयार हुई। पंजाबकेसरीकी वीरनारी ज़िन्दां अपने सुख ऐश्वर्य और प्यारी जन्मभूमि पंजाबको सर्वदाके लिए त्यागनेको उद्यत हो गई। पहले यह फ़ीरोज़पुर लाई गई, बादमें काशीमें एक अंग्रेज़ अफ़सरके पहरेमें रक्खी गई।

इस प्रकार महारानी ज़िन्दांके देशनिकालेका दृश्य समाप्त हुआ। ख़ूंख़ार शेरकी सी कठोर दृष्टिसे पंजाबने अपनी महारानीकी दुर्दशा देखी, पर कहा कुछ नहीं। एक आंसूकी बूंद न गिरी, एक आगकी चिंगारी भी न चमकी, योगनिद्रामें विराट पुरुषकी तरह पंजाब चुपचाप देखता रहा। पर यह मौन भी शवमुद्रा न थी यह देखना जड़ न था। यह गम्भीर क्रोधकी शान्ति थी। गुस्सेमें भरकर जैसे आदमी एक टक देखता रह जाता है पंजाबकी वही दशा थी। दिलीपसिंह अपने बचपनकी खेलोंमें लगे थे, माताके गम्भीर दुःखसे उनका हृदय नहीं हिला था। संसारकी बातोंसे अनजान, अनभिज्ञ, बालक दिलीपने रेज़ीडेंटके इशारेपर अपनी माताका देशनिकाला देखा। ज़िन्दां जेलमें डाली गयी। गहरा विचार करनेवाले पाठक बिना किसी तरहके पक्षपातके विचार करके बतला सकते हैं कि अंग्रेज राजनीतिज्ञोंमें भारतके साथ इस मामलेमें कितनी कूटनीति बरती

* Kaye. Sepoy War. Vol I. P. 30.

गई है। अदम्य तेज और सभ्यताके निकट संसार सिर झुका सकता है, पर चालबाज़ियोंको दुनियां सदा धिक्कारेगी। संसारका सच्चा इतिहास इसे सहन नहीं कर सकता। पंजाब अधिक दिन मोहित न हो सका जो आग उसके हृदयमें जल चुकी थी वह अधिक दिन छिपी न रह सकी। गुरु गोविन्दसिंहने पंजाबकी नसोंमें जो गर्म खून बहाया था वह अधिक दिन ठंढा न रहा। महारानी ज़िन्दांके देशनिकालेके कुछ दिन बाद ही सारा पंजाब एक अलक्षित मंत्रशक्तिके बलसे फिर उठ खड़ा हुआ।

जिस समय मुलतानमें अगू और एंडर्सन मारे गये उसी समय एडवर्डस नामक एक सैनिक बन्नूके बन्दोबस्तके लिए नियत था। अगू और एंडर्सन जैसे ही घायल हुए वैसे ही मददके लिए एक ख़त लिखकर उन्होंने सवारके द्वारा एडवर्डसके पास रवाना किया। यह पत्र सेनापति कोर्टलैंडके नामं लिखा गया था। २२ अप्रेलको तीसरे पहर यह ख़त बन्नू पहुंचा। एडवर्डस उस समय कचहरीमें बैठा फौजदारी मुकदमे कर रहा था। उसने पत्रको ज़रूरी समझ कर खोला और दोनों अंग्रेज़ोंपर विपत्तिका समाचार पढ़कर वह अपने देशबन्धुओंकी विपत्तिसे आकुल हो उठा। किस प्रकार जल्दीसे मुलतान पहुंचा जाय यही चिन्ता उसके दिमाग़में घूमने लगी। जिस कामके लिये वह बन्नू भेजा गया था उसे वह भूल गया। एडवर्डसने एक पत्र सर फ्रेडरिक कारीको लिखा और जो कुछ बारूद गोला और तोपें मिल सकीं उसीसे तैयार होकर वह मुल-

तानकी ओर रवाना होगया। सिन्ध नदी पार करके लिया नामक स्थानपर उसने क़ब्ज़ा कर लिया। इस चढ़ाईके सवेरे एडवर्डसने अगूको एक पत्र लिखा था। पर यह पत्र मिलनेसे बहुत पहले अगू और एंडर्सनके प्राण इस संसारसे विदा हो चुके थे। एडवर्डसको लिया नगरमें दोनोंकी मौतका समाचार मिला। अपने दो देशवासियोंकी मौतसे एडवर्डसकी हिंसावृत्ति जाग उठी। किस तरह दोनोंकी मौतका बदला लिया जाय यही उसके दिमाग़में चक्कर लगाने लगा। मुलतानपर अंग्रेज़ी झंडा लहराने और मूलराजका सर्वनाश करनेके अलावा उसे और कुछ दिखाई न देता था। मुलतानसे दक्षिणमें ५० मील दूर बहावलपुरका राज्य है। इस राज्यका राजा सुलहके अनुसार अंग्रेज़ोंका मित्र बन चुका था। एडवर्डसने ब्रिटिश गवर्नमेंटके नामसे एक चिट्ठी मददके लिये बहावलपुरके नवाबको लिखी। नवावने झट अपनी फौज एडवर्डसकी मददके लिए भेजी। इसके अतिरिक्त जनरल कोर्टलैंड और लेफ्टिनेंट लेकर आदि एडवर्डसके सहायक बने। एडवर्डसकी मददके लिए लाहौर दरबारसे राजा शेरसिंहकी मातहतीमें एक सिक्ख सेना भी आ पहुँची। सर फ्रेडरिक कारोने गवर्नमेंटको इस आशयका एक पत्र लिखा कि मुलतानपर हमला करनेके लिए एक गोरी फौज भेजनेकी आज्ञा दी जाय। फौजी कमांडर लार्ड गफ़ शिमलेमें थे। मुलतानकी गर्मीका विचार करके उन्होंने गोरी फौज भेजनेकी आज्ञा न दी, गवर्नर जनरलकी भी यही सम्मति थी, पर पंजाबके रेज़ीडेंटको यह

बात पसंद न आई। प्रधान सेनापति और गवर्नर जनरल सर फ्रेडरिक कारीकी सम्मति एक न होनेसे एडवर्डसको भी दुःख हुआ। मई और जून मास इसी तरह बीत गया। जुलाई मासके प्रारम्भमें मूलराजकी सेना और क़िलेकी मज़बूती देखकर एडवर्डसने सर फ्रेडरिकको पूरी सहायता करनेके लिये लिखा। सर फ्रेडरिकने प्रधान सेनापतिको स्पष्ट शब्दोंमें सूचना दी। इस बार भी प्रधान सेनापति लार्ड गफ़ और लार्ड डलहौज़ीने मददसे इनकार कर दिया, पर सर फ्रेडरिक इस बार न दबे। एडवर्डसने चढ़ाई शुरू कर दी थी। १०वीं जुलाईको सुदुसम नामक स्थानपर कब्जा भी हो गया था। इधर सर फ्रेडरिकने गवर्नमेंटकी आज्ञाके बिना ही गोरी फौज और तोपोंको मुलतानपर चढ़ाई करनेकी आज्ञा दे दी। बहुत जल्द ब्रिटिश सेना मुलतानपर जा पहुँची।

इस मुलतानकी लड़ाईके लिए कौन ज़िम्मेवार है? किसके लिए इतना नररक्त बहा? किसने युद्धके मदमें मत्त होकर सदाके लिए मूलराजको देश निकाला दे दिया? इतिहासके सत्यकी रक्षा करते हुए हम इन प्रश्नोंका उत्तर देंगे। मुलतानमें जो कुछ हुआ उसपर गम्भीरतासे विचार करनेसे स्पष्ट विदित होता है कि मूलराज प्रारम्भसे अन्त तक अपनी मान-मर्यादाकी रक्षा करता रहा। धीरतासे उसने लाहौर दरबारको अपनी अवस्था जना दी, बादमें अपना त्यागपत्र दिया और नये दीवानके हाथमें अधिकार सौंप दिये। इस तरहकी धीरता और सरलता कभी विश्वासघातकता नहीं हो सकती। जिस समय मूलराजने

खांसिंहको क़िलेका अधिकार सौंपा उसी समय उसे सब मेगज़ीनें और तोपें भी सौंपी गयी थीं। * अगर मूलराज लड़ाई करना ही चाहता तो वह क़िला और लड़ाईका सामान क्यों सौंप देता? जो दो अंग्रेज़ क़िलेमें घायल हुए थे उन दोनोंके प्रति भी मूलराजका सज्जनताका व्यवहार था। उन दोनों अंग्रेज़ोंने उसी समय एडवर्डस को एक चिट्ठी लिखी थी जिसमें उन्होंने साफ़ स्वीकार किया था कि मूलराज निर्दोष है। † मूलराजकी इतनी सदाशयता होते हुए भी सर फ्रेडरिक क़ारीके कुप्रबन्धसे लड़ाईकी आग धधक उठी। मूलराजकी सब सम्पत्तिपर कब्जा करके सर फ्रेडरिकने उससे दस सालका हिसाब मांगा। मूलराजने जवाबमें कहा कि—"मैं अपने बापके ज़मानेके काग़ज़ क्योंकर पेश कर सकता हूं; क्योंकि वे सब ख़राब हो गये हैं।" इस बातके पूरा होते ही मूलराजके चेहरेपर गहरी निराशाकी छाया दिखाई दी। मुलतानके वीर शासकने नम्रताके साथ सर फ्रेडरिकसे कहा कि, "मैं आपके हाथमें ही तो हूं ‡।" मूलराजकी यह आखिरी बात सुन कर कौन उसे षड्यन्त्रमें लिप्त समझ सकता है? अग्नू और एंडर्सन दोनों मुलतानवासियोंके क्रोधमें पड़ कर मारे गये। पर सर फ्रेडरिकने सारा दोष मूलराजके सिर मढ़ कर उसका नाश

* A year on the Punjab frontier Vol II, P. 126.

† A year on the Punjab Vol II. P. 78.

‡ Torrens, Empire in India P. 338. Comp. Arnolds Dalhousie's Adm. Vol I, P. 65.

करनेके लिये जंगी सेनाएं भेजीं। प्रधान सेनापति और गवर्नर जनरलके बार बार इनकार करनेपर भी वे न माने। सर फ्रेडरिक एक साधारण दीवानी हाकिम, लार्ड गफ प्रधान सेनापति और लार्ड डलहौज़ी गवर्नर जनरल था *। पर एक दीवानी कर्मचारी बड़े बड़े अधिकारियोंकी उपेक्षा करके यों लड़ाई ठान ले और निर्दोषको दोषी बनाकर मनमाने अत्याचार करे, क्या इसे न्याय और शासन कहते हैं?

जब ब्रिटिश सेना मुलतानपर जा पहुँची तब मूलराज वीर वेशमें उसका सामना करनेके लिए तैयार हुआ। इसमें उसका दोष ही क्या है? जब रेज़ीडेंटने लड़ाई अनिवार्य कर दी तब आत्मसम्मानके लिए मूलराजका तैयार होना उसका धर्म था। ख़ैर, मुलतानकी लड़ाईसे पहले लाहौर-दरबारमें एक बार फिर राजनीतिक लहर उठी। इसी राजनीतिक लहरसे दूसरी सिक्ख लड़ाईका सूत्रपात हुआ। दूसरी सिक्ख लड़ाईके कारणोंका पता लगाते हुए हम इन तीन बातोंका उल्लेख करेंगे। (१) पंजाबसे महारानी जिन्दांका देशनिकाला, (२) महाराज दिलीपसिंहके विवाहका दिन स्थिर करनेमें ब्रिटिश रेज़ीडेंटकी सम्मति न होना और (३) उनके भावी श्वशुर सर्दार छत्रसिंहका अपमान †।

* Sir Charles Fames Napier, Defects in the Indian Govt. P. 222.

† Major Evans Bell, Retrospects and Prospects of Indian policy P. 102. Comp. Torrens, Empire in Asia, Chap. XXIV.

महारानी जिन्दांके देशनिकालेकी बात ऊपर लिखी गयी है। खालसा सेनाएं महारानीको माताकी तरह मानती थीं, उनके देशनिकालेसे उनके हृदयोंपर बड़ी चोट लगी। और तो क्या, इस बातसे पंजाबका एक एक बच्चा अपने आपको अपमानित समझता था *। सिक्ख सेनापति शेरसिंहने महारानीके देश निकालेपर साफ़ ही कहा था, "इस बातको सब अच्छी तरह जान गये; सब सिक्ख, सब पंजाबी, सब भारतवासी समझ गये कि अंग्रेज़ोंने स्वर्गीय महाराजकी विधवा रानी राजमाता जिन्दांके साथ किस तरहकी बेईमानी, कृतघ्नता और नीचता की। एक महारानी ही नहीं—राज्यके सच्चे कृपापात्रोंपर भी अत्याचार करके उन्हें तितर बितर किया। राजमाताको क़ैद करने और देशनिकाला देनेकी कोई बात भी सुलहकी शर्तोंमें नहीं थी, पर अंग्रेज़ोंने यह अपमान और अत्याचार किया, सिक्खोंका धर्मनाश किया, पंजाबके राज्यका जितना मान वैभव था वह सब जाता रहा †।"

काबुलके अमीर दोस्त मुहम्मदख़ांको भी अंग्रेज़ोंके हाथों महारानी जिन्दाका क़ैद किया जाना बुरा मालूम हुआ। उन्होंने कहा था कि 'इससे सिक्खोंकी आग भड़क उठेगी।' अमीरने

* Arnolds, Dalhousies Administration Vol I. P. 115.

† Torrence, Empire of Asia 340—341, Comp. Retrospects and-Prospects P. 108. Punjab Papers 1844, P. 362.

कप्तान ऐबटको जो पत्र लिखा था उसमें स्पष्ट है कि—"महाराज दिलीपसिंहकी माता जिन्दांकी क़ैद और देशनिकालेसे दिन पर दिन सिक्खोंकी प्रवृत्तियां बदलती जा रही हैं।" और तो क्या, सर फ्रेडरिक कारीने सन् १८४८ की २५ मई को गवर्नर जनरल-को लिखा था, "सेनापति सर्दार शेरसिंहके यहांसे ख़बर आई है कि महारानी जिन्दांके देशनिकालेसे सब खालसा सेनाएं भड़क उठी हैं। खालसा सेनाएं जिन्दांको अपनी माता समझती हैं। महाराज दिलीपसिंहको वे अंग्रेज़ोंके हाथकी कठपुतली समझ कर मूलराजके विरुद्ध हथियार न उठावेंगी *।" हर एक पंजाबीके हृदयमें आग लगाने वाला कौन कहा जा सकता है? किसके दोषसे सारा पंजाब इस प्रकार भड़क उठा? हम साफ शब्दोंमें कहेंगे, इसका मूल कारण सर फ्रेडरिक कारी था। विना किसी तरहके विचारके सिर्फ गवर्नर जनरलकी आज्ञा लेकर सर फ्रेडरिकने महारानी जिन्दांको देशनिकाला दिया †। महाराज रणजीतसिंहने अंग्रेज़ोंको हिन्दुस्तानमें राज्य जमानेमें सहायता दी, महाराज अंग्रेज़ोंके मित्र बने, महाराजने अंग्रेज़ोंपर भरोसा करके ब्रिटिश सरकारको अपने नाबालिग़ बच्चेकी देखभालका भार दिया, उसी रणजीतकी विधवा रानीके साथ इस तरहका कुव्य-वहार और नीचता की गई! विश्वासघात और बेईमानीका इससे

* Punjab Papers 1879, P. Comp. Retros. and pros-Pects P. 108.

† Retrospects and Prospects of Indian policy P. 103.

बढ़कर और क्या उदाहरण होगा ? मित्रता और संधिका कैसा घृणित लाभ उठाया गया *।

"के" आदि अंग्रेज़ इतिहासलेखकोंने लिखा है कि महारानी जिन्दांने अंग्रेज़ सरकारके विरुद्ध षड्यन्त्र रचा था इस कारण उसे देशनिकाला दिया गया †। 'सर फ्रेडरिक कारीने इस विषयमें जो कुछ लिखा है वह भी इस लेखसे मिलता जुलता ही है‡। पर टरेंस जैसे निष्पक्षपात लेखकोंने लिखा है कि जब महारानी-के सामानकी तलाशी ली गई तब कोई कागज़ या लिखावट या सामान इस तरहका न मिला जिससे षड्यन्त्र सिद्ध होता ¶। इस विषयमें स्वयं कारीको भी कहना पड़ा था कि—"यद्यपि महारानीके विरुद्ध इस विषयका कोई प्रमाण न मिलेगा, पर ब्रिटिश सरकारकी मान-मर्यादा रखनेके लिए हमें इस विषयमें अधिक दिन न लगाने चाहिये §।" इन बातोंसे स्पष्ट विदित होता है कि सर फ्रेडरिक कारीने महारानी जिन्दांको निकाल और महाराज दिलीपसिंहको अपने हाथमें करके पंजाब-पर राज्य करनेका पक्का निश्चय कर लिया था। गवर्नर जनरल

* Retrospects aud Prospects E. P. 106.

† History of the Sepoy War, Vol.I. P. 30.

‡ Retrospects and Prospects P. 104, Comp. Punjab Papers 1849. P, 168,

¶ Empire in Asia P. 343. Punjab Papers 1849. P. 253—260.

§ Empire in Asia P. 342.

महारानीको पंजाबसे बाहर क़ैद करके ही शान्त न हुआ बल्कि उसने उसका वार्षिक ख़र्च भी घटा दिया। वैरावलमें जो सुलह हुई थी उसके अनुसार १५०,००० रुपया साल महारानीको मिलना चाहिये था, पर यह कम करके शेखूपुरेकी जेलमें उन्हें ४८,००० रुपये ही दिये जाते थे। जब बनारसमें महारानीको क़ैद किया गया तब सिर्फ़ १२ हज़ार रुपया प्रतिवर्ष दिया गया। अंग्रेज़ रेज़ीडेंटने महारानीको क़ैदी कह कर उसके सब ज़ेवर और बहु-मूल्य संपत्ति भी ज़ब्त कर ली *। राजमाता महारानी ज़िन्दांके साथ ब्रिटिश सरकारका यह नीच और विश्वासघातकताका व्यवहार दूसरी सिक्ख लड़ाईका पहला कारण था। महारानी-की क़ैदको ही सब पंजाबवासियोंने रणजीतसिंहके राज्यका अस्त समझ लिया था—सबको विश्वास हो गया था कि अब दिलीपसिंहको क़ैद करके अंग्रेज़ पंजाबको हड़प जायँगे †। जिस रणजीतसिंहने ब्रिटिश गवर्नमेंटको मदद दी उसीकी रानीको क़ैद करके उसके बेटेको अपने हाथका खिलौना बना लिया, इसी कारण किसीका भी विश्वास अंग्रेज़ोंपर न रहा।

सिक्ख संग्रामका दूसरा कारण महाराज दिलीपसिंहके विवाहका दिन निश्चय करनेमें ब्रिटिश रेज़ीडेंटका सहमत न होना है। सर्दार छत्रसिंह हज़ारेके शासक थे। वृद्ध और

---

* Empire in Asia P. 443. Comp. Retros. and Pros. P. 106. Punjab Papers 1849 P. 179.

† Retrospects and prcspects P. 109.

सम्माननीय होनेके कारण इनका सिक्खोंमें बड़ा आदर था। इनका बेटा शेरसिंह सिक्खसेनाका सेनापति और वीर योद्धा था। सर्दार शेरसिंहकी भानजी, छत्रसिंहकी नतिनीका विवाह महाराज दिलीपसिंहसे ठहर गया था। विवाहका सम्बन्ध करने वालोंने लाहौर दरबारमें ब्रिटिश रेज़ीडेंटके सामने विवाह-की तिथि निश्चित करनेका प्रश्न रक्खा। जिस समय यह प्रश्न आगे रक्खा गया तब सर्दार शेरसिंह अपनी सिक्खसेनाके साथ मुलतानपर चढ़ाई करने गये थे। मुलतानपर चढ़ाईके मौकेपर ही एडवर्डस और शेरसिंहमें अपनी भानजीके विवाह-की बातचीत हुई। एडवर्डसने ब्रिटिश रेज़ीडेंटको एक पत्र लिखा जिसमें शेरसिंहकी इच्छा पूरी तरहसे दर्शायी थी *। उस पत्रमें लिखा था—"दिन पर दिन ब्रिटिश सरकारपर लोगोंका विश्वास कम होता जाता है और सबका विचार है कि इसी तरहके नीच व्यवहार करके अंग्रेजी सरकार पंजाबको खा जायगी। ऐसी दशामें अगर महाराज दिलीपसिंहका विवाह कर दिया जाय तो सब समझेंगे कि ब्रिटिश सरकार अपनी सन्धिको पूरा कर रही है, लोगोंमें विश्वास पैदा हो जायगा और शान्ति बनी रहेगी †।" यह पत्र पाकर ब्रिटिश रेज़ीडेंटने मौखिक सहानुभूति दिखाई और कहा कि 'ब्रिटिश सरकार महाराज और महाराजके

---

* Retrospects and Prospects P. 110 Comp. Empire in Asia P. 343.

† Ibid P. 111, Comp. Punjab Papers 1849. Empire in Asia P. 343—344.

सम्बन्धियोंको प्रसन्न देखकर वहुत प्रसन्न होगी *।' पर सरकारकी नीति चालवाज़ियोंसे भरी थी। यह सब कोरे शब्द थे पर लिखा यह गया कि—"महाराज दिलीपसिंहका विवाह कर देनेसे ही हमारी सन्धि वनी रहेगी इसपर हमें भरोसा नहीं। महाराज और कन्यापक्षकी सहूलियतके अनुसार अब या कुछ दिन बाद भी विवाह हो सकता है—मुझे इसपर किसी तरहकी आपत्ति नहीं †।" भोले सरल स्वभावके पुरुष ब्रिटिश रेज़ीडेंटके इस ख़तको भी सीधा ही समझेंगे, पर कूटनीतिके जाननेवाले राज्यके उलट फेरके सूत्रोंको खूब समझते हैं वे ब्रिटिश रेज़ीडेंटकी इस लिखावटका मतलब भी अच्छी तरह समझ सकते हैं। राजनीतिके पासे फेंकनेवाले तुरत भांप लेंगे कि ब्रिटिश रेज़ीडेंट तेजस्वी शेरसिंह और दिलीपसिंहको एक होने देना नहीं चाहता था। इसीसे मालूम होता था कि वह पंजावके रक्षकोंकी जड़ काटना चाहता था अर्थात् वह चाहता था कि महाराज रणजीत सिंहके राज्यपर ब्रिटिश पताका फहराये।

ब्रिटिश रेज़ीडेंटका वह उत्तर मुलतान पहुंचा। एडवर्डसने शेरसिंहको सर फ्रेडरिकका पत्र पढ़ सुनाया। शेरसिंहने अपने पिता छत्रसिंहको रेज़ीडेंटको सब बातें लिख भेजीं। सर्दार छत्र-सिंह पहले ही महारानी ज़िन्दांके कारावाससे दुःखी थे अब

* Ibid P. 111, Comp. Empire in Asia P. 344.

† Retrospects and Prospects 111—112, Comp. Punjab Papers 272, and Empire in Asia 334.

अपनी कन्याके विवाहमें विघ्न आया देखकर उनकी घृणाकी सीमा न रही। उन्होंने समझ लिया कि अंग्रेज़ रेज़ीडेंट जिस तरहसे पंजाबपर अपना पंजा फैला रहा है उससे बहुत शीघ्र पंजाब अंग्रेज़ी राज्यमें मिल जायगा। इस दूसरे धक्केसे स्वदेशभक्त वृद्ध सर्दारका हृदय उबल उठा। इस आनेवाली विपत्तिसे अपने देशकी रक्षा करनेके लिये वृद्ध तय्यार हो गया। उसने प्रतिज्ञा की कि जब तक गुरु गोविन्दसिंहके मंत्रपूत रक्तकी एक बूंद भी उसके शरीरमें रहेगी तबतक वह अपने प्यारे देशपर अंग्रेज़ोंका क़ब्ज़ा न होने देगा। ऐसी दृढ़ प्रतिज्ञा करनेपर भी सर्दार छत्रसिंहने अंग्रेज़ोंके खिलाफ़ हथियार नहीं उठाया। वे सन्धिके नियमोंका पूरा पालन करते चले आ रहे थे। पर अधिक दिन यह बात न चली। ब्रिटिश रेज़ीडेंटने वृद्ध सर्दारका अपमान किया था, यह अपमान ही सिक्ख संग्रामका तीसरा कारण था।

यह ऊपर कहा जा चुका है कि सर्दार छत्रसिंह हज़ारेके शासक थे। कप्तान ऐबट नामक एक अंग्रेज़ रेज़ीडेंटका सहकारी था। यह आदमी बड़ा निकम्मा और सबपर व्यर्थ संदेह किया करता था। बिना कारण इसका हृदय द्वेषसे जला करता था। एक साल पहले यही कप्तान ऐबट दीवान ज्वालासिंहका अपमान कर चुका था। उस समय रेज़ीडेंट हेनरी लारेंस था। उसने गवर्नर जनरलको इस विषयमें लिखा था कि—"कप्तान ऐबट बिना समझे बूझे राज्यके ऊंचे और पदस्थ कर्मचारियोंको

संदेहकी दृष्टिसे देखता है और सर्दार ज्वालासिंहके साथ उसने बहुत बुरा व्यवहार किया है। इसी दीवान ज्वालासिंहके सम्बन्धमें हेनरी लारेंसने लिखा था—"मैं सिर्फ एक आदमीको यहां बहुत भला समझता हूं। शिक्षा और ज्ञानके अनुसार ज्वालासिंह एक सम्मानार्ह व्यक्ति हैं *।" केवल ज्वालासिंहके सम्बन्धमें ही कप्तान ऐवटकी दुष्टता सीमित न थी। सर फ्रेडरिकके ही ज़मानेमें सिक्ख सर्दार झंडासिंह भी इसकी दुष्टताका फल भोग चुके थे। इसी कारण सर फ्रेडरिकने कप्तान ऐवटसे बड़े तिरस्कारसे कहा था—"तुम्हारा संदेह निर्मूल है। उस सर्दारने मेरी आज्ञाका पालन किया है †।" ऐसा संदेही पुरुष रेज़ीडेंटका सहायक था। ऐसे क्षुद्र पुरुषके हाथमें पंजाबके सूत्र थे।

नीतिशास्त्रके आचार्योंका कथन है कि स्वभाव सब गुणोंसे प्रबल होता है। कप्तान ऐवट इसका एक उदाहरण था। सर हेनरी लारेंस और सर फ्रेडरिकके तिरस्कारसे भी ऐवटका ऐब न सुधरा। बिना किसी कारणसे गगनकुसुमकी तरह ऐवटके दिमाग़में संदेह पैदा हुआ कि सर्दार छत्रसिंह मूलराजसे मिल कर पंजाबसे अंग्रेज़ोंको निकाल बाहर करना चाहते हैं। आकाश-बेलकी तरह यह संदेह बिना जड़के दिनपर दिन बढ़ने लगा। बिना कारण छत्रसिंहको ऐवट विश्वासघाती समझने लगा।

---

* Retrospects and Prospects of Indian Policy P. 113.

† Retros, and Pros. P. 114, Empire in Asia 345.

वह आप छत्रसिंहसे ३५ मील दूर रहने लगा और बूढ़े सर्दारसे मिलना जुलना बन्द कर दिया *।

सर्दार छत्रसिंह सीधे सरल स्वभावका पुरुष था। एक बार सर जान लारैंस (बादमें लार्ड) ने कहा था कि—"सर्दार छत्रसिंह पुराने ज़मानेका सच्चा और भला आदमी है †।" पर कप्तान ऐबट जिसको संदेहसे देखे उसे कोई भी सरल सिद्ध नहीं कर सकता था। ऐबटके दिलमें जो शक बैठा वह किसीसे दूर न हुआ। सिक्खसेनाका एक दल मुलतानकी लड़ाईमें जानेके लिये छत्रसिंहके नगरके पास ख़ेमे डालकर पड़ा हुआ था। अगस्त महीनेके पहले सप्ताहमें कप्तान ऐबट एकाएक वहां जा पहुंचा और हज़ारेके हथियारबंद मुसलमान किसानोंको उभार कर उसने फौजका रास्ता रोकनेको कहा। ६ अगस्तको रणमत्त मुसलमान किसानोंने ऐबटके भड़कानेपर सर्दार छत्रसिंहके नगरको घेर लिया‡। सर्दार छत्रसिंहकी सेनाका कप्तान एक कनोरा नामक अमेरिकन था। छत्रसिंहने हमला करनेवालोंको हटानेकी उसे आज्ञा दी। अमेरिकन सेनापतिने कहा कि कप्तान ऐबटकी आज्ञाके बिना वह भी उनके विरुद्ध हथियार न उठावेगा। दूसरी बार फिर सर्दार छत्रसिंहकी ओरसे आज्ञा दी गयी कि—"कप्तान ऐबटको यह ज्ञान नहीं

* Retrospects and Prospects P. 113. Empire in Asia P. 344.

† Ibid P. 114, Punjab Papers P. 334.

‡ Retrospects and Prospects 115, Comp. Empire in Asia P. 345.

कि यदि विद्रोहियोंके हाथ तोपें चली गईं तो बड़ी कठिनाईका सामना करना पड़ेगा।" इस बार भी सेनापतिने शासककी बात न मानी। पर दो सिक्ख कम्पनियां सेनापतिकी बिना आज्ञाके वृद्ध सर्दारकी आज्ञा पालन करनेको तैयार हो गईं। सेनाका इस तरह विद्रोही होना कानोराको बड़ा बुरा लगा। उसने अपने गोलंदाज़ोंको तोपें भरकर उन सिक्खोंको उड़ा देनेका हुक्म दिया। पर गोलंदाज़ भी सिक्ख थे। उन्होंने कानोराकी इस आज्ञाके माननेसे इनकार कर दिया। इसपर कानोराने एक सिक्खको तलवारसे मार डाला और तोपमें आप ही बत्ती सुलगा दी। तोपका निशाना ख़ाली गया। फिर कानोराने दो सिक्ख सिपाहियोंपर पिस्तौलसे फायर किया। इसके बाद सिक्ख सिपाही कानोरापर जा टूटे और उसे समाप्त किया।* जो कोई बिना किसी पक्षपातके विचार करेगा वह कानोराकी सज़ाको भी उचित कहे बिना नहीं रहेगा। पर कप्तान ऐबटने इस कानोराकी हत्याको पिशोरासिंहकी हत्याकी तरह, गुप्तषड्यन्त्र-की हत्याके नामसे ही प्रसिद्ध किया।† उसने रेज़ीडेंट सर फ्रेड-

---

* Retrospects and Prospects P. 116. Empire in Asia P. 346.

† Ibid P. 116, Punjab Papers P. 302. महाराज रणजीतसिंहकी मौतके बाद जिन आदमियोंने अपने आपको गद्दीके लिये हकदार पेश किया था, पिशोरासिंह उनमेंसे एक था। यह और इसका भाई स्यालकोटसे लाहौर दरबारके विरुद्ध खड़े हुए थे। १८४५ की मार्च महीनेमें पिशोरासिंहने खिलाफ हथियार उठाया। सर्दार छत्रसिंहने इसको किलेमें रोका और महारानी जिन्दांके भाईने इसे कैद किया। कैदमें यह मारा गया पर सर्दार छत्रसिंहपर इसका दोष नहीं।

रिकको चिट्ठी लिखी कि इस अंग्रेज़के ख़ूनकी सारी ज़िम्मेदारी छत्रसिंहपर है और उसीके षड्यन्त्रसे यह हत्या हुई है। रेज़ीडेंट सर फ्रेडरिकने शुरूसे आख़िर तक सब बातें सुनकर गम्भीरताके साथ छत्रसिंहको दोषी बतानेसे इनकार किया। उन्होंने अपनी चिट्ठीमें साफ लिखा कि—"आपके साथ इस विषयमें मैं सहमत नहीं हूं। सर्दार छत्रसिंह एक सूबेका शासक है। उसे फौजदारी और दीवानीके सब अधिकार हैं। मेरी समझमें यह बात नहीं आती कि आपने कानोराके ख़ूनकी पिशोरासिंहके ख़ूनसे तुलना क्यों की?"* जब यह हज़ारेकी ख़बर मुलतान पहुंची तब अपने बापके साथ ऐवटके ऐसे नीच व्यवहारकी बात सर्दार शेरसिंहको बड़ी बुरी लगी। मेजर एडवर्डसने रेज़ीडेंटको स्पष्ट लिख भेजा "सर्दार शेरसिंहने अपने पिताका लिखा पत्र दिखाकर इस विषयमें बड़ी गम्भीरतासे बातचीत की और मुझसे अनुरोध सहित कहा कि मेरे पिता इस विषयमें निर्दोष हैं या नहीं इसपर विचार करें।"† रेज़ीडेंट शुरूमें तो बिल्कुल निष्पक्षपात दिखाई देते थे और मालूम होता था कि वे अन्ततक विचार करेंगे, पर अफ़सोस है कि रेज़ीडेंटकी गम्भीरता अन्ततक स्थिर न रह सकी। कप्तान निकलसन इस घटनाकी जांचके लिए नियत किये गये थे, उन्होंने ऐवटकी हां में हां मिलाते हुए रेज़ीडेंटको २० अगस्तको लिखा कि,

---

* Retrospects and Prospects P. 117 Punjab Papers 1849, P. 313.

† Ibid P. 123, Punjab Papers 1849. P. 294.

"सर्दार छत्रसिंहका व्यवहार संदेहपूर्ण है। मेरे विचारमें उसको प्रान्तके शासक पदसे च्युत कर दिया जाय और जागीर ज़ब्त कर ली जाय यही इसका उचित दण्ड है। आशा है, इस विषयमें आप मुझसे सहमत होंगे।"*

रेज़ीडेंटने बिना कानूनके, बिना विचारे अपने सहायकोंकी बातें मान लीं। २३ अगस्तको उन्होंने कप्तान निकलसनको पत्र लिखा जिसके अनुसार छत्रसिंहसे इलाक़ेका अधिकार ले लिया और जागीर ज़ब्त कर ली गई।† इस प्रकार बूढ़े छत्रसिंह अंग्रेज़ी राजनीतिके फेरमें पड़कर जागीर और अधिकार दोनोंसे हाथ धो बैठे। जिस दिन रेज़ीडेंटने कप्तान निकलसनको ज़ब्तीकी आज्ञा भेजी थी, उसी दिन मेजर एडवर्ड्सको उसने लिखा था कि—"सर्दार छत्रसिंहने जो कुछ किया वह केवल कप्तान ऐवट-के प्रति अविश्वास और भयके कारण किया। लेफ्टिनेंट निकलसन और मेजर लारेंस इस विषयमें मुझसे सहमत हैं।"‡ इससे पहले प्रधान सेनापतिको उन्होंने लिखा था—"लेफ्टिनेंट निकलसन कानोराकी मौतको भी खूनका मामला समझते हैं। उनकी सम्मतिमें इन खून करनेवालोंका मुखिया छत्रसिंह है। मेरे विचारसे कानोराकी मौतका पूरा हाल उन्हें ज्ञात नहीं।"¶

* Retrospects and Prospects P. 126. Comp. Punjab Papers 1849, P. 295.

† Ibid P. 126, Punjab Papers 1849, p, 297,

‡ Ibid P. 126, Punjab Papers P. 297

¶ Ibid 129—286.

इसके सिवा जिस दिन रेज़ीडेंटने सर्दार छत्रसिंहकी जागीर और अधिकारका हुक्म भेजा उससे दूसरे दिन (२४ अगस्त) को वे न तो कप्तान ऐबटकी बातपर ही विश्वास करते थे और न कानोराके ख़ूनको गुप्तहत्या ही मानते थे।* ब्रिटिश रेज़ीडेंटने एक ओर तो सर्दार छत्रसिंहको बेकसूर लिखा और दूसरी ओर लेफ्टिनेंट निकलसनको आज्ञा दी कि वह छत्रसिंहकी जागीर ज़ब्त कर लें और उसे अधिकारसे च्युत करें।

ऊपरवाली बातें कितनी बेजोड़ हैं यह पाठकोंने पढ़ ही लिया है। पर ५ सितम्बरको रेज़ीडेंटने गवर्नमेंटको लिखा कि—"मैं वचन दे चुका हूं कि सर्दार छत्रसिंहको प्राणदण्ड न दूंगा और उसके कामोंकी जांच कराऊंगा।"† चार दिन पहले जो सर्वथा निरपराध था उसीको किस आधारपर रेज़ीडेंटने इतना अपराधी समझ लिया कि प्राणदण्ड तककी अवश्यकता हुई और वचन भी न निभाया गया? फिर जिसके नामपर इतनी बड़ी सजाकी तजवीज़ थी उसकी जांच क्या की गई? और तो क्या, सर्दार छत्रसिंहको यहांतक नहीं बतलाया गया कि तुमपर यह दोष लगाया गया है।‡ सर फ्रेडरिक कारीके सब राजनीतिक काम आरम्भसे अन्ततक बिना किसी क्रमके और कुटिलतासे भरे थे।

* Retrospects and Prospects P. 126.

† Ibid P. 127, Punjab Papers p 1849, 329,

‡ Ibid P. 127.

जब सर्दार छत्रसिंहके अपील करनेपर भी रेज़ीडेंटने उनके कामकी कोई जांच न की, जब उनसे न्याय न किया गया, तब वे अंग्रेज़ोंको झूठा, बेईमान और जालसाज़ समझने लगे। महारानी ज़िन्दांके देशनिकाले और महाराज दिलीपसिंहके विवाहमें विघ्न डालनेके कारण वे अंग्रेज़ोंको नीच, घृणित, समझने लगे थे और अब अपने साथ किये गये इस व्यवहारसे उनका रहा-सहा विश्वास भी जाता रहा। वे खूब समझ गये कि बहुत शीघ्र ही पंजाब अंग्रेजी राज्यमें मिला लिया जायगा और वे अपने ही देशमें कुत्तेकी तरह दुरदुराये जायंगे। बूढ़े सर्दारसे चुप न रहा गया। उसने अपनी प्रतिज्ञाको याद करके गुरु गोविन्दसिंहके बहाये हुए पवित्र रक्तको कलंकित न करना चाहा, अपनी जन्मभूमिको परदेशियोंसे बचानेके लिए उसने अपना आत्मत्याग कर डाला।

१० सितम्बरको मुलतानमें शेरसिंहको अपने पिताका पत्र मिला। अपने पिताकी ऐसी शोचनीय दशासे वीरपुत्रका हृदय अधीर हो उठा। उसके हृदयमें इतना धैर्य न था कि इतनेपर भी वह अंग्रेज़ोंको ईमानदार समझता। १४ सितम्बरको शेरसिंहने लाहौर अपने भाईको लिखा कि, अंग्रेज़ोंपरसे उसका विश्वास उठ गया है और अंग्रेज़ी सेनासे वह किनारा करना चाहता है।* वीरका यह संकल्प व्यर्थ न गया। ७ सितम्बरको

* Edward's A year in the Punjab vol II. P. 606. Empire in Asia P. 347—348.

मेजर एडवर्ड्स की मातहतीमें अंग्रेज़ी और हिन्दुस्तानी सेनाओं-ने मुलतानके क़िलेपर आक्रमण किया। १४ सितम्बरको शेर-सिंह अपनी सब सिक्खसेनाओंके साथ मूलराजसे जा मिला।

ऊपर जिन घटनाओंका उल्लेख किया गया है उनसे भली भांति प्रमाणित होता है कि सर्दार शेरसिंह सदा अंग्रेज़ोंका कृपाकांक्षी रहा है। मेजर एडवर्ड्सने अपने पत्रोंमें यह बात स्वीकार की है। इससे अधिक शेरसिंहके भोलेपनका दूसरा क्या प्रमाण होगा। * पर सर फ्रेडरिक कारी और कप्तान ऐवटके समान अंग्रेज़ोंकी कूटनीति वीरको कैसे अपना सकती थी? अपने जन्मदाता पिता और जन्मभूमिका अपमान कोई कबतक सह सकता है? आत्मसम्मान खोकर विदेशियोंकी ठोकरें भी कोई पुरुष कबतक खा सकता है?

मूलराजको स्वप्नमें भी कभी ऐसा विचार न था कि शेर-सिंह अंग्रेज़ी फौजसे न्यारे होंगे। मूलराजने एकाएक शेरसिंह-का विश्वास न किया, उसने अपनी सेनाको चट्टानके नीचे और शेरसिंहकी सेनाको चट्टानके ऊपर दुश्मनकी तोपोंके ठीक सामने खड़ा कर दिया। † कुछ दिनमें ही इन बातोंके कारण शेरसिंह उदास हो गया और वह सेना हटाकर पितासे मिलने चल पड़ा। इधर बम्बईसे और भी अंग्रेज़ी सेनाएं आ गयीं। २५ दिसम्बरको मुलतानपर फिर आक्रमण हुआ। सन् १८४६ की

* Empire in Asia p. 347. Comp. A year on the Punjab II p. 588.
† A year on the Punjab Frontier vol II p. 601.

२ जनवरीको अंग्रेज़ी सेनाओंके गोलोंसे मुलतानका क़िला टूट गया। मूलराजने अपने वीरोंके साथ उसी वीरतासे आत्म-रक्षाके लिये संग्राम किया, अन्तमें अपने सभी सहायकोंके मारे जानेपर २२ जनवरीको वह शत्रुओंके हाथोंमें जा पड़ा।

इस प्रकार मुलतानका पतन हुआ, मूलराज बन्दी हुए उन्हें सज़ा भी दी गई, पर छत्रसिंह और शेरसिंहके हृदयोंमें जो आग दहक चुकी थी वह शान्त न हुई। मुलतानपतनसे पहले-की २२ नवम्बरको रामनगरकी लड़ाईमें अंग्रेज़ी

सन १८४८

सेनाएं लगभग हार चुकी थीं। शेरसिंहके पास इस समय ६० तोपें और ३० हज़ार सेना थी। इस सेनाका उसने चिलियानवालाके निकट मोरचा बनाया।

मुलतानके पतनकी ख़बरें इङ्गलैंड पहुँचीं। सर हेनरी लारेंस १० जनवरीको वापिस आकर फौजी लाटकी कोठीपर ठहरा पर सर फ्रेडरिक कारीका समय पूरा न हुआ था इसलिए लारेंसको फौजी लाटका एडीकांग बनकर उनकी कोठीपर ही रहना पड़ा। इधर १३ जनवरीको अंग्रेज़ी फौज चिलियानवाला आ पहुंची। सेनापति सर्दार शेरसिंहने बड़े कौशलसे सेना एकत्र की थी। अंग्रेज़ी सेनाके पहुंचते ही सिक्खसेनाने उनपर बुरी तरहसे आक्रमण किया। घोर संग्राम ठना। अंग्रेज़ी फौजके सेनापति कैम्पबेल (लार्ड क्लाइव) और पेनक्विक थे। इतिहासमें ये दोनों सेनापति बड़े प्रसिद्ध वीर हुए हैं। पर शेरसिंहकी सिक्खसेनाने दोनोंकी सेनाको धुन डाला। फौजी लाट लार्ड

गफ़ने अगले हिस्सेमें जंगी रिसाला लगाया था। रणके मदमें सिक्खोंने एक ही हमलेमें इस रिसालेकी भी पीठ फेर दी। विजयलक्ष्मी सर्दार शेरसिंहके हाथ रही। सिक्खोंने अंग्रेज़ी झण्डा छीन लिया, अंग्रेज़ी तोपें और सामान सब शेरसिंहके हाथ लगा। लार्ड क्लाइव और पेनक्किककी सेनाएं सब भाग गईं। सिक्खोंने शत्रुओंकी तोपें दाग कर सर्दार शेरसिंहकी सलामी की।*

इस प्रकार चिलियानवाला-संग्राम समाप्त हुआ। वाटर्लूकी लड़ाईमें वीर नेपोलियन बोनापार्टके भी जिन्होंने पैर न जमने दिये वे अंग्रेज़ तीस हज़ार सिक्खोंकी वीरताके सामने न टिक सके; चिलियानवालाकी विजय भारतके मस्तकका सदा भूषण बनी रहेगी, पर कई अंग्रेज लेखकोंने कालेको सफ़ेद बताते हुए यह लिख मारा है कि इस लड़ाईमें अंग्रेज़ोंकी जीत हुई। इस झूठका भी कोई ठिकाना है?† उसी वीरोंके समाजमें बैठकर अगर कोई भारतका वीर आदर पाने योग्य है तो वह महाराणा प्रतापसिंह और सर्दार शेरसिंह है। अगर कोई भारतकी स्वतन्त्रताका पवित्र तीर्थ है तो मेवाड़की हल्दीघाटी और पंजाबका चिलियानवाला

* Marshman's History of India p. 465. Comp Kaye's Sepoy war V. I. P. 42.

† Lieutenant General Sir George Lawrence's Forty three years in India p. 263. में लिखा है कि अङ्गरेज जीते। लार्ड गफने भी अपनी जीत लिखी है F. M. Ludlow's British India History Vol II p. 164.

है। चिलियानवाला उन्नीसवीं सदीकी पवित्र युद्धभूमि है। शेर-सिंह अनन्तकालतक वीरोंके समाजमें श्रद्धा और भक्तिकी दृष्टिसे देखे जायंगे।*

पर सौभाग्य और विजय सदा एक आदमीकी नहीं होती। सुखके बाद दुःख और दुःखके बाद सुखका चक्र सदा घूमता रहता है। वीर शेरसिंहने चिलियानवालामें जिस विजयकी माला पहनी वह गुजरातमें मुरझा गई। चिलियानवालासे गुजरात जाकर वे अपने पितासे मिले। इधर सेनापति ह्वीस मुलतानसे लौटकर लार्ड गफसे मिला। १२ फरवरीको गुजरातमें फिर अंग्रेज़ी फ़ौजसे मुक़ाबला हुआ, अंग्रेज़ोंकी जीत हुई। सर्दार छत्रसिंह और शेरसिंह क़ैद हुए। १५ हज़ार सिक्खोंने हथियार छोड़े।

हारने पर भी सिक्ख सर्दारोंका तेज वैसा ही बना था। सेनापति वाल्टर गिलवर्टके दाहिने खड़े होकर उन्होंने कहा कि—"अंग्रेज़ोंके अत्याचारोंसे तंग आकर हमें संग्राम करना पड़ा। अपनी शक्तिके अनुसार अपने देशके लिए हमने कोशिश की। अब हमारी दशा बदल गई। हमारे पवित्र सिक्ख वीर लड़ाईके मैदानमें सदाके लिए सोगये। हमने जो कुछ किया उसके लिए हमें शोक नहीं। हमने जो कुछ आज किया है—यदि हममें फिर शक्ति आजाय तो कल फिर भी वही करेंगे।" उसी दिन

* यह संग्राम दूसरी सिक्ख लड़ाईके नामसे प्रसिद्ध है। लाहौर दर्बारने सर्दार शेरसिंहके विरुद्ध अपनी सेनाएं भेजी थीं।

सिक्खोंने शोकके साथ कहा था कि, "सचमुच आज महा-राज रणजीतसिंहकी मृत्यु हुई है।" पर भारतके वीरोंका आदर अंग्रेज़ जाति क्या कर सकती थी ? वीरताका आदर तो भारतके हिस्सेमें था। बार बार हरा कर भी शहाबुद्दीन गोरीको पृथ्वी-राजने छोड़ दिया, अकबरकी बेगमके पकड़े जानेपर भी उसे अपनी बेटी कहकर महाराणा प्रतापने वापस भिजवाया। अंग्रेज़ जातिसे सर्दार छत्रसिंह और शेरसिंहके लिए वीर-सम्मानकी आशा करनी ही बेकार थी।

इस तरह यह लड़ाई समाप्त हुई। लार्ड डलहौज़ीने इस मौक़े-पर अपना मुंह पंजाब निगलनेके लिए फैलाया। यद्यपि पंजाब दर्बारने मुलतान और चिलियानवाला, दोनों जगह अंग्रेज़ोंकी सहा-यताके लिए अपनी सेनाएं भेजी थीं, पर सुनता कौन है ? गवर्नर जनरलने अपना प्रतिनिधि बनाकर इलियट साहबको लाहौर दर्बारमें भेजा। सर फ्रेडरिकका समय समाप्त होनेके कारण सर हेनरी लारेंस फिर ब्रिटिश रेज़ीडेंट बने। गवर्नर जनरलके प्रति-निधि इलियटने २८ मार्चको रेज़ीडेंटसे मिलकर महाराज दिलीप-सिंहसे कहा कि वे अपना राज्य ईस्ट इंडिया कम्पनीके हाथ सौंप दें। इसके दूसरे दिन २९ मार्चको पंजाबका आख़िरी दरबार हुआ। महाराज दिलीपसिंह इस आख़िरी दिन अपने पिता महा-राज रणजीतसिंहके सिंहासनपर बैठे। पास ही अंग्रेज़ी सेनाएं हथियारोंसे तैयार खड़ी हो गईं। दीवान दीनानाथने सब पुरानी सन्धियां पेश कीं। महाराज रणजीतसिंहने अंग्रेज़ोंके साथ

जो भलाइयां की थीं उनकी याद दिलाई। सब अंग्रेज़ोंके वादे और शर्तें आगे रक्खीं, पर कुछ न हुआ, लार्ड डलहौज़ीका घोषणापत्र पढ़ा गया कि 'पंजाब ब्रिटिश शासनमें मिला लिया गया।' रणजीतसिंहके क़िलेपर तुरन्त अंग्रेज़ी झण्डा चढ़ा दिया गया; ब्रिटिश सिंहकी सलामीमें तोपें दगीं। महाराज रणजीतसिंहकी भविष्यवाणी सच हुई, पंजाबपर विदेशियोंका राज्य हो गया।*

३० मार्चको डलहौज़ीका यह घोषणापत्र फीरोज़पुरसे सारे भारतमें फैल गया। ब्रिटिश सरकारने महाराज दिलीपसिंहको सालाना ४ से ५ लाख तक रुपया देना मंजूर किया। जो कोहनूर महाराज रणजीतसिंहकी पगड़ीमें विराजता था, जो सैकड़ों वीरोंके हाथसे निकलकर रणजीतसिंहके पास आया था उसे "पांच जूतियों"की क़ीमतमें डलहौज़ीने दिलीपसिंहसे ले लिया।†

'के' साहबने ग़दरका इतिहास लिखा है, वे कहते हैं—"लार्ड डलहौज़ीने महाराज दिलीपसिंहको हर तरहकी चिन्ता और वि-

* Empire in Asia P. 351.

† कोहनूर हीरेकी बड़ी अद्भुत कथा है। कहा जाता है कि यह हीरा गोलकुंडेसे निकला था और राजा कर्णके पास रहा। इसके बाद यह उज्जयिनीके अधिकारमें आया। चौदहवीं सदीमें अलाउद्दीनने जब मालवेपर अधिकार किया तब यह हीरा उसे मिला। पठानोंके बाद यह मुगलोंके हाथमें आया। मुगल सम्राट् मुहम्मदशाहको हराकर नादिरशाह इस हीरेको ले गया। नादिरको मारकर काबुलके अहमदशाहने इसे लिया। यह अहमदके बाद शाहशुजाके हाथ आया। शाहशुजाको हरा कर रणजीतसिंहने इसे लिया। अब यह हीरा इंगलैंडके राजाके मुकुटमें है। (Encyclopeadia Britanica) 8 Edition, Vol. Viii. P. 4-5.

पत्तिसे बचा दिया और उनके ज़रूरी ख़र्चके लिए उचित धनराशि नियत कर दी, यह दशा उनके लिए सुखकी होनी चाहिये।"* हृदय रखनेवाले पाठक इस अंग्रेज़ लेखकके शब्दोंका अर्थ समझनेमें भूल न करेंगे।

कालकी विचित्र गति है! नियतिका विचित्र परिवर्तन है! जिस पंचनदभूमि पंजाबमें सबसे पहले आर्यऋषियोंने बैठकर साम-गान किया था, जिस भूमिकी बिखरी हुई शक्तियोंको महाराज रणजीतसिंहने मिला करके गौरवमय राज्य स्थापित किया था, वह अंग्रेज़ोंका खिलौना हो गया। वीर पंजाबकी वीरता और गर्व दबा दिया गया।

चाहे कुछ हो, इतिहास सदा सचाईका डंका बजाता रहेगा। लार्ड डलहौज़ीकी सरकारने सचाईको ताकपर रखकर, सब सुलहनामोंको आलमारीमें बंद करके, अन्यायसे पंजाबका हरण किया। इस तरहकी चालबाज़ी कभी भी क्षमाके योग्य नहीं। मूलराजने जो कुछ किया वह आत्मसम्मानके लिए किया, शेरसिंहने जो कुछ किया वह बापके अपमानके कारण किया, फिर मूलराज या शेरसिंहके साथ लाहौर दरबारकी ज़रा भी सहानुभूति नहीं पाई जाती। ड्यूक आफ़ आर्गाइल जैसे सच्चे आदमीने लिखा था कि—"खालसा सेनाने सिक्खयुद्धकी नींव डाली थी, लाहौर सरकारका इससे कोई सम्बन्ध न

* Kaye's Sepoy War. Vol I. P. 47.

था।" * ब्रिटिश सरकारसे आठ आदमियोंने सुलह की थी, उनमेंसे छः आदमी उसी तरह आख़िरतक डटे रहे थे। केवल एक शेरसिंहने खुला विरोध किया था। और वह भी अपने बापके अपमानसे। ऊपर यह कहा जा चुका है कि शेरसिंह अगस्त मास तक राजभक्त रहा। मेजर एडवर्ड्सने जो पत्र लिखे हैं उनसे यह भलीभांति सिद्ध होता है।† जब सिक्ख सरदारोंमेंसे कोई भी मुलतानपर चढ़ाई करनेके लिए तैयार न हुआ तब शेरसिंह अपनी सेना लेकर अंग्रेज़ोंकी सहायताके लिए मुलतान गया।‡ ऐसा वीर पुरुष भी नीच व्यवहारसे दुखी हो गया और अन्तमें उसे हथियार उठाना पड़ा। यह तो शेरसिंहकी बात थी पर लाहौर दर्बारके जो बाक़ी छः सभासद थे, जो सदा शान्त और अंग्रेज़भक्त बने रहे, उनसे लार्ड डलहौज़ीने कहा कि अगर तुम दिलीपसिंहके गद्दीसे उतारे जाने और पंजाब अंग्रेज़ोंके हाथ देनेके काग़ज़पर हस्ताक्षर न करोगे तो तुम्हारी सब जागीरें ज़ब्त कर ली जायँगी। इस तरह गला दबाकर उनसे हस्ताक्षर कराये गये थे।¶ इधर ब्रिटिश रेज़ीडेंट लाहौर दर्बारका मालिक था। दिलीपसिंह नाबालिग़ और ब्रिटिश सरकार उसके राज्यकी ट्रस्टी थी। महारानी ज़िन्दां बनारसमें क़ैद थी, क्या कोई बता सकता है कि

* India under Dalhousie and Canning P. 55.

† Edwards' Punjab Frontire vol II P. 588.

‡ Ibid P. P. 549-564-589.

¶ Retrospects and Prospects P. 154.

महाराज दिलीपसिंहका क्या अपराध था जो वे गद्दीसे उतारे गये ? उस नाबालिग़ लड़केका क्या दोष था जो उसके बापका राज्य छीना गया ? जिस दिन विजयी सिकन्दरने पंजाबमें प्रवेश किया उस दिन उसने राजा पोरसके साथ कैसा व्यवहार किया था ? पोरसकी वीरता और धीरता देखकर उसने फ़िर उसे उसीके सिंहासनपर बैठाया, उससे मित्रता की। पर उन्नीसवीं सदीकी अपने आपको सभ्य कहनेवाली अंग्रेज़ सरकारने एक नाबालिग़ बच्चेका ट्रस्टी बनकर उसका राज्य हड़प लिया ! समयका कैसा विचित्र परिवर्तन है ! ज्ञान और धर्मकी क्या विचित्र दुर्गति है !

जब पंजाबमें लड़ाई छिड़ी तब बारकपुरमें भाषण देते हुए लार्ड डलहौज़ीने कहा था, "मैं शान्ति चाहता हूं, मैं शान्तिका भिखारी हूं। पर भारतके शत्रु यदि संग्राम चाहते हैं तो संग्राम ही उन्हें मिलेगा, वह भी भयानक बदलेके साथ मिलेगा।"*

लार्ड डलहौज़ीके शब्दोंके अनुसार हिन्दुस्तानसे भयानकसे भी भयानक बदला लिया गया, पर लार्ड डलहौज़ीकी अपेक्षा 'के' नामक अंग्रेज़ इतिहास लेखकने जो शब्द लिखे हैं वे और भी अधिक भयानक हैं—"लड़ाईकी घोषणा करके सिक्खोंने अपने आपको बड़े बुरे संकटमें डाला—न्यायकी लड़ाईमें सिक्ख हारे, ब्रिटिश सरकार धीरता और सचाईसे काम ले रही थी पर

* Speech at the Barrakpore Ball, October 5, 1848. vide Arnolds Dalhousie's Administration vol I, p. 96.

सिक्खोंने विश्वासघात किया।"* इसी अंग्रेज इतिहासलेखककी क़लम आगे चलकर लिखती है, "अपनी आज़ादीकी रक्षाके लिए एक साहसी जातिका युद्ध मनुष्यजातिका प्रसिद्ध दृश्य और उसके नायक समवेदना और सम्मानके अधिकारी हैं। पर ये सब हमें वचनसे दोस्त कहकर छिपे हुए हमारे शत्रु थे। इनकी मित्रता विश्वासघातके द्वारा कलंकित और झूठ और बेईमानोसे लिथड़ी हुई है।"†

इस इतिहासलेखकने केवल अपने जातीय नशेमें चूर होकर पवित्र इतिहासके नामको कलंकित किया है। लड़ाईके जो कुछ कारण हुए उनको सीधी भाषामें हम ज्योंका त्यों लिख चुके। उससे स्पष्ट होता है कि लार्ड डलहौज़ी और पंजावके ब्रिटिश रेज़ीडेंटकी गवर्नमेंटकी ख़राबी और दुर्व्यवहारसे लड़ाई-की नौवत आई। लार्ड डलहौज़ीकी गवर्नमेंटने बिना विचारे महारानी ज़िन्दांको क़ैद किया, बूढ़े सर्दार छत्रसिंहको अपमानित किया, इस तरहकी बातोंने सर्दार शेरसिंहके हृदयमें आग लगाई। इस तरहकी चालबाज़ियों और दुर्व्यवहारोंसे जो लड़ाई पैदा हो उसके लिए सिक्ख कैसे जिम्मेवार हो सकते हैं? अंग्रेज़ इतिहास लेखक चाहे यह लिख डालें कि सिक्खोंने लड़ाई छेड़ी पर जो सचाईको सामने रक्खेगा वह कह सकता है कि अंग्रेज़ी नीति ही पंजावके विषयमें बदली हुई थी। वारक-

* Kaye's Sepoy War, vcl I. p, 46.

† Kaye's Sepoy War, vol I. p. 58.

पुरमें लार्ड डलहौज़ीने जो शान्तिपर भाषण दिया उससे कुछ भी सार नहीं निकलता। एक ओर उन्होंने पंजाबमें अशान्तिका राजनीतिक चक्र चलाया दूसरी ओर शान्ति शान्तिकी दुहाई दी। इसका मतलब केवल भोलेभालोंको वहकानेके अतिरिक्त और कुछ नहीं होता। सिक्ख जाति लड़ाईमें कुशल और स्वाधीनता-प्रिय जाति है। गुरु गोविन्दसिंह उसके हृदयोंमें जो तेज जगा गये हैं वह कभी हटनेवाला नहीं। वह तेज उन्नत, सुव्यवस्थित जातीय जीवनमें संगठित है। वे किसी प्रकार भी आत्मसम्मान नहीं खो सकते, वे किसी तरह दूसरोंकी ठोकरोंमें रहना पसंद नहीं कर सकते। इस जातिके हृदयपर ठोकर लगाकर डलहौज़ीने शान्तिकी आशा की थी! उन्हें अपमानित करके सहिष्णुता और धीरताकी आशा की थी!

सिक्ख सेनापति सर्दार शेरसिंह शुरूसे ब्रिटिश सरकारके साथ मित्रता और सौजन्यका व्यवहार करते आ रहे थे, पर बापका जिस बुरी तरहसे अपमान किया गया उसे वीर बेटा चुपचाप कैसे सहन कर सकता था? वीरका इस तरह तलवार निकालना और मैदानमें आना किसी देशके इतिहासमें बुरा नहीं कहा गया। जो शेरसिंहके सिरपर लात न मारी जाती तो वह किसी तरह मैदानमें न उतरता, उसके हृदयमें कभी बदलेकी आग न भड़कती। पवित्र वीर धर्मके अनुसार उन्हें युद्धशिक्षा मिली थी और पवित्र संग्राममें उन्होंने अपने क्षत्रियधर्मकी रक्षा की। उनके काममें लेशमात्र भी विश्वासघात या झूठ नहीं पाया

जाता। कोई इतिहासलेखक इस वीरको नीच लिखकर चाहे अपने इतिहासके गौरवको कलंकित करे, पर वीरको कलंक स्पर्श भी नहीं कर सकता।

सब इतिहासलेखक "के" के समान सिक्ख वीरोंको नहीं धिक्कारते, लार्ड डलहौज़ीके समान सब अपनी प्रशंसा भी नहीं करते। बहुतोंने बड़ी धीरता और विलक्षणताके साथ इसपर विचार किया है और इतिहासके पवित्र सम्मानकी रक्षा की है। मेजर इवान्सवेलने लिखा है—"लार्ड डलहौज़ीने कहा है कि 'हमने नाबालिग राजाके अधीन राज्यको विजय किया है।" पर यह विजय नहीं घोर विश्वासघात है। दीवानी और फौजदारी-का काम ईमानदारीके साथ करनेके कारण पंजाबमें हमलोगोंकी प्रतिष्ठा बढ़ी। पंजाबके क़िले हमने अपने हाथों सर करके विद्रोही प्रजाको शान्त किया था। सुलहकी शर्तोंके अनुसार नाबा-लिग दिलीपसिंहके राज्यका प्रबन्ध करना हमारा कर्त्तव्य था, उसे अपने पेटमें पचाना नहीं।......पूर्वी देशोंके रिवाजके अनुसार जो बहुतसे राजाओंका पालन करता है वही सम्राट् या चक्रवर्ती कहाता है। लार्ड डलहौज़ी अगर दिलकी सचाई-के साथ काम लेते तो वे हिन्दुस्तानके सब राजाओंके दिल जीत लेते, पर हाथ आई लक्ष्मी छोड़नेकी उनमें हिम्मत कहां? उन्होंने सुलहनामेको एक कागजका टुकड़ा समझकर उसकी परवा न की और इतिहासमें ब्रिटिश जातिकें नामपर काला टीका लगा दिया। उनके इन कार्योंसे हिन्दुस्तानपर अंग्रेज़ी शासन

भी बोझ हो गया। आगे पैदा होनेवाली जाति और इतिहास मेरे इन शब्दोंका अनुमोदन करेंगे।"*

टरेंसने लिखा है—"साधारण नियमोंके अनुसार दिलीपसिंहको गद्दीसे उतारना और पंजाबको अंग्रेज़ी राज्यमें मिला लेना न्याय नहीं कहा जा सकता। दिलीपसिंह नाबालिग थे इसलिए वे किसी तरहको राजनीतिक बातके जिम्मेवार नहीं हो सकते। प्रतिनिधिसभाके सिरपर ब्रिटिश रेज़ीडेंट बैठा था, राजधानी लाहौरमें किसी तरहकी गड़बड़ हुई ही नहीं, साधारण प्रजाने किसी तरहकी बगावत की नहीं, रानी हज़ार मील दूर क़ैद थी, गुलाबसिंहका व्यवहार सदा भला रहा, केवल मुलतानने अंग्रेज़ी फौजका रास्ता रोका था, पर आख़िर वह भी सर हो गया और विद्रोहियोंको दण्ड मिला। अगर फौजी कायदेके अनुसार भी सारी खालसा सेनाको अधिकारच्युत करके उनकी जागीरें ज़प्त कर ली जातीं तब भी बुराई की कोई बात न थी, पर यह कुछ भी न करके पंजाबपर कब्ज़ा कर लिया इसलिये सच्चा इतिहास इसे सदा डकैती कहेगा।"†

लडलोने लिखा है—"दिलीपसिंह नाबालिग थे। सन् १८५४ में ही वे बालिग़ हो जाते, हमने खुले तौरपर उनके राज्यकी रक्षाका भार ग्रहण किया था। अन्तिम बार जब हम उसके राज्यमें गये, तब (सन् १८४८ नवम्बर १८) प्रगट रूपसे घोषणा की

* Retrospects and Prospects P. 178.

† Empire in Asia P. 352.

थी कि हम केवल इसलिये पंजाबमें आये हैं कि जो लाहौर-दरबार-के विरुद्ध शस्त्र उठावे उसे शान्त करें, पर अपनी इस घोषणाके छः महीनेके बाद ही हमने नाबालिग दिलीपसिंहके राज्यको हड़प लिया। २४ मार्च सन् १८४९ को पंजाबकी स्वतन्त्रताका तारा अस्त हो गया, जिस नाबालिगकी रक्षाका भार हमने लिया था वह महाराजके पदसे हमारा एक वेतनभोगी आश्रित बना, स्वतन्त्र पंजाब अंग्रेज़ोंकी जागीर बन गया और प्रसिद्ध रत्न कोहनूर इंग्लैंडके ख़ज़ानेमें जा पहुँचा। संक्षेपतः, हम अपने अधीन और रक्षित बालकका सर्वनाश करके उसका जो कुछ था उसे पचा गये।

"........एक बार दिलीपसिंहकी रक्षाका भार लेकर उसकी प्रजाके अपराधका दण्ड उन्हें देना कितना बड़ा अन्याय है! यदि विद्रोही प्रजाको दण्ड दिया होता तो यह तो एक प्रशंसनीय कार्य था, पर इसी कारणसे दिलीपसिंहको गद्दीसे उतारनेका हमें कुछ भी अधिकार न था। एक विधवाके कुछ नौकरोंने पुलिसपर हाथ उठाया, पुलिसने विद्रोही नौकरोंको हराकर विधवाके माल और जायदादकी रक्षाका भार अपने ऊपर लिया, नौकरों और पुलिसमें फिर लड़ाई हुई और पुलिस जीत गई। इसके बाद पुलिसके बड़े अफ़सरने आकर नम्रतापूर्वक विधवासे कहा कि, अब आप अपना घर मकान और ज़ेवर जायदाद सब पुलिसके हवाले कर दीजिये, गुज़ारेके लिये कुछ मासिक आपको दिया जायगा, बल्कि उस विधवाका अमूल्य हीरेका हार भी

पुलिसकमिश्नरने पहला, इससे बढ़कर अन्याय और नीचता और क्या हो सकती है ! जो दिलीपसिंह ईसाई धर्म ग्रहण करके इस समय इंग्लैंडमें आये हैं, उनके भोलेपन और सरल स्वभावको देखकर हमें शोक होता है कि बचपनमें हमने उनके साथ बड़ा अन्याय और बड़ी नीचता की।

"दूसरोंका राज्य लेनेके विषयमें लार्ड डलहौज़ीकी गवर्नमेंट-को कुछ ध्यान न रहता था और जब वे न्याय अन्याय और ज़ोर ज़ुलमसे राज्य ले चुकते थे तब ब्रिटिश पार्लमेंट या शासक कोई कुछ न कहता था, बल्कि वहां भी उनकी प्रशंसा ही होती थी।"*

पंजाब ब्रिटिश शासनमें आ गया। महाराज दिलीपसिंह अपने राज्यसे निकाल दिये गये। फतेहगढ़में उनके रहनेका प्रबन्ध किया गया। उनकी निजी सम्पत्तिको भी ब्रिटिश सरकारने न छोड़ा।† ऊपर कहा जा चुका है कि महाराज दिलीपसिंह

* F. M. Ludlow, British India its Races and History Vol II, P. 166.

† महाराज दिलीपसिंहने अपने विशेष पत्रोंमें लिखा था कि उनकी निजी जागीर-की आमद सालमें ४० लाख रुपये थी। इसके सिवा उनके गहने और कपड़े बीसों लाखके थे। गवर्नमेंटने उनकी वह जागीर तो ज़ब्त कर ही ली पर उनके गहने और कपड़े भी नीलाम कर लिये। दिलीपसिंहके कपड़े अढ़ाई लाखमें बिके थे, जिनके बदलेमें सरकारने कुल ३० हज़ार रुपये देना चाहा, पर दिलीपसिंहने इतना लेनेसे इनकार कर दिया।

और उनके रिश्तेदारोंके लिए ४ से ५ लाखतक रुपया वार्षिक नियत किया गया और दरबारमें यही घोषणा की गई थी। पर गद्दीसे उतारनेके पहले ही साल दिलीपसिंहको केवल एक लाख बीस हज़ार रुपये मिले। सात सालतक यही मिलता रहा, इसके बाद बढ़ाकर डेढ़ लाख रुपया साल कर दिया गया। अनेक तरहके कारण दिखाकर सरकार इस रुपयेमेंसे भी ७० हज़ार रुपये प्रतिवर्ष काटने लगी, अन्तमें पंजाबकेसरी महाराज रणजीत सिंहके पुत्रको सिर्फ़ ८० हज़ार रुपये प्रतिवर्षसे भी कम मिलने लगे। जिस समय वे गद्दीसे उतारे गये उस समय महाराज दिलीपसिंह ग्यारह बरसके थे। गद्दीसे उतारकर इनको सर जान लाजिन नामक एक अंग्रेज़ मास्टरके अधीन किया गया। सन् १८५३ में एक ईसाई पादरीने अपनी बाइबिलके आज्ञानुसार महाराज दिलीपसिंहको ईसाई बनाया। सोलह बरसका बालक केश कटाकर ईसाई हो गया! एक सालके बाद ही पंजाबकेसरी-के पुत्रको अंग्रेज़ विलायत ले गये।* अन्तमें पेरी नगरमें इस इतिहास-प्रसिद्ध बालककी मृत्यु हुई। प्रसिद्ध रत्न कोहनूर

* दिलीपसिंहको इंग्लैंड जानेकी इच्छा न थी, सरकारके दबाव डालनेपर बाधित होकर उन्हें जाना पड़ा। सन् १८५७ में वे लौट आना चाहते थे, सरकारने उन्हें न आने दिया। इंग्लैंड बहुत दिन रहनेके बाद दिलीपसिंहका हृदय स्वदेशके दर्शनोंके लिये तरसने लगा। इस समय इंग्लैंडसे उन्होंने पंजाब-वासियोंके नाम एक मार्मिक पत्र बड़ी हृदयग्राही भाषामें लिखा जिससे उनके हृदयका भाव टपकता है :—

इंग्लैंडके राजाके मुकटमें लग गया। अब महारानी जिन्दांका क्या हुआ? जिसके लिए प्रभुभक्त खालसा सेनाने संग्राम किया, जिसके लिए हज़ारों लाखोंका रक्त बहा उसका परिणाम क्या हुआ? सैकड़ों तरहके परिवर्तनोंके बाद बुढ़ापेमें अन्धी होकर अन्तमें वह भी अपने बेटेका मुंह देखनेके लिए सात समुद्रपार विलायत गई। सन् १८६३ में इंग्लैंडमें पंजाबकी महारानी एक साधारण दरिद्रकी तरह अपने बेटेके घुटनेपर सिर रखकर मरी। हा! पंजाबकेसरी महाराज रणजीतसिंहके राज्यकी, धन परिवारकी ऐसी दुर्दशा!

"प्यारे पंजाबवासियो!

मैं फिर किस मुंहसे पंजाब वापिस आकर रहूं, इच्छा थी कि मुंह न दिखाता, पर 'वाह गुरु' सबके मालिक हैं। गुरु भगवानकी प्रेरणासे इच्छा है कि फिर अपनी जन्मभूमि पंजाबमें एक साधारण दरिद्रकी तरह आकर रहूं। मैं आता हूं, 'वाह गुरुकी जो इच्छा होगी, होगा। खालसा भाइयो! मैं अयोग्य हूं, अपने बापदादोंका सनातनधर्म त्यागकर मैं ईसाई बना, मुझे क्षमा करो। जिस समय मुझे ईसाई बनाया गया तब मैं बच्चा था, कुछ नहीं कर सकता था। मैंने अपना सिक्खधर्म ग्रहण कर लिया है। मैं अब बाबा नानकके अनुशासन और गुरु गोविन्दसिंहके आज्ञानुसार चलूंगा। अपने प्यारे पंजाब और अपने प्यारे खालसा भाइयोंको देखनेके लिए जी बेचैन है पर मुझ पापीको देशके दर्शन कदाचित् न हो सकें मुझे शायदही वापिस आने दें। मैंने अंग्रेज़ी शासनपर पूरा विश्वास किया था और उसका पूरा फल पा लिया। 'वाह गुरुका खालसा, वाह गुरुकी फ़तह।'

मैं आपके रक्तमांससे बना—

दिलीपसिंह।

सिक्खधर्म ग्रहण करके दिलीपसिंह भारत लौट रहे थे तब सरकारकी आज्ञासे अदनसे पकड़कर वे वापिस विलायत भेज दिये गये।

सब प्रकारकी ईमानदारीके सिरपर पैर रखकर डलहौज़ी-की गवर्नमेंटने पंजाब अपने हस्तगत किया। अब गवर्नमेंट भी पंजाबके राज्यपर ध्यान देने लगी। एक ओर फौजी लाट लार्ड गफ़ अपनी सेना लेकर जगह जगह खालसा लोगोंको दबाने लगे दूसरी ओर डलहौज़ीके प्रतिनिधि इलियट साहब राज्यका इन्तज़ाम करने लगे। सब कर्मचारियोंसे बड़ी सहानुभूति दिखा दिखा कर काम लिया जाने लगा। किसी तरहकी अशान्ति या गड़बड़ न हुई। राज्य लेनेमें कोई अड़चन भी न आई। जो आदमी जिस कामपर था उससे वही काम शान्तिके साथ लिया जाने लगा। पंजाब बड़ी शान्तिसे सरकारी शासनमें मिल गया।

इस तरह जो राज्य सरकारके हाथ लगा वह पचास हज़ार वर्गमील लंबा चौड़ा था। उसमें चालीस लाख जनसंख्या बसी थी। प्रजा अधिकतर सिक्ख, हिन्दू और मुसलमान थी। बाबा नानककी अक्षय पुण्यधारा और गुरु गोविन्दसिंहकी साधनासे सिक्ख सबल थे। सिक्खोंने पंजाबमें बड़ा प्रबल राज्य स्थापित किया था। मुसलमान भी पंजाबमें अच्छी संख्यामें बसे थे। ऐसा समृद्ध वीर पंजाब अंग्रेज़ी सरकारके हाथ आया। लार्ड डलहौज़ीने पंजाबपर दीवानी और फौजदारी कर्मचारी छांट छांट-कर मुकर्रर किये। पंजाबपर अच्छी तरह अधिकार जमानेके लिये एक शासनसमिति बनाई गई। इस समितिका प्रधान सर हेनरी लारेंसको बनाया। सर हेनरी लारेंस योग्य आदमी थे, वे अपने और प्रजाके अधिकारोंको अच्छी तरह समझते थे।

जब शासनसमितिने अपना शासन दृढ़तासे जमा लिया, सब जातियों और सर्दारोंसे सुलह कर ली, सब उपद्रव शान्त हो गये ; तब लार्ड डलहौज़ीने शासनसमिति तोड़कर लेफ्टिनेंट गवर्नर नियत कर दिया। इस प्रकार महाराज रणजीतसिंहका स्वाधीन पंजाब अंग्रेज़ी शासनके अधीन हो गया।



दूसरा अध्याय



लार्ड डलहौज़ीका राज्यशासन—ब्रह्माकी लड़ाई—पेगूपर अंग्रेज़ोंका अधिकार—गोदलेनेकी प्रथाके विरुद्ध सरकारका कानून—सितारा—झांसी—नागपुर—करौली—हैदराबाद निजाम—कर्नाटकके नवाब—तंजोर—सम्भलपुर—पेशवा—धुंधूपंथ—नानासाहब आदि।




हिन्दुस्तानमें पैर जमाकर लार्ड डलहौज़ीने दो स्वाधीन राज्य अंग्रेज़ी शासनमें मिला लिये, एक पंजाब, दूसरा पेगू। पहलेके विषयमें लिखा जा चुका है और दूसरेके साथ इतिहासका इतना अधिक सम्बन्ध नहीं है इसलिए संक्षेपसे उसका विवरण दिया जायगा।

ब्रह्मदेशके पेगू नामक स्थानमें जब अंग्रेज़ व्यापारी व्यापारके लिये गये तब वहाँ एक अंग्रेज़का अपमान हो गया, बस, युद्धके लिये इतना ही कारण पर्याप्त था। ब्रिटिश गवर्नमेंटने अनेक जंगी जहाज वहाँ भेज दिये।* बाधित होकर पेगूके राजाको भी लड़ना ही पड़ा। थोड़े ही कालमें पेगू अंग्रेज़ी शासनमें मिला लिया गया। सन् १८५२ की २० दिसम्बरको लार्ड डलहौज़ीने पेगूपर अंग्रेज़ी शासनका घोषणापत्र निकाला।† जैसे पंजाब

---

* Rulers of India, Dalhousie P. 110.

† Empire of India P. 357.

अन्यायसे लिया गया था वैसे ही पेगू भी गवर्नर जनरलके अन्यायका शिकार हुआ । एक ओर लड़कर लार्ड डलहौज़ी स्वाधीन राज्योंको ब्रिटिश शासनमें मिलाते थे और दूसरी ओर राजाओंसे सुलह करके उन्हें अपने अधीन करते जाते थे। दुःखका विषय यही है कि इतिहासलेखकोंने इतिहासके सच्चे मार्गपर पानी फेरकर लार्ड डलहौज़ीकी इस नीतिकी ही प्रशंसा की।*

अब लार्ड डलहौज़ीकी रणनीतिको छोड़कर उनकी राज-नीतिका हम वर्णन करते हैं। उन्होंने जिस तरहकी चालोंसे पंजाब और पेगू ले लिये उनका ऊपर वर्णन हो चुका, परन्तु उन्होंने दूसरी नीतिसे भी कई राज्य अपने अधीन किये। जिस राजाका उत्तराधिकारी न रहा उसके राज्यको भी सरकारने अपनेमें मिला लेनेका एक कानून बना लिया।

पुत्र जैसे इस लोकमें अपने मातापिताको प्रसन्न करता और उनके बुढ़ापेमें उनका सहायक होता है वैसे ही परलोकमें भी "पुं" नाम नरकसे रक्षा करता है, श्राद्ध तर्पणसे अपने पितरोंको तृप्त करता है। धर्मशास्त्रके अनुसार प्राचीन कालसे यह प्रथा इस देशमें चली आई है कि जिसके अपना पुत्र न हो वह अपने भाई

* ड्यूक आर्गाइल और चार्ल्स जैक्सन आदिने डलहौज़ीकी नीतिका समर्थन किया है—The Duke of Argyle : India under Dalhousie and Canning, Sir charles Jackson, A Vindication of the Marquis of Dalhousie's Indian Administration.

बन्धु या जातिका पुत्र गोद् ले लेता था। जैसे औरस पुत्र स्थावर और जंगम सम्पत्तिका मालिक बनता है वैसे ही वह गोद्का पुत्र भी सबका स्वामी समझा जाता है, पर ब्रिटिश गवर्नमेंटने एक नया क़ानून बनाकर भारतको चकित कर दिया। ब्रिटिश सरकार हिन्दुस्तानकी स्वामिनी है, इसलिए जिस राजाका पुत्र न हो वह ब्रिटिश सरकारकी स्वीकृति लिये बिना गोद न ले, नहीं तो राज्य सरकारका होगा। यह नियम केवल राजाओंके लिये ही था, सर्वसाधारण प्रजाके लिये नहीं।* सितारा और झांसीके राजाओंने पुत्र न होनेके कारण जो पुत्र गोद लिये थे उन्हें सरकारने मंजूर न किया और दोनों राज्य इसी कारण अंग्रेज़ी शासनमें मिला लिये गये। इस कानूनसे हिन्दुस्तानका राजसमाज कांप उठा। अंग्रेज़ राजनीतिज्ञोंने बहुत सोच विचारकर अपना राज्य बढ़ानेका यह नया जाल तैयार किया था। सबसे पहले यह कानून सितारेपर लगाया गया।†

सितारा प्रान्त महाबलेश्वर पर्वतकी शीतल छायामें बसा है। कृष्णा नदीका शीतल जल उसके पैर पखारता है। पास भीमा और नीरानदीके जलसे सिंचकर मानो भूमि निसर्गकी

* A Vindication of the Marquis of Dalhousie's Indian Administration. P. 5. Comp. Kaye's Sepoy War Vol I. P. 70.

† Retrospects and Prospects P. 180

हरी भरी मख़मलकी चोली पहने अपनी अनुपम शोभा दिखाती है। जैसा सितारेका प्राकृतिक दृश्य सुन्दर है वैसा ही उसका इतिहास भी सुन्दर है। जिस वीरकी हुंकारसे एक दिन मुग़ल साम्राज्य सिरसे पांव तक थर्रा जाता था, जिसका प्रबल प्रताप हिमालयसे कन्याकुमारी तक फैल गया था, उस हिन्दूकुलके गौरवस्वरूप महाराज शिवाजीका यह नगर प्रेमभाजन था। जिस समय आर्यसन्तान कुचली जा रही थी, जिस समय सूर्यचन्द्र-वंश निस्तेज हो रहे थे, जिस समय भारतका गौरव नष्ट होकर धीरे धीरे निराशाकी घोर निशा इस देशमें फैलती चली जा रही थी, उस समय छत्रपति शिवाजीकी गम्भीर रणभेरीका घोष सितारेसे सुनाई दे रहा था, महासागरके उत्ताल तरंगोंके आघातोंके समान बीस करोड़ हृदयोंमें उस रणभेरीके आघात भी उत्साहको जगा रहे थे। जिस समय भारतमें अंग्रेज़ आये तब इस सितारेकी गद्दीपर महाराज प्रतापसिंह विराजमान थे। महाराष्ट्र राज्यके संस्थापक महाराज शिवाजीके वंशमें होनेके कारण महाराज प्रतापसिंहका महाराष्ट्रसमाजमें बड़ा आदर था। सन् १८१६ में सरकारने महाराज प्रतापसिंहसे मित्रताकी सन्धि की।* उसके बाद महाराज प्रतापसिंह सरकारसे बड़ी मित्रतासे बरतते रहे, पर २० साल बाद ही उसपर (सन् १८३६) गोआकी पोर्च्यूगीज सरकारसे मिलकर अंग्रेज़ सरका-

सन् १८४९

* Arnolds Dalhousie's Administration Vol. II. P. III.

रके विरुद्ध षड्यन्त्र रचनेका दोष लगाया गया। महाराज प्रतापसिंहने इस दोषको बिल्कुल असत्य सिद्ध कर दिया पर सरकारने इसपर कुछ ध्यान न दिया। बिना कानून और बिना किसी विचारके महाराज प्रतापसिंहको आधीरातके समय पकड़कर पिंजरेमें बन्द कर दिया और बादमें उन्हें बनारसमें क़ैदी बनाकर रखा। सब धन, सम्पत्ति सरकारने अपना ली।* प्रतापसिंहके भाई आशासाहब, पेशवा बाजीरावके हाथोंमें क़ैद थे, सरकारने उन्हें क़ैदसे छुड़ा कर सितारेकी गद्दीपर बैठाया। सन् १८४८ को ५ अप्रेलको आपासाहबका देहान्त हुआ। शास्त्रकी रीतिके अनुसार वे पहले ही एक पुत्र गोद ले चुके थे।† इधर प्रतापसिंहने भी एक पुत्र गोद लिया था। पर लार्ड डलहौज़ीकी सरकारने दोनों गोद लिये हुए पुत्रोंको क़ानूनके विरुद्ध बताया। सन् १८४९ में लार्ड डलहौज़ीने लिखा कि—"कोई पुत्र उत्तराधिकारी न होनेके कारण सितारा राज्य अंग्रेज़ी शासनमें मिला लिया गया।"‡

सन् १८४९ की पहली जनवरीको इंग्लेण्डमें 'कोर्ट आफ़ डाइरेक्टर्स' की सभा बैठी। उसने डलहौज़ी सरकारकी इन सब बातोंका समर्थन किया। सितारा राज्य सदाके लिए अंग्रेज़ोंके हाथोंमें चला गया।¶ इस तरह भीमा और नीराका सुन्दरतम

* Dalhousies Administration. Vol: II P. III.

† Empire in Asia P. 162.

‡ Arnolds Dalhousie's Administration Vol. II. P. 113

¶ Kaye's Sepoy War. Vol I. P. 71.

प्रदेश और पर्वतराज महाबलेश्वरका सुन्दर चरणभाग ब्रिटिश शासनमें अपने भाग्य परखने लगा। जिस सितारेकी पर्वतकन्दराओंमें एक दिन महाराज शिवाजीका विजयका नक्कारा बजा था, जहांसे विजय-नाद दशों दिशाओंमें फैलता था वह सितारा अब अंग्रेज़ोंकी नौकरशाहीके अधीन हो गया, वह तेज और साहस लोप हो गया और विदेशियोंके सुख सौभाग्यका वही क्रीड़ाभूमि बन गया।

गोद लिये पुत्रोंको ग़ैरक़ानूनी बतलाकर सरकारने सितारा राज्य लिया था इसे इतिहास कभी न्याय नहीं कह सकता। सन् १८१९ में महाराज प्रतापसिंहसे जो सन्धि हुई उसमें सरकारने यह वचन दिया था कि सितारा राज्य महाराज प्रतापसिंहके वंशवालोंके अधीन ही रहेगा।* पर इस सन्धिको कागजका टुकड़ा समझा गया और सितारेपर अंग्रेज़ी झंडा फहराने लगा। अस्तु, यह सच है कि महाराज प्रतापसिंहने राज्यसे उतारे जानेके बाद पुत्र गोद लिया था, पर आपासाहबके विषयमें तो यह बात नहीं कही जा सकती थी? आपासाहब तो सितारेकी गद्दीपर बैठे थे और शास्त्रके नियमोंके अनुसार उन्होंने भी पुत्र गोद लिया था। फिर किस नियमके अनुसार सरकारने इसे नाजायज़ कहा? फिर किस नियमसे उसके राज्यपर अंग्रेज़ी झंडा लहराने लगा? कारण हो या न हो, न्याय हो या अन्याय हो, सरकारको तो

* Empire in Asia P. 171. Kaye's Sepoy War, Vol I. P. 72.

अपना राज्य बढ़ा कर अपना मतलब साधना था। क़ानूनोंका जाल रचना और दोषारोपण करना तो एक बहाना था, एक जाल था, एक कूटनीति थी।

यहाँ बैठकर लार्ड डलहौज़ी जो कुछ करते थे उसपर इंग्लैंड-की कोर्ट आफ़ डाइरेक्टर वाह वाह कहनेको तैयार थी। ड्यूक आफ़ आर्गाइलके अनुसार सितारा लेनेपर कोर्टके सब सभासदोंने इसे अच्छा कहा था।* सूक्ष्मदर्शी मेज़र इवान्सवेलने डाइरेक्टर कोर्टके अनेक ऐसे सभ्योंके भी मत दरशाये हैं जो सितारेके फैसलेके विरुद्ध थे, पर ऐसे लेखक भी थे जो यहांतक लिख गये कि लार्ड डलहौज़ीने यह कोई नया क़ानून नहीं चलाया बल्कि हिन्दुस्तानमें यह रीति सदासे चली आई है कि जिस राजाके पुत्र न हो उसका राज्य चक्रवर्तीके राज्यमें मिला लिया जाय। डलहौज़ीने इस पुराने रिवाजको ही वरता था।† पर यह बात सच नहीं है। हिन्दू राजाओंके जमानेमें और मुसलमानोंके जमानेमें तो कभी ऐसा नहीं हुआ। हिन्दू धर्मशास्त्र बराबर गोद लेनेकी आज्ञा देता रहा है और इवान्सवेल जैसे लेखकने इस सत्यको माना है।‡ पर सच तो यह है कि डलहौज़ी सरकार राज्यके लोभको कहां छोड़ देती।

---

* Duke of Argyle: India under Dalhousie and Canning P. 27.

† A Vindication of Dalhousie's Indian Administration P. P. 9. 16.

‡ Empire in Asia P. 123. Ibid P. 231.

इवान्सवेलके समान नार्टन लडलो आदि मनस्वी लेखकोंने भी लिखा है कि हिन्दुस्तानमें गोद लेनेके विरोधमें कभी कोई कानून नहीं बना—यह कानून सिर्फ सरकारके दिलकी उपज थी।* और तो क्या बम्बई प्रेसीडेंसीके गवर्नर सर जार्ज क्लर्क भी सरकारकी इस नीतिके विरोधी थे। सर जार्जने साफ कहा था—"जब एक राज्यसे सन्धि की गई है और यह लिख दिया गया है कि 'तुम और तुम्हारे उत्तराधिकारियोंसे हमारा मित्रताका सम्बन्ध रहेगा और इस राज्यके मालिक तुम्हारे उत्तराधिकारी होंगे'—तब इसके क्या मतलब कि उसके धर्मके अनुसार जो कोई उत्तराधिकारी हो उसे भी हम नाजायज़ कहें? गद्दीपर बैठे हुए सिताराके राजाने जिस बालकको अपने धर्म और रीतिके अनुसार गोद लिया है वही सितारेकी गद्दीका न्यायके अनुसार मालिक है।"† एड्विन आर्नोल्डने डलहौज़ीके शासनकी समालोचना करते हुए सितारेकी घटनापर लिखा है—"नीरा और भीमा नदीके स्वच्छ जलसे सिंचे और फल सम्पत्तिसे भरे-पूरे महाबलेश्वरके साथ धनों और जनोंसे पूर्ण सितारा राज्य अन्यायसे सरकारके हाथों लगा। प्रतापसिंह अपने व्यवहारसे गद्दीसे उतारे गये पर आपासाहब हमारे मित्र थे उनका राज-कार्य प्रशंसाके योग्य था। सर्वसाधारणके उपकारके कामोंमें

---

* Ibid P. 131.

† Annexation of Sattara 1849. P. 62. Empire in India P. 164.

उनका बड़ा मनोयोग था। इस स्थानपर उनकी व्यक्तिगत बातों को छोड़कर हम केवल कानूनके आधारपर विचार करते हैं। कानूनके अनुसार विचार करते हुए सितारा लेनेका हमें क्या अधिकार है ? सितारेमें किसी तरहका अन्याय अत्याचार या अराजकता न थी। लार्ड डलहौज़ीकी सरकार एक कारण पेश करती है कि "सितारा एक अधीन राज्य और सरकार एक प्रभुशक्ति है।" अगर अपनेको प्रभुशक्ति कहकर सरकार इस तरह राज्योंको हड़पा करे तो उसने सन् १८१८ में जो घोषणा की थी उसका क्या तात्पर्य होगा ?

ब्रिटिश सरकारने सन् १८१८ की घोषणामें स्पष्ट कहा है कि "सिताराका राजा, बाजीरावसे स्वाधीन होकर राज्य करेगा।" घोषणाके "स्वाधीन" शब्दका क्या अर्थ है ? प्रताप-सिंहके बाद आपासाहबको गद्दी देनेसे इस स्वाधीन शब्दका अर्थ समझमें आ जाता है, पर आपासाहबके बाद फिर क्या हुआ ? गद्दीपर बैठे हुए आपासाहबने जो पुत्र गोद लिया वह किस नियम और रूढ़िसे नाजायज कहा गया ? ब्रिटिश सरकार-को जो अधिकारपत्र दिया गया था उसके अनुसार आपा-साहबके गोद लिये पुत्रको राज्य मिलना चाहिये था। कानून मानें तब भी उसीका अधिकार था और बहुमत स्वीकार करें तब भी बाध्य हैं, यदि नीतिका अनुसरण करें तब भी गोद लिये पुत्रका अधिकार नहीं मार सकते। यह कलंकका टीका सरकार-

के माथेपर ऐसा लगा जो कभी मिट नहीं सकता। अंग्रेज़ी राज्यके पास इस अन्यायका कोई उत्तर ही नहीं है।*

ऊपर वाले शब्द एक निष्पक्ष अंग्रेज़ इतिहासलेखककी लेखनीसे निकले हैं। इस असार संसारमें विना पक्षपातके सत्यका उल्लेख करके इस लेखकने इतिहासके गौरवकी रक्षा की है। शोक यह है कि ब्रिटिश सरकारको अपना अन्याय दिखाई नहीं दिया और विलायतकी डाइरेक्टरोंकी सभाने सरकारके इस नीच कामपर वाहवाही की। हिन्दू धर्मशास्त्र जिस गोदके पुत्रको सदासे जायज कहते और करते चले आ रहे थे वह सरकारकी एक कलमके इशारेसे नाजायज हो गया। सच यह है, उस समय अंग्रेज़ जाति हिन्दुस्तानके नकशेको लाल रंगसे रंगा हो देखना चाहती थी।

भारतके मानचित्रमें हृदयके स्थानपर, बुंदेलखण्डके छोटे छोटे राज्योंसे घिरा हुआ छोटा सा प्रान्त झांसी है। झांसी महाराष्ट्र-कुलके गौरवस्वरूप पेशवाके अधीन था। सन् १८१७ में जब बुंदेलखण्डके सब राज्य अंग्रेज़ी शासनमें आगये तब झांसीके राजा रामचन्द्ररावसे सरकारकी सन्धि हुई। सन्धिपत्रपर लिखा गया कि रामचन्द्रराव और उनके वारिस सदा झांसीपर राज्य करेंगे।† इस सन्धिके बाद जब तक रामचन्द्रराव जीते

* Arnolds Dalhousie's Administration of B. India Vol II. P. P. 121—125.

† Empire in Asia P. 203. Kaye's Sepoy War. Vol. 1. P. 89.

रहे तब तक वे अंग्रेज़ोंसे बराबर सज्जनता और शिष्टताका व्यवहार करते रहे। सन् १८२५ में जब लार्ड कम्बरमियरने भरतपुरके अभेद्य दुर्गपर चढ़ाई की तब नानापण्डित नामक एक मध्य भारतके सर्दारने बड़ी फौज इकट्ठी करके कालपीको घेर लिया। यह आपत्ति देखकर रामचन्द्ररावने तुरन्त मददके लिए ४०० सवार, १००० पैदल सिपाही और दो तोपें अंग्रेज़ोंके लिये भेजीं, कालपी नगरको नानापण्डितसे बचाया।*

इससे ब्रिटिश सरकार बड़ी प्रसन्न हुई और सन् १८४२ की १९वीं दिसम्बरको झांसीमें दरबार हुआ जिसमें लार्ड विलियम बैंटिंकने रामचन्द्ररावको "महाराज" की पदवी और छत्र चमर देकर उसका सम्मान किया। इसके तीन साल बाद रामचन्द्ररावकी मृत्यु हुई।†

रामचन्द्ररावके कोई सन्तान न थी। उनके कुटुम्बियोंमें चार पुरुषोंने अपनेको गद्दीका अधिकारी घोषित किया। गवर्नर जनरलके एजेंटने रामचन्द्ररावके भतीजे रघुनाथरावको सबसे निकट सम्बन्धी समझ कर गद्दीपर बैठाया। यद्यपि रघुनाथराव कोढ़ी और राज्यके अयोग्य था वह राजकार्य अच्छी तरह नहीं कर सकता था, पर सर्वसाधारणने उसे ही प्रसन्नताके साथ राजा माना। तीन सालके बाद रघुनाथराव भी सन्तानहीन ही मर गया।

* Empire in India P. 217.

† Ibid P. 217.

रघुनाथरावकी मृत्युके बाद, सन् १८३८ में फिर गद्दीके अधिकारका झगड़ा खड़ा हुआ। उस समयके गवर्नर जनरल लार्ड आकलैंडने एक सभा बैठा कर उसके हाथमें निर्णयका काम सौंप दिया। सभाके निर्णयमें रघुनाथरावके भाई गंगाधरराव गद्दीके अधिकारी सिद्ध हुए। गंगाधरराव ही झांसीके राजा बने।

पर झांसीका भाग्य उज्ज्वल था। गङ्गाधरराव भी निस्सन्तान मर गये। अपनी मौत निकट समझ कर गङ्गाधररावने १९ नवम्बरको एक पुत्र गोद लिया। यह गोद लेनेकी रस्म ब्रिटिश

१८५६ ई०

रेजीडेंट मेजर एलिस और मेजर मार्टिन नामक सेनाध्यक्षके सामने हुई थी।* इस गोदके विषयमें उन्होंने एक बार रेजीडेंटको लिखा था—"इस समय मैं अधिक बीमार हूं। सिरपर शक्तिशाली सरकारके होते हुए भी मेरे बापदादोंका नाम लोप होता हुआ देखकर चित्त खिन्न होता है। ब्रिटिश सरकारके साथ जो सन्धि है उसकी दूसरी धाराके अनुसार मैं आनन्दराव (गोदके बाद इस लड़केका नाम दामोदर गङ्गाधरराव हुआ) पांच सालके बच्चेको गोद लेता हूं। अगर ईश्वरकी दया और सरकारके अनुग्रहसे मैं इस बीमारीसे बचा और मेरे कोई पुत्र सन्तान हुई तो इस विषयमें मैं यथायोग्य व्यवस्था करूंगा। पर मैं जीता न बचूं तो सरकार मेरी विधवा स्त्री और इस बालकको जन्म भरके लिए राज्यका

* Empire in India P. 202.

अधिकारी समझे। इनके प्रति कभी किसी तरहका बुरा बर्ताव न हो।"*

गङ्गाधररावका यह अन्तिम पत्र था। उसकी लेखनीसे विनय, सज्जनता और भद्रता टपकती है। पर उनका अन्तिम अनुरोध पूरा न हुआ। इस समय लार्ड डलहौज़ी गवर्नर जनरल थे जिन्होंने सुलहनामेको काग़ज़का टुकड़ा समझ कर नाबालिग दिलीपसिंहका राज्य छीन लिया था। जिनकी कूट राजनीतिके फेरमें सिताराका राज्य अपना अस्तित्व खो बैठा अब झांसी भी उनके हाथका खिलौना बना। मौका देखकर डलहौज़ीने सिताराकी तरह झांसी भी अंग्रेज़ी शासनमें मिला लेनेका निश्चय किया। तुरत आज्ञा निकली। झांसी मरहटा खान्दानके हाथोंसे निकलकर अंग्रेज़ी राज्यका एक भाग समझा जाने लगा।

गङ्गाधररावकी विधवा स्त्री महारानी लक्ष्मीबाई तेजस्विता और वीरतामें पुरुषोंके समान थी। उसका हृदय महिलोचित पवित्र लज्जा आदि गुणोंसे शोभित था, उसके हृदयमें स्थिरता, दृढ़ता और न्यायका वास था। यदि मधुरता, कोमलता और सुन्दरताके साथ साथ ओज, तेज और वीरताका सहयोग देखना हो, यदि प्रातःकालकी मंद मंद वायुसे लहराते हुए कमलकी सुकुमारताके साथ साथ समुद्रकी उत्ताल तरंग देखनेकी इच्छा हो, यदि वीणाके मधुर झंकारके साथ साथ पर्वतों और जंगलोंको गुंजादेनेवाली शेरकी गर्जना सुननी हो तो महारानी लक्ष्मी-

* Arnolds Dalhousie's administration Vol II. P. 148.

बाईके चरितपर दृष्टि डालिये। महारानीमें कमलकी कोमलता और वज्रकी कठोरता दोनों साथ साथ बहनोंके समान रहती थीं। सन् १८५४ में ब्रिटिश एजेंट मेजर मालकमने लिखा था—"लक्ष्मीबाई आदर और मानके योग्य हैं, राज्यके यह सर्वथा योग्य हैं। इनका स्वभाव उच्चभावोंसे भरा हुआ है। सब झांसीवाले इन्हें बड़े सम्मानसे देखते हैं।"* लक्ष्मीबाई उच्च भावोंके कारण जैसी माननीय महिला थी वैसी ही उन्नीसवीं सदीकी वह एक अद्वितीय वीर रमणी थी।

लक्ष्मीबाईने अपने पति और पुत्रके राज्यकी हर तरहसे रक्षा करनेका प्रयत्न किया। सन्धिकी शर्तें, मित्रताके नियम, सरकारकी दी हुई सहायताके दृष्टान्त, गोद लेनेकी प्राचीन विधि, अंग्रेज़ अफसरोंकी गोद लेनेमें साक्षियां, सब कुछ दिखाकर उसने अपने राज्यको स्वतन्त्र रखनेकी प्रार्थना की। पर सरकारने एक न सुनी। लार्ड डलहौज़ीने जो तलवार म्यानसे निकाली थी उसका वार झांसीपर पड़ा। इस अपमान और अन्यायसे वीरनारी लक्ष्मीबाईका हृदय व्याकुल हो गया। वह केवल आंखके आंसू गिरा कर शान्त न हुई, उसके आंसू आगकी लपटें बनकर चारों ओर मंडराने लगे। दृढ़ प्रतिज्ञाने जिसके मन और वचनको उदार कर दिया, अटलताने जिसके हृदयको वज्र बना दिया, अध्यवसायने जिसके सब विघ्नोंको कुचल डाला उसे

* Jhansi Blue-Book P.P. 7. 28. Comp. Empire in Asia P. 219.

कभी किसी विपत्तिसे डर नहीं, वह कर्त्तव्यसे विमुख होकर अपने भविष्यकी उपेक्षा नहीं कर सकता। महारानी लक्ष्मीबाई इसी प्रकृतिकी वीरनारी थी। वह न विपत्तिसे डरी और न अपने कर्त्तव्यसे विमुख हुई। जिस समय वह ब्रिटिश रेजीडेंटसे मिली परदेकी ओटमेंसे क्रोध भरे वचनोंमें कहा—"मेरी झाँसी मुझे न दोगे?" लक्ष्मीबाईके इन शब्दोंसे अंग्रेज़ प्रतिनिधि चौंक उठा। झांसीको अंग्रेज़ोंके हाथमें आया देख कर उस वीरनारीने अपना अपमान अबलाके समान सिसकियां लेकर न सहा।

लार्ड डलहौज़ीने सिताराकी तरह झांसीपर भी नीच और अनुदार नीतिका प्रयोग किया। लार्ड मेटकाफने बुंदेलखंडके छोटे छोटे राज्योंको अंग्रेज़ी शासनमें ले लेनेके सम्बन्धमें जो कुछ कहा है, उसमें उन्होंने झांसीके विषयमें लिखा है:— "हिन्दू राजाओंके विषयमें मैं यही कहूंगा कि यदि उनके अपनी सन्तानें न हों तो गोद लेनेका उन्हें पूरा अधिकार है। ब्रिटिश सरकारको यह हिन्दूशास्त्रोंकी पुरानी प्रथा माननी चाहिये। यदि कोई निकटका सम्बन्धी न हो या किसीका उसपर अधिकार भी न रहा हो तो सरकारको उसकी जागीरका स्वामी होना चाहिये।"*

लार्ड डलहौज़ीने लार्ड मेटकाफके अन्तिम वाक्योंको उद्धृत

* Empire in India P. 204.

करके झांसी लेनेकी घोषणा निकाली।* पर लार्ड मेटकाफके शब्दोंका यह अर्थ ही नहीं होता, उनकी सम्मति गोद लेनेके सर्वथा पक्षमें है। झांसी वंशपरम्पराका राज्य था, वहां कई पीढ़ियां बीत गई थीं, वह एक बड़ा राज्य समझा जाता था। सन् १८३२ में लार्ड विलियम बेंटिंकने झांसीके राजाको महाराजकी पदवी और छत्र चंवर आदि देकर सम्मान किया था। पहलेसे ब्रिटिश सरकारने झांसीसे सन्धि की थी, सन्धिमें झांसी मित्र-राज्य माना गया था। झांसी किसी तरह भी जागीरदारी राज्य नहीं माना जा सकता। सन् १८१६ में जो सन्धि हुई थी उसके अनुसार झांसीको सब राज्याधिकार प्राप्त थे।†

डलहौज़ीने एक और बड़ी भारी भूल की। उन्होंने लिखा था कि "सन् १८२५ में रामचन्द्ररावकी मृत्यु हुई। यद्यपि उन्होंने अपनी मृत्युसे एक दिन पहले ही गोद लिया था, पर ब्रिटिश सरकारने उस बालकको झांसीका वास्तविक उत्तराधिकारी न माना। इसलिये रामचन्द्ररावके भतीजेको झांसीका राज्य दिया गया।"‡ ड्यूक आव आर्गाइल और सर चार्ल्स जैक्सनने भी डलहौज़ीको युक्तिका ही समर्थन करते हुए १८५६ में जो लड़का गोद लिया

* Ibid P. 205, 'के' का इतिहास भी डलहौज़ीका समर्थक है, Kaye's Sepoy War Vol I. P. 91.

† Empire in India. P. 209.

‡ Jhansi Blue Book P. P. 21, 22. Comp. Empire in India P. 211.

गया था उसे जायज नहीं माना।* पर इवान्सवेलके सूक्ष्म विचारमें लार्ड डलहौज़ीकी यह उक्ति यथार्थ सिद्ध नहीं हुई। सन् १८२५ में झांसी राज्यके उत्तराधिकारके विषयमें गड़बड़ मची हुई थी। उस समय चार आदमी राजगद्दीके प्रार्थी थे। रामचन्द्ररावने जो बेटा गोद लिया था उसके लिए जानेमें अनेक तरहके शक थे इसलिये उसके भतीजे आनन्दरावको गद्दी दी गई। भारत सरकारके सेक्रेटरीने इस विषयमें साफ लिखा था—"अगर यह गोद लेना उचित होता तो रामचन्द्ररावके भतीजके बदले इस गोद लिये लड़केको ही झांसीका राज्य दिया जाता, पर यह गोद (जिसके नियमानुसार गोद लिये जानेमें अभी सन्देह है) का लड़का राज्यका मालिक न बनाया जाकर रामचन्द्ररावका भतीजा राज्यका मालिक बनाया गया।"† इससे यह सिद्ध होता है कि सन् १८३५ में जो गोद लिया गया उसमें भी संदेह था। पर सन् १८५६ में जो पुत्र गोद लिया गया उसमें किसी तरहका संदेह नहीं। गंगाधररावने हिन्दूधर्मके अनुसार पुत्र गोद लिया था और नियमानुसार इसकी सूचना सरकारको दी थी।‡ फिर यह गोद डलहौज़ीके मतसे बेक़ायदा कैसे

* Duke of Argyll, India under Dalhousie and canning P. 31. Sir Charls Jackson, A Vindication P. 11.

† Jhansi Blue Book P. 18, Comp. Empire in India P. 212.

‡ Empire in India P. 212.

सिद्ध हुई? किस क़ायदे और रीतिसे गंगाधररावका राज्य ब्रिटिश सरकारने छीन लिया? क्या अपराध था जो गंगाधर-रावकी स्त्रीकी प्रार्थना न सुनी गई। सन्धि और मित्रताका क्या यही परिणाम होता है?

एक स्थानपर डलहौज़ीने लिखा है—"झांसी अंग्रेज़ी राज्यके बीचमें है। अगर झांसी हमारे हाथ आ गई तो सारे बुंदेलखंड प्रान्तपर हमारा एक छत्र राज्य हो जायगा। इससे झांसीकी प्रजाका भी भला होगा।* झांसीकी प्रजाकी भलाईका बहाना लेकर डलहौज़ीने एक स्वाधीन राज्यकी स्वाधीनताका नाश किया। जिस राज्यके साथ सदा मित्र बने रहनेकी सन्धि की गई, भले और बुरे सभी अवसरोंपर जो सदा ब्रिटिश सरकारकी सहायता करता रहा, उसी राज्यकी एक असहाय विधवाको जेल भेजकर† और एक छोटेसे बालकको पृथक् करके सारा राज्य आप ले लिया गया! क्या यही सभ्यताकी डींग है? उदारता और प्रभुशक्तिका क्या यही अर्थ है?

ब्रिटिश सरकारने कलमके इशारेसे स्वाधीन झांसी राज्यको पराधीन बना दिया; पर वीर रमणी लक्ष्मीबाईके हृदयमें क्षोभ, दुःख और अपमानकी ज्वालायें उठ रही थीं वे शीघ्र ही बदलेकी भयानक दावानलके रूपमें बदल गईं। आगे चलकर हम इसका भी वर्णन करेंगे।

* Kaye's Sepoy War Vol. 1. P. 92.

† Ibid P. 151.

डलहौज़ीकी सरकारने जिस तरह सितारा और झांसीका राज्य छीन लिया उसी तरह नागपुरकी ओर भी हाथ बढ़ाया। जैसे सितारा और झांसी पराक्रान्त महाराष्ट्रकुल द्वारा शासित थे उसी तरह नागपुरमें भी पुत्र न होनेके कारण गोद लिया गया। इसी कारण लार्ड डलहौज़ीने इस राज्यको भी अंग्रेज़ी शासनमें मिला लिया।

नागपुर प्रसिद्ध भोंसलावंशके अधिकारमें था। सन् १८१८ में महाराज आपासाहबको जब गवर्नर जनरल लार्ड हेस्टिंग्सने गद्दीसे उतारा तब नागपुरकी गद्दीके लिये राज्यके प्रधान पुरुषोंने एक समिति बना सम्मति की। सबने मिलकर भोंसला खान्दानके एक निकटतम सम्बन्धी बालकको गद्दी दी। सन् १८२६ में जब यह बालक बालिग हुआ तब सरकारने इससे सन्धि की और उसमें यह शर्त थी कि भोंसलावंश सदा इसका मालिक होगा।*

इस बालिग़ राजाका नाम तीसरे रघूजी भोंसला था। ११ दिसम्बर १८५३ ई० को रघूजी भोंसलाका देहान्त हुआ। मौतके समय इनकी अवस्था उनचास सालकी थी। जब यह रघूजी नाबालिग़ थे तब दूसरे रघूजीकी स्त्री बंकूबाई राज्यका काम करती थी। बंकूबाई योग्य, राजनीति-कुशल और उन्नत चरित्रकी रमणी थी। पचास साल तक सब पारिवारिक और राजनीतिक कार्य इसके ही अधिकारमें रहे थे। तीसरे रघूजी जब बिना

* Arnolds Dalhousie's Administration Vol. II, P. 156.

सन्तानके मर गये तब बंकूबाईने यशवन्त हरराव (साधारणतः आपासाहब) नामक तीसरे रघूजीके निकट सम्बन्धी बालकको गोद लेनेका प्रस्ताव किया।* रानीका यह प्रस्ताव ब्रिटिश रेज़ीडेंट मैंनसिल साहबको समझाया गया। मैंनसिल साहबने इस प्रस्तावमें किसी प्रकारकी हां या ना न की।† रेज़ीडेंटने केवल यह कहा कि बिना प्रधान सरकारकी सम्मतिके वे किसी तरहकी गोदको जायज नहीं कह सकते।‡ ख़ैर जो कुछ हो, गोदकी रस्म नागपुर राजमहलमें बाकायदा हो गई। आपासाहबने तीसरे रघूजीका क्रिया-कर्म सब यथाविधि किया। आपका नाम जेनोजी भोंसला रक्खा गया।¶

रेज़ीडेंटने गवर्नमेंटको नागपुर राज्यकी स्थिति लिखी। डलहौज़ी उस समय नये जीते हुए पेगू राज्यको देखने गये थे, इसलिये कुछ उत्तर न दिया गया। जब लार्ड डलहौज़ी कलकत्ते वापस आये तब नागपुरकी समस्यापर विचार होने लगा। सेनापति 'लो' की राय थी कि नागपुरकी स्वाधीनता स्थिर रहनी चाहिये, पर लार्ड डलहौज़ी एकके बाद एक राज्य अपने हाथमें करते जा रहे थे, उन्हें एक स्वाधीन नीति कैसे अच्छी लग सकती थी ? रघूजीकी मृत्युके एक मास बाद २६ जनवरी

* Empire in India P. 174.

† First Nagpur Blue-Book 1854. P. 56.

‡ Empire in India P. 175.

¶ Ibid P. 175.

१८५४ ई० को नागपुर राज्यको ब्रिटिश शासनमें मिला लेनेकी घोषणा प्रकाशित हुई। असली उत्तराधिकारीका अभाव दिखाकर लार्ड डलहौज़ीने जैसे सितारा, झांसी लिया था वैसे नागपुर भी ले लिया।*

यशवन्तराव तीसरे रघूजीका बहुत ही निकट आत्मीय था। उसकी माता मैंनावाई महलोंमें ही रहती थी। महलोंमें रहते हुए ही १४ अगस्त १८३४ ई० को इसके एक पुत्र हुआ जिसकी खुशीमें २१ तोपें चलाई गई थीं।† इसी महीनेकी २५ तारीख़को नागपुरके सब प्रधान सरदार इकट्ठे होकर मिले, सहयोग हुआ, ब्रिटिश रेजीडेंटसे मिले। नागपुर राज्यमें, केवल इसी बालकके जन्मपर ऐसा किया गया। ख़ैर, मैंनावाईका पुत्र नागपुर महलमें राजकुमारोंकी तरह पलने लगा। यह बालक जहाँ भी जाता उसके साथ विशेष राजकर्मचारी भी जाते थे। महाराजने उसकी शिक्षाका उचित प्रबन्ध किया। दरबार या रेजीडेंटसे मिलते समय कुमार महाराजके साथ एक गद्दीपर बैठता था। मरहटोंमें बाल-विवाहकी प्रथापर महाराजने मैंनावाईके पुत्रके विषयमें इस नियमका पालन न किया। शुरूसे ही महाराजने मैंनावाईके पुत्रको अपने पुत्रके समान ही समझा। सबका विश्वास हो गया था कि तीसरे रघूजी मैंनावाईके पुत्रको ही गोद लेंगे। उसके विवाहमें महाराजकी विशेष विभूति न

* Empire in India. P. 125. Keye's Sepoy War Vol I. 77-83
† Empire in India P. 176.

देखकर यह विश्वास पक्का हो गया। यशवन्तरावका नागपुर राज्यसे इतना घनिष्ठ सम्बन्ध था। लार्ड डलहौज़ीने २८ जनवरी १८५४ ई० को नागपुर लेनेकी जो घोषणा प्रचारित की उसमें यशवन्तरावको "साधारण विदेशी" कहा।*

यशवन्तरावको गोद लेते हुए मैनाबाई, बंकूबाई या तीसरे रघूजीकी पटरानी अन्नपूर्णाबाईमें किसी भी प्रकारका विरोध नहीं देखा गया। आज्ञा मिलनेके साथ ही मैनाबाई और यशवन्तराव-के पिताने सब भाई बन्धुओंके सामने पुत्र अन्नपूर्णाकी गोदमें रख दिया। रानी और राज्यके मंत्रियोंने बड़ी धीरतासे सब बातें सरकारको लिखीं, सरकारके उत्तरकी प्रतीक्षा की गयी। जब रानियोंको लार्ड डलहौज़ीके नागपुर लेनेकी ख़बर मिली तब उन्होंने न्यायकी पुकार की—गोद लिये बेटेकी पवित्र शास्त्र-विधि, हिन्दूधर्म और प्राचीन रीति रिवाजोंके साथ ब्रिटिश सरकारसे जो मित्रताकी सन्धि हो चुकी थी उसका वर्णन किया। पर उनके इस यत्न और आग्रहका कोई फल न हुआ। और तो क्या हिन्दुस्तान छोड़ते समय २८ फरवरी १८५६ ई० को लार्ड डलहौज़ीने नागपुरके विषयमें लिखा था—"नागपुरके राजाको कोई पुत्र न था। राजाकी रानियोंने भी माना है कि महाराजकी मृत्युके बाद भी कोई पुत्र गोद नहीं लिया गया।"†

* Ibid P. 177.

† Papers, Minute by the Marquis of Dalhousie, February 28th 1856. No. 245 of 1856, Retrospects and Prospects P. 29.

लार्ड हेस्टिंग्सने सन् १८१८ में नागपुरके साथ जिस नीतिका अवलम्बन किया था, उसके विषयमें लार्ड डलहौज़ीने लिखा :— "आपासाहबने अपने दोषसे राज्य खोया, और यह बात गवर्नर जनरलके हृदयमें बैठ गई थी कि ब्रिटिश सरकारके साथ जो सुलह हुई थी वह तोड़ी गई। गवर्नर जनरलने इसी कारण एक बालकको नागपुरका राज्य दिया और अपनी ओरसे उसका एक प्रतिनिधि भी चुना। गोद लेनेकी कोई बात उस समय हुई ही न थी। लार्ड हेस्टिंग्सने उस बालकको राज्य देनेमें दत्तकका विचार ही न किया था क्योंकि राज्य देनेके बहुत समय बाद गोदकी रस्म पूरी हुई। राज्यमें इस बालकके पक्षमें एक दल था इसलिए हेस्टिंग्सने राजनीतिके नाते बालकको राज्य दिया। संक्षेपमें यह कहा जा सकता है कि उसी समय सरकारने नागपुर राज्यको भी अपना समझ लिया था। सरकार उस समय जिसे अच्छा समझती उसे ही नागपुरकी गद्दी देती। इस तरहके दानमें किसी विचार या हक़का प्रश्न ही न था। सरकारकी स्वाधीन इच्छापर ही यह निर्भर था।"*

"लार्ड डलहौज़ीकी इस सीधी बातको अगर सरकारकी कूट-नीति कहें तो समझना चाहिये कि नागपुरपर सरकारकी शुरूसे ही टक-टकी लगी थी। किसी राज्यको जीतनेके बाद जीतनेवालेकी जो जो शक्तियां राज्यपर हो जाती हैं, आपासाहबकी

* First Nagpur Blue Book P. 27. Empire in India. P. 185—187.

विश्वासघातकताके कारण, नागपुर राज्यपर ब्रिटिश सरकारको भी वे सब शक्तियां प्राप्त हो चुकी थीं। ऐसी दशामें सरकारने केवल सज्जनता और उदारताके वश होकर राज्यके एक घनिष्ठ आत्मीयको नागपुरकी गद्दी दे दी।"*

पर लार्ड डलहौज़ीकी बातकी लार्ड हेस्टिंग्सकी बातसे जब तुलना करते हैं तब यह बात बिल्कुल उल्टी मालूम होती है। ६ मई १८२३ ई० को लार्ड हेस्टिंग्सने जिब्राल्टरसे जो काग़ज़ात डाइरेक्टर सभाको भेजे थे, उनमें नागपुरके विषयमें उन्होंने लिखा था—"नागपुरके एक राज्यके लोभी पुरुषने आपासाहबको राज्यसे हटाकर स्वयं सिंहासन लिया। ऐसी आपत्तिकी दशामें राज्यच्युत आपासाहबको आश्रय देकर हमने उनकी प्राणरक्षा की। इसके बाद जिसने सिंहासन लिया था, उसकी अकल बिगड़ जानेसे, सरकारने आपासाहबको राजप्रतिनिधि बनाकर उनके हाथमें नागपुर राज्यकी बागडोर दी। पीछे पागल राजा शायद कोई पुत्र गोद न ले ले इस डरसे, राजप्रतिनिधि आपासाहबने, ज़हर देकर राजाको मार दिया पर नियमपूर्वक अनुसंधान करनेपर यह सिद्ध नहीं होता कि आपासाहबने विष दिलाया इसलिए आपासाहब राज्यके मालिक माने गये।" इसके बाद लार्ड हेस्टिंग्सने आपासाहबके विश्वासघात, गद्दीसे उतारे जाने और नागपुरकी गड़बड़का संक्षेपसे वर्णन करके लिखा था—"गड़बड़के कारण हम नागपुरका नया प्रबन्ध करनेपर बाधित

† Empire in India P. 186.

हुए। राज्यके प्रधान प्रधान पुरुषोंने मिलकर सलाह दी कि भोंसलावंशके किसी निकटतमको ही गद्दी दी जानी चाहिये। इस सलाहके अनुसार, नागपुरकी गद्दी आपासाहबके निकटतम बालकको दी गई *।" लार्ड हेस्टिंग्सकी रिपोर्टमें नागपुरके सम्बन्धमें यह विवरण है, साथ ही ऊपर लार्ड डलहौज़ीका विवरण दिया जा चुका है, जिसमें उन्होंने लिखा है कि लार्ड हेस्टिंग्सने अपनी इच्छासे एक बालकको नागपुरका सिंहासन दे दिया †। राजनीतिके यह कैसे विचित्र पासे हैं! राजनीतिक भाषा कैसी गूढ़ होती है!

लार्ड डलहौज़ीने अपने काग़ज़ों और रिपोर्टोंमें सर्वत्र यह दिखलानेका यत्न किया है, कि नागपुर भोंसलावंशके हाथसे निकल चुका था। लार्ड हेस्टिंग्सने राज्यका नया प्रबन्ध किया था और राज्य चलानेके लिए एक बालकको चुन दिया था; पर शोक है कि लार्ड डलहौज़ीके इतना लिखनेपर भी सचाई नहीं रुक सकी। अपनी रिपोर्टमें लार्ड डलहौज़ीने एक स्थानपर लिखा है—"आपासाहबकी शत्रुता और विश्वासघातके बाद नागपुर राज्यको हमने जीते हुए देशोंमें गिन लिया। इसी साल सरकारने राज्यका कुछ हिस्सा भूतपूर्व राजाको दिया और सन्

---

* Report of Select committee of the House of commons on the East Indian Company 1833. Appendix p. p. 103—104.

† Empire in India P. 188.

१८२६ की सुलहके अनुसार यह राज्यका हिस्सा उसे पीढ़ी दर पीढ़ीके लिये दिया गया *। इतिहासलेखक मेजर इवान्सवेलने दो बड़ी अशुद्धियां बताई हैं। एक तो यह कि नागपुर कभी सरकारके जीते हुए देशोंमें गिना नहीं गया, फौजी क़ानूनके अनुसार यह राज्य ब्रिटिश सरकारका कहा जा सकता था, पर कभी इस तरहकी घोषणा नहीं हुई। दूसरे सन् १८१८ में राज्यका कुछ हिस्सा भूतपूर्व राजाको दानमें नहीं दिया गया। तीसरे रघूजी भोंसलाके अनुग्रहसे सम्पूर्ण नागपुरराज्यके स्वामी बने। १८२६ की सुलहकी पांचवीं पंक्तिके अनुसार आपासाहबके विद्रोहसे पहले नागपुरमें ब्रिटिश सरकारकी जो सेना थी उसके लिए सागर और नर्मदाके प्रदेश दिये गये थे। जबतक राजा बालिग़ नहीं हुआ तबतक ब्रिटिश कर्मचारियोंने ही राज्यका काम किया और बालिग़ होनेपर १८२६में राजासे सन्धि की गई। सन्धिके अनुसार राजाको राज्यका स्वाधीन अधिकारी माना गया। आपासाहबसे पहले जो ज़मीन ब्रिटिश सरकारकी फौजोंके लिये दी गई थी वह राजाने सब वापिस दे दी। अगर नागपुर राज्य राजाको दानमें दिया गया होता तो वह सागर और नर्मदाका प्रदेश कभी न लौटाता।"†

जिन दो प्रधान इतिहासलेखकोंने सितारा आदि लेनेके

* First Nagpur Blue Book P. 23. Empire in india P. 192.

† Empire in India P. 192.

विषयोंपर लेखनी चलाई है वे नागपुरके विषयमें भी चुपचाप नहीं हैं। ड्यूक आव आर्गाइल और सर चाल्र्स जैक्सन दोनोंने नागपुर लेनेको विधिसिद्ध बताया है। मार्किस आव हेस्टिंग्सके द्वारा नागपुरके सम्बन्धमें जो कुछ हुआ उसे लार्ड डलहौज़ीने जिस रूपमें दिखाया है ड्यूक आव आर्गाइलकी लेखनीसे भी वही बात निकली है।* लार्ड हेस्टिंग्सने जिस नियतसे नागपुरका काम किया और लार्ड डलहौज़ीने उसे जैसा सिद्ध करनेका यत्न किया वह सब ऊपर लिखा जा चुका है। उसे पढ़नेसे भली-भांति ज्ञात होगा कि डलहौज़ी और आर्गाइलने हेस्टिंग्सके मतको अपने अनुकूल बनानेका यत्न किया है। दोनोंने सिद्ध किया है कि नागपुरपर सरकारका अधिकार विधिसिद्ध था।

सर चार्ल्स जैक्सनने अपनी किताबमें लार्ड डलहौज़ीकी बातका समर्थन किया है। डलहौज़ीके शब्दोंको वह दुहरा गया है—"सन् १८१८में ब्रिटिश सरकारने नागपुर राज्य गूजरवंशको दान दिया।" यह ऊपर ही सिद्ध हो चुका है कि यह बात असत्य है।†

भारत छोड़ते समय लार्ड डलहौज़ीने अपनी नोटबुकमें लिखा है—"नागपुर राज्यका कोई साधिकार उत्तराधिकारी न होनेके कारण वह ब्रिटिश राज्यमें मिला लिया गया। आपा-साहबके विश्वासघातसे नागपुरराज्य अंग्रेज़ोंका हो गया।

---

† India under Dalhousie and Canning P. 34.

† A Vindication P 17,

पर सरकारने वह भोंसलावंशको दान कर दिया। जिस राजाको दान किया था, उसका वास्तविक उत्तराधिकारी कोई न रहा, और न उसके कोई औलाद हुई और न उसने किसीको गोद ही लिया, राजाकी रानियोंने इस बातको भी स्वीकार किया है; इस कारण नागपुर ब्रिटिश राजमें मिला लिया गया।"*

लार्ड डलहौज़ीने जब सब बातें बिना संकोचके लिखी थीं तब उन्हें एक बार सब बातोंकी सूक्ष्म दृष्टिसे भी जांच करनी चाहिये थी। अगर वे जरा ध्यान देते या ध्यान देनेकी इच्छा भी करते तो, साफ़ दिखाई देता कि तीसरे रघूजीकी मौतके तीन दिन बाद १४ दिसम्बर १८५४ को ब्रिटिश रेजीडेंट मैंनसिलने जो रिपोर्ट राज्यके विषयमें भेजी थी, उसमें गोद लेनेका सब विवरण दिया गया था।† मैंनसिल साहबने दो आदमियोंको राजाका बहुत ही निकट सम्बन्धी लिखा था। पहला यशवन्तराव था और यही गोद लिया हुआ पुत्र था।‡ गोद लेनेके बाद इसका नाम जेनोजी भोंसला पड़ा। लार्ड डलहौज़ीने इसे गद्दीका अधिकारी ही नहीं माना। पर जिस ग़दरका इतिहास इस

* Papers minute by the marquis of Dalhousie February 28th, 1856, No. 245, of 1856. Retrospects and prospects P. 29.

† Papers, Rajah of Berar, 1864. P. 20.

‡ Ibid. 1854. P. 20. Retrospects and Prospects P. 20.

पुस्तकमें लिखा जा रहा है, उस ग़दरमें अंग्रेज़ोंकी सहायता करनेके कारण सन् १८६० में लार्ड केनिंगने, इसी जेनोजी भोंसलाको सब सम्पत्ति लौटा दी और उसे "राजा बहादुर" की पदवी दी।* यह कैसे माना जाय कि लार्ड डलहौज़ीकी सरकारको भ्रम नहीं था?

लार्ड डलहौज़ीने गोद्के विषयमें जो सम्मति दी है वह भी बिना विवेचनाके ही मालूम होती है। तीसरे रघूजीकी मौतके बाद उनकी सबसे बड़ी रानीने एक पुत्र गोद लिया। वृद्धा बंकूबाईने इस विषयमें सरकारसे लिखकर आज्ञा लेनेमें भी कुछ कसर नहीं की।† रेजीडेंट मैंनसिलने ११ दिसम्बर १८५३ को जो पत्र सरकारको लिखा, उसमें नागपुर राज्यकी गोद लेनेकी इच्छा का स्पष्ट वर्णन है।‡ यदि नागपुर राज्यकी विधवा रानियाँ, पुत्रोंको गोद न ले लेतीं तो, लार्ड डलहौज़ीके भारत छोड़नेतक वे उनके पीछे भी न पड़ी रहतीं।¶ इतने प्रमाणों और सचाईके रहते हुए भी डलहौज़ीने गोद लिये पुत्रको स्वीकार ही न किया। किस न्याय, नीति और विधानोंके अनुसार उन्होंने भोंसलाको अधिकारशून्य किया? सच्चे इतिहास लिखनेवाले इस प्रश्नको अवश्य उठावेंगे, और इसके उत्तरमें अंग्रेज़ी सरकारका

* Calcutta Gazette April 14, 1860.

† Empire in India P. 174.

‡ Papers Rajah of Berar 1854. P. 56.

¶ Retropects and Prospects P. 31.

यथेच्छाचार, अन्याय और अविचार देखकर लज्जा, क्रोध और घृणाके भाव प्रकट करेंगे।

तीसरे रघूजीने पुत्रको स्वयं गोद नहीं लिया था, बल्कि उनकी विधवा रानीने लिया था। पर मालिकके न लेनेपर स्त्रीका गोद लिया हुआ भी किसी दशामें नाजायज नहीं कहा जा सकता। हिन्दुओंकी रीति और शास्त्रकी आज्ञा है कि स्वामीके मरनेके बाद भी बड़ी स्त्री अपने पतिके नामपर पुत्र गोद ले सकती है। कई अवसरोंपर सरकारको इस तरहकी गोदको जायज़ मानना पड़ा है। सन् १८१८ में दिंवलराव सिन्धियाकी स्त्रीने अपने पतिकी मृत्युके बाद जब पुत्र गोद लिया तब सरकारने उसपर किसी तरहकी आपत्ति न की। सन् १८३६ में जब जनकोजी राव सिन्धियाकी स्त्रीने पुत्र गोद लिया तब भी सरकारने कुछ न कहा। सन् १८३४में धारके राजाकी रानी और १८४१ में कृष्णगढ़के राजाकी मृत्युके बाद उसकी रानीने लड़का गोद लिया तब भी सरकार कुछ न बोली।* इतने उदाहरणोंके रहते हुए सन् १८५३ में तीसरे रघूजीकी स्त्रीके द्वारा लिया हुआ लड़का नाजायज क्यों माना गया? नागपुर राज्य किस कारण ब्रिटिश सरकारका बना? क्या इससे न्याय और सचाईका मुंह काला नहीं किया गया?

नागपुरके विषयमें लार्ड डलहौज़ीने एक स्थानपर लिखा था—"नागपुर ब्रिटिश शासनमें मिला लिया गया। जो सेना कभी

* Dalhousie's Administration P. 31.

हमारे लिये दुःखका कारण बन सकती थी वह भी हाथ आ जायगी, इसके साथ ही हम एक ८०,००० वर्गमील ज़मीन और ४० लाख रुपये सालकी आमद बढ़ा सकेंगे। नागपुर राज्यके आदमियोंकी तादाद ४० लाख है। यह सब बहुत दिनोंसे अंग्रेज़ी शासन चाह रहे हैं। नागपुर राज्य अंग्रेज़ी शासनमें मिल जानेपर निज़ामके चारों ओर ब्रिटिश अधिकार हो जायगा, शासन-कार्यमें भी हमें बहुत सुविधा होगी। उड़ीसा और खानदेशकी पश्चिम सीमायें भी हाथ आ जायँगी, बरार, सागर और नर्मदाका प्रदेश भी हमारा हो जायगा, कलकत्तेसे बम्बईका सारा मार्ग अंग्रेज़ी राज्यमेंसे होकर जायगा, नागपुर हाथमें आजानेसे सैनिक और व्यापारिक दोनों बल बढ़ जायँगे।"*

दूसरे मौक़ेपर डलहौज़ीने लिखा था—"नागपुरवासियोंका उपकार करना ही मेरा मुख्य उद्देश्य है। इस उद्देश्यको सिद्ध करनेके लिए नागपुर राज्यको हमें अंग्रेज़ी शासनमें मिला लेना ही होगा; क्योंकि मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि नागपुर राज्य स्थायीरूपसे अंग्रेज़ी शासनमें आनेपर उसका उपकार होगा। प्रजाकी उन्नतिके सिवाय और कोई बात मेरे सामने नहीं है।"†

एक दूसरे स्थानपर डलहौज़ीने फिर लिखा है—"हमने एक आदमीको नागपुरका राजा बनाया। उसकी सुविधाके लिये जो कुछ करना चाहिये था, हमने वह सब किया। बचपनसे वह

* A Vindication P. 36.

† Ibid. P. 21.

हमारी कृपासे शिक्षित हुआ। एक कार्यकुशल' महिला उसकी संरक्षिका बनकर राज्यका काम चलाती रही। उसकी नाबालगी-में दस सालतक हमने राज्य किया। जब वह बालिग हुआ तब बलवान सेना, धनसे भरा ख़ज़ाना और सुशासित प्रजा उसके हाथमें सौंपी गयी। इतना करनेके बाद भी जब यह राजा मरा तब, मनुष्यत्व और राजत्व दोनोंके विरुद्ध वह अपने हीनआचार और अपकीर्तिके नमूने छाड़ गया। इतनी सहायता देनेपर भी यह रिश्वत लेकर न्याय बेचता, शराब पीकर मतवाला हो जाता और इन्द्रियोंके भोगविलासमें मग्न रहता था। इस राजाका उत्तराधिकारी किसी अन्य पुरुषको बनाकर उसको गद्दी दी जाय तो इस बातका क्या प्रमाण है कि वह भी ऐसा ही नीच न होगा? यह मान भी लिया जाय कि ऐसा नीच न होगा, तोभी सरकारमें जो प्रजाकी भलाई करनेका सामर्थ्य है उससे वह हाथ क्यों खींचे?"*

लार्ड डलहौज़ीकी जो तीनों सम्मतियां ऊपर उद्धृत की गई हैं उनमें हर एकमें अन्तर है। एक स्थानपर डलहौज़ीने लिखा है कि सरकारकी हर तरह उन्नति ही नागपुर लेनेका उद्देश्य है। दूसरे स्थानपर उन्होंने दिखाया है कि नागपुर राज्यकी प्रजाकी भलाई ही नागपुर लेनेका कारण है। कोई सहृदय मनुष्य इस बातको नहीं मान सकता कि भोंसला ख़ान्दानके अधिकारमें रहनेसे नागपुरकी उन्नति न होती। बहुतसे विद्वानोंकी सम्मति

* India under Dalhousie and canning P. 37.

इसके विपरीत भी है। सर जान लोने स्पष्ट लिखा है—"सब भारतवासी जानते हैं कि नागपुर राज्यके शासनमें किसी तरहकी गड़बड़ नहीं हुई।"* जो शासन अच्छी तरह होता है उसमें प्रजाके सुख-शान्तिकी वृद्धि होती ही है, मालूम होता है कि लार्ड डलहौज़ीने ब्रिटिश शासनको बढ़ानेके लिये नागपुर राज्यको भी अपने राज्यमें मिला लिया।

लार्ड डलहौज़ीने नागपुर लेकर केवल न्यायके सिरपर पैर ही नहीं रक्खा, बल्कि दया, दाक्षिण्य और नीतिकी भी मिट्टी खराब की। नागपुरकी अभागी रानियोंने राज्यकी रक्षाके लिये जो जो उपाय किये उनमें भी रुकावटें डाली गयीं। वृद्धा महारानी बंकूबाई इस दुर्विचारके विरोधके लिए खड़ी हुई, सन्धि-बन्धुता दिखाकर इसका कैसा अपमान किया गया यह उसने ही न्यायकी प्रार्थना करके सिद्ध कर दिया। अपना प्रतिनिधि भेज-कर वृद्धाने ब्रिटिशसिंहके दरवाज़ेपर न्यायकी प्रार्थना की पर उसके सब यत्न और काम निष्फल हुए। वे अपने महलोंमें ही जेलकी तरह कैद कर दी गईं, कई महीनेतक कोई भी उनके पास आ जा न सका। मेजर औसले उनका पक्ष लेने और राज्यकी रक्षामें बोलनेके कारण रोके गये। कई महाजन उन्हें रुपया देनेके कारण कैद किये गये।†

बंकूबाईकी अवस्था अस्सी वर्षसे ऊपर हो चुकी थी। बुढ़ापेसे

* Empire in India P. 31.

† Torrens, Empire in Asia P. 371.

उनका शरीर टूट चुका था, मन निस्तेज हो गया था। इस विपत्ति-से वह एक बार ही हताश सी हो गई थी। विलायतमें न्यायके लिये अपील करना ही एकमात्र उसकी आशा थी। क्षोभ, क्रोध और अपमानसे वृद्धाने अपना प्रतिनिधि लंडन भेजा। पर उसके हृदयमें जो आग जल चुकी थी वह अधिक दिनतक गुप्त न रही। रघूजीकी विधवा स्त्रीके अपमानका कोई ठिकाना न रहा। एक दिन जिससे सब डरते थे उसीको नागपुर राज्यसे हटानेके लिये, अधिकार भ्रंशके पत्रपर हस्ताक्षर करानेके लिये जबर्दस्ती पकड़कर लाया गया। इस अन्तिम समयमें भी यशवन्तरावके अधिकारोंके विषयमें कुछ न कहा गया। रोते और कांपते हुए हाथसे रघूजी-की स्त्रीने कागजपर दस्तखत किये। उसी समय नागपुरकी सेना-के हथियार ले लिये गये, विश्वस्त ब्रिटिश सेना सब स्थानोंपर तैनात कर दी गई, विश्वस्त कर्मचारी सब सरदारोंके कामपर देखरेख करने लगे। इस प्रकार लार्ड डलहौज़ीकी नीतिने परम्परासे चले आये राज्यकी स्वाधीनताका अन्त कर दिया। भौंसला राज्यका अन्तिम चिह्न अस्त हो गया।*

डलहौज़ी सरकारने केवल राज लेकर ही बस न की, राज्यके साथ साथ उसने सब चीजें भी ले लीं। हाथी घोड़े आदि जानवर और मोती हीरे आदि जवाहिरात बाजारमें नीलाम किये गये।† कलकत्तेके बड़े बड़े जौहरियोंने मोती हीरे ख़रीदे। सन्

* Empire in Asia P. 371.

† Arnolds Dalhousie's Administration Vol. VII, P. 167

१८५५के १२ अक्टूबरके "मार्निंग् क्रानिकल" अख़बारमें इन चीज़ों-को नीलामीका नोटिस निकला। महलोंकी अच्छी तरह तलाशी ली गई। रानियोंके पलंगके नीचे चार लाख रुपया गड़ा हुआ था जो उनका निजू था, पर वह भी ले लिया गया।* रानी अन्तमें अपने दानपुण्यके लिये रुपया मांगती रही पर उसकी अन्तिम इच्छा भी पूरी न हो सकी।† संसार आश्चर्यसे ब्रिटिश सरकारकी ओर देखता रह गया! विधवाओंके गहने और उनका निजू धनतक भी न छोड़ा गया। पापका राज्य देखकर धर्म भाग गया। इस तरह मित्रराज्यका सर्वस्व हरण करके सरकारने सभ्यताका नाम बदनाम किया। डलहौज़ी सरकारकी क्या अपूर्व महिमा है! जिस समय इंग्लैंडकी महारानी विक्टोरिया पूर्वी देशोंके राज्योंकी रक्षाका विचार कर रही थी, उस समय डलहौज़ीकी सरकार मित्रराज्योंको समूचा निगल रही थी। जब इंग्लैंडके परराष्ट्रविभागके मन्त्री पोलेण्डके कुछ सम्भ्रान्त घरानोंकी सम्पत्ति लेनेके सन्देहमें रशियाको धिक्कार रहे थे उसी समय ब्रिटिश सरकार मित्रराज्य नागपुरकी असहाय विधवाओंका धन हड़प रही थी।

लार्ड डलहौज़ीकी इस अन्यायनीतिका समर्थन करनेवाले कहते हैं कि नागपुरके राजघरानेके भरणपोषणका प्रबन्ध करनेके लिये उन्होंने ऐसा किया।‡ पर यह बड़ा ही भद्दा समर्थन है।

---

*. Empire in Asia P. 372.
† Ibid P. 169.
‡ Sir charls Jackson, a Vindication P. 74-81,

जब सरकारने नागपुर राज्य ले लिया तब उसका यह कर्त्तव्य था कि अपने रुपयेसे नागपुर राजघरानेका भरणपोषण करती। पर डलहौज़ीने जो कुछ किया वह नीति नहीं, नीचता थी। एक बड़ा भारी राज्य लेकर, उसके ही गहने कपड़े बेचकर, उसके खानेपीनेका प्रबन्ध करना कौनसी उदारता है। रेजीडेंट मैंनसिल साहबने प्रस्ताव किया था कि राजघरानेकी चीजें उन्हींके पास रहने दी जायँ। इस विषयमें उन्होंने सरकारको स्पष्ट लिखा था—"नागपुरकी सम्पत्ति लगभग २० लाख है, ५० से ७५ लाखके हीरे मोती राजपरिवारके पास रहने देने चाहिये, अपनी मर्ज़ीके अनुसार वे जब और जैसे चाहेंगे इन्हें बेचेंगे। मेरे विचारसे राज्यके सिवाय नागपुरवंशको और सब बातोंमें पूरा अधिकार है।"* पर लार्ड डलहौज़ीने रेजीडेंटके इस प्रस्तावपर कुछ ध्यान न दिया। उन्होंने कहा था कि अपनी मर्यादाके अनुसार जिस सम्पत्तिका रखना आवश्यक है केवल वही उनको रखनेका अधिकार है, शेष सब बेचकर उनके खानेका प्रबन्ध करनेके लिये रक़मकी शकलमें रक्खा जायगा। कमिश्नरने जितनी रक़म नियत की है वह यदि कम हुई तो शेष सरकारके ख़ज़ानेसे पूरी कर दी जायगी।†

इस राजनीतिका सहारा लेकर लार्ड डलहौज़ीने नागपुर राज्य-

* Comp. Empire in India P. 229,

† Parliamentary Papers, Annexation of Berar 1859 P. 10.

वंशकी सम्पत्ति बेच डाली। नागपुरके समान एक बड़ा भारी राज्य ले लिया गया और सरकार राजपुरुषोंके भरणपोषणका प्रवन्ध न कर सकी, उनकी निजी सम्पत्ति बेचकर भरणपोषणका प्रबन्ध करना पड़ा। वृद्धा महारानी वंकूबाईके सामने यह चीजें निकाली गईं, उनके बार बार मना करनेपर भी किसीने उनकी बात न सुनी, गुस्से और अपमानसे उसने राजमहलमें आग लगाकर सम्पत्ति नाश कर देनेको कहा, फिर भी किसीने ध्यान न दिया। क्या इतिहासके सामने यह घटना अन्याय नहीं है? क्या इस तरह सम्पत्तिका छीन लेना राजनीतिक डकैती नहीं?

सब न्यायप्रेमी पुरुषोंने डलहौजीके इस कामकी निन्दा की है। के, टरैंस आदि लेखकोंने इस राजनीतिको कलंकका कारण बताया है। 'के' ने अपनी पुस्तक "सिपाही संग्राम" में लिखा है—"मैंने अपने कानोंसे लोगोंको यह कहते सुना कि केवल नागपुर ही नहीं, बल्कि आसपासके देशोंतकमें सरकारकी निन्दा लोगोंने की है। नागपुर राज्य ले लेनेसे लोगोंके चित्तमें इतनी चोट नहीं लगी जितनी राजपरिवारका सामान छीन लेनेसे पहुँची। चाहे सच हो और चाहे झूठ हो पर इससे हमारी निन्दा हुई है। धनके बदलेमें इस तरह अपने चरित्रको कलंकित करना योग्य नहीं।*

हैमिल्टन कम्पनीने नागपुरकी सम्पत्तिका जो विज्ञापन दिया था, उसके विषयमें टरैंसने लिखा है—"जो राजा अपने सम्पूर्ण शासनकालमें हमारा मित्र बना रहा उसकी विधवा स्त्रियोंकी-

* Kaye's Sepoy War Vol. I. P. 84 and note.

सम्पत्ति राजधानी कलकत्तेके बाजारोंमें बेची गयी। इससे भारतके राजाओंके विचारमें कैसे भाव पैदा हुए होंगे, इसका कोई अनुमान कर सकता है? हर एक बाजार और हर एक घरमें किस क्रोधकी नज़रसे यह विज्ञापन देखा गया, क्या कोई समझ सकता है? सबके चित्तमें यह विचार उत्पन्न होने लग गये कि अब यह अन्याय और अत्याचार देशका नाश करेगा और जल्द किसी न किसी राजाका घर फिर लूटा जायगा। नेपोलियन बोनापार्टने जिस घोषणा द्वारा फ्रांसके बोरबंशका राज्य नष्ट किया और जिस कठोरतासे एक कमज़ोर राजाको राज्य त्यागने-पर मजबूर किया उस घोषणा और कठोरताकी निन्दा करते करते अंग्रेज़ इतिहासलेखक नहीं थकते। नेपोलियनने जो बोर-बंशका एक धातुका बना घोड़ा हटाया उसीके कारण उसकी निन्दा होती है, पर नेपोलियनने किसीके गहने नहीं लूटे और उनको नीलाम नहीं किया। फ्रेडरिककी एक तलवार ले लेना अन्याय था, इसमें सन्देह नहीं, पर नेपोलियन प्रशियन रानीकी अंगूठी और गलेका हार लेकर बेचते हुए स्वयं ही लज्जा करता! अत्याचारमें अर्थलोलुपता बड़ा नीच दुर्गुण है। जिस समय महारानी विक्टोरियाका प्रतिनिधि भारतमें इस तरहका अत्याचार और लूट मचा रहा था, उसी समय, रशियामें राजद्रोह फैलाने-के सन्देहके कारण वहाँकी सरकारने कुछ पोलेंडवासियोंकी सम्पत्ति जप्त की थी। इस जप्तीपर अंग्रेज़ राष्ट्रसचिवने प्रशियन सरकारको फटकारकी चिट्ठी लिखी थी। ज़ारकी सरकार

घृणाके साथ इसका जवाब दे सकती थी—"डाकृर, पहले अपना इलाज कर।"*

के और टरेंसके समान आरनोल्ड, वेल आदि लेखकोंने भी लार्ड डलहौज़ीके इस दुर्गुणकी निन्दा की है।† सचमुच नागपुर राजपरिवारकी सम्पत्ति लेना सरकारके लिए कलंककी बात है। जबतक पवित्र इतिहासका सम्मान रहेगा, जबतक पवित्र धर्मका गौरव रहेगा, जबतक पवित्र नीति, समाज और उदारताका आदर मनुष्य समाजमें बना रहेगा; तबतक यह कलंककी कालिमा अंग्रेज़ सरकारके माथेसे मिट नहीं सकती।‡

इस प्रकार कुछ वर्षोंमें ही तीन प्रसिद्ध महाराष्ट्र राज्योंका नाश हुआ। तीन बड़े बड़े देश ब्रिटिश इंडियामें शामिल हुए। ब्रिटिश कम्पनीका राज्य बढ़ने लगा और भारतका इतिहास नित्य नई घटनाओंसे रँगा जाकर सर्वसाधारणके सामने उपस्थित होने लगा। न्याय और सचाईके लिये यह कहना पड़ेगा कि सितारा और नागपुरराज्य एक दिन सरकारको जीते हुए राज्यकी तरह मिले थे, पर उस दिन उन राज्योंको उसने उन्हीं वंशवालोंको वापिस कर दिया। किसी नियम या व्यवस्थासे सर-

* Torrens' Empire in Asia P. 373.

† Arnolds' Administration of Lord Dalhousie Vol II. P. 166.

‡ Arnolds Dalhousie's Administration Vol. II. P. P. 130. 146.

कारने यह प्रयत्न नहीं किया कि भविष्यमें यह राज्य हमारे हाथ आवे, वल्कि उस समय उदार राजनीतिके वशवर्ती होकर सरकारने सितारा और नागपुरको गले लगाया, नयी सुलह की और पीढ़ी दर पीढ़ी राज्य करनेका अधिकार दिया। पर जिस दिनसे लार्ड डलहौज़ीने भारतमें पैर रक्खा, उस दिनसे अपूर्व कौशल और राजनीतिसे उन्होंने उदारताकी जड़ कुरेदी। डलहौज़ीने मित्रता तोड़ी, सन्धिका अपमान किया और राजनीतिके गौरवको नीचा दिखाया। सितारा लेते समय जैसी स्वार्थपरतासे काम लिया गया, वह ऊपर लिखा जा चुका है। झांसीके विषयमें जैसी अव्यवस्था हुई वह भी कही जा चुकी। नागपुर लेते समय इस स्वार्थका पूर्ण विकास दिखाई देता है। पहले लार्ड डलहौज़ीके कुछ वाक्य उद्धृत करके दिखाया गया था, अव इसके समर्थनमें उनके कुछ और वाक्य उद्धृत करते हैं। नागपुर लेनेके कारणोंमें डलहौज़ीने लिखा है—"नागपुरका शासन यदि सुचारुरूपसे हो तो इंग्लैंडकी एक कमी पूरी हो सकती है। इस कमीके पूरा होनेपर भी इंग्लैंडकी व्यापारिक नीति ठीक प्रकारसे जम सकती है। इंग्लैंडकी व्यापारिक उन्नति कई तरहके कच्चे मालोंसे हो सकती है, इन कच्चे मालोंमें रुई सर्वप्रधान है। नियमसे यदि इंग्लैंडको रुई मिलती रहे तो जैसी व्यापारिक उन्नति हो सकती है वैसी और किसी तरहसे नहीं हो सकती। जो इंग्लैंड और हिन्दुस्तानके राजकार्योंमें लगे रहे हैं वे इस कमीको सदा अनुभव करते रहे हैं, और दस साल राजनीतिके मैदानमें काम करके मैं

भी इसे अच्छी तरह समझ गया। जब इंग्लैंडसे हिन्दुस्तानके लिये रवाना होने लगा तब मैंचेस्टरके व्यापारियोंने आकर मुझसे यह बातें कही थीं। इंग्लैंडके प्रधान मंत्री पीछेसे पत्रोंमें बार बार लिखते रहे कि इंग्लैंडके व्यापारका सबसे अधिक ध्यान रहना चाहिए। इंग्लैण्डको रुई मिलती रहे, इसपर मेरा सबसे अधिक ध्यान रहा है। इंग्लैण्डको अगर यह चीज़ मिलती रही तो वह किसी देशका मुँह न ताकेगा।" *

स्वार्थकी कैसी मोहनी शक्ति है! नागपुर राज्यको अंग्रेज़ी शासनमें मिला लेनेसे मैंचेस्टरके व्यापारियोंको बराबर रुई मिलेगी और साथ ही सरकारका भी लाभ होगा। नागपुर बिना हाथ आये सारी रुईपर अपना वश नहीं हो सकता इसलिये रुईकी फसल अपने हाथमें करनेके लिये नागपुर लेना अवश्य न्यायोचित है। क्या विचित्र लाभ दिखाकर लार्ड डलहौज़ीने नागपुर लिया! ड्यूक आव आर्गाइल जैसे लेखकने भी डलहौज़ीकी इस नीतिका समर्थन किया है। † सरकारने नागपुरके राजाके हाथमें सुलहके द्वारा सर्वदाके लिये जो अधिकार दिये थे वे सब लोभके अधीन होकर भुला दिये गये। कल जिनको राज-सम्मान दिया जाता था आज वे ही मामूली वृत्तिपर अपने दिन बसर करने लगे। भाग्यका क्या शोचनीय परिवर्तन है! विचार और

* Duke of Argyll, India under Dalhousie and canning P. 38

† India under Dalhousie and canning P. 38

न्यायकी कैसी हँसी है! एक इतिहासलेखकने सच लिखा है—"रूईने ब्रिटिश न्यायके कान बन्द करके उसे बहरा कर दिया और आँखोंमें पड़कर अन्धा कर दिया था।"*

सितारा लेनेके बाद सरकारने एक और राज्यपर कब्ज़ा करनेका विचार किया था। सितारा लेनेके बाद और झांसी नागपुर लेनेसे पहले यह विचार हुआ। यह बात साधारण नहीं थी। इंग्लैण्ड और भारत दोनोंकी राजनीतिक सभाओंमें बड़ा भारी विवाद हुआ।† १८५२ की गर्मीके मौसिममें राजपूतानेके करौली नामक राज्यका राजा परलोकवासी हुआ। मौतसे पहले राजाने भरतपाल नामक एक निकटसम्बन्धी बालकको गोद लिया। इस समय सेनापति लो ब्रिटिश सरकारकी तरफ़से राजपूतानेके प्रतिनिधि थे। उन्होंने ज़ोरदार भाषणमें सरकारको लिखा कि, इस गोदका समर्थन करना ही सरकारकी नीति होनी चाहिए।

लार्ड डलहौज़ीका हृदय हिला। उन्हें मालूम हुआ कि सिताराकी तरह गोदको नाजायज़ कहकर करौली भी ब्रिटिश शासनमें मिलाया जा सकता है। डलहौज़ी अपने निश्चयको पूरा करनेके लिये लिखने लगे। जिस वज्रलेखनीने सिताराका नाश किया था, वही करौलीके विरुद्ध भी चलने लगी। डलहौज़ीने

* F. B. Norton, The Rebellion in India: How to prevent another P. 98.

† Bell, Retrospects and Prospects. P. 190.

३० अगस्तको करौलीके विरुद्ध एक मिनट* लिखा। पर इस मिनटके विरोधमें, गवर्नर जनरलकी सभाके सभासद्, सर फ्रेडरिक कारीने करौलीकी गोद्को जायज़ बताते हुए दूसरा मिनट लिखा।† ३१ अगस्तको यह मिनट पूरा हुआ। इसमें कारीने अपनी विद्या, बुद्धि और भले विचारोंका पूरा परिचय दिया। सर जान लो ने भी सर फ्रेडरिक कारीका पक्ष लिया। लो के बाद सर हेनरी लारेंस राजपूतानेके रेज़ीडेंट बने, उन्होंने भी लो का समर्थन किया। यह राजतरंग कलकत्ते और राजपूतानेमें ही लहराकर शान्त न हुई, बल्कि, इंग्लैण्डतक पहुंची। ज्ञान डिकनसन और हेनरी सेमूर आदि भारत हितैषियोंके उद्योगसे लंडनमें एक भारत संस्कारक सभा बनी थी। यह सभा करौली राज्यका पक्ष समर्थन करने लगी।‡ जब यह विषय पार्लमेंटके सामने पेश हुआ तब हाउस आव कामन्सके अनेक सभासदोंने जोरदार भाषामें करौलीका समर्थन किया। भारतकी डाइरेक्टर सभा विचार करनेके लिये बैठी। सौभाग्यसे उसमें भी करौलीके समर्थकोंकी सम्मति अधिक रही।¶ डाइरेक्टरोंने स्पष्ट भाषामें कहा कि—"हमारे सामने करौली और सिताराकी घटना

---

* गवर्नमेंट या गवर्नर जनरल शासनके विषयपर जो खास मन्तव्य प्रकाशित करते हैं उसे "मिनट" कहते हैं।

† Karolee Papers 1855. P. 7.

‡ Retos. and Pros. P. 190.

¶ Quarterly Review 151, P. 269,

बिल्कुल पृथक् पृथक् हैं। गवर्नर जनरलने बारीकीसे विचार करके अपना मिनट नहीं लिखा। सितारा राज्य नया है, वह सब तरहसे सरकारका बसाया हुआ है, सरकारने जो जमीन दी उसीसे यह राज्य बसा है। पर करौली राजपूतानेका अत्यन्त प्राचीन राज्य है। भारत सरकारके बननेसे भी बहुत पहले वह देशी राजा द्वारा शासित था। इस राज्यका राजा इस समय हमारे आश्रित है, हमारी मित्रताकी सन्धि है। किसी बड़े भारी कारणके बिना ऐसे प्राचीन राज्यकी स्वतन्त्रतापर हम हाथ नहीं डाल सकते। हमारे विचारसे करौलीमें ऐसा कोई कारण नहीं हुआ। इसलिये हम भरतपालको ही करौलीका राजा स्वीकार करते हैं।"*

पर इससे भी भरतपालका भाग्य न चमका। डाइरेक्टरोंकी लिखावट हिन्दुस्तान पहुंचनेसे पहले ही भरतपालका एक विरोधी मैदानमें आया। इसका नाम था मदनपाल, वह भरतपालसे बड़ा और भरतपालकी अपेक्षा पहले राजाका अधिक निकट-सम्बन्धी था। जब कलकत्ते और लंडनमें करौलीके विषयमें वादविवाद हो रहा था तब मदनपाल अपने आपको करौलीकी गद्दीका असली उत्तराधिकारी प्रमाणित करनेमें लगा हुआ था। करौलीका राजपरिवार, सरदार और प्रजा मदनपालका समर्थन कर रही थी। राजपूतानेके ब्रिटिश रेजीडेंटने भी इसीका समर्थन किया। हेनरी लारेंस जैसे विचारशील विद्वानने जब मदन-

* Kaye's Sepoy War Vol I. P. 94.

पालका समर्थन किया तब भरतपालके राजा बननेकी आशा जाती रही, पर हिन्दुओंको गोदकी रस्म सबसे बड़ी मानी जाती है। शास्त्रके अनुसार यह क्रिया हो चुकने पर उसके और सब सम्बन्ध नाजायज़ हो जाते हैं। हेनरी लारैंस इस बातकी जांच करने लगे कि भरतपालकी गोदकी रस्म बाक़ायदा हुई है या नहीं। जांचसे मालूम हुआ कि हिन्दूधर्मके अनुसार गोदके लिये जिन जिन बातों और क्रियाओंकी ज़रूरत होती है वे सब भरतपालको गोद लेते समय पूरी नहीं हुईं। करौलीकी प्रजा भी इस गोदको बाकायदा नहीं मानती। इसलिये हेनरी लारैंसकी अभीष्टसिद्धिमें किसी तरहका विघ्न न हुआ। उस समयतक डाइरेक्टरोंने भरतपालको गद्दी देनेकी घोषणा न की थी। ऐसी दशामें हेनरी लारैंसने सरकारको मदनपालका पक्ष समर्थन करनेके लिये लिखा। डलहौज़ीकी सरकारने अधिक विरोध न किया। परिणाममें करौलीकी गद्दी भरतपालके बदले मदनपालको मिली।

इस प्रकार डलहौज़ीकी सर्वसंहारक नीतिसे राजपूतानेके एक प्राचीन राज्यकी रक्षा हुई। जुलाई १८५२ ई० को करौलीका आन्दोलन प्रारम्भ हुआ और ५ जुलाई १८५५ को डाइरेक्टरोंका आज्ञापत्र आया। तीन साल तक सारे भारतमें करौलीका आन्दोलन रहा।* सब उत्सुकताके साथ ब्रिटिश सरकारका मुंह देख रहे थे, सब करौलीकी स्वाधीनतापर सन्देह करने

* Karolee papers 1855. P. 5. Retrospects and Prospects P. 195.



लगे थे, महाराष्ट्र राज्योंकी जो दशा हुई उसे कोई भूला नहीं था। पर राजपूतानेकी अपेक्षा महाराष्ट्र राज्य बिल्कुल नये थे। मुगलराज्यके अन्तमें महाराष्ट्रका प्रादुर्भाव हुआ। जिस समय अंग्रेज़ व्यापारी व्यापारके बहाने भारतमें घुस रहे थे, उसी समय महाराष्ट्रशक्तिका विकास हुआ। पर राजपूत राज्य इस तरहका नया नहीं था। भारतमें जब मुसलमानोंका नाम भी न था, तिरौरीके संग्राममें जब भारतका गौरव नष्ट न हुआ था, तब भी राजपूत राज्य स्थिर थे। जब अंग्रेज़ व्यापारियोंको हिन्दुस्तानका पता तक न था, तब भारतमें राजपूत राज्य पूर्ण विकसित थे। वास्तवमें राजपूत राज्य और राजपूतवंश भारतके गौरवकी सामग्री हैं। ऐसे प्राचीनतम राज्य और प्राचीनतम वंशके मूलमें कलके आये अंग्रेज़ लोग कुठाराघात करेंगे; इस विचारसे सम्पूर्ण भारत व्याकुल था। हेनरी लारेंसपर बहुतोंका विश्वास और आशा जरूर थी, पर सिताराका उदाहरण देखकर सब हताश थे। सब गम्भीर आन्दोलनके बाद एक दूसरेकी ओर देख रहे थे। जब हेनरी लारेंसने मदनपालका पक्ष समर्थन करना प्रारम्भ किया तब भी किसीको विश्वास न हुआ कि करौलीकी रक्षा होगी। अन्तमें डाइरेक्टरोंकी आज्ञाकी घोषणा हुई, मदनपाल करौलीके सिंहासनपर बैठे, सब आशंकायें निर्मूल हुईं और सब शान्तिसे डलहौज़ीकी नीतिकी आलोचना करने लगे।

इसी समय लार्ड डलहौज़ीकी दृष्टि एक और राज्यपर पड़ी। दक्षिणभारतके मानचित्रपर दृष्टि डालनेसे, बीचमें बरार,

पाइमघाट, तुंगभद्रा और कृष्णाके बीचका दुआब आदि देख पड़ेंगे। कृषिके विचारसे इस प्रदेशका महत्व बहुत अधिक है। इस ज़मीनमें जैसी अच्छी रुई और अफीम पैदा होती है वैसी और कहीं भी नहीं होती। इस ज़मीनके वंशपरम्पराके मालिकका नाम निज़ाम और राजधानी हैदराबाद है। इसी नवाबकी दया और कृपासे प्रथम अंग्रेज़ व्यापारी दक्षिणमें ठहरे और बादमें उनके व्यापारका विस्तार हुआ।

प्राणिसंसारमें अंजनहारीनामका एक कीड़ा होता है। यह कीड़ा अपने अंडे दूसरे जन्तुके शरीरमें प्रवेश करा देता है, और उसके शरीरके रक्त मांसको चूस कर ही अंडे बड़े होते हैं; वह मर जाता है, बच्चे निकल आते हैं। हिन्दुस्तानके जिन राज्योंके साथ मित्रताकी सुलह हुई थी उनके राज्यरूपी शरीरमें लार्ड डलहौज़ीने अपने प्राणघातक अंडे दे दिये थे। डलहौज़ीकी सरकारने सब मित्रराज्योंमें अपनी सेना रक्खी थी। इस सेनाका सारा ख़र्च उस राज्यको देना पड़ता था, सेना हथियारोंसे तैयार होकर मौक़ेपर उसी राज्यका नाश कर डालती थी। १२ अक्तूबर १८०० ई० को लार्ड वेलजलीने निज़ामके साथ जो सन्धि की उसकी १२ वीं शर्त सर्वनाशका मूल बनी। यह तय हुआ कि निज़ामके यहाँ सरकारकी सेना रहेगी उसका सारा ख़र्च निज़ामको उठाना होगा और लड़ाईके समय यह सेना तथा निज़ामकी निजी सेना सरकारका काम करेगी।*

* Aitchison, A Collection of Treaties Vol. V. P.P. 8, 73

जब दक्षिणसे टीपू सुलतानकी शक्तिका नाश हुआ तब हैदराबादके रेज़ीडेंट हेनरी रासेलने आसपासके राज्योंका सैनिक बल देखकर, हैदराबादके प्रधानमन्त्री चंडूलालसे कहा कि—"धीरे धीरे मरहटा ताक़त बढ़ती चली जा रही है, होल्कर और सिन्धियाकी सेनायें बहुत बढ़ गई हैं, वे लोग लड़ाईकी तैयारी कर रहे हैं।"* निज़ामके मन्त्रीने रेज़ीडेंटकी बातसे प्रेरित होकर ब्रिटिश सेनापतियोंकी सहायतासे, अपनी सेनाओंको नियमपूर्वक तय्यार किया। इससे अंग्रेज़ी सेनाओंकी जड़ निज़ाम राज्यमें और पक्की हो गई।

पर निज़ामने यह वादा न किया था कि इतनी बड़ी फौज वह सदा तय्यार रक्खेगा।† ख़ैर जो कुछ हो, मित्रताके नाते निज़ामने चालीस बरस तक इस बड़ी भारी फौजका ख़र्च सहा। अन्तमें इस सेनाके कारण निज़ामपर कर्ज होने लगा; कई बरसमें इस कर्जकी रक़म ७८ लाख हो गई। कर्ज देखकर सन् १८५१ में लार्ड डलहौज़ीकी सरकारने साफ़ लिखा कि—"निज़ामको बहुत जल्द अपना कर्ज अदा करना होगा। अगर वह कर्ज अदा न करे तो सालियाना ६५ लाख रुपयेकी आमदकी ज़मीन सरकारके सुपुर्द करे, तीन सालमें सरकार अपना सब रुपया वसूल कर लेगी।"‡ इससे निज़ामको कर्जकी चिन्ता

* Arnold's Dalhousie's Administration Vol. II. P. 132.
† Ibid P. 133.
‡ Ibid P. 139

हुई। चालीस लाख रुपया उसी समय दिया गया और बाकी भी जल्द अदा करनेका वादा किया गया।* पर ख़र्च लगा हुआ था, इस कारण सारा कर्ज अदा न हो सका, सन् १८५३ में बढ़कर वह कर्ज ४५ लाख हो गया। अपना रुपया वसूल करनेके लिए और कोई बात न सुनकर डलहौज़ीने निजामके मातहत इलाकेको लेनेकी तैयारी की।†

निज़ामने ज़मीन देकर कर्ज़ अदा करनेसे इन्कार किया। पर डलहौज़ी जबर्दस्ती लेनेको तैयार हुए। निजामके विश्वस्त मंत्री सिराजुल्मुल्कने निज़ामकी तरफसे पूरी पैरवी की, सन्धिपत्रकी और मित्रताकी दुहाई दी, पर कोई बात सफल न हुई। बहुत जल्द नये सन्धिपत्रके बहानेसे ज़मीन लेनेका काग़ज लिखा गया। रेज़ीडेंट कर्नेल लो ने निजामसे कहा कि कलकत्तेसे सरकार नया सुलहनामा भेजनेवाली है, उसपर आपको दस्तख़त करने होंगे। निजामसे यह बात न सही गई। उन्होंने गम्भीर दुःख, क्षोभ और अपमानसे अधीर होकर रेज़ीडेंटसे कहा कि—"आप जैसे आदमी—आपके यूरोपवासी अंग्रेज़ जो हिन्दुस्तानमें आये हैं वे पहले सरकारकी नौकरी करते हैं, फिर फौजी बनते हैं, फिर नाविक हो जाते हैं, फिर नौकरी छोड़कर व्यापार करने लगते हैं। मैंने सुना है कि आपके देशके बड़े बड़े आदमी बनिये हैं; इसलिए आपकी जाति मेरे दिलकी दशा नहीं समझ

* Aitchison, A Collection of Treaties Vol. V. P. 9.
† Aitchison, A Collection of Treaties Vol. V. P. 9.

सकती। मैं एक स्वतन्त्र राजा हूं, सात पुश्तसे मेरे घरमें यह राज्य है। इसी राज्यमें मैं पैदा हुआ, इसीमें बड़ा हुआ और इसीमें मरूंगा। क्या आप सोच सकते हैं कि मैं अपने राज्यका कोई हिस्सा कम्पनीको देकर प्रसन्न होऊंगा? कभी नहीं, मैं कभी सुखी नहीं हो सकता। ज़मीनका कोई भाग दे देनेपर भी मैं अपना अपमान समझूंगा। मैंने सुना है कि, आपकी जातिके एक आदमीने मेरे विषयमें कहा है कि अगर मेरी दशा मुहम्मद गाउसखां (आर्काटके नवाब) के समान हो जाय तब भी मुझे सन्तोष करना चाहिए। ऐसी दशामें मेरे लिये फिर कोई काम शेष न रहेगा; सरकारके पुराने नौकरकी तरह पेंशन लेकर खाने, सोने और नमाज़ पढ़नेका ही काम रह जायगा।" यहाँतक कहकर नवाबने हृदयके आवेगमें एक अरबीका शेर पढ़ा, इसके बाद फिर कहा—"आप स्वयं जैसे हैं वैसा ही सबको समझ कर जो भाव प्रकट करते हैं उनके विषयमें मैं कुछ नहीं कहता, लेकिन मेरे दिलकी बात आप तभी समझ सकते थे जब आप भी एक स्वतन्त्र शासक होते। अभी आप कह चुके हैं कि इस सन्धिसे मुझे आठ लाख रुपये सालकी बचत होगी। पर अगर मुझे आठ छोड़ बत्तीस लाखकी वार्षिक बचत हो तब भी मैं ख़ुश नहीं हो सकता। मेरे राज्यका थोड़ा सा भी खण्ड लिया गया तो मैं अपना बड़ा भारी अपमान समझूंगा।"*

* Blue Book, The Nizam 1854. P. 120. Empire in India P. 123.

यहाँतक कहकर नवाब नसीरुद्दौला चुप हो गये। पर उनके इस गुस्से और दुःखसे कहे हुए शब्दोंका फल कुछ भी न हुआ। उस काग़ज़पर उन्हें दस्तख़त करने पड़े जिसमें लिखा था कि जबतक कर्ज अदा न हो तबतक बरारका इलाक़ा सरकारके अधीन रहेगा। २१ मई १८५३ को इसपर दस्तख़त हुए। १८ जूनको सरकारने इस सन्धिकी घोषणा कर दी। हा! दुरन्त शाइलाकने बेरहमीसे बेचारे एन्टोनियोके शरीरसे मांस काट ही लिया। एक भी पोर्शिया इस समय न्यायकी रक्षाके लिए न आई।

इस प्रकार ४५ लाख रुपयेके बदलेमें सारा बरारका उपजाऊ प्रदेश, अहमद नगरसे शोलापुरकी हदतक ७६ क़स्बे, कृष्णा और तुंगभद्रा नदीके बीचका उपजाऊ दोआब—सरकारके हाथ लगा। मक्खीचूस बनिया जैसे अपने कर्ज़की वसूलीके लिये देनदारसे हर तरहका नीच व्यवहार करता है वैसे डलहौज़ीकी सरकारने निज़ामके साथ भी किया। उस प्रान्तमें रुई और अफीम बहुत पैदा होती है। ऐसा अच्छा प्रान्त थोड़ेसे रुपयेके बदलेमें लेकर सरकारने मित्रद्रोह किया, राजनीतिका अपमान किया।*

बरारके बाद एक और मुसलमान राज्यपर सरकारकी दृष्टि पड़ी। इस इतिहासके साथ उसका अधिक सम्बन्ध नहीं है, इसलिये संक्षेपमें उसका विवरण देते हैं।

दक्षिणमें कर्नाटक नामका एक प्रान्त है। मुग़लोंके ज़मानेमें

* Aitchison, A collection of Treaties, Engagements & relating India and neighbouring countries Vol. V, P. 104

यह प्रान्त निज़ामके अधीन था। उसकी राजधानीका नाम आर्काट था। कर्नाटकके साथ अंग्रेज़ोंके इतिहासका गहरा सम्बन्ध है। यहीं पहले पहल ब्रिटिश कम्पनीने अपना किला सेंट डेविड बनाया, यहींसे डुप्लेका गौरव और लालीका पतन हुआ। राबर्ट क्लाइव सबसे पहली बार यहीं विजयी हुआ, यहींपर हैदरअलीने अंग्रेज़ोंके विश्वासघातके कारण अपनी हिंसावृत्ति चरितार्थ की। सन् १७६३ में मुहम्मदअली यहींपर अंग्रेज़ोंकी मददसे सिंहासनपर बैठा। मुहम्मदअलीको कर्नाटकके सिंहासनपर बैठाकर अंग्रेज़ कम्पनीने राज्यकी रक्षाके लिए थोड़ी फौज रक्खी। नवावने इस फौजका ख़र्च देना मंजूर किया। धीरे धीरे राज्यके प्रबन्ध और बेहद ख़र्चके कारण मुहम्मदअली कर्ज़दार हो गया। ब्रिटिश कम्पनीने सन् १७८५ में मुहम्मदअलीसे नई सन्धि करके इस कर्ज़के चुकानेका प्रबन्ध किया। सन् १७९० में मैसोरकी लड़ाई हुई। इस मौक़ेपर नवावके मंत्रियोंने कर्जका रुपया चुकानेमें अपनी कमज़ोरी दिखाई। कम्पनीने सारे कर्नाटकके शासनका कारबार अपने हाथमें ले लेनेका निश्चय किया। सन् १७९२ में लार्ड कार्नवालिसने नवावसे जो सन्धि की उसके अनुसार यह मार्ग और भी खुल गया। सन्धिके अनुसार सम्पूर्ण आयका पांचवां हिस्सा लेकर हुकूमतका भार कम्पनीको दे दिया *।

मुहम्मद अलीके बाद सन् १७९५ की १६ अक्तूबरको उमद-

* Aitchison's Treaties Vol. V, P. 181.

तुलउमरा आर्काटके सिंहासनपर बैठे। उस समयके गवर्नर जनरल लार्ड वेलजलीको शक था कि इस नवाबने टीपू सुलतानके साथ मिलकर सरकारके विरुद्ध षड्यन्त्र रचा है। पर १५ जुलाई सन् १८०१ को उमदतुलउमराकी मृत्यु हो गई। पर वेलजलीका सन्देह उसके मरनेके बाद भी न टूटा। उन्होंने विचित्र कारण और अद्भुत राजनीतिके प्रतापसे उमदतुलउमराके बेटे अलीहुसेनपर सन्देह किया। उमदतुलउमरासे दस्तख़त करनेके लिये जो सन्धिपत्र तैयार किया गया था वह अलीहुसेनके सामने रक्खा गया। अलीहुसेन तेजस्वी और आत्मसम्मानी पुरुष था, उसने इस सन्धिको माननेसे इन्कार किया। अलीहुसेनके नामंजूर करनेपर उमदतुलउमराके भाईका बेटा अजीमुद्दौला उस सन्धिपत्रपर दस्तख़त करके कम्पनीकी सहायतासे सिंहासनपर बैठा। सन् १८०१ को ३१ जुलाईको यह सन्धि हुई। सन्धिके अनुसार अजीमुद्दौलाने पैदावारका पांचवां हिस्सा लेकर सारे दीवानी और फौज़दारी अधिकार कम्पनीको सौंप दिये।* इस प्रकार कर्नाटकके नवाबका अधःपात हुआ। इस प्रकार अंग्रेज़ी व्यापारी कम्पनीकी दयासे 'नवाब' पदवी मात्र रह गई। जिन्होंने एक दिन अंग्रेज़ कम्पनीको आश्रय दिया था, स्वयं तीसरे जार्जने मित्रताका पत्र लिखकर जिनको भेट भेजी थी, वेही इंग्लैंडके वैश्योंके आश्रित और अधीन बन गये।†

* A Collection of Treaties Vol. V. P. 250.

† Empire in India P. 50.

अधिकार ब्रिटिश सरकारको दे दिया था, सरकारने संभलपुरके एक प्राचीन राजघरानेको ही वहांकी गद्दी दी थी। १८४९ में संभलपुरके राजा नारायणसिंहका देहान्त हुआ। इसके न कोई सन्तान थी और न कोई निकटका सम्बन्धी। इसलिये संभलपुरकी गद्दीका कोई उत्तराधिकारी न था। लार्ड डलहौज़ीकी सरकारने आज्ञा निकाल दी कि संभलपुर ब्रिटिश शासनमें मिला लिया जाय।

भारतके इतिहासमें सितारा, नागपुर और पूनाके मरहटे वंश प्रसिद्ध हैं। सितारा और नागपुरका वर्णन यथासमय कर दिया गया, तीसरा राज्य पूना डलहौज़ीसे बहुत पहले ब्रिटिश कम्पनीके हाथ आ गया था। सन् १८१८ की ३ जूनको दूसरे महाराष्ट्रयुद्धके अन्तमें प्रसिद्ध पेशवा बाजीरावने अपने आपको ब्रिटिश सरकारके हाथोंमें सौंप दिया था।* बाजीराव वीरधर्म और वीरप्रथाके अनुसार युद्धविद्यामें शिक्षित और दीक्षित थे, विजयके लिये उन्होंने हथियार उठाया, घोर संग्राम किया, अन्तमें हारकर वीरधर्मके अनुसार हथियार छोड़कर विजेताकी शरण ली। विजयीने पवित्र वीरधर्मका अपमान नहीं किया, वीरधर्मका गौरव नहीं गिराया। ब्रिटिश सेनापति सर जान मलकमने बाजीरावको छातीसे लगाया, शरणागत शत्रुके खेमेमें जाकर हारनेपर शोक प्रकाशित किया। बाजी-

* The Life and Correspondence of Major-general Sir John Malcolm, Vol. II: P. 253.

रावका राज्य भी ब्रिटिश शासनमें मिल गया, सर जान मलकमने सरकारको वार्षिक आठ लाख रुपया वाजीरावको देनेके लिये लिखा।*

कितनोंने आठ लाख रुपया अधिक कहकर सेनापतिपर आक्षेप किया पर मलकमने उसपर कुछ ध्यान न दिया। उन्होंने आक्षेपकारियोंको उत्तर देते हुए साफ लिखा—"जिन सब राजाओंने विश्वासघातकता आदि दोष देकरके भी अपने राज्य ब्रिटिश सरकारके हाथ समर्पण किये हैं, उनके अपराधोंपर दृष्टि न देकर सज्जनताका बर्ताव करना ही सरकारकी चिरन्तन नीति रही है। भारतवर्षमें सरकार सदा इसी नीतिसे काम करती रही है। इस तरहके व्यवहारसे सब श्रेणियोंके लोग सरकारका शासन मानने लगते हैं। मुझे यह कहनेमें प्रसन्नता है कि इस तरहके उदार व्यवहारसे सरकारके राज्यकी नींव, तलवारसे भी अधिक पक्की होती है, इससे केवल राज्य ही नहीं बल्कि प्रजाके हृदयपर राज्य होता है। भारतमें जो आचार व्यवहार और अपने खोटे संस्कारोंके जालमें जकड़े हुए हैं, उनपर भी इसका बड़ा अच्छा प्रभाव होता है।"† इस सहृदय सेनापतिके वाक्योंका अनादर न हुआ प्रत्युत उसके सब वचन सरकारको मानने ही पड़े।

इस प्रकार पेशवा बाजीरावका पतन हुआ। आठ लाख

* A Collection of Treaties Vol. III. P. 99.

† Kaye's Sepoy War Vol. I. P. 99.

रुपये सालकी वृत्तिपर वे कानपुरके समीप बिठूर नामक एकान्त स्थानमें रक्खे गये। अपने परिवार और जातिवालोंके साथ बाजीराव गंगाके पवित्र किनारेपर अपने दिन शान्तिसे बिताने लगे। सैकड़ों मरहटे उनके साथ बिठूर गये, सैकड़ों दास दासियोंसे उनका महल भर गया। सरकारने बाजीरावको बिठूरमें एक जागीर दी। सन् १८३२ की व्यवस्थाके अनुसार इस जागीरके दीवानी फौजदारीके अधिकार बाजीरावको मिले* इस प्रकार जागीर प्राप्त करके बाजीराव अपने दिन बिताने लगे।

बाजीरावको दलबद्ध देखकर सरकार ज़रा चौंकी। पेशवा लड़ाईमें बड़े वीर माने जाते थे, इस तरहके अनेक पेशवाओंको एक जगह रहते देखकर सरकारको संदेह हुआ। पर उस समय बाजीराव और उनके सब अनुयायी शान्त थे कि वे मौक़े पर सहायता करनेसे भी कभी पीछे न हटें। जब अफगानिस्तानकी लड़ाईमें सरकारका ख़जाना ख़ाली हो गया था और रुपयेके लिये सरकार चारों ओरसे निराश्रय थी, तब बाजीरावने पांच लाख रुपया कर्ज देकर सहायता की थी और जब पंजाबकी ख़ालसा सेना मतवाले हाथीकी तरह सरकारपर आ टूटी थी, उस समय एक हजार पैदल और एक हज़ार सवार सेना देकर बाजीरावने सरकारकी सहायता की थी।

इस तरहकी सदाशयता और विश्वास दिखाकर बाजीरावने

* A collection of Treaties Vol V. P. 11.

सरकारकी कृपा प्राप्त की थी। एक समय जो पूना साम्राज्यका हर्ताकर्ताविधाता था, जिसके प्रतापसे सम्पूर्ण दक्षिणभारत कांपता था, वह बाजीराव छोटी सी जागीरमें रहकर सब कुछ भुल गया। जो ब्रिटिश कम्पनी एक दिन बाजीरावके डरसे कांपती थी वही बाजीराव ब्रिटिश कम्पनीके आश्रयमें रहकर सरकारके प्रसन्न करनेका यत्न करने लगा। वह साहस, वह वीरता, वह रणोन्माद सब भूतकालमें लीन हो गया। पवित्र गंगाके किनारे बाजीराव शान्ति और पवित्रतासे अपने दिन बिताने लगा।

बाजीरावके पास धनकी कमी न थी। प्रतिवर्ष आठ लाख रुपयेकी आय और बिठूरकी जागीर उन्हें मिल गयी थी। पर इस सम्पत्तिका कोई भी वारिस पैदा न हुआ। सब सोचने लगे कि इस धनको कौन भोगेगा। बाजीरावको भी यही चिन्ता थी। इस चिन्तासे छूटनेके लिये उन्होंने शीघ्र ही एक पुत्र गोद लिया।* अपनी मृत्युसे कई वर्ष पहले बाजीरावने सरकारको लिखा था कि यह लड़का ही मेरी सम्पत्ति और वार्षिक वृत्तिका मालिक है, इसे हो मैंने अपनी 'पेशवा'की उपाधि दी है। सरकार इसे स्वीकार करे। बाजीरावकी बात न मानी गई, इसपर भी उनकी आशाका लोप न हुआ। ब्रिटिश कम्पनीकी तरफसे यह जवाब दिया गया कि हम पेशवाकी मृत्युके

* Ms. Records, Comp, Kaye's Sepoy War Vol I. P. 101 note.

बाद सोच विचार कर परिवारके भरणपोषणका प्रबन्ध कर सकते हैं। यह निर्णय भविष्यपर रहा, बाजीरावको भी इसीमें सन्तुष्ट रहना पड़ा। धीरे धीरे बाजीरावका शरीर शिथिल हो गया, लकवेसे वे विवश हो गये। ७७ वर्षकी अवस्थामें २८ जनवरी १८५१ को पेशवाका शरीरान्त हुआ। सन् १८३९ में जो अपनी वसीयत लिख गये थे उसके अनुसार उनका गोद लिया हुआ बड़ा पुत्र गद्दीका मालिक बना और वही 'पेशवा' उपाधिसे विभूषित हुआ। इसका नाम धुंधपन्थ नानासाहब था। जब बाजीरावकी मृत्यु हुई तब नानासाहब २७ वर्षके थे। नानासाहब सरलस्वभाव, मधुरभाषी, चरित्रवान् और अंग्रेज़ कमिश्नरकी सलाह लेकर काम करनेवालोंमेंसे थे। अंग्रेज़ इतिहासलेखककी कठोर लेखनी भी नानासाहबके गुण गाती है।* पिताकी मृत्युके बाद नानासाहबको लगभग तीस लाख रुपये ही प्राप्त हुए। इसके आधे धनसे उन्होंने कम्पनीके कागज़ (प्रामेसरी नोट) खरीदे। बाजीरावके आश्रयमें बहुतसे दास, दासी और मरहटे थे, इन सबके भरणपोषणका भार नानासाहबपर ही पड़ा। नानासाहब सरकारसे आठ लाख रुपये सालकी वृत्ति पानेके लिये प्रार्थना करने लगे। इस समय बाजीरावके विश्वस्त बन्धु रामचन्द्ररावके हाथमें सारे परिवारके भरणपोषणका कार्य था। रामचन्द्रराव बाजीरावको सन्मार्ग दिखानेवाला और उनके अधीनोंका प्रधान था। अब रामचन्द्र पन्त अपने

* Kaye's Sepoy War Vol. I. P. 101.

मित्रके पुत्रके अधिकारोंकी रक्षाके लिये खड़ा हुआ। सरकारको नानासाहबके अटल विश्वासका परिचय देकर उसने लिखा:—"माननीय कम्पनीने जिस प्रकार भूतपूर्व रक्षण और पालन किया है उसे याद करके नानासाहब सब तरहसे निश्चिन्त और आशान्वित हैं। ब्रिटिश सरकारकी दया और उदारता ही उनका सहारा है। वे सदा सरकारकी क्षमताका अभ्युदय चाहते हैं, और भविष्यमें सदैव उनकी यही इच्छा बनी रहेगी।"

बिठूरके ब्रिटिश कमिश्नरने पेशवाकी प्रार्थनाका समर्थन किया—पर सरकारने इसे स्वीकार न किया। टामसन साहब इस समय यू० पी० के लेफ्टिनेंट गवर्नर थे। बाहरसे वह बड़े सज्जन थे परन्तु उनके हृदयमें वर्त्तमान नीति घर किये हुए थी। भारतके राजा और माननीय व्यक्तियोंके साथ उनकी अधिक सहानुभूति न थी। उन्होंने कमिश्नरको किसी तरहकी भी आशा दिलानेसे इन्कार किया। लार्ड डलहौज़ी गवर्नर जनरल थे, इसलिये टामसनका लिखना अक्षर अक्षर पूरा हुआ। तुरन्त डलहौज़ीकी घोषणा प्रकाशित हुई—"पेशवाने ४३ साल तक आठ लाख रुपये सालकी वृत्ति और जागीरका भोग किया है। अढ़ाई करोड़से अधिक रुपये उन्हें मिले—किसी तरहका ख़ास ख़र्च उनके जिम्मे न था, उनका कोई पुत्र भी नहीं। मौतके समय वे अपने परिवारके लिए २८ लाख रुपया छोड़ गये हैं। इस समय जो पेशवाके परिवारमें हैं, उनका कानूनके अनुसार कोई दावा नहीं; क्योंकि पेशवा ज़ो कुछ छोड़ मरे हैं वही उनके लिये काफी

है। जो रकम बताई गई है, उससे अधिक, शायद पेशवाने छोड़ी है।"*

नानासाहबकी प्रार्थना निष्फल गई; वे अपनी पैतृक पेंशन-से वंचित हुए। जिस आशापर पेशवाने हृदय बाँधा था, जिन आशाओंपर वे प्रसन्न थे, जिनकी मित्रता, सज्जनता और मनुष्यत्व-पर विश्वास करके उन्होंने पुत्र गोद लिया, डलहौज़ीकी क़लमने इस आशाको समूल उखाड़ फेंका। काबुल और पंजाबके युद्धके समय जिसने ब्रिटिश कम्पनीको धन और सेनाकी सहायता देकर मित्र शब्दको सार्थक किया, कम्पनीने उसीके पुत्रकी पेंशन बन्द करके मित्रताका अपमान किया। सरकारने पेशवाको लिखा था कि उनकी मौतके बाद सोच विचारकर पेंशनका फैसला किया जायगा, पर फैसला उसे बंद करनेका हुआ। डलहौज़ीकी यह आज्ञा बहुत जल्द बिठूरमें सुनाई गई। टामसन-के मतानुसार डलहौज़ीने पेशवाकी पेंशन बंद की थी, पर जागीर-के सम्बन्धमें न टामसनने कुछ लिखा और न डलहौज़ीने ही उसपर हस्तक्षेप किया, वह नानासाहबके पास ही रही। पर जागीरके जितने अधिकार पेशवाको थे उतने नानासाहबको न रहे। सन् १८३२ में सरकारने दीवानी और फौजदारी सब अधिकार अपने हाथमें ले लिये। †

---

* Kaye's Sepoy War Vol. I. P. 102. note, A Vindication P. 56.

† A collection of Treaties Vol. III. P. 10.

धुंधूपंथकी सब आशायें जब निराशामें बदल गयीं, भारतसरकारने जब सब तरहसे उसका विरोध किया, तब डलहौज़ीकी सरकारसे आशा छोड़कर नानासाहबने लंडनकी डाइरेक्टर-सभासे प्रार्थना करनेका निश्चय किया। बाजीरावके जीते हुए भी यह प्रस्ताव हुआ था, सूबेदार रामचन्द्ररावके पुत्रको विलायत भेजकर अपील करनेका निश्चय किया गया था, पर उस समय इन्हें कमिश्नरने ऐसा करनेसे मना किया था। इस बार कमिश्नरकी बात न सुनकर नानासाहबने अपीलका पक्का इरादा किया। प्रार्थनापत्र तैयार हुआ। प्रचलित रीतिके अनुसार नानासाहबने भारतसरकार द्वारा उसे डाइरेक्टर-सभामें भेजा। इस पत्रमें लिखा गया था कि,—"स्वर्गीय पेशवाके परिवारके बहुतसे आदमी कम्पनीके वचनपर जीवनकी प्रार्थना कर रहे हैं। भारतसरकारने जो व्यवहार किया वह केवल सहानुभूतिहीन ही नहीं, बल्कि एक प्राचीन राजवंशके प्रतिनिधिके प्राप्य अधिकारोंका भी विरोधी है, आवेदनकारी केवल सन्धिके नियमोंपर निर्भर करके ही न्यायकी प्रार्थना नहीं, बल्कि ब्रिटिश कम्पनीने महाराष्ट्र साम्राज्यके अन्तिम स्वामीसे जो उपकार प्राप्त किया, उसपर भी भरोसा करके यह प्रार्थना की जाती है।" इसके बाद आगे यह निर्देश किया गया,—"अपने उत्तराधिकारियोंके प्रतिनिधि बनकर जब पेशवाने कम्पनीको अपना राज बेचा, तब कम्पनी पेशवा और उनके उत्तराधिकारियोंको उसका मूल्य देनेके लिये बाध्य है। अगर राज्य लेना स्थायी हो

तो उसका मूल्य भी स्थायी मिलना चाहिए।" इसके बाद सुलहनामेमें जहाँ पेशवा और उनके परिवारके भरणपोषणका ज़िम्मा लिया गया था, वहाँ "परिवार" शब्दकी व्याख्या करके दिखाया गया कि वंशागत उत्तराधिकारियोंका नाम परिवार है। इस प्रकारके कारणोंके बाद प्रार्थनापत्रमें इतिहासका आश्रय लिया गया था,—"कम्पनीने और राजवंशोंके समान पेशवाके राजवंशके साथ जो व्यवहार किया है, उसे देखकर चकित होना पड़ता है। मैसोरके शासकने कम्पनीका मुकाबला किया। जिन राजाओंकी सहायतासे कम्पनीको उस शत्रुपर विजय मिली उनमें पेशवाका नाम सबसे पहले है। जब तलवार हाथमें लिये हुए मैसोरके शासकका पतन हुआ तब कम्पनीने उसके साथ कोई बुरा व्यवहार न करके, उसे और उसके परिवारको भरणपोषणके लिये वार्षिक वृत्ति दी। दिल्लीके सम्राट्के प्रति भी कम्पनीने ऐसा ही, बल्कि इससे भी अच्छा, व्यवहार किया। यह शासक क़ैद हो गया था, कम्पनीने उसे जेलसे निकालकर राजमर्यादाके साथ वार्षिक वृत्ति दी। सम्राट्के वंशवाले इस समय भी वृत्ति भोग रहे हैं, पर इस प्रार्थनापत्रके प्रार्थीके साथ ही यह सब बातें उलटी क्यों हुईं? यह सत्य है कि बहुत दिनोंतक कम्पनीका मित्र बनकर पेशवाने उसकी सहायता की, ५० लाख रुपयेका राज्य दिया, अन्तमें तलवार उठाकर अपने सिंहासनपर विपत्ति बुलाई, पर जब उन्होंने ब्रिटिश सेनापतिके प्रस्तावके अनुसार अपने आप और अपने परिवारको कम्पनीके अधीन कर

दिया और कम्पनीने बड़े भारी राज्यके बदलेमें पेशवा और पेशवाके वंशके भरणपोषणका भार लिया, तब किस नियमके अनुसार उस राजचिह्नका लोप करके पेंशन बंद की गयी? किस विचारके अनुसार सरकारकी दृष्टिमें मैसोरके वंशज और मुग़ल सम्राट्के वृत्तिभोगी वंशजोंकी अपेक्षा पेशवाके वंशवाले पेंशनहीन किये गये?" इसके बाद नानासाहबने अपने आपको बाक़ायदा गोद लिया हुआ पेशवाका पुत्र सिद्ध किया, यह दिखाया कि गोद लिया हुआ पुत्र औरस पुत्रके समान ही होता है। इसके बाद नानासाहबने एक और आक्षेपका खंडन किया। बाजीराव अपनी आयमेंसे ही बहुत धन छोड़ गये हैं इसलिये उनके वारिसोंको पेंशन न देनी चाहिये, इस युक्तिके खण्डनमें घृणाके साथ उन्होंने लिखा—"स्वर्गीय पेशवा अपनी पेंशनसे बहुत कुछ बचाकर परिवारके भरणपोषणके योग्य पर्याप्त छोड़ गये हैं, यह युक्ति इस विषयमें लग ही नहीं सकती। ब्रिटिश इंडियामें इसका कोई दूसरा उदाहरण नहीं। ब्रिटिश सरकार सन्धिके अनुसार पेशवा और उनके वंशवालोंको जीवन-निर्वाहके लिये आठ लाख रुपया साल देनेके लिये बाध्य है। पेशवाने उसमेंसे कितना ख़र्च किया और कितना बचाया इसका हिसाब किताब लेने देनेका कोई नियम या क़ायदा कभी निश्चित नहीं हुआ। न पेशवाने ऐसा नियम किया, न सरकारने। प्रार्थी साहसके साथ पूछता है कि भारतमें सरकारसे जिन-जिनको पेंशन मिल रही है उनके ख़र्चका हिसाब क्या सरकार पूछ

सकती है? बँधे हुए आदमीकी पेंशनका रुपया उसके पास जमा हो गया, यह देखकर पेंशन बन्द करना क्या कोई युक्ति या प्रमाण है? भारतके एक राज्यका मालिक, एक पुराना राजवंश जो सरकारकी दया और न्यायपरतापर जीवन बिता रहा हो, उसे नौकरोंसे भी नीचा समझना क्या सरकारकी उचित विवेचना है? यदि इस विषयमें सरकारको कोई भ्रम या भूल हो, तो यह प्रार्थी विशेष सम्मानके साथ याद दिलाता है कि सन् १८१८ में पेशवाके साथ जो सन्धि हुई थी उसमें उनके और उनके परिवारके लिये ही आठ लाख रुपये निश्चित नहीं हुए थे, बल्कि पेशवाके विश्वासी कर्मचारियोंकी जीविकाका निर्वाह भी उसीके साथ था। सरकार जानती थी कि पेशवाकी जैसी कम आय थी उससे उनके परिवारका ख़र्च भी चलना मुश्किल है। भारतके राजा क्षमताहीन होकर पेंशन पाते हों तब भी उन्हें अपने नाम और राजचिह्नकी मर्यादा रखनी पड़ती है। पेशवाने ५० लाख वार्षिक आयवाली भूमि सरकारको देकर ८ लाख रुपये सालकी वृत्ति ली, इसमें जो कुछ बचा वह नहींके बराबर है। जो कुछ बचाकर पेशवाने कम्पनीके काग़ज़ ख़रीदे उससे ८० हज़ार रुपये सालकी आय होती है। बचाकर ख़र्च करना क्या पाप है? क्या मितव्ययिताके कारण आज पेशवा-परिवार पेंशनसे वञ्चित होगा?"*

पर ऐसी लिपि, ऐसी विचारप्रणाली और ऐसी उक्तिका

* Kaye's Sepoy War. Vol I, P. 104-108.

विलायतमें कुछ भी आदर न हुआ। डाइरेकृरगण पर्वतके समान अटल अचल रहे, धुंधूपंथकी प्रार्थनासे उनका हृदय न पसीजा; वे पहले ही डलहौज़ीकी नीतिका समर्थन कर चुके थे। सन् १८५२ की १६ मईको डाइरेकृरोंका मन्तव्य प्रकाशित हुआ कि—"हम गवर्नर जनरलकी इस सम्मतिसे सहमत हैं कि वाजीरावका गोद लिया बेटा और उसके परिवारका पेंशनपर कोई हक़ नहीं है। स्वर्गीय पेशवा ३३ साल पेंशन लेकर जो सम्पत्ति अपने वारिसोंके लिये छोड़ गये हैं वही काफ़ी है।"* जो पहली बार ऐसा कठोर फैसला कर चुके थे उन्हींके पास दुबारा नानासाहबका प्रार्थनापत्र पहुंचा। डाइरेकृरोंने सरकारको लिखा कि—"प्रार्थनापत्र भेजनेवालेको लिखा जाय कि पेशवाकी पेंशन भी वंशपरम्पराके लिये नहीं थी, इसलिये उनकी मौतके बाद वह बंद कर दी गई। प्रार्थनापत्र नामंजूर हुआ।" इस जवाबके पहुंचनेसे पहले ही नानासाहबने अपना पक्ष समर्थन करनेके लिए एक आदमीको लंडन भेजा। यह आदमी एक अंग्रेज़ीका योग्य विद्वान् मुसलमान था। इसका नाम था अज़ीमुल्लाखां। १८५३ में लंडन पहुंचकर अज़ीमुल्लाखां एक बीडन नामक अंग्रेज़की सहायतासे नानासाहबका पक्ष समर्थन करने लगा, पर सफल न हुआ। डाइरेकृर-सभासे पहले ही आज्ञा लिखी जा चुकी थी। अज़ीमुल्लाके भरसक प्रयत्नसे भी कुछ फल न हुआ।

इस प्रकार नानासाहबकी आशाका समूल नाश हुआ।

† The court of Directors to the Govt. of India. Ms.

बाजीरावका परिवार आश्रयहीन हो गया। जिनपर भरोसा करके बाजीरावने अपना राज्य छोड़ दिया था, जिनके मनुष्यत्व-पर बाजीरावको पूरा विश्वास था, उन्होंने ही बाजीरावके परिवारको कोरा जवाब दे दिया। ५० लाख रुपये सालकी ज़मीन लेकर उसके वारिसोंको ८ लाख रुपये साल देना कम्प-नीके लिये महापाप हो गया।

अजीमुल्लाख़ां पेशवाके वारिसोंकी पैरवी करने गये थे, वे उसमें सफल न हुए। पर उनका शरीर सुन्दर और आयु कम थी, इसलिये इंग्लैंडकी युवतिसमाजमें उन्हें सफलता हुई। अपने देशकी मोहमाया त्यागकर वे वहीं रह गये। नाना-साहबको इसका व्यय सहन करना पड़ा।



तीसरा अध्याय



डलहौजी शासनका सिंहावलोकन—अयोध्या—मुसलमानोंका आधिपत्य—नवाबके साथ ब्रिटिश सरकारकी सन्धि—सिराजुद्दौला—आसफुद्दौला—मिर्जा अली—शहादत अली—गाजीउद्दीन हैदर—नसीरुद्दीन हैदर—मुहम्मद अली शाह—१८८१ की सन्धि—अमजद अली शाह—वाजिद अली शाह—अवधका शासन—कर्नेल स्लीमनकी रिपोर्ट—आउटराम—अयोध्यापर अंग्रेजोंका अधिकार।

पंजाब, नागपुर, झांसी आदि लेकर भी लार्ड डलहौज़ीका राज्य-लोभ शान्त न हुआ। शीघ्र ही एक और समृद्ध राज्यपर इनकी दृष्टि पड़ी। पंजाबके समान अराजक कहकर उन्होंने इसपर अधिकार न किया; कारण, उसके स्वामी सदासे ब्रिटिश सरकारके मित्र थे, सदासे अपना धन और शक्ति सरकारके कामोंमें लगाते थे। नागपुर, और झांसीके समान उत्तराधिकारीहीन कहकर भी इस राज्यको न लिया गया, क्योंकि इसके वास्तविक उत्तराधिकारी मौजूद थे। केवल इच्छाहीके कारण इस राज्यपर ब्रिटिश झंडा लहराया गया। आदि कवि वाल्मीकिके मधुर काव्यके साथ जिसका गहरा सम्बन्ध है, रघुकुलतिलक रामकी जन्मभूमि कहकर हिन्दू आज भी जिसका आदर करते हैं, मेकालेकी लेखनीने जिसकी

समृद्धिका वर्णन करके यूरोपको विस्मयमें डाल दिया था, जिस राज्यकी समृद्धिको फ्रेंच और जर्मनराज्यसे तुलना दी गयी थी, एक मात्र डलहौज़ीकी इच्छाके कारण वह स्वाधीन देश ब्रिटिश शासनमें मिला लिया गया।

इस समृद्ध राज्यका नाम अयोध्या या अवध है। इसकी उत्तर और पूर्वसीमा नैपाल, पूर्वमें अंग्रेज़ी गोरखपुर, दक्षिणमें इलाहाबाद और पश्चिममें फतेहपुर, कानपुर, फर्रुखाबाद और उत्तर पश्चिममें शाहजहाँपुर था। इसकी ज़मीन २३,६२३ वर्ग-मील और जनसंख्या ५० लाख थी। अत्यन्त प्राचीनकालसे अयोध्या सुखसम्पत्तिका घर था, धन वैभवमें यह प्रदेश इतिहासमें प्रसिद्ध रहा है। हज़ारोंके बाद हज़ारों साल बीते, पर अयोध्याकी सम्पत्ति सदा वैसी ही बनी रही, उसमें कोई अन्तर न आया। अयोध्या भारतकी प्राकृतिक सौन्दर्यभूमि रहा है। बहुतसे लोग शायद यह कहें कि धन सम्पत्ति ही अयोध्याके नाशका कारण बनी। दरायूकी बेटी यदि सुन्दरी न होती तो सिकन्दर धार्मिक इतिहासका नायक होता, यदि अयोध्या सम्पत्तिमयी न होता तो वह राज्याधिकारियोंकी क्रूर दृष्टिका लक्ष्य कभी न बनता।

तरौरीकी संग्रामभूमिमें महाराज पृथ्वीराजका पतन होनेके बाद मुहम्मद गोरीका गुलाम कुतुबुद्दीन ऐबक दिल्लीके सिंहासन-पर बैठा। कुतुबुद्दीनने अवधको जीतकर दिल्लीके राज्यमें मिला लिया। तबसे अवध दिल्लीके अधीन समझा जाने लगा। अकबर-

के ज़मानेमें राज्यके पन्द्रह सूबे बनाये गये। उनमेंसे अवध भी एक माना गया। बहुत दिनतक अवध दिल्लीके अधीन रहकर कुछ अतर्कित कारणोंसे ब्रिटिश कम्पनीके साथ मिल गया। मीर-कासिम अंग्रेज़ोंसे लड़कर जब हार गया और अवधका नवाब सिराजुद्दौलाकी शरण गया तबसे अवधके नवाब और अंग्रेज़ों-का सम्बन्ध शुरू हुआ। मीरकासिमको शरण देकर सिराजुद्दौ-लाने अंग्रेज़ोंके विरोधमें सेना एकत्र की। १७६४ ई० की २३ अक्तूबरको बक्सरमें लड़ाई हुई। लड़ाईमें हारकर सिराजुद्दौलाने अंग्रेज़ोंसे सन्धि की। सन् १७६५ की १६ वीं अगस्तको सन्धि हुई। यह निर्णय हुआ कि मित्रराज्योंकी रक्षाके लिये ब्रिटिश कम्पनी जो सेना अवधमें रक्खेगी उसका सारा व्यय नवाब-को देना होगा। इसके अतिरिक्त लड़ाईका तावान ५० लाख रुपया नवाबने देना मंज़ूर किया।* अबतक कभी नवाबने अंग्रेज़ोंके साथ विश्वासभंग न किया था, सदा मित्रताकी रक्षा की।† पर ब्रिटिश शासनका मूल सन्देहपर रहा है। सन्धिके

---

* Aitchison's Treaties, Vol. II, P. 76-79.

† अवधका नवाब सदा ब्रिटिश राजका अनुगामी रहा है। सन् १७७२ की एक घटना प्रसिद्ध है कि प्रसिद्ध हैदरअलीने अयोध्याके नवाब शुजाउद्दौलाको लिखा कि—"आपके पास इतनी फौजें और लड़ाईका सामान है, फिर आप ईसाई राज्यके मात-हत हैं, यह देखकर आश्चर्य होता है। मैं इधरसे अंग्रेज़ोंको तंग कर रहा हूं, आप उधरसे हमला करें, मिलकर हम इन विदेशियोंका नाश करें।" इसके जवाबमें नवा-बने लिखा कि—"जो संसारसे वास्ता नहीं रखते वे ही धर्मान्ध हो सकते

तीन साल बाद अफवाह उड़ी कि शुजाउद्दौला कम्पनीके विरुद्ध षड्यन्त्र रचकर सेना एकत्र कर रहे हैं। इस अफवाहने सरकारके दिलमें बड़ा संदेह पैदा किया, सरकारने नवाबसे वास्तविकताकी पता लगाई। नवाबने अपने उत्तरमें अफवाहकी असारता सिद्ध की, इधर भारतकी मंत्रीसभाके सभासदोंने भी जांचके बाद इसे अफवाह ही माना। इसपर भी ब्रिटिश कम्पनी प्रसन्न हुई। संदेहके कारण नवाबसे फिर सन्धि हुई, इस सन्धिमें यह निश्चित हुआ कि नवाब ३५ हज़ारसे अधिक सेना न रख सकेंगे।* इस प्रकार ब्रिटिश सिंहसे दोस्ती करके नवाबके भाग्यका ग्रह बदलने लगा। कम्पनीने देखा कि अयोध्या एक धनधान्य समृद्ध प्रान्त है, नवाब भी अगाध धनका स्वामी है। इसकी प्रजा समृद्ध है, नगर धनी हैं, दुर्ग अभेद्य हैं, सबसे बढ़कर धन भी अपार है, कम्पनीकी आंखें अवधपर लग

हैं, कर्त्तव्य जिसके सामने है वह ऐसा नहीं कर कर सकता। मेरे पास जो सेना और सामग्री है वह सब ईस्ट इंडिया कम्पनीके शत्रुओंके विरुद्ध काममें लानेके लिये है। आप यह न समझें कि मैं इसका नाजायज़ प्रयोग करके वचनघात करूंगा।" घटनावश यह दोनों पत्र लखनऊके ब्रिटिश रेज़ीडेंटके हाथ लगे। रेज़ीडेंटने दोनों पत्र गवर्नर-जनरलके पास भेजनेकी आज्ञा नवाबसे मांगी। अन्तमें यह पत्र गवर्नर जनरलके पास भेजे गये थे। M. M. Musseehooddeen. Comp, Dacoittee in Exclsis. P. 12-13 note.

* यह लिखा गया था कि इस ३५ हज़ारमें कोई सेना अंग्रेज़ी सेनाके समान तैयार न होगी। Aitichison's Treaties Vol II. P. 64.

गईं। कम्पनीके चतुर सूत्रधार सन्धिसे, कौशलसे, मित्रतासे सब कुछ लेनेपर तय्यार हो गये।

विलायतसे डाइरेक्टरोंने लिखा कि चुनारका क़िला सरकारके हाथमें आना चाहिये, यदि कोई असुविधा हो तो छोड़ दिया जाय*। सन् १७६५ की सन्धिके अनुसार ५० लाख रुपये जबतक नवाब न चुका दें तबतक यह क़िला अंग्रेज़ कम्पनीके हाथमें धरोहर रखनेका वादा करना पड़ा था। रुपया चुकानेके बाद वादेके अनुसार क़िला फिर नवाबके हाथमें चला गया था। कम्पनीने फिर इस क़िलेको अपने हाथमें लेनेकी कोशिश की। कोशिशमें अधिक सिर न पचाना पड़ा। मरहट्टा फौजोंसे भारतमें अशान्ति मच रही थी। अबकी बार रुहेलखंडमें इन बागी फौजोंने हमला किया। अवध रुहेलखंडके उत्तरपश्चिममें है। इससे विपरीत दिशामें अर्थात् अवधके दक्षिणपूर्व नवाबका चुनारका क़िला है। इस मौक़ेपर क़िला लेनेके लिये कम्पनीने अपनी कूट राजनीतिका जाल बिछाया। सन् १७६५ की सन्धिके अनुसार नवाबके अधिकृत कोरा और इलाहाबाद दिल्लीके बादशाह शाहआलमको दिलाये गये। बादशाहने सन् १७७१ में यह फिर नवाबको वापिस दे दिये। मरहट्टोंसे राज्यकी रक्षाके लिये सन् १७७२ की २० मार्चको कम्पनीने फिर नवाबसे सन्धिपत्र लिखाया। इस सन्धिपत्रके अनुसार कम्पनीने चुनारके क़िलेपर फिर अधिकार

* Dacoittee in Excelsis P. 14

किया और इलाहाबाद हाथमें रक्खा*। कहना चाहिए कि मित्रता करनेमें दो बार शुजाउद्दौलाने अपनी सम्पत्तिसे हाथ धोये। पहली बारमें उसकी फौज़ोंकी संख्या ३५ हजार रक्खी गई और दूसरी बार चुनार क़िला और इलाहाबाद देना पड़ा।†

इस समय ब्रिटिश कम्पनीकी टैक्सकी आय बहुत गिर गई थी। रुपयेकी कमीके कारण लार्ड हेस्टिंग्सकी सरकार बेहद तंग थी। लार्ड मेकालेने इस दशाका बहुत मनोहर वर्णन किया है—"शान्तिसे राज्य करो और रुपया भेजो, आसपासके राज्योंको शान्ति दो, शान्तिका व्यवहार करो और अधिक धन भेजो।" इस तरहके उपदेश लंडनसे बड़े लाट हेस्टिंग्सके पास आते थे, संक्षेपमें यही उनका सारांश है। इन उपदेशोंको सीधी भाषामें कहा जाय तो अर्थ यही होता है कि प्रजाके मातापिता, शान्तिरक्षक बनकर न्यायकी दुहाई देते हुए अन्यायसे धन हरण करो। ऊपरसे शान्ति दिखाकर भीतरसे क्रूर रहो। प्राचीन कालमें ईसाई लोग अन्य धर्मवालोंसे जैसे व्यवहार करते थे लंडनके डाइरेक्टरोंका हिन्दुस्तानियोंके साथ ठीक वैसा ही व्यवहार था। प्राचीन ईसाई सम्प्रदायवाले बकरेको कसाईके हाथमें देकर कहा करते थे कि इसपर दया और सज्जनताका व्यवहार होना चाहिए। पन्द्रह हज़ार मील दूर बैठे डाइरेक्टर लंडनसे जो आज्ञा लिख भेजते थे उसका भाव वे न समझते थे, पर

* Dacoittee in Excelsis P. 10, A collection of Treaties P. P. 82-84.

† Ibid P. 15.

उनका कलकत्तेका प्रतिनिधि उसका मतलब खूब समझ लेता था। जब गवर्नर जनरलका खज़ाना खाली पड़ा था, फौजोंकी तनखाहें चढ़ गई थीं, घटा कर फौजें कम कर दी गई थीं, प्रजा मारी मारी फिरती थी, उस दशामें लंडनसे आज्ञा आई कि दस लाख रुपये भेजो। हेस्टिंग्सने देखा कि जैसे हो धन संग्रह होना चाहिये। डाइरेक्टरोंके नीतिके उपदेशोंसे रुपया अधिक शक्ति रखता है, इस बातको हेस्टिंग्सने समझा था।"*

नवाब शुजाउद्दौलाके पास अपार धन था, हेस्टिंग्सने उसीकी ओर हाथ बढ़ाया। १७७२ की २० मार्चकी जिस सन्धिके अनुसार कम्पनीने कोरा और इलाहाबाद लिया था वह सन् १७७३ की १२ सितम्बरको ५० लाख रुपया लेकर वापिस नवाबको दिया गया और तो क्या, जो सेनायें नवाबकी मददके लिये भेजी गई उनका सारा व्यय २,१०,००० रुपया मासिक नवाबने देना मंजूर किया।† इस प्रकार अंग्रेज़ोंकी दोस्ती नवाब शुजाउद्दौलापर हाथ फेरने लगी। एक ओर उसका धन ब्रिटिश ख़ज़ानेको भरने लगा और दूसरी ओर उसके किलों और शहरोंपर अंग्रेज़ी झंडा लहराने लगा।

सन् १७७५ में नवाब शुजाउद्दौलाकी मृत्यु हुई। इनके पुत्र आसफुद्दौला अयोध्याके सिंहासनपर बैठे। शुजाउद्दौला सन्धिके अनुसार जो रक़म अंग्रेजी फौजके ख़र्चके लिये दे रहे थे उसमें

* Macaulay, Essay on Warren Hastings.

† Aitchison's Treaties Vol II. PP. 65, 85, 86,

नये नवाबसे पचास हज़ार और बढ़वाये गये। सन्धिके अनुसार बनारस, जौनपुर और गाजीपुर अंग्रेजोंने लिये। *

सन् १७९३ में नवाब आसफुद्दौलाका देहान्त हुआ, इनके पुत्र मिर्ज़ा अली सिंहासनपर बैठे। पर ब्रिटिश कम्पनीने देखा कि मिर्ज़ा अलीकी अपेक्षा आसफुद्दौलाका भाई शहादत अली यदि गद्दीपर बैठे तो अधिक सुविधा हो सकती है। इसलिये मिर्ज़ा-अलीके स्थानपर शहादतको सिंहासनपर बैठानेका इरादा हुआ। सर जान शोर इस इरादेको पूरा करनेकी ग़रज़से बनारस गये और मिर्ज़ा अलीको आसफुद्दौलाका जायज़ लड़का न मानकर उसके स्थानपर शहादत अलीको गद्दी देनेका इरादा प्रगट किया। इसलिये, सन् १७९८ की २१ वीं जनवरीको शहादत अली सिंहासनपर बैठे। † सिंहासनपर बैठनेके एक मास बाद (२१ फरवरी) सर जान शोरने शहादत अलीसे जो सन्धिपत्र लिखाया उसमें नये नवाबने, फौजी ख़र्चके लिए ब्रिटिश कम्पनीको ७६ लाख रुपये साल देने मंजूर किये और पहले नवाबको जो ३५ हज़ार फौज रखनेका हक़ था उसे घटाकर १० हज़ार कर दिया। ‡

इस प्रकार प्रत्येक सन्धिमें अवध राज्यके अंग कटने लगे। यह पहले ही कहा जा चुका है कि सन् १७७२ की २०

* Aitchison's Treaties P. 65, Comp. Dacoittee in Excelsis P. 21.

† Dacoittee in Excelsis P. 35.

‡ Ibid P. 35.

मार्चकी सन्धिके अनुसार चुनारपर कब्जा किया गया था। इसके बाद १७७५ की २१ वीं मईकी सुलहके अनुसार बनारस, गाज़ीपुर, कानपुर और १७८७ में फतेहगढ़का क़िला, १७९८ में इलाहाबाद अंग्रेज़ी अधिकारमें चला गया। अयोध्यामें कम्पनीकी जो सेना थी उसे वार्षिक ५५ लाख रुपया देनेका निश्चय था, सर जान शोरके ज़मानेमें वह ७६ लाख हो गया।* इतना करने पर भी कम्पनीकी मित्रता आशाके अनुसार दृढ़ न हुई। नवाबको और अधिक मित्रताके पाशमें बांधनेके लिये एक और महापुरुषका आविर्भाव हुआ। लार्ड मार्निंटन (मार्क्विस आव वेलजली) १७९८ के मई मासमें विलायतसे कलकत्ते आये। अक्तूबरमें अवधपर उनकी भी नज़र पड़ी। कम्पनीकी जितनी सेना अयोध्यामें थी उसके अतिरिक्त दो नई सेनायें और बढ़ानेका विचार किया गया। लार्ड वेलजलीने अयोध्याके नवाब शहादत अलीको लिखा कि—"नवाब शहादतअली या तो वार्षिक पेंशन लेकर अपना प्रान्त कम्पनीको दे दें या राज्यकी आधी आय कम्पनीकी सेनाके व्ययके लिये दें।" वेलजलीकी बात केवल लिखने भरको ही न थी, बल्कि वे जो कुछ लिखते थे उसे शीघ्र कार्यमें भी लाते थे, इसलिये उनकी बात बहुत जल्दी सफल हुई। सन् १८०१ की १४ वीं नवम्बरको फिर एक सन्धि हुई। इस सन्धिके अनुसार नवाब शहादत अलीने, ब्रिटिश फौजोंके

* A collection of treaties Vol II PP: 66, 115, 116, Dacoittee in, P. 39. 37

ख़र्चके लिये १,३५,२६,४७४ रुपये सालकी आयवाली ज़मीन; (आधे राज्यसे भी अधिक) ब्रिटिश कम्पनीके हाथ सौंप दी।*

इस प्रकार अयोध्याके नवावकी शक्ति कम हो चली और ब्रिटिश कम्पनीका हाथ दिन पर दिन शक्तिशाली होने लगा। सन् १८१४ की ११ जुलाईको नवाव शहादत अली इस लोकसे चले गये। शहादत अलीके बाद उनके सबसे बड़े पुत्र गाज़ीउद्दीन नवाव बने। ब्रिटिश कम्पनीका लाभ ज्योंका त्यों क़ायम रहा। गाज़ीउद्दीन भी मौक़े मौक़ेपर और धन देकर मित्रताकी रक्षा करने लगा। सन् १८१४ में जब ब्रिटिश सरकारकी नैपालके साथ लड़ाई हुई तब नवाव गाज़ीउद्दीनने कानपुरमें लार्ड मेयरसे मिलकर एक करोड़ रुपया दिया। पर गवर्नर जनरलने नवावसे यह रुपया न लेकर वार्षिक ६ रुपये सैकड़े सूदपर १,०८,५०,००० रुपया कर्ज़ लिया।‡ पर नेपालकी लड़ाईमें और भी रुपयेकी ज़रूरत होनेके कारण फिर नवावसे एक करोड़ रुपया और लिया गया। १८१९ में ब्रिटिश सरकारने गाज़ीउद्दीनको वंशपरम्पराके लिये 'राजा' (King) की उपाधि दी।¶

गाज़ीउद्दीनके बाद नसीरुद्दीन हैदर अयोध्याके शासक बने। सन् १८३७ में इनकी मौत होनेपर इनके चचेरे भाई

* A Collection of Treaties Vol II. P. 67, Dacoittee in Ex, P. 48.

‡ A collection of Treaties Vol II, P. 69.

¶ Ibid P. 69.

मुहम्मद अली शाह नवाब बने। लार्ड आकलैंडने सन् १८३७ की १८ सितम्बरको इनसे सन्धि की। इस सन्धिके ७ और ८ कालममें लिखा गया कि अगर अवध राज्यमें कभी गड़बड़ या अव्यवस्था हो तो ब्रिटिश सरकार योग्य कर्मचारियोंसे राज्यकी व्यवस्था और शान्ति स्थापित करके फिर नवाबके हाथमें उसका राज्य लौटा देगी।*

जब पञ्जाब आदि प्रान्तोंको अपने हाथमें लेकर लार्ड डलहौज़ीने अयोध्याकी ओर दृष्टि उठाई तब इस सन्धिपर उनको बड़ी निराशा दिखाई दी। वे साफ कहने लगे कि १८३६ की सन्धिका समर्थन डाइरेक्टर-सभाने नहीं किया इसलिये वह बाक़ायदा नहीं मानी जा सकती।† जो दूसरेका अधिकार हड़पनेके लिये मौक़ा ताकते रहते हैं, उन्हें मौक़ोंकी कमी नहीं रहती। लार्ड डलहौज़ीने अवध लेनेपर कमर कसी थी, इसलिये १८३६ की सुलहको बेकायदा बताकर कुछ समयके लिये शान्त रहे, पर न्याय और सचाईके सामने उनका यह प्रयत्न तुच्छ था। जिस सन्धिपत्रको वे डाइरेक्टरोंसे असमर्थित बताते थे वह १८ सितम्बरको बाक़ायदा डाइरेक्टरों द्वारा समर्थित हो चुका था और दूसरे सन्धिपत्रोंके साथ रखा जा चुका था।‡ नीतिज्ञ ट्रोवाइस ट्वीसने इस सन्धिको बाक़ायदा और अवश्य प्रति-

* A Collection of Treaties Vol II. P. 176-177.

† Retrospects and Prospects P. 54.

‡ Collection of Treaties Vol II, P. 173-177,

पालय लिखा है—"मैं सूक्ष्म विचारके वाद इस सिद्धान्तपर पहुँचा कि सन् १८३६ की सन्धि कानून और सचाईके अनुसार वाक़ायदा है।" * लार्ड हार्डिंगने सन् १८४६ में जो पत्र अवधके नवावको लिखा था, उसमें भी १८३६ की सन्धिका वैध होना स्वीकार किया गया था। † कर्नल स्लीमनने १८५१ में लिखा था—"सन् १८३६की सन्धिके अनुसार हमें अपने कर्मचारी द्वारा शासनका जो अधिकार मिला है, मेरे विचारसे सरकारको वह शक्ति काममें लानी पड़ेगी।"‡ सर हेनरी लारेंसने लिखा था—"नई सन्धि (१८३६) के अनुसार हम अवधके शासनको अपने हाथमें ले सकते हैं, इससे कोई इन्कार नहीं कर सकता। ¶ जव सन् १८३६ की सन्धि स्वीकार की गई तव लार्ड ब्रौटन वोर्ड आव कंट्रोलरके सभापति थे। उन्होंने साफ लिखा है—"सन् १८३६ की सन्धि सरकारने पास की थी—उसपर मेरा दृढ़ विश्वास है। इस सन्धिका एक हिस्सा नहीं माना गया था, पूरी सन्धि अस्वीकृत न थी।" $ ख़ास ख़ास आदमी सन् १८३६ की सुलहको वाक़ायदा और

* Dacoittee in Excelsis P. 192.

† Oude Papers 1856, PP. 31-32. Ibid 1858. P. 62,

‡ Oude Blue Book P 166, F. Malcolm Ludlow, War in Oude P. 29, note.

¶ Sir Henry Lawrence's Essays P. 131, Calcutta Review No. VI, Vol III. P, 424,

$ Beveridge's History of India Vol. III. P. 548,

अवश्य प्रतिपाल्य मानते थे। अर्थात् जो सन्धि बाक़ायदा हुई, सरकार और डाइरेक्टरोंने जिसकी घोषणा की—उसके ग्यारह सालके बाद वह बेक़ायदा हो गई। * सच्चे आदमी इसपर कभी भरोसा नहीं कर सकते।

आश्चर्य इस बातका है कि कई लेखकोंने डलहौज़ीके मतका ही समर्थन किया है। सर चार्ल्स जैक्सनके मतानुसार १८३६ की सन्धि पास करनेमें डाइरेक्टरोंने इन्कार किया था। † ड्यूक आव आर्गाइलने लिखा है कि—"सन् १८३६ की सन्धि बाक़ायदा पास न होनेसे हमारा यथार्थमें लाभ नहीं हुआ, बल्कि यदि वह स्वीकार हो जाती तो लार्ड डलहौज़ी अधिक सन्तुष्ट होते। इस सन्धिके अनुसार उन्हें सब अधिकार मिलते थे और ज़रूरत पड़नेपर वे अवधका शासनभार भी ग्रहण करते।"‡ ड्यूक आव आर्गाइलकी यह बात कहांतक ठीक है सो नहीं कह सकते। १८३६ की सन्धि डलहौज़ीको पूरा स्वत्व नहीं देती थी। न तो वे इस सन्धिके अनुसार राज्यकी आयको ख़र्च कर सकते थे और न वह रुपया ही ले सकते थे। इस सन्धिने अवधका शासन करनेका उन्हें अधिकार दिया था, पर वह भी सदाके लिये नहीं, थोड़े दिनके लिये। थोड़े दिनोंतक अवधका राज करके वे फिर उसे नवाबके हाथमें लौटा देनेपर बाध्य

* War in Oude P. 29-30.

† A Vindication P. 124.

‡ India under Dalhousie and canning P. 110 note.

थे। * पर जैकसन आदिके इस तरह लिखनेसे पवित्र इतिहास-की महिमा घट गई है। जो लार्ड डलहौज़ीके मतके पोषक हैं उनसे सहृदयताकी आशा ही नहीं की जा सकती।

१८४२ के मई मासमें मुहम्मद अली शाहकी मृत्यु हो गई। उसके पुत्र अमजद अली शाह नवाब बने। अमजदअलीकी मौतके बाद सन् १८४६ में वाजिद अली शाह अवधके नवाब हुए। अब-तक ब्रिटिश कम्पनीकी जो लोभकी दृष्टि अवधपर थी वह वाजिद अली शाहके ज़मानेमें सफल हुई। कम्पनीने अवधके राज्यके सम्बन्धमें जो अपवाद प्रचलित कर रक्खा था वही अवधको लेनेका प्रशस्त मार्ग बना। एक नवाबके बाद दूसरा नवाब बैठा, एक गवर्नर जनरलके बाद दूसरा आया, एकके बाद दूसरेके हाथमें शासन जाने लगा, पर अवधका अपवाद न मिटा। इसी बदनामीसे अन्धे होकर बेंटिंकने नवाबको उपदेश दिया, फिर आकलैंडने १८३६ में उपदेश दिया, फिर हार्डिङ्गने नवाबकी ताड़ना की, इतनेपर भी सरकार सन्तुष्ट न हुई। अन्तमें एक सर्वस्वभोगीने आकर अवधकी नवाबीकी इतिश्री ही कर डाली।

सन्धिके सिरपर पैर रखकर लार्ड डलहौज़ीने अवध लेनेका इरादा कर ही लिया। कर्नल स्लीमन नवाबके दरबारमें रेजीडेंट थे। वे शासनके कुप्रबन्धकी शिकायत ज़रूर करने लगे पर साथ ही उनका यह प्रयत्न भी था कि राज्यमें इन्तजाम हो और नवाब-

* Retrospects and Prospects P. 54.

के सिंहासनकी रक्षा हो। सन् १८५२ के सितम्बरमें स्लीमनने डलहौज़ीको साफ लिखा कि—"अगर हमने अवध या उसके किसी भागको ले लिया तो हमारी बदनामी होगी। ऐसे १२ अवधोंके बदलेमें भी हम अपनी नेकनामी नहीं देना चाहते।" * पर लार्ड डलहौज़ीने इसपर कुछ ध्यान न दिया, स्लीमनके प्रस्तावके अनुसार अवधका प्रबन्ध सुधारनेपर भी ध्यान न दिया। गवर्नर जनरलकी इस उदासीनतासे दुःखी होकर स्लीमनने अपने एक मित्रको लिखा था कि—"मुझे शक है कि, लार्ड डलहौज़ी मेरे साथ इस विषयमें सहमत नहीं हैं। मैं जिस कार्यको सम्मान-योग्य न समझूंगा, वैसा कार्य यदि गवर्नर जनरलने मुझे करनेको दिया तो मैं वह दूसरेके लिये छोड़कर स्वयं इस्तीफा दे दूंगा। राज्य हथिआलेनेका हमें कोई अधिकार नहीं है। १८३९ की सन्धिके अनुसार हम राज्यका जिम्मा ले सकते हैं, पर राज्यकी आयका एक पैसा भी अपने लिये नहीं रख सकते। हम अपनी सरकारकी नेकनामी और प्रजाके कल्याणके लिये प्रबन्ध अपने हाथमें ले सकते हैं पर उसे हड़पना नीचता और बेईमानी है।" † ११ सितम्बर १८५४ को यह पत्र लिखा गया। इससे यह स्पष्ट होता है कि छः वर्ष रेजीडेंटका काम करनेपर भी कर्नल स्लीमनको लार्ड डलहौज़ीकी इच्छाका पता न लगा। ‡ केवल

---

* Sleeman's Oude, Vol II. P. 379.
† Ibid Vol I. PP. XXI. XXII.
‡ Retrospects and Prospects P. 68.

कर्नल स्लीमन ही अवधके विरुद्ध न थे, सर हेनरी लारेंसकी सम्मति भी यही थी। हेनरी लारेंसने उस समयके "कलकत्ता रिव्यू" नामक मासिक पत्रमें "अवध" के सम्बन्धमें एक लेख लिखा था,—"अवध यथासम्भव नवाबके अधीन ही रहना चाहिए। उसका एक रुपया भी कम्पनीके ख़ज़ानेमें न आवे।"* हेनरी लारेंसकी यह सम्मति सदैव ऐसी ही रही। पंजाबहरणके पांच साल बाद सन् १८५४ में, ग़दरके प्रसिद्ध इतिहासलेखक 'के' साहबको, जो पत्र उन्होंने लिखा था, उसमें भी स्पष्ट था कि "एक आदमी नवाबके धनका दुर्व्यवहार कर रहा है या प्रजापर अत्याचार करता है, इसी बहानेपर हम उसका राज्य नहीं ले सकते। उसका राज्यकर हम अपने ख़ज़ानेमें नहीं ले सकते, हाँ उसकी प्रजाका प्रबन्ध कर सकते हैं।"† कर्नल स्लीमन और सर हेनरी लारेंसके जैसे पवित्र भाव थे वैसी सलाह उन्होंने लार्ड डलहौज़ीको दी, पर डलहौज़ीने उसपर ध्यान ही न दिया। बल्कि कुप्रबन्ध, अविचार, अत्याचार और प्रजाकी बर्बादीका नाम लेकर अवधराज्यके लिये उन्होंने हाथ बढ़ाया।

२४ नवम्बर १८५४ को कर्नल स्लीमनकी जगह जनरल आउटराम अवधके रेज़ीडेंट नियत हुए। अन्तिम शोचनीय कार्य आउटरामके ही हाथमें दिया गया। १८५५ की गर्मीमें नीलगिरि-

---

* Sir Henry Lawrence's Essay, P. 132, Calcutta Review No. VI, Vol III. P. 424,

† Kaye's Lives of Indian Officers Vol: II. P. 310.

की ठंढी हवाका सेवन करते करते लार्ड डलहौज़ीने अवधकी सब घटनाओंपर एक "मिनट" लिखा। १८ जूनको उसपर दस्तख़त किये। * दूसरे सालके जनवरी मासतक सब प्रबन्ध हो गया। कोर्ट आव डाइरेक्टरने अवधके ले लेनेकी आज्ञा दे दी, बोर्ड आव कंट्रोलरने आज्ञा दे दी, लंडनकी मंत्रिसभाकी भी आज्ञा आ गई, अब डलहौज़ी चुप कैसे रह सकते थे? ३ जनवरीके प्रातःकाल उन्होंने सभा की। सब कार्यवाही पहले ही हो चुकी थी। ब्रिटिश सरकारकी घोषणा अवधकी नई शासनप्रणाली आदिके कागज़-पत्र सेक्रेटरीके पास तैयार थे। सभाने काम शुरू करनेकी आज्ञा दी, तुरन्त रेजीडेंटको समाचार दिया गया। जनवरीके अन्तमें आउटरामको समाचार मिला। ३१ जनवरीको नवाबके बड़े मंत्रीको रेजीडेंटने सरकारकी आज्ञा सुनाई। मंत्रीने प्रबन्धमें सुधार करनेके लिये समय मांगा, नवाबकी माताने अपने बेटेके अपराध-पर विचार कराना चाहा, सब प्रस्ताव हुए पर आउटरामने एक-के बाद दूसरी बातका कुछ जवाब न दिया। विचारका समय चला गया, सहनशीलताकी हद हो चुकी, अब केवल नवाबको सरकारकी आज्ञा सुनानी शेष है, यही उत्तर आउटरामने दिया। मंत्रीने भावीके सामने सिर झुकाया, नवाबकी माताने आंसू गिराये।

४ फरवरीको ब्रिटिश रेजीडेंट नवाब वाजिद अली शाहसे मिलने गये। नवाबके महलके दरवाज़ेसे तोप हटाई गई और सि-

* Kaye's Sepoy War. Vol I. P. 143.

पाहियोंके हथियार लिये गये। जो पहले हथियारसे रेज़ीडेंटकी सलामी लेते थे उन्होंने केवल हाथसे सलाम किया। अपने भाई और कुछ मंत्रियोंके साथ नवाबने रेज़ीडेंटका दरबारमें स्वागत किया। शोचनीय घटनाका अभिनय प्रारम्भ हुआ। रेज़ीडेंटने गवर्नर जनरलका पत्र और सुलहकी शर्तोंका एक मसौदा नवाबके हाथमें दिया। ठंढी आह भरकर नवाबने कागज हाथमें लिये, अपनी पगड़ी उतारकर रेज़ीडेंटके हाथमें देते हुए कहा कि सन्धि तो बराबरवालोंमें हुआ करती है, ब्रिटिश सरकारने उसका मान, सम्भ्रम और राज्य सब कुछ ले लिया, अब सन्धि तो एक मजाक है। नवाबके इस गिड़गिड़ानेका कुछ फल न हुआ। सदासे जिनको उसने मित्र समझा था, जिनसे सदा विनयका व्यवहार किया, उन्हीं मित्रोंने आज उसे कड़ा बदला दिया! दुःख और क्रोधसे नवाब वाजिद् अली चुप हो गये। उसी समय रेज़ीडेंटने सरकारकी आज्ञा सुनायी। सारा अवधराज—लगभग २४ हजार वर्गमील जमीन ब्रिटिश इंडियामें आ मिला। और नवाब सरकारके पेंशनभोगियोंमें गिने जाने लगे।

इस प्रकार भारतके प्रधान प्रधान राज्य ब्रिटिश इंडियामें मिलाकर लार्ड डलहौज़ीने लार्ड कैनिंगके हाथमें शासनकी बागडोर दी। अवधपर अधिकार जमा लेना ही डलहौज़ीकी सबसे अन्तिम कीर्ति थी। एक इतिहासलेखकने डलहौज़ीके इस कामको वाटर्लू विजयकी उपमा दी है।* यदि हमसे पूछा जाय तो

* Kaye's History of the Sepoy War, Vol I. P. 143.

इस महापापकी सीमाको, स्मिथफील्डका अग्निकांड कहेंगे। मोहान्ध मेरीने प्रोटेस्टैंट लोगोंको जलती आगमें ढकेलकर धर्मके बदले पाप पैदा किया था, शुभ नामके बदले पाप कमाया था। डलहौज़ीकी सरकारने नवाबका राज्य लेकर ही बस न किया। बल्कि नवाबने पार्लमेंटमें अभियोग चलानेके लिये विलायत जानेकी आज्ञा मांगी; उसे रेजीडेंटने बड़े कौशलसे रोक लिया और जिन युक्तियों तथा कागज़ोंके आधारपर अभियोग चल सकता था उनपर जबर्दस्ती कब्जा किया। नवाबकी धन सम्पत्ति, गृहसुखकी सामग्री, कपड़े, घोड़े गाड़ी, पुस्तकालयकी दो लाख हाथकी लिखी किताबें, हाथी घोड़े सब नीलाम किये गये, सारा धन ब्रिटिश कम्पनीके ख़ज़ानेमें पहुंचा।* इतना करके भी डलहौज़ीकी पापवासना पूरी न हुई। लिखते हुए क़लम कांपती है, नौकरोंने नवाबके जनाने महलोंमें घुसकर बेगमोंको जबर्दस्ती बाहर निकाला, जबर्दस्ती उनके गहने छीने और उनके ख़र्चके लिये जो धन था वह रोक लिया।† एक निष्पक्ष अंग्रेज लेखकने इस विषयमें लिखा है—अंग्रेज़ोंने जो अवधराज्यकी सम्पत्ति लूटी यही बड़ा पाप है। सौ बरससे नवाबखान्दान अंग्रेजोंका वफादार मित्र रहा,‡ उस मित्रताका बदला उसे बहुत अच्छा मिला। इस प्रकार इस सर्वस्वहरण नाटकका पर्दा गिरा।”

---

* Dacoittee in Excelsis P. 145,

† Dacoittee in Excelsis P. 145,

‡ Dacoittee in Excelsis P. 145.

किस अपराधके कारण अयोध्याकी यह शोचनीय दशा हुई ? किस दोषसे नवाब और उनका परिवार अपमानित हुआ ? एक बार इसका विचार होना आवश्यक है। इतिहासकी दुहाई देकर सब कहते हैं कि वाजिद अली शाहके सिंहासनपर बैठे हुए भी अवध अराजक हो गया था। चोरी डकैतीके डरसे प्रजा सदा सशंक रहती थी। अंग्रेज़ोंने अयोध्यापर अधिकार करके शान्ति स्थापित की, यदि अंग्रेज़ अवध न लेते तो सुव्यवस्था न होती। स्कूलमें पढ़नेवाले बालकसे लगाकर अस्सी बरसके बुड्ढे-तकके मुंहसे यही बात सुनी जाती है। डलहौज़ीके पोषक भी यही बात कहते हैं। उनकी क़लमसे अवधका वर्णन इस प्रकार लिखा गया है—"अवध कँटीले दरख़्तोंसे घिरा हुआ जंगली प्रदेश था। जहाँ पहले जङ्गल न भी था वहाँ ताल्लुके-दारोंके कारण खेतीका नाश हो जानेसे अपने आप उजाड़ हो गया था। अधिकांश अवधकी यही दशा थी। जान माल सदा ख़तरेमें रहनेके कारण वाणिज्य व्यापारका नाश हो गया था, बस्ती घट गई थी। प्रजा चोरों डाकुओंसे सताई जा रही थी—चोर डाकुओंसे भी छुटकारा हो सकता था पर नवाबकी सेनासे किसीका भी छुटकारा नहीं हो सकता था।"* इसमें सम्मति देकर हम इतिहासकी पवित्रता खोना नहीं चाहते। हाँ, भारतके अन्य प्रदेशोंके समान अवधमें भी कभी कभी अत्याचार होते थे। पर जिन अत्याचारोंको राजद्रोह कहा जाता है,

* Life of Sir Henry Lawrence, Vol II. P. 287,

संक्षेपसे जिन अत्याचारोंसे दुःखी होकर सरकारने नवावको राज्य से उतारा, ऐसा कोई अत्याचार अवधमें नहीं हुआ। अंग्रेज़ों द्वारा शासित देशोंके साथ तुलना करके हम सिद्ध करेंगे कि ऐसा कोई अत्याचार नहीं हुआ। ऐसा कोई अत्याचार नहीं था जिससे नवाव गद्दीसे उतारा जाता— जिसके कारण अयोध्याकी इतिहासमें निन्दा की जाती।

सवसे पहले चोरी और डकैतीकोही लीजिए। कप्तान वान्वारी आदिने साफ़ लिखा है कि "अयोध्यामें डकैतियाँ पहलेकी अपेक्षा बहुत कम हो गई थीं। सन् १८४८से १८५४ तक छः सालमें ५० लाख निवासियोंमें छोटे छोटे अपराधोंकी संख्या १६०० थी और बड़े अपराधोंकी संख्या कुछ अधिक २०० हो गई थी। दूसरे प्रदेशोंके साथ इसकी तुलना करें तो ज़मीन आसमानका भेद मालूम होगा। अंग्रेज़ शासित इलाहाबाद अयोध्याका पांचवाँ हिस्सा और वनारस छठा हिस्सा था। पर सन् १८५५में इलाहाबादके अपराधोंकी संख्या १४५२ और वनारसमें ८००३ हो गई थी। वनारस अयोध्याके मुक़ाबिलेमें छः गुनी कम थी पर अपराधोंमें चारगुनी अधिक हो गई थी। हिन्दुस्तानमें बंगाल अंग्रेज़ों द्वारा सुशासित प्रान्त कहा जाता है। इसमें सन् १८५०में ६६, ३५२ आदमियोंपर फौजदारी मुक़दमे चलाये गये जिनमेंसे ५५,२५१ आदमी दोषी सावित होनेपर दंडित किये गये। फिर इसी बंगालमें सन् १८५१में अपराधोंकी संख्या ६४,६६३ हो गई और सन् १८५२मे यह संख्या ६२,११५ तथा १८५३में ६२,६२६

हुई। बंगालकी आबादी अयोध्याकी आबादीसे ८ गुनी और अपराधोंकी संख्या ३६ गुनी अधिक *।

* Dacoittee in Excelsis P. 182.

लार्ड डलहौजीने सन् १८५६ की फरवरीमें अयोध्याके कुशासनका घोषणापत्र प्रचारित किया था—सन् १८५६के दिसम्बरमें मिश्नरी लोगोंने बंगालके सम्बन्धमें एक आवेदनपत्र गवर्नमेंटके पास भेजा था। मुक़ाबिलेमें डलहौज़ीकी घोषणासे अवधकी दशा और मिश्नरियोंके प्रार्थनापत्रोंसे ब्रिटिश बंगालकी दशाका उल्लेख करते हैं।

डलहौज़ी द्वारा लिखित अयोध्याकी दशा।	मिश्नरियों द्वारा लिखित बंगालकी दशा।
डकैतोंके दल प्रजाकी शान्ति नाश करते हैं।	डकैतोंको रोकनेकी पुलिसमें शक्ति ही नहीं।
क़ानून और न्यायसे लोग परिचित नहीं।	इस प्रदेशमें दुर्बल कमज़ोरों पर अत्याचार होते हैं। धन संग्रह करनेकी शक्ति ही शक्ति समझी जाती है [हालिडेकी रिपोर्ट]
ख़ून ख़राबी तो रोज़की बात है।	भयंकर और दिलको दहलानेवाली डकैती साधारण घटना है। सीमाका झगड़ा सदा रहता है।
एक घंटेके लिये भी जान-मालकी ख़ैर नहीं।	बंगालके अधिकतर भागोंमें जानमालकी ख़ैर नहीं।

इससे मालूम होगा कि सन् १८५६ में बंगालकी दशा अयोध्यासे किसी प्रकार कम न थी। जो कसूर अयोध्याके नवाबपर लगाया जाता है वही बंगालकी सरकारपर भी लगता है। War in Oude P. 24-25 note.

अंग्रेज़ी सरहद्पर नीच और दुश्चरित्र चोर और डाकू समय समयपर उत्पात करते थे इसी कारण अयोध्या शासनहीन नहीं कही जा सकती। जनरल आउटरामने सरहद्के ब्रिटिश मैजिस्ट्रेटसे रिपोर्ट मांगी थी कि—"पिछले कुछ वरसोंमें (छः वरस) ब्रिटिश सीमापर डकैतियों और हत्याकी संख्या कम हुई है या नहीं? अगर कम हुई है तो अवधके शासकोंके प्रयत्नसे हुई है या प्रजाके मरने और भाग जानेके कारण हुई है?" मजिस्ट्रेटने इसका जो जवाब दिया वह इतना असंगत और असम्बद्ध है कि उससे कोई सिद्धान्त नहीं निकाला जा सकता। फतहपुरके मजिस्ट्रेटने इस विषयमें लिखा था—"अवधकी सरहद् होनेके कारण इस ओर अपराधोंकी संख्या कम हुई है या अधिक यह कहना बड़ा कठिन है। पर जो कुछ डकैतियां हुई हैं उनमेंसे एकके अतिरिक्त शेष अयोध्याके आदमियोंकी हैं।" जौनपुरके मजिस्ट्रेटने जवाब दिया कि—"पिछले कई वरसोंमें डकैतियाँ कम हुई हैं। नवाबके सुलतानपुरके नाजिम बड़ी होशियारीसे काम कर रहे हैं। अपराधीको कभी उत्साह नहीं मिलता।" गोरखपुरके मजिस्ट्रेटने लिखा है कि अपराधोंकी संख्या कम हुई है। फर्रुख़ाबादके मजिस्ट्रेटने लिखा—"यहाँ जो आदमी चोरी और डकैती करते हैं उन्हें भागने और माल छिपानेको अवधमें जगह मिलती है। पर अवधके पुलिसकप्तान अपराधियोंको पकड़ने और सज़ा देनेमें बड़ी दक्षतासे काम लेते हैं।" कानपुरके मजिस्ट्रेटने विस्तारसे आउटरामके प्रश्नका

जवाब दिया—"इस तरहके ज़ियादातर अपराधी अवधमें गिरफ्तार हुए हैं। अपराधोंकी संख्या घटी या बढ़ी नहीं, बल्कि बराबर है। १८५४में जो डकैतियाँ हुईं उनके सरगना अवधवाले न थे—वह गवालियर और दक्षिणपश्चिमसे आये थे।" *

इस मौक़ेपर अगर यह सब मजिस्ट्रेट यह लिख डालते कि ब्रिटिश सीमापर अवधके चोर डाकू आकर सब उत्पात मचाते हैं तो किसीको ज़रा भी आश्चर्य न होता। जिन दो मुल्कोंकी सीमा मिला करती है उनमें सदा एक देशके गुण्डे दूसरे देशमें जाकर अपना चरित्र छिपाया करते हैं। दुनियाके सब देशोंकी सरहदोंपर यही हाल है। सरकार अभिमानके साथ अपने राज्यको सुशासित कहती थी, पर सरकारके इलाक़ेके आदमी अवधमें जाकर चोरी करते और डाके डालते थे। सुलतानपुरके नाजिमने जौनपुरके मजिस्ट्रेटको अनेक बार इस विषयमें लिखा था। अयोध्याके कप्तान धान्वारीने आज़मगढ़के अंग्रेज़ कर्मचारियोंके पास अनेक बार इस तरहकी शिकायतें भेजी थीं।† जिन पांच मजिस्ट्रेटोंसे जनरल आउटरामने रिपोर्ट मांगी थीं उनमेंसे दोने यह लिखा था कि अयोध्याकी सीमापर डकैतियाँ होती हैं। दोने अयोध्याकी पुलिसकी प्रशंसा की और एक भला बुरा कुछ भी न कह सका। इसलिए इस आधारपर अवधके राज्यको अराजक नहीं कहा जा सकता। लार्ड

* War in Oude P. 15.

† War in Oude P, 18, Oude Blue Book P.P. 47.57.59.

डलहौज़ीने जिस अवधको अराजकता और डकैतियोंका घर लिख डाला वह सबूतोंके सामने साबित नहीं होता।

अवधके राजकर्मचारी अयोग्य न थे इसके भी अनेक सबूत दिये जा सकते हैं। जनरल आउटरामने स्वीकार किया है—"अवधकी निकटवर्ती ब्रिटिश सीमाको अधिक लाभ अवधकी पुलिससे पहुंचा है। इसमें सन्देह नहीं।" लखनऊके ब्रिटिश रेज़ीडेंट सेनापति 'लो'ने सन् १८५५को १५ अगस्तको अपने "मिनट" में लिखा था—"हमारे प्रदेशसे जो अपराधी भाग कर अवधमें चले जाते हैं उन्हें गिरफ्तार करनेके लिए हमारी सेना जब अवधसे होकर जाती है तब अवधकी सरकार उनके खाने पीनेका प्रबन्ध करती और हर तरहकी सहायता सुविधा उपस्थित कर देती है। अयोध्याके सभी नवाब ठगी, डकैती और चोरी रोकनेके लिए हमारे साथ सहमत रहे और काम करते रहे। मैं जब लखनऊमें रेज़ीडेंटके कामपर नियत था तब अयोध्यादरबार हमारी इच्छाके अनुसार काम करता था और अब भी करता है। भारतका कोई राज्य मेरी नज़रसे नहीं गुज़रा जो वेदवाक्यकी तरह तामील करे।" *

'लो' आदि कर्मचारियोंकी क़लमसे अवधके सम्बन्धमें इसी प्रकारकी प्रशंसा निकली है। लखनऊ राज्यके विषयमें वे सच्चे वाक्य सदा सुरक्षित रहेंगे। आश्चर्यका विषय यही है कि ऐसे दूरदर्शी पुरुषोंके वाक्योंकी उपेक्षा करके लार्ड डलहौज़ीने अवध-

* Oude Blue Book P. 226, War in Oude P. 19.

के राजको अराजकताका घर मान लिया और वैसा ही लिख डाला।

हीनचरित्रताके दूषणको छोड़कर अराजकता और अशान्तिका दोष भी नहीं देखा जाता। नवावके आधिपत्यमें अवधकी सब प्रजा प्रसन्नतासे समय व्यतीत करती थी। प्रसिद्ध डाकृर हिवरने अवधका भ्रमण करके लिखा था—"मैंने अवधके विषयमें जो कुछ सुन रक्खा था, यहाँ आकर कुछ भी नहीं पाया। देशके सब खेतको जोते और बोये हुए ही देखे, इससे मेरे चित्तमें जैसी प्रसन्नता हुई वैसा ही आश्चर्य भी हुआ। यद्यपि सचमुच अयोध्यामें घोर अत्याचार होता तो इतनी मनुष्यसंख्या और ऐसा अच्छा वाणिज्य मुझे कभी देखनेको न मिलता।" * अयोध्याकी सुखशांतिका इससे अच्छा और क्या प्रमाण चाहिये? हिवर साहबने खुद देखकर अयोध्याकी सुखसम्पत्तिका उल्लेख किया है। अत्याचार–पीड़ित देशमें सौभाग्य-लक्ष्मीका विकास नहीं हुआ करता।

अगर अयोध्यामें अत्याचार ही होता तो प्रजा राज्य छोड़ कर दूसरे स्थानोंपर चली जाती, पर यह बात अवधमें कभी नहीं हुई। अवधनिवासियोंके स्थानत्यागका जो कुछ विवरण मिला है उससे अवधके शासकोंका अत्याचार सिद्ध नहीं होता। जनरल आउटरामने इस विषयमें लिखा है—"अवधकेवासी यदि अत्याचार पीड़ित होते तो वे पासके ब्रिटिश राजमें ही चले आते

* Herbs Journal Vol II. 49.

यह सरल बात है। इस विषयमें मुझे मजिस्ट्रेटोंका जो विवरण मिला उससे कुछ भी सिद्ध नहीं होता। फतेहपुरका मजिस्ट्रेट इस विषयमें कुछ नहीं लिखता। आजमगढ़, शाहजहांपुर और इलाहाबादके मजिस्ट्रेटसे भी कोई ऐसी बात मालूम नहीं होती। अवधवासी ब्रिटिश राजमें आकर बसे या नहीं इस विषयमें मजिस्ट्रेट कुछ नहीं लिखते। कानपुरके मजिस्ट्रेटने एक सूची बनाई है। इस सूचीसे पता लगता है कि छः सालमें २३३३ आदमी अवधसे आये इनमेंसे १३५४ किसान और बाक़ी दूसरे लोग हैं। यह आदमी अपने परिवारके साथ स्थायी रूपसे आकर बसे हैं।†

अब इस बातपर विचार करना है कि किसी देशके वासी दूसरे देशमें जा बसें तो उनका देशान्तरमें चला जाना देशमें अत्याचार सिद्ध करता है या नहीं? आदमियोंकी तादाद बढ़ जाने, बीमारी फैलने, दुर्भिक्ष पड़ने आदिसे भी लोग स्थान छोड़कर दूसरी जगह जा बसा करते हैं। राजाके अत्याचारी होनेपर भी लोग दलके दल देश छोड़कर दूसरे देशमें चले जाया करते हैं। इस विषयमें अराकानवासियोंका उल्लेख किया जा सकता है। पिछली सदीमें ब्रह्मदेशकी सरकारके अत्याचारोंसे दुःखी होकर वहाँकी प्रजा बिना संकोचके ब्रिटिश राज्यमें आ बसी। इस समय विचारणीय विषय यही है कि अराकानवालोंकी तरह अयोध्यावासी भी देश छोड़कर किसी दूसरे स्थानपर जा बसे थे

† Oude Blue Book 44,

या नहीं। जनरल आउटरामने मजिस्ट्रेटोंसे जो वर्णन संग्रह किया था वह तो इस स्थानपर व्यर्थ है—उससे यह बात साबित ही नहीं होती। छः सालमें ५० लाख प्रजामेंसे २३३३ आदमियोंका जा बसना, दूसरे स्थानपर उपनिवेश स्थापित करना नहीं कहला सकता। फिर यह जितने आदमी जाकर बसे उनकी अपेक्षा इस बातका कोई प्रमाण नहीं कि वे अत्याचारोंके कारण गये। दूसरी ओर कानपुरके अलावा और किसी मजिस्ट्रेटने आदमियोंका आना या बसना स्वीकार नहीं किया। इससे स्पष्ट सिद्ध है कि अयोध्यामें ऐसा कोई अत्याचार नहीं हुआ जिसके कारण प्रजाने देश छोड़ा हो। कुछ आदमी एक स्थान या एक राज्यसे दूसरे राज्यमें जा बसें तो इसका सबूत नहीं हो सकता कि उस राज्यमें अन्याय या अत्याचार है। अगर इसका नाम अन्याय हो तो, बोलोन नगरमें कुछ अंग्रेज़ोंको बसते देखकर नेपोलियन कह सकता था कि इंग्लैंडमें अत्याचार हो रहे हैं।*

सारांश यह है कि, अवधमें इस प्रकारका कोई अन्याय या अत्याचार नहीं हुआ। इतिहासलेखकने लिखा है कि भारतवासी अपनी अवस्थासे नित्य सन्तुष्ट और समवेदनाहीन होते हैं, इसी कारण अपना निवास छोड़कर वे दूसरे स्थानपर जाना अच्छा नहीं समझते।† यह बात कुछ अंशोंमें ठीक हो सकती है पर घोर अत्याचार और विप्लवके समय इसकी यथार्थताकी

* War in Oude P. 29.

† Kaye's Administration of East India Company P. 54

रक्षा नहीं हो सकती। इस बातके काफी प्रमाण हैं कि विप्लव या अत्याचार होनेपर भारतवासी दलके दल स्थान त्याग देते हैं। निजाम राज्यकी प्रजाके दलके दल एक बार इसी तरह ब्रिटिश शासनमें जा बसे थे।* इसलिए नित्यसन्तुष्ट और समवेदना-हीन भारतवासी भी अत्याचारके कारण एक स्थानपर बँधे नहीं रहते।

अवध लेनेके बीस साल पहले फर्रुखाबादके जज फ्रेडरिकने लिखा था—"मैंने अवधके कई स्थानोंमें भ्रमण किया है। मेरी सम्मतिमें जैसी आबादी है उसके अनुसार खेतीकी दशा बहुत अच्छी है। जो कर्मचारी सीतापुर रहते और पड़ोसके गावोंमें कभी कभी शिकारके लिये जाया करते थे वे वहाँकी तमाम भूमियोंको सरसब्ज़ बाग़ कहते थे। वहाँकी प्रजाके घर, मकान, जानवर, कपड़े और गहने देखनेसे वे सब खुशहाल मालूम होते थे, बल्कि हमारी ब्रिटिश प्रजाकी अपेक्षा उनकी दशा अच्छी थी। लखनऊ शहरमें, नवाबके सिवाय, व्यापारियों और महाजनोंकी सम्पत्ति अंग्रेज़ी राजके बड़ेसे बड़े शहर (कलकत्तेको छोड़कर) से भी बढ़कर थी। यदि वहाँके शासक अविचारी और अत्याचारी होते तो प्रजाकी इतनी अच्छी दशा कभी हो ही नहीं सकती थी। सच तो यह है कि लखनऊकी सरकार, हमारी

* Laudlow's, British India its Races and History Vol. I. P. 217.

ब्रिटिश सरकारकी अपेक्षा, कहीं अधिक दयालु और समवेदना-पूर्ण थी। पुश्तैनी ज़मीनके बेचनेका किसीको हक़ही न था।*

हर्मन मार्वेल नामक एक अंग्रेज़ लेखकने, सर हेनरी लारेंसके जीवनचरितमें, लिखा है—"सन् १८५३ से पहले किसी पर राज्यग्राही लेखकने अवधको कांटेदार झाड़ियोंका जंगल लिख डाला है। अब ब्रिटिश कर्मचारी अवधका कैसा वर्णन लिखते हैं यही देखना है। अयोध्याके राज्यका विस्तार लिखा है २५ हज़ार वर्गमील और कुल आबादी लिखी है ?लाख। पर तीन साल बाद यही जनसंख्या ८ लाख लिखी गई और सन् १८६६-७० में यह संख्या लिखी गई एक करोड़ दसलाख। अयोध्या राज्यके नाशका कारण लिखा गया सन् १८५७ का ग़दर। इन्हीं बातोंसे मालूम होता है कि अंग्रेज़ लेखकोंने तिलको ताड़ और भैंसको बकरी बना डाला। पर सच यह है कि जब अवधपर कब्ज़ा किया गया उस समय यह प्रदेश धन-जन-सम्पत्तिपूर्ण था वह अंग्रेज़ी अमलदारीके अच्छेसे अच्छे इलाक़े बढ़ कर था।"†

लेखकोंने अवधके राजको जैसा अत्याचारपूर्ण लिख मारा है, वास्तवमें वैसी एक भी बात न थी। नवाब विद्वान्, बुद्धिमान् और अंग्रेज़ोंका परामर्शग्राही था। सीउद्दीन नामक एक इतिहासज्ञने लिखा है—"नवाब वाजिद अली शाहने पूर्वी-भाषाकी अच्छी तालीम पाई थी। नवीन और प्राचीन इतिहास

* Notes on Indian Affairs Vol I. P 152.

† Merivales Life of Sir Henry Lawrence V. II. P. 288

तथा साहित्यमें उनकी विशेष गति थी। उन्होंने फ़ारसी और उर्दू भाषामें कई उच्च कोटिके काव्यग्रन्थ लिखे थे। यह यूरोपके पुस्तकालयोंमें विशेष आदरके साथ रखे गये थे। एक फ्रेंच विद्वत्‌मंडलीमें एक प्रसिद्ध विद्वान्‌ने नवावके ग्रन्थोंकी बड़े आदरके साथ आलोचना की थी।"

जनरल 'क्लो'ने लिखा था—"अवधके पहलेके पांचों नवाव ब्रिटिश सरकारके परम मित्र थे। वे ब्रिटिश कर्मचारियोंसे सलाह लेकर हर एक काम करते थे। इनकी कार्यप्रणाली प्रशंसनीय थी। अवधके वर्तमान नवाब और उनके कर्मचारियोंसे हमारा बड़ा उपकार हुआ। यह नवावगण केवल हमारे मित्र ही न थे बल्कि दूसरे मित्रराज्योंको जो पत्र लिखते वे भी हमारे ब्रिटिश रेज़ीडेंटके पास भेज देते थे। किसीके साथ सरकारका युद्ध होते ही यह भोले मित्रकी तरह आकर मिलते। नैपालकी लड़ाईके समय हमें रुपयेकी बड़ी ज़रूरत थी, नवाबने सरकारको तीन करोड़ रुपया कर्ज़ दिया। सन् १८४२ में जब लार्ड एलनबराकी सरकार अफगानिस्तानकी लड़ाईमें व्यग्र थी तब वर्तमान नवावके बाबाने १४ लाख और बापने ३२ लाख रुपया देकर सहायता की। नैपालकी लड़ाईके समय नवाबने हमें ३०० हाथी दिये थे। पहाड़ोंपर तोपें और तम्बू लेजानेमें हाथियोंसे हमें विशेष सहायता मिली थी। विना हाथियोंकी मददके हम अपने सामानको पहाड़ोंपर ले ही नहीं जा सकते थे।"

इतनी दूर आकर लार्ड डलहौज़ीकी दूसरोंके राज्य लेनेकी नीतिका स्पष्टीकरण होता है। आठ वर्ष राज्य करके सन् १८५६ के फरवरी मासमें लार्ड डलहौज़ी भारतसे विदा हुये। लार्ड डलहौज़ी विदा तो हुए पर भारतमें ग़दरका बीज भी बोते गये। अबतक भारतके जो प्रधान प्रधान राज्य उन्होंने अपनी राजनीतिसे लिये उनका संक्षेपसे विवरण दे दिया गया है।



चौथा अध्याय

लार्ड डलहौजीके शासनकी अनुवृत्ति—ताल्लुकदारोंका अधःपात—राजकरकी अवस्था—पश्चिमोत्तर प्रदेशकी ज़मीनका बन्दोबस्त—ताल्लुकेदारी हक़—ज़मीनकी कुर्की—बम्बईका इनाम कमीशन—दीवानी अदालतका विचार—ज्योतिप्रसादका विचार—समाजकी आन्तरिक दशा।

जब भारतके प्राचीन राज्य, एकके बाद एक, ब्रिटिश कम्पनीके अधिकारमें चले जा रहे थे, प्राचीन राज्यकर्त्ता, राजा और नवाब पेंशन पा रहे थे, उसी समय हमारे ज़मींदारों और ताल्लुकदारोंके विरुद्ध एक संग्राम उपस्थित हो रहा था। जैसे राज्य ग्रहण करनेसे असन्तोष फैला था वैसे ही इससे भी असन्तोष बढ़ा। डलहौज़ीके द्वारा इस संग्रामकी प्रथम घोषणा न हुई थी, बल्कि अनेक ब्रिटिश राजनीतिज्ञोंकी बुद्धिका फलस्वरूपही यह संग्राम था।

प्रजाको साक्षात् अपने अधीन करके राज्य करना, सब तरहके अविचार अत्याचारसे उनकी रक्षा करना, सब तरहसे ब्रिटिश शासनका फल भोगने देना, मंगलकर व्यवस्था कही जाती है। पर इसी व्यवस्थाके कारण भारतमें प्रजासे गवर्नमेंटका साक्षात् सम्बन्ध करनेमें विशेष सम्प्रदायकी हानि होती है—

नाश होता है। प्रजा और सरकारके बीचमें तालुकदार और ज़मीदार हैं।

सरकारने कामका जो तरीक़ा शुरू किया था उसका उद्देश्य बड़ा भारी था इसमें सन्देह नहीं। अधिकके लाभके लिए थोड़ों-की हानि पहुंचानेका सिद्धान्त उन्नत कहा जा सकता है। पर एककी उन्नति करते हुए दूसरेकी अवनति और एकके अंगको पुष्ट करनेके लिये दूसरेका शरीर काटना योग्य नहीं कहा जा सकता। सबको समान भूमिपर बराबर बैठाना उदारताका काम है, पर बराबर बैठानेके लिये एकको अधिकारच्युत करना, उसे स्वत्वसे वंचित करना, निष्पाप और उदार राजनीतिका काम नहीं है। सरकार किसीके अधिकारको हानि पहुंचाये बिना भी यह काम कर सकती थी—अपने मूल उद्देश्यकी रक्षा करते हुए भी सरकार निम्न श्रेणियोंको उन्नत कर सकती थी। पर तालुकदारोंके विषयमें उत्तरपश्चिम प्रदेशकी सरकारकी कोई विशेष धारणा न थी। उनका अन्तःकरण शुद्ध था, उनके हृदयमें समवेदनाका अंश था; पर वे नीची श्रेणीवालोंके भलेके लिये उच्च श्रेणीवालोंके नाशके सिवाय और कोई मार्ग तलाश न कर सके।

यह संहारका कार्य दो प्रकारसे पूरा किया गया। एक ज़मीनके बन्दोबस्तसे और दूसरे कुर्कीसे। अवधके नवाबका जो प्रदेश लिया गया वह और मरहटाराज्योंको जीतकर उनसे जो यमुनाका मध्यवर्ती भाग मिला वह—स्थायी बन्दोबस्तके योग्य

समझा गया। लार्ड विलियम वेंटिकके जमानेमें उत्तरपश्चिम प्रदेशमें यह वन्दोवस्त काममें लाया गया था। इस प्रस्तावको एक वड़ा उद्देश्य पूरा करनेके लिये रक्खा गया था। सरकारने घोषणा की थी कि—"दरिद्र और असहाय किसान तथा धनी ताल्लुकदार—दोनोंके अधिकारोंका निरूपण उनकी रक्षा सरकार करेगी।"* इस राजनीतिसे वढ़कर और कोई नीति उदार नहीं कही जा सकती। पर जिन कर्मचारियोंके हाथमें वन्दोवस्तका काम दिया गया उनके हाथसे वड़े वड़े अनर्थ हुए। न्यायका अनुसरण करते हुए उन्होंने अन्याय किये, न्यायके स्थानपर अन्याय हुआ। उनकी पुस्तकके पृष्ठ दो कालमोंमें विभक्त थे—एक कालम किसानोंके लिये और दूसरा ज़मींदार या ताल्लुकदारोंके लिये था। प्रायः ज़मींदार या ताल्लुकदारोंका कालम ख़ाली पड़ा रहता था, या ज़मींदारको भी किसानोंके स्तम्भमें लिख डालते थे। इस तरहकी अन्धाधुन्धीसे ज़मींदारोंकी मौरूसी ज़मीनें नाश होने लगीं। जव आदिपुरुष वावाआदम ज़मीन खोदने लगे थे तव धनी कौन था? और जिस दिन सवसे पहले गांवकी नींव पड़ी उस दिन ज़मीन किसकी थी? अर्थात् ताल्लुकदारोंका और जमींदारोंका अस्तित्व मिटने लगा। कर्मचा-

* Letter of mr. John Throutons, Secretary to Govt. N. W. Provinces to Mr. H. M. Elliot, Secretary to Board of Revenue. April 30. 1854.

रियोंने इसी प्रकारकी नीतिका सहारा लेकर ज़मींदारोंका नाश करना शुरू किया।

पश्चिमोत्तर प्रदेशमें इसी प्रकार ज़मीनका बन्दोवस्त होने लगा। बहुतसे तालुकदार अपने पैतृक अधिकारोंसे वंचित होकर साधारण आदमी बन गये। बहुतोंकी क़ानूनन (Sale law ज़मीनें नीलाम हो गईं। बन्दोवस्तके ब्रिटिश कर्मचारियोंके प्रहार धनी और निर्धन सवपर हुआ। अनुदार भावसे राजनीतिकी अक्षुण शक्ति पैदा होती है, वह चण्डीके समान चारों ओर संहार करती है, प्रतिकूलतासे पुष्ट होकर अन्तमें समूल नाश कर डालती है। यदि कोई घटनावश अनुकूल रहकर राजशक्तिसे बच जाता तो वह इन्द्रजालका खेल समझा जाता। तालुकदार या ज़मींदार प्रायः मूर्ख, दुराचारी और प्रजापीड़क या तीनों विशेषणोंसे एक साथ ही युक्त समझे जाते थे। यही उनकी सम्पत्तिहरणके लिये उचित प्रमाण था। इसका एक उदाहरण भी लीजिये। मैनपुरीका राजा पश्चिमोत्तर प्रदेशमें एक बड़ा तालुकदार समझा जाता था। उसका वंश जैसा ही प्राचीन था वैसा ही सम्मानित भी था। राजभक्तिके कारण ब्रिटिश सरकारके यहाँ भी उसका सम्मान था। उसका तालुका क़रीब दो सौ गांवोंका था। इसका प्रबन्ध उस जमानेके शक्तिशाली ज़मींदारोंके समान ही था। जब बन्दोवस्तका काम आया तब जो व्यवहार औरोंके साथ हुआ था, वही यहाँ भी हुआ। कर्मचारियोंका यह दृढ़ विश्वास था कि राजा, तालुकदार और

ज़मींदार सभी प्रजापीड़क, दुराचारी और अन्यायी होते ही हैं। फल यह हुआ कि २०० गाँवोंमेंसे सिर्फ ५१ इनके नाम लिखे गये, बाक़ी गांवोंके बदलेमें कुछ धन देनेका भी प्रस्ताव था।

बन्दोबस्तके कर्मचारियोंमें कमिश्नर, कमिश्नरसे ऊपर रेवेन्यू बोर्ड और रेवेन्यू बोर्डके ऊपर लेफ्टिनेट गवर्नर रहता था। शतरंजके मोहरोंकी तरह एक ही मौकेपर यह सब पृथक् पृथक् वर्ग अधिकारके साथ काम करते थे। जब कमिश्नरके पास मैंनपुरीवाले मामलेवाला जार्ज एडमनस्टोनका प्रस्ताव पहुंचा तब कमिश्नर रावर्ट हैमिल्टनने सूक्ष्मतासे विचार कर इसका खंडन किया। हैमिल्टनका कहना था कि धनके बदलेमें किसीकी ज़मीन नहीं छीनी जा सकती। राजा यदि प्रबन्ध न कर सकता तो वह पेंशन ले सकता है, पर उसके वंशवाले किस अपराधसे वंचित किये जायं? कोई राजा किसी जागीरदार या अधीनकी ज़मीन देवे या उसका कब्ज़ा छीने तो उसे सरकार अयोग्य और दुष्ट कहकर घोषणा करती है, फिर सरकार खुद ऐसा करे तो उसे क्या कहा जाय।* पर उस समय रेवेन्यू बोर्डके सभापति रावर्ट वार्ड थे, उन्हें यह मत पसंद न था, अतः पास न हुआ।

पर मामला यहीं न ठहरा। रेवेन्यू बोर्डसे ऊपर लेफ्टिनेट गवर्नर थे। उनके सामने मामला पेश हुआ। रावर्टसन वास्तवमें प्रजाहितैषी थे, उनका काम पक्षपातहीन हुआ करता था। उन्होंने उदारनीतिका ही समर्थन किया। पर बोर्डके विरोधके

* Despatch of court of Director, August 13, 1851.

कारण आज्ञा निकलनेमें देर हुई। मैंनपुरीके राजासे बन्दोबस्त होनेसे पहले ही रावर्टसनने छुट्टी ले ली। उनकी जगह जार्ज क्लार्क बैठे। क्लार्क भी पहले शासकके समान उदार थे। पर अधिक दिन वे भी न रह सके। स्वास्थ्यभंगके कारण वे भी छुट्टीपर गये। इनके स्थानपर टामसन नियत हुए। यह भले स्वभावके थे पर इनमें अपने मतको सबसे बड़ा माननेका बड़ा दोष था। यह नवीन संस्कारोंके भक्त थे, इसलिये नवीन दलको संस्कृत नीतिका ही पालन करते थे। आसनपर बैठते ही उन्होंने देखा कि मैंनपुरीका मामला विचाराधीन है। उन्होंने भी फैसला किया। उनका भी वही फैसला था जो समिति कर चुकी थी। मैंनपुरी राजकी ज़मीन तीन चौथाई ले ली गई। एक बड़े भारी ताल्लुक़दारको साधारण आदमी बना दिया गया।*

वोल्डर्सन नामक एक ब्रिटिश कर्मचारी सन् १८४४ में आगरेके रेवेन्यू मेम्बर थे। ताल्लुक़दारी बन्दोबस्तके विषयमें उन्होंने एक छोटी पुस्तक लिखी थी। ख़ास आदमियोंमें बांटनेके लिये यह पुस्तक छपी थी। वोल्डर्सनकी पुस्तकमें मैंनपुरीके ताल्लुक़दारकी ज़मीनके सिवाय एक ज़मीनका और भी विवरण दिया गया है। ज़मीनकी मालकिन पूनीकी रानी थी। जब यह प्रदेश अंग्रेज़ी शासनमें लिया गया तब रानीका अधिकार ज़मीनपर स्वीकार कर लिया गया; पर वादमें उसकी ज़मीनका अनु-

* Ludlow's Thoughts on the Policy of the Crown towards India P. 227.

सन्धान किया गया। जांचसे सिद्ध हुआ कि रानीकी सारी सम्पत्ति उसकी अपनी ही है। पर जब रानी पूर्ण युवती हुई और उसने अपनी ज़मीनका स्वत्व लिया तब बन्दोबस्त करके कोर्ट आफ़ वार्डने उसपर भी अपना कब्ज़ा कर लिया।*

बन्दोबस्त प्रणाली जैसे ज़मींदारोंका नाश कर रही थी वैसे ही बिक्रीका क़ानून भी उन्हें पैरोंतले रौंद रहा था। जिस साल अकाल पड़ता उस साल लोग दुर्भिक्षसे मरते और ज़मीनका लगान न दे सकनेके कारण ज़मीन नीलाम हो जाती। तालुक़दार और ज़मींदार समयपर रुपया न दे सकनेके कारण सर्वस्वहीन हो बैठते थे। राबर्टसन्ने सन् १८४२ की १५ अप्रेलको लिखा था कि—"मुझे पूरा शक है कि तालुक़दारी बन्दोबस्त, ज़मीनकी कुर्की और नीलाम थोड़े दिनमें उच्चश्रेणीके सब चिन्होंका नाश कर देंगे। इन सब कानूनोंको चलाकर सरकारने दयाके मार्गमें कांटे बो दिये।"† केवल राबर्टसन ही नहीं, जितने उदार राजनीतिके पोषक थे वे सब इस नीतिके ख़िलाफ थे। मार्टिन गविन्सने नीलामसम्बन्धी कानूनके विषयमें लिखा है—"भारतवासियोंसे राजकर वसूल करनेकी जो प्रणाली हमने चलाई है उसमें अनेक दोष हैं। कर देनेके अयोग्य आदमीके साथ हम जो कठोरताका व्यवहार करते हैं वह सबसे बड़ा दोष है। इस कानूनके अनुसार उसकी ज़मीन नीलाम होती है और

* Ludlow's Thoughts on the Policy on. P, 230.

† Return on Revenue Survey, India 1853, P. 125.

वंशपरम्परासे चली आई जमीनसे वह हाथ धो बैठता है। उत्तर भारतके जमींदार इस कानूनसे बहुत घृणा करते हैं। मैं जब राजकर विभागमें था तब मैंने कभी इस कानूनका प्रयोग नहीं किया। भारतीय जमींदारोंकी तरह मैंने भी उस कानूनकी अवज्ञा की *।" उच्च हृदयवाले अंग्रेजोंने ऐसे जालिम कानूनसे घृणा दिखाई थी। जमीनसम्बन्धी ऐसे कानून बनाकर सरकारने भारतको आश्चर्य, भय और क्षोभमें डाल दिया। इन कानूनोंकी कठोरताके कारण पश्चिमोत्तर प्रदेशके तालुकदारोंमें एकके बाद एकका नाश होने लगा।†

सभी दूरदर्शी व्यक्ति इस बातको मानते हैं कि इन कानूनोंके कारण एक बड़ा राजनीतिक अनर्थ हुआ। उदार राजनीति जिन पश्चिमोत्तर प्रदेशवालोंको अपना मित्र बना सकती थी, उसके स्थानपर संकुचित नीतिने सबको शत्रु बना डाला। दूरदर्शियोंको इस नीतिका विषमय फल स्पष्ट दिखाई दे गया था। शीघ्र ही इस बीजसे वृक्ष फूटनेवाला था वे, समझ गये थे कि यह संहारिणी नीति एक बड़े ग़दरको पैदा करेगी। डाइरेक्टर-सभाके अन्यतम सभ्य टुकरने लिखा था—"किसानोंके साथ ऊँचे दर्जेके ताल्लुकदारोंका सम्बन्ध तोड़ना मेरे विचारसे किसानोंकी दशा सुधारनेका सबसे अच्छा मार्ग नहीं है। हम एक सर्वोच्च श्रेणीवाले पुरुषोंको तोड़ चुके हैं, पर उनके दिलसे स्मृति और

* Gubbin's The Mutinies in Oude P. 439.
† Ludlow's Thoughts on the Policy P. 247,

अनुभूतिको नहीं मिटा सके। वे और उनकी सन्तानें यह अवश्य समझेंगी कि उनका पूर्व गौरव नष्ट हो गया। वे इस समय चुप है, क्योंकि राज्याधिकारियोंकी इच्छाके अधीन होना भारतवासियोंका स्वाभाविक धर्म है। पर यदि पश्चिमी सीमापर हमारा कोई शत्रु आ खड़ा हो या दुर्भाग्यसे ग़दर हो, तो हम जरूर देखेंगे कि, जमींदार और ताल्लुकदार हमारे खिलाफ हो जायंगे और उनको माननेवाली प्रजा भी उनके साथ होगी *।"

इसके पचीस साल बाद एक दूरदर्शी राजकर्मचारीने, राबर्टसनसे राजनीतिकी शिक्षा पाकर असंकुचित भावसे (१८५६ में) जमीनकी नीलामीके कानून और कुर्कीको अमानुषी बताया था। उसने स्पष्ट लिखा था कि 'प्रजाके साथ ताल्लुकदारोंके सम्बन्धको मैं नहीं मिटा सकता।' उन्होंने स्पष्ट शब्दोंमें लिखा था कि, दुर्भाग्यसे यदि कभी भारतमें राजविप्लव हुआ तो सशक्त ताल्लुकदार और उनके अनुगत पुरुष हमारे शत्रु होंगे। मेरे परामर्शपर कभी ध्यान नहीं दिया गया, मुझे केवल वहमी और काल्पनिक समझा जाता था, केवल राजनीतिक विभागमें काम करनेके कारण मुझे राजकर विभागसे बिलकुल अनभिज्ञ और तर्कमें निर्बल कहा जाता था।

"बदायूं विभागकी समग्र निम्नश्रेणीकी प्रजा दलबद्ध हो चुकी थी। अराजकता और ग़दरके बादल उठ चुके थे। जिन ताल्लुकदारोंकी जमीनें सरकार नीलाम कर देती थीं, वे नीलाममें

* Kaye's Sepoy War, Vol I. P. 106.

ख़रीदनेवालेको जानसे मार कर फिर कब्जा कर लेते थे। जो सरकार एक बार सख्ती कर चुकी है, जिस सरकारकी कार्य-प्रणालीने एक बार सबको सर्वस्वहीन कर डाला उस सरकारको फिर शक्तिशाली बनानेके लिये देश तैयार नहीं हो सकता। मेरा पक्का विचार है कि यदि इसका सुधार न किया गया और प्राचीन वंशोंको फिरसे प्रतिष्ठित न किया गया, तो बड़ी भारी सेना भी हमारी रक्षा नहीं कर सकती। मैंने इस बातको बड़ी अच्छी तरह समझा है कि जो ग्रामीण लोग सिपाहियोंसे घृणा करते हैं, यदि बड़ा भारी असन्तोष उनमें न होता तो वे सिपाहियोंके साथ सरकारके विरुद्ध कभी खड़े न होते। कारतूसोंके साथ इसका कोई सम्बन्ध नहीं, धर्मरक्षाका भी प्रश्न इतना प्रबल न था। जो जमीन इनको जानसे प्यारी थी उससे बेदखल करनेके कारण ही इनको उत्तेजना हुई *।

कर्नल स्लीमनने डान कालविनको एक समय लिखा था कि—"भारतके ताल्लुकदारोंके प्रति सज्जनता दिखानेका जो मौका राबर्ट मार्टिन बार्डको मिला उसमें उन्होंने इनका सम्मान नष्ट किया और टामसनने इनका अनुकरण करनेमें कमी न की। इनके दृष्टान्तोंका कितनोंने अनुकरण किया। हिन्दुस्तानमें भूमिकी सम्पत्ति ही आदमीके मानका कारण है, अधिकारियोंने जमीनों-

* William Edward's Personal adventures during the Indian Rebellion, P. P. 12-17.

परसे बड़े बड़े जमींदारोंके अधिकार ले लिये। सब जमींदारोंको अत्याचारी और कलंकी समझना उनका स्वभाव हो गया था।*

अंग्रेज़ी राज्यका यह गुण था कि राजा, ताल्लुकदार और जमींदारको वे पहलेसे ही अन्यायी, झूठा, व्यभिचारी और फरेबी समझ लिया करते थे। सूक्ष्म विचार करनेवाले राजनीतिज्ञोंकी कठोर समालोचनाकी भी सदा उपेक्षा की जाती थी। जब यह धारा भारतमें चल रही थी तब एक और श्रेणीके स्वत्व छीने जाने लगे। जिन्होंने प्राचीन राजाओंकी सेवा की थी, राज्यों-का काम किया था, या किसी समय राज्यको विपत्तिसे बचाया था, उनको इनामोंमें जमीनें और जागीरें दी गई थीं। भारतमें यह प्रथा बहुत प्राचीनकालसे चली आती थी। लाखराज वंश-परम्परासे इस तरहकी जमीनके मालिक थे। उनकी भूमिका इतिहास बड़ी बड़ी घटनाओंसे भरा था, उन सबका वर्णन करनेके लिये एक पृथक् पुस्तककी आवश्यकता है। इन जमीनोंमेंसे कोई क़ानूनसे बरी थी, कोई माफीमें थी, कोई एक पीढ़ी या एक पुरुषके लिये ही थी। जिस समय अंग्रेज़ोंने बंगाल, बिहार और उड़ीसाकी दीवानी हाथमें ली तब इस तरहकी ज़मीनें लोगोंके पास बहुतायतसे थीं। पश्चिमोत्तर प्रदेशमें भी इस प्रकारकी अनेक लाखराज भूमियाँ थीं। वंशपरम्परासे वे ज़मीनका स्वत्व भोगते थे। समयके फेरसे इन जमीनोंका बन्दोबस्त होने लगा। लाखरा-जको अपनी ज़मीनोंके काग़ज़ात पेश करनेकी आज्ञा हुई पर जमी-

* Sleemans Oude Vol II. P. 413.

नोंका कब्जा बहुत पुराना होनेपर भी कागजात न थे या जो थे वे बहुत पुराने हो चुके थे, कीड़ोंने उनमें अपना घर कर लिया था। इस आज्ञाके कारण बड़ी घबराहट हुई। जरूरी कागज़ात नष्ट हो चुके थे, माफीके जमींदारोंको बड़ी फिक्र पड़ी। यह फिकर अधिक दिन न करनी पड़ी क्योंकि ऐसी जमीनोंपर जप्ती की संहारकनीतिने शीघ्र अपना विकराल रूप प्रगट किया। जिन्होंने जबर्दस्ती जमीन दबा रक्खी थी उनको भी यह दण्ड भोगना पड़ा, जो सैकड़ों बरसोंसे जमीनके मालिक चले आरहे थे उन्हें भी यह दण्ड भोगना पड़ा, जिनके कागजात नष्ट हो गये थे उनपर भी: यह वज्र गिरा।

बंगाल, बिहार और उड़ीसामें हाहाकार मचा। बंगाली सदा से राजभक्त, भीरु और संकुचित चित्तके रहे हैं। चुपचाप आंसू बहाकर उन्होंने यह दंड सहा, संहारकारी आज्ञाके सामने चुप-चाप सिर झुकाया। वे चुपचाप पहलेकी याद भूलकर राजासे रंक बन गये। पर पश्चिमोत्तर प्रदेश वीरताकी जन्मभूमि थी, बंगालियोंकी तरह घरमें आंसू बहाकर वे अपमान सहना नहीं जानते थे। सरकारमें यह विचार होने लगा कि इस वीर प्रदेशके साथ इस नीतिको काममें लाया जाय या नहीं। अखबारमें आन्दोलन होने लगा, बहस हुई। सबको यह निश्चय हो गया कि यदि इस वीरप्रदेशके साथ सरकार इस तरहका बर्ताव करेगी तो फिर केवल फौजोंके द्वारा ही अंग्रेजी शासनकी रक्षा होगी और किसी तरह नहीं। कई सभासदोंकी सम्मति थी कि

पश्चिमोत्तर देश आगरा और अवधमें यह कानून न चलाया जाय ; पर सरकारकी सर्वसंहारिणी नीतिकी धारा इस कल्पनिक भयसे भी न रुकी। नयी राजनीतिसे इसे सहायता मिली दावानलकी तरह सरकारकी यह नीति और भी बढ़ चली। अबकोई भी उससे न बचा, कोई इस राजनीतिके जालसे न छूटा, लोगोंने मुगल जमानेमें जिस जमीनका स्वत्व भोगा, मरहट्टोंके समयमें जिसकी रक्षा की, उसे अंग्रजी सरकारके शासनमें छोड़ना पड़ा। पश्चिमोत्तर देशमें कानूनका अस्त्र चला।

संयुक्तप्रदेश आगरा और अवधमें जमीनका बन्दोबस्त शुरू हुआ। इस बन्दोबस्तका उद्देश्य समानता थी। बन्दोबस्तके कर्मचारी चाहते तो नाजायज किसीको बेदखल न करते पर यह उनकी इच्छा ही न थी। सबको समान बना देनेका दावा करके वे कामपर लगे थे। राबर्टसनने इस नीतिके सम्बन्धमें लिखा था—"जो जमीनें रजिस्ट्री नहीं हुई थीं उन सबको बिना किसी जांचके कर्मचारियोंने छीन लिया। फर्रुखाबाद जिलेमें तो सरकारकी सन्धि और आज्ञाका भी कुछ असर न हुआ। वारन-हेस्टिंग्स जैसे आदमी जो नीति चला गये थे, उसकी भी इस विषयमें उपेक्षा की गई।"* सरकारकी इस मनमानी नीतिने जो जहरीला फल पैदा किया उसे सब बुद्धिमान् मानते है। बंगाल, विहार, उड़ीसा और संयुक्तप्रदेशके जो लाखों आदमी बड़ी २ जागीरें

* Minute of Mr. Robertson, August 13. 1851, Kaye's Sepoy War Vol. I. P. 173

भोग रहे थे, जो राजाओंकी तरह रहते थे वे सरकारके इस अन्यायसे भिखारी बन गये। वाइज़ नामक एक ऊंचे दर्जेके अंग्रेज़ने लिखा था—"चटगांव जिलेके सब निवासी, सदासे चली आई जमीनके स्वामित्वसे वंचित किये गये और इससे आन्तरिक ग़दर हुआ।"* सरकारकी इच्छा यह नहीं थी कि वह प्रजामेंसे बहुतोंको अपना शत्रु बना ले,परन्तु उसने जो कुछ किया वह ऐसी आग थी कि जो सिवाय ख़ूनके और किसी तरह बुझ ही नहीं सकती थी। जो परिवार सौ या दो सौ बरसोंसे जमीनके मालिक चले आरहे हैं, उनसे जमीनके कागज़ात मांगे गये। वे कागज न दिखा सके, उनके कागज नष्ट हो गये या खो गये या जिसने जमीन दी उसने कागज दिया ही नहीं; ऐसी दशामें भी जमीनें छीन ली गईं चाहे उनका कब्जा दो सौ बरसका हो या सौ बरसका। बन्दोबस्तके इन कर्मचारियोंमें सभी निर्दय न थे, कोई कोई बहुत ही भले और सहृदय भी थे, पर दुर्भाग्यसे ऐसोंकी संख्या नहींके बराबर थी। अधिक कर्मचारी भूमिहरणके पक्षपाती ही थे।

बंगाल और पश्चिमोत्तर प्रदेशमें नये बन्दोबस्तके कारण सामाजिक और राजनीतिक दशा बिलकुल बिगड़ गई थी। उधर बम्बई इलाकेमें भी इसी तरहकी इनामकमीशन बैठी। उधर राजाओं और बादशाहोंने जो जमीनें माफीमें दी थीं उन्हें

* Second Report on Colonisation and Settlement (India) 1858, P P. 44. 60,

"इनामी जमीन" कहते थे। इस तरहकी हजारों जमीनें और लाखों मालिक थे। सन् १८१८ में पेशवाका राज्य लेकर सरकारने जमीनका बन्दोबस्त शुरू किया। यह बन्दोबस्तका कायदा ऐसा कठोर और दूषित था कि इसने किसीको बाकी न छोड़ा। जो राजा थे वे रंक हो गये और जो जमींदार थे वे किसान हो गये। सालके बाद साल बीतने लगे, कानूनके बाद कानून बनने लगे। अन्तमें १८५२ में एक कानून बना जिसके अनुसार फौजी अंग्रेजोंको जमीनके बन्दोबस्तका अधिकार मिला। न इन्हें कानून ही मालूम था और न दीवानीका काम। जिन लोगोंके पास जमीनें थीं वे कुलमर्यादा और सम्मानमें बड़े थे, कई पीढ़ियोंसे वे इज्जतकी नजरसे देखे जाते थे। उनके बुजुर्गोंसे यही बातें चली आती थीं कि तलवार बजाकर उन्होंने जमीनें लीं हैं। महाराष्ट्र देशमें ऐसे जागीरदारोंकी संख्या बहुत थी। वे दलील और कागजकी अपेक्षा अपना कब्जा ही सबसे अधिक मानते थे। वे काग़ज़ोंकी कुछ क़ीमत भी नहीं समझते थे। यदि उन्हें लिखी सनद भी मिली तो उन्होंने उसकी हिफाजत न की, क्योंकि वे तो तलवारको मानते थे। उनकी यह धारणा थी कि जबतक हाथमें तलवार रहेगी तबतक हमारी जमीन कोई नहीं ले सकता। पर इनामकमीशनकी ताकतको कोई न रोक सका—सब आश्चर्यसे देखने लगे। जिनके पास कागज न थे उन सबकी जमीनें ले ली गईं। "जो तकदीरके शिकार बनकर कचहरीमें हाजिर होते थे, अत्याचारोंसे जिनके

मुँह सूख गये थे, जो काममें असमर्थ थे, भीख मांगनेमें लजाते थे, दरिद्रतासे निम्नश्रेणीके समाजमें आ गये थे, उनके हृदयकी वेदना और मनके दुःखका ठिकाना न था *।" बन्दोवस्तके कर्मचारी जबर्दस्ती मकानमें घुस जाते, ताले तोड़ते, सामान देखते, और तो क्या, ज़नानेमें जानेसे भी न हिचकते थे, अत्याचारकी उन्होंने हद कर दी। एक इलाकेमें पैंतीस हजार जमीनोंमेंसे केवल दो सौ लिखे कागज पेश हुए थे †।

जमीनके बन्दोवस्तकी मार्मिकतासे बंबई प्रान्त भी असन्तुष्ट हो गया। एक बड़े अंग्रेजने लिखा था—"दक्षिण महाराष्ट्रके लोग इनामकमीशनसे वेतरह तंग हो गये। ये लोग सरकारसे इतने रुष्ट हो गये हैं कि सरकारके विरोधमें जब जो बात होती है उसीमें सहायता करते हैं ‡।" दक्षिणके एक भ्रमणकारी लाडलो नामक अंग्रेज़ने भी इसका विषम फल होना बताया था।¶ बम्बईकी तरह मद्रासमें भी यह कमीशन बैठी और मद्रास इलाक़ा भी इसी तरह विरुद्ध हो गया। नार्टन नामक एक अंग्रेज़ने मद्रासके बहुतसे उदाहरण संग्रह किये थे, उनमेंसे दो यहाँ दिये जाते हैं। दो देशी सेनाके सूबेदारोंने सेनाकी रंगत

---

* Memorial of G. B. Seton-Karr, Kaye's Sepoy War Vol I, P. 177.

† Sepoy War Vol I. P. 177.

‡ Ludlow's Thoughts On Policy, V. P. 273,

¶ Ludlow's Thoughts on Policy V. P. 273.

बदलती देखकर बड़े अफसरोंको सूचना दी और सहायता की।
इसके उपलक्ष्यमें त्रिचनापली उनको इनाममें दी गई। जब इनामकमीशन बैठी तब एककी सन्तानको यह अधिकार रहा और दूसरेकी विधवा स्त्रीको। विधवाके बाद जमीन वापिस ले ली गई, बेटा देखता रह गया। ऐसी अवस्थामें अपने पिताकी स्वामिसेवाको वह यदि पाप समझे तो क्या आश्चर्य है *?

एक ओर इस तरहके बन्दोबस्तके कारण लोग असन्तुष्ट थे और दूसरी ओर दीवानी अदालतें भी उनके लिये काल हो गई थीं। दीवानी अदालत भी ऐसोंको जमीनके अधिकारसे खारिज करती थीं। जमीनके बन्दोबस्तमें जो कुछ कर दिया गया वह अटल अचल हो जाता था। हर साल सैंकड़ों ज़मीनें नीलाम होने लगीं। जमींदार लोग असहाय और दरिद्र होने लगे।

इस कलुषित नीतिके विषयमें हम लार्ड डलहौज़ीको दोष नहीं दे सकते। डलहौज़ीके दिमाग़से इसकी उत्पत्ति नहीं हुई थी। डलहौज़ीसे पहले ही सरकारकी यह नीति थी। उसे ही लार्ड डलहौज़ीने भी चलने दिया। जब पंजाब लिया गया तब पंजाबमें भी जमीनका बन्दोबस्त शुरू हुआ और वहाँके सर्दार लोग और प्रान्तोंकी तरह जमींदारीसे खारिज किये गये। रहा सहा पंजाबका सद्भाव भी चला गया।† अवध लेनेके बाद वहाँ भी ऐसा ही हुआ। जब एक राजा दूसरे राजाकी जमीन लेता

* Norton's Topics for Indian Statesman P. 169.
† Kaye's Sepoy War Vol I. P. 179 note.

था तब यह बात न होती था, उनके भाई बेटोंको अपना बनाकर उनके सब अधिकार ज्योंके त्यों रक्खे जाते थे, नीचेसे लेकर ऊपरतकके सब ओहदे उन्हें मिलते थे। पर सरकारके अधिकारमें न उनके स्वत्व ही स्वीकार किये जाते और न उन्हें ओहदे ही मिलते। इससे जमीनके अधिकार लेनेकी सरकारकी नीतिकी बुराई दिखाई देती है। ब्रिटिश राज्यके जितने अच्छे ओहदे हैं वे सब अंग्रेज़ोंके लिये ही सुरक्षित समझे जाते हैं। ऐसी दशामें भारतवासियोंके लिये सिवाय दरिद्रताके और कुछ बाकी नहीं बचता। वे ब्रिटिश सरकारके काममें नियुक्त नहीं हो सकते और जमीनका सहारा उनका निकल गया, ऐसी दशामें रोम रोमसे वे पुरानी बातोंको याद करते हैं। सरकारकी कठोर नीतिने इसी प्रकारके सैकड़ों हजारों आदमियोंको अपना शत्रु बना डाला। इस तरहकी जागीरें खानेवाले राजवंशियोंके अतिरिक्त पुरोहित, पंडित और सैनिक भी थे। सरकारने सबकी जमीनें छीन लीं। इस प्रकार धीरे धीरे साधारण प्रजामें सरकारके विरुद्ध क्रोधकी आग सुलगने लगी।

इनामकमीशनकी बहुतसी गलतियाँ बड़ी मोटी मोटी थीं। उदाहरण रूपमें एक यहाँ दी जाती है। ज्योतिप्रसाद नामक एक धनी और बुद्धिमान् ठेकेदारने अफगानिस्तान और गवालियरकी लड़ाईके समय अंग्रेज़ी फौजको रसद पहुंचाई थी। लड़ाईके अन्तमें ज्योतिप्रसादका एक लाख रुपया सरकारके नामे निकला। यह रुपया उसे न मिला। जब पंजाबकी लड़ाई शुरू

हुई तब फिर सामानके लिये ज्योतिप्रसादको बुलाया गया। पहले तो उसने इनकार किया, पर जब सरकारने पहलेका सब रुपया देनेके अतिरिक्त एक पदवी देनेका भी वचन दिया तब फिर काम लिया। पंजाबकी लड़ाई हो चुकी। ज्योतिप्रसादको न रुपया मिला न पदवी। इधर कड़ाईके साथ उसका हिसाब देखा गया और डर भी दिखाया गया। कमसरियटके एक मुलाज़िमने ज्योतिप्रसादके विरुद्ध धोखा और गबन आदिका मामला दायर किया। गवर्नमेंट उसके विरुद्ध हो गई, मेज़र राम्से नामक एक फौजी जांचके लिए नियत हुआ। राम्सेने अच्छी तरह हिसाब जांचकर ज्योतिप्रसादको निरपराध बताया। इस सभामें तीन मेम्बर थे, दो तो राम्सेके पक्षमें थे पर एकने सम्मति दी कि मामला गवर्नर जनरलकी सभामें पेश होना चाहिये। इस मामलेसे पहले राजा नन्दकुमारका जैसा नाटक सौ बरस पहले हुआ था वैसा ही इसका हुआ। जिसने सहायता की। फौजोंको लड़ाईमें रसद दी, उसे ही अपराधी बनाया गया। उपकार करना ही पाप हुआ। अदालतमें ज्योतिप्रसादपर मुकदमा चला। डरकर ज्योतिप्रसाद भागकर कलकत्ते गया। वारंटके द्वारा कलकत्तेसे गिरफ्तार करके उसे आगरे लाये। आगरेमें मुकदमा हुआ। लांग नामक एक बेरिस्टर ज्योतिप्रसादकी ओरसे पैरवी करने लगा। बारह दिनतक कर्ज़ देनेवालेने कर्जदारके सामने अपने आपको निष्पाप सिद्ध किया। अन्तमें वह निर्दोष सिद्ध हुआ। राजा नन्दकुमारने

भी इसी तरह सरकारकी मदद की थी पर उसने फांसीपर लटकाकर ही सहायताका वदला पाया था ।*

राजनीतिक अवस्थाके साथ साथ भारतकी सामाजिक अवस्था भी वद्ल चली थी। ब्राह्मणधर्मकी प्रधानताके कारण भारतवासी जैसे शान्त शिष्ट और विद्या शिक्षामें रत थे, समयके फेरसे, सरकारके प्रादुर्भावके साथ साथ वह सब वद्लने लगा। जो संस्कार और गुण हिन्दुओंके रक्तमांसतकमें मिल चुके थे वे सब सरकारके प्रतापसे काफूर होने लगे; अंग्रेज़ी शिक्षा, अंग्रेज़ी अभ्यास, अंग्रेज़ी सभ्यताकी लहर चली। इस प्रकार समाजमें भी एक प्रकारका विप्लव उपस्थित हो गया।

पर इस परिवर्त्तनसे सरकारके विरोधका कोई सम्बन्ध न था। जो लोग नई हवामें वद्ल चले थे उनकी परवा न करके प्राचीन हिन्दू अपनी प्राचीनताको ज्योंकी त्यों बनाये हुए थे। हां एक बातने अवश्य सबके हृदयोंपर प्रभाव किया था। जाति पांति और छुआछूतका मसला हिन्दुओंका प्रधान धर्म था और इसपर आघात लगनेके कारण सब नाराज़ थे। जाति और धर्मभ्रष्ट होनेसे हर तरहके धर्मसे हीन, परलोकसे हीन, ईश्वरभक्तिसे हीन, देश और समाजसे हीन होना पड़ता था इसलिये जातीय धर्मका बड़ा महत्व था। सबके चित्तोंमें आशंका बनी रहती थी, कि अंग्रेज़ भारतके जातीय मसलेको समझते थे, इसलिए वे धार्मिक और जातीय बातोंमें कभी द्खल न देते थे। पर इतनी होशियारी-

* British India its Races and History Vol II, P. 182.

पर भी समय समयपर ऐसे काम हो जाते थे कि जिनके कारण साधारण प्रजा चौंककर सरकारकी ओर देखती थी।

जेलखानेके कैदी प्रत्यक्ष सरकारसे सम्बद्ध होते हैं। उनके खाने पीने और जीवननिर्वाहका सम्बन्ध सरकारसे होता है। पहले जेलखानेमें कैदियोंको नकद दाम मिला करते थे। अपनी मर्ज़ीके अनुसार कैदी चीजें लेते, बनाते और खाते थे। पर ब्रिटिश शासनके प्रारम्भसे ही यह नियम बदला। प्रारम्भमें एक एक जातिके कैदियोंका एक एक दल बनाया गया, इस दलके कुछ आदमी भोजन बनाते और बाकी खाते थे। फिर भोजन बनानेवाले नीची जातिके लोग नियत किये गये। इससे सब विरक्त हो उठे। सबका विश्वास हो गया कि हमारी जाति और धर्मका नाश कर कम्पनी हमें ईसाई बनावेगी। जेलोंके अलावा बस्तियों और गांवों तकमें यह खयाल फैल गया। यह परिवर्तन देखकर लोग आश्चर्य और घृणासे हतज्ञान हो गये, सरकार और अंग्रेज़ जाति धर्मनाश करनेके कारण बहुत जल्द नाश होगी, यह विचार भी सर्वसाधारणमें फ़ैल गया।

यह आशंका और क्रोध केवल हिन्दू जातिमें ही पैदा हुआ। क्योंकि छुआछूतका विचार हिन्दुओंके अलावा और किसीमें भी न था। इस विषयमें मुसलमानोंकी कोई सहानुभूति नहीं देखी गई। पर साथ ही एक दूसरा कारण था जिससे मुसलमानोंके हृदयोंपर भी ठेस लगी। उन्होंने देखा कि उनकी चिरमान्य फारसी भाषा उठ गई और मौलवियोंका सम्मान अंग्रेज़ मास्टरों-

के सामने कम हो गया। जो आचार, रीति और भाषा सौ वरससे भी अधिकसे देशमें पूर्ण प्रतापसे चल रही थी वह अनिवार्य कारणोंसे संकुचित और मृतप्राय हो गई। अंग्रेज़ी भाषा, अंग्रेज़ी शिक्षा और अंग्रेज़ी व्यवहारपद्धतिने मुसलमानोंको सशंक कर दिया। इस प्रकार मुसलमान भी क्रोध और घृणासे अंग्रेज़ी सरकारके विरुद्ध हो गये*।

लार्ड डलहौज़ी जब मैदानमें आये उससे कुछ बरस पहलेसे ही जेलख़ानोंमें रसोइयोंकी प्रथा चली थी। इस परिवर्त्तनसे मालूम हुआ कि देशमें विप्लव हो जायगा इसलिये गवर्नमेंटने शीघ्रही अपनी नीति बदली। पर सालके बाद साल बीतते गये, कानूनों और रीतियोंके बाद नये कानून और नयी रीतियाँ चलायी गईं, फिर सरकार पहलेकी तरह ही हो गई। इससे अनेक जेलोंके कैदी विरोधी हो गये। शाहाबाद, सारन, विहार और पटनामें बड़े लोमहर्षण कांड हुए, अन्तमें बनारसमें आकर इसकी शान्ति हुई।

जिस तरह रसोइयोंके बदलनेपर अशान्ति मची उसी तरह लोटे बदलनेपर भी धूम मची। लोटा हिन्दू मुसलमानोंकी सब आवश्यकतायें पूरी करनेका प्रधान साधन है। पर साथ ही उग्र आदमीके हाथमें लोटा हथियारका भी काम दे सकता है। इसलिये कई जेलोंमें कैदियोंको लोटेके बदले मिट्टीके बधने दिये गये। रसोई बनानेके लिये नीची जातिके आदमी नियत करनेसे

* Kaye's Sepoy War, Vol. I. P. 197 note.

जो गड़बड़ मची थी वही गड़बड़ मिट्टीके बर्तन देनेसे भी मची। संथने एक क्षणमें समझ लिया कि हमारे धर्म और जातिका नाश करनेके लिये यह अंग्रेज़ोंने नया जाल रचा है। कैदी शान्त न रह सके, भारतकी सर्वसाधारण प्रजा भी अशान्त हो उठी। आरेमें ऐसी अशान्ति मची कि जेलरको गोली चलानेका हुक्म देना पड़ा। मुजफ्फरपुरमें भी यही हुआ, वहाँके मजिस्ट्रेटने लिखा कि कैदियोंसे सहानुभूति रखनेवालोंने एकाएक उठकर अशान्ति मचा दी। नगर और देहातोंके आदमी इकट्ठे हो गये। इन्होंने साफ कहा कि जबतक कैदियोंको लोटे न मिलेंगे तबतक हम पीछे न लौटेंगे। उसी समय जेलख़ाना टूट गया और कैदियोंने खजाना लूटा। अधिकारी ऐसे घबरा गये थे कि उन्होंने कैदियों-को लोटे दे दिये।

एकाएक किसी परिवर्त्तनसे लोगोंके चित्त कैसे अशान्त हो जाते हैं, यह इस लोटेकी घटनासे ही पता लग सकता है। सदा सन्तोषी भारतवासी भी धर्म और जातिके नाशके डरसे जंगलकी आगकी तरह धधक उठते हैं। भारतका इतिहास इसी बातका साक्षी है।



पांचवां अध्याय



ब्रिटिश कम्पनीकी सेना—उसकी उत्पत्ति और उन्नति—उसके सन्तोषका कारण—भारतीय अफसरोंकी अवनति—बिलौड़में सैनिकोंका असन्तोष—भारतीय और ब्रिटिश सेना—सिन्धु और पंजाब हरण—लार्ड डलहौजी और सर चार्ल्स नैपियर—डलहौजी शासनका सिंहावलोकन—उनके उत्तराधिकारी।

जमींदार सम्प्रदाय और समाजका भीतरी धार्मिक शासन जैसे एक ओर अपनी पहली अवस्थासे गिर गया था वैसे ही अंग्रेज़ी शासनके कारण भारतमें एक नया सम्प्रदाय उठ खड़ा हुआ था। राजशक्तिको सबल बनाये रखनेके लिये इसकी वृद्धि की गई थी, चारों ओर शान्ति बनाये रखनेके लिये न्यारे न्यारे स्थानोंपर भिन्न भिन्न दलोंमें इसका संगठन किया गया था। ब्रिटिश राजनीतिज्ञ शुरूसे सोचने लगे थे कि हिन्दुस्तान हमने तलवारके जोरसे लिया है, इसलिये तलवारसे ही इसकी रक्षा होगी। जबतक तलवार हमारे हाथमें मज़बूत रहेगी, तबतक किसी बातका डर नहीं। तलवारका महत्व समझकर सरकारने सेनाओंकी वृद्धि की, करीब तीन लाख सेना हो गई।

पर इस तीन लाख सेनामें गोरी फौजें बहुत ही कम थीं। इंग्लैंडकी आबादी ही हिन्दुस्तानके सामने नहींके बराबर है।

कहा जाता है कि इंग्लैंडकी सेना और भारतके करसे भारत रक्षित नहीं रह सकता। इसलिये यहाँकी सेनाओंको अंग्रेज़ी ढंगसे रणशिक्षा दी गई, सिपाही अंग्रेज़ी ढंगपर रक्खे गये, उन्हें अंग्रेज़ो हथियार दिये गये। भारतकी छोटीसी फौजने रावर्ट क्लाइवको विजयी बनाया था, वही फौज बढ़कर विशाल समुद्र बन गई। यह बड़ी भारी सेना दबदबेके साथ अंग्रेज़ो राज्यकी सहायक बनी, भीतरी शान्ति हुई और बाहरी शत्रुओंको डर लगा। भारतवासियोंने अपने बेटों और भाइयोंको फौजी बनाकर वीरताका परिचय दिया।

सिपाही लोग जैसे संग्राम कुशलता और स्वामिभक्तिके लिये प्रसिद्ध थे वैसाही उनमें असामान्य तेज भी था। सबने प्रसन्नताके साथ सदा इनकी प्रशंसा की है। एक अंग्रेज़ सज्जनने भारतीय सेनाके विषयमें गवर्नर जनरलको लिखा था—"भारतीय सैनिक अपनी जान रहते तक हमारे प्रति विश्वासी रहेंगे, इसमें सन्देह नहीं। इन सैनिकों और इनके पूर्वपुरुषोंने हमें एक बड़ा भारी साम्राज्य अधिकार दे दिया। वे घोर अन्धकारके समय—उस समय जब हमारा राज्य अन्त हुआ चाहता था—हमारे साथ डटे रहे। हमारे लिये उन्होंने इससे भी अधिक कठोर काम किये हैं। हमारी आज्ञासे उन्होंने, अपने देश, अपनी जाति और अपने राजाके विरुद्ध संग्राम किया।"*

*Why is the native Army Disaffected—An address to H. E. the Governor General of India, by an old Indian, P. 2.

अंग्रेज़ी सेनाओंके साथ भारतीय सेनाओंका मुक़ाबिला नहीं किया जा सकता। अनेक कारणोंसे दोनोंमें बड़ा भेद है। एक आदमी अपनी जाति, देश, धर्म और व्यापारकी तरक्कीके लिये सैनिक है, दूसरा अपनी जाति, देश, धर्म और व्यापारके विरुद्ध आज्ञाका पालन करता है। एककी प्रभुभक्ति रुपयेपर है, शिक्षापर है; और दूसरेकी स्वामिभक्ति स्वाभाविक है। इतना भेद होते हुए भी भारतीय सेना ब्रिटिश राजकी आज्ञाकारिणी है।

तरह तरहके शरीरतोड़ परिश्रमसे भी सिपाही अपने कर्त्तव्यसे मुंह नहीं मोड़ते। विना जवान हिलाये सिपाही आज्ञाका पालन और मालिकका हितसाधन करता है। किसी वस्तुका अभाव और कोई अनिच्छा इसे अपने कर्त्तव्यसे हटा नहीं सकती। दूसरे देश और दूसरे धर्मके माननेवालोंकी आज्ञामें रहकर प्रसन्नता और उत्साहके साथ सिपाही अपने कर्त्तव्यका पालन करता है। वह चित्तकी पूर्ण सरलताके साथ विदेशीका विश्वास करता और उसके हुक्मको बजाता है। किसी तरह उसकी साधनामें कमी नहीं आती, किसी तरह उसका उत्साह कम नहीं होता। कड़ी भूखमें भी, जो कुछ मिल गया वह खाकर आगे धावा करता है, अंग्रेज़ी सेना जहां आगे बढ़नेसे हिचकी वहां भी भारतीय सेना आगे बढ़ी और अपनी विजयपताका जा खड़ी की। पवित्र इतिहासके हर एक पृष्ठमें भारतीय सेनाका विश्वास और वीरता सदा जाज्वल्यमान

रहेगी। सेनाका महत्व; एकाग्रता, कर्त्तव्य-बुद्धि और स्वार्थत्याग इतिहासमें सदा अमर रहेगा। हिमालयकी ऊंचीसे ऊंची चोटीसे भी ऊंचा इसका गौरव है, समुद्रकी गम्भीरतासे भी इसको गम्भीरता अधिक है।

जब दक्षिणमें फरासीसो और अंग्रेज़ोंमें युद्ध हुआ तब अंग्रेज़ोंकी जीतका कारण भारतीय सेना थी। भारतका दक्षिणी हिस्सा ही सेनाकी उत्पत्ति और विस्तृतिका आदि स्थान है। थोड़ी होनेपर भी इस सेनाने कम्पनीके अधिकारोंको बनाये रखनेके लिये बड़ा भयानक आक्रमण किया। धीरे धीरे सिद्ध हो गया कि रणनिपुणतामें भारतीय सेना, बहादुरसे बहादुर यूरोपकी सेनासे, किसी बातमें कम नहीं। अंग्रेज़ अफसरों द्वारा शिक्षित और अंग्रेज़ी रणशिक्षा पायी हुई तैलगू, राजपूत सेनायें रणविजयिनी हो गईं। मदूराकी फरासीसी सेनापर इन सेनाओंने कैसा भयानक आक्रमण किया था, आर्काटमें कैसी वीरता दिखाई थी, कड़ालूकी लड़ाईमें कैसे संगीनोंके वारसे लथपथ हो गये थे, ऐतिहासिक बड़ी प्रसन्नतासे इनका वर्णन करते हैं। सब तरहकी ताक़त, सब तरहकी जिम्मेवारी, सब प्रकारका इनाम उस जमानेमें अंग्रेज़ सेनापतियोंके हाथ थे। रणनिपुण भारतीय सैनिक भी उसके हिस्सेदार थे। अंग्रेज़ सेनापतियोंने रणशिक्षित हिन्दुस्तानी अफसरोंके हाथमें सेनाको बढ़ानेका काम देते हुए कभी संकोच नहीं किया। भारतीय सेनापतियोंने घोड़ेपर चढ़े हुए अपनी सेनाओंको बराबर

आगे बढ़ाया है। साहस, पराक्रम, कौशलमें कोई भारतीय सेनापति किसी अंग्रेज़ सेनापतिसे कम नहीं रहा। टोपी पहने हुए भारतीय गोलंदाज सदा विजयी रहे।

जब बहुतसे अंग्रज़ोंके कालकोठरीमें मरनेकी ख़बर मद्रास पहुंची, तब एक नवयुवक अपने भाग्यका सितारा ऊंचा करनेके लिये मद्राससे कलकत्तेके लिए रवाना हुआ। उस समय गंगाके किनारे अंग्रेज़ी फौज न थी। पर मद्रासमें १४ कम्पनी अंग्रेज़ी सेनाकी थीं। एक कम्पनीमें एक हज़ार सिपाही थे। इन सेनाओंको जहाजपर बैठाकर क्लाइव मद्राससे कलकत्ते गया। कलकत्तेपर सहजमें ही कब्जा हो गया। इसी समयसे क्लाइवने बंगालमें ही सैनिक बनाने शुरू किये। उसकी दृढ़ प्रतिज्ञा और रणनिपुणताके कारण बंगालकी सेना मजबूत हो चली। इन बंगाली सेनाओंने मद्रासी सेनाओंके साथ पलासीकी लड़ाईमें बराबर कंधेसे कंधा भिड़ाकर संग्राम किया। आठ साल बाद एक हजार बंगाली सेनाके स्थानपर नौ हजार हो गई।

जिन्होंने सुशिक्षित और सुव्यवस्थित सेनायें देखी हैं उनमेंसे कोई भी इन बंगाली सैनिकोंको वीरतामें कम नहीं कह सकता। अंग्रेज़ी तरीकेपर शिक्षित और अंग्रेज़ी ढंगसे परिचालित होकर यह सेनायें अंग्रेज़ी सेनाका मुक़ाबिला करती थीं। अंग्रेज़ जाति सेनाकी ओरसे कभी उदासीन नहीं हुई। जिन बातों और कारणोंसे इनका धार्मिक विरोध हो सकता था, वे कभी प्रचलित न

की जातीं। सिपाही अपनी अवस्थासे सन्तुष्ट थे और सन्तोषके साथ रणक्षेत्रोंमें ब्रिटिश जातिके लिये संग्राम करते। अपनी जाति और धर्मके अनुसार वे पृथक् पथक् रहते, पृथक् पृथक् भोजन बनाते और खाते। उनके कंठी पहनने, तिलक लगाने और माला पहननेसे किसीको किसी तरहकी शंका न थी। अंग्रेजोंका जैसा व्यवहार उनके साथ था उससे उनके दिलमें यह आशंका कभी पैदा ही नहीं हुई कि ये लोग कभी हमारे धर्ममें हस्तक्षेप करेंगे। इसीलिये वे सब आज्ञाओंका पालन करते और सरकारके प्रति विश्वास रखते थे।

सिपाहियोंमें नमकहरामी कभी न थी। जिसका नमक उन्होंने खाया वे उसके प्रति कभी अकृतज्ञ न होते थे। जो उन्हें खाने पहननेको देता उसके विरोधमें वे कभी खड़े न होते। कृतज्ञता, स्वामिभक्ति और स्वामीके प्रति विश्वास सदा उनमें अटल था। पर यदि उन्हें यह मालूम होता कि उनका मालिक उनके प्रति विद्रोह कर रहा है तो वे दुःख और क्षोभसे मर्माहत होते, इस मर्मवेदनाको वे शीघ्र न भूलते, उनके हृदयमें उसका प्रबल आघात हो जाता था।

सन् १८६४ में बंगाली सेनाको बने सात साल बीत चुके थे। इस समय सिपाहियोंमें असन्तोष दिखाई दिया पर भारतीय सेनासे इस असन्तोषकी उत्पत्ति न हुई, इसकी जन्मभूमि गोरी सेनायें ही थीं। मीरजाफरसे ब्रिटिश सेनाके लिये जो रुपया आता था उसमें देर हुई, इसलिये सिपाहियोंमें असन्तोष

फैला, जब रुपया आया तब यह सोचकर उनमें असन्तोष फैला कि यह रुपया हमें न मिलेगा। उनका यह असन्तोष अकारण न था। क्योंकि गोरी फौजोंके साथ बराबर उन्होंने काम किया था, इसलिये इनामके मौक़ेपर गोरी फौजोंके बराबर ही वे इनाम भी चाहते थे। पर गोरों और कालोंमें इस विषयमें भेद किया गया*। विना कारण इस भेदभावसे भारतीय सिपाही असन्तुष्ट हुए और उनका यह असन्तोष शीघ्रही दूर भी न हुआ। जो आग उनके हृदयोंमें जली थी वह सहजमें शान्त न हुई। साल पूरा होनेसे पहले ही एक दल सेनाने अंग्रेज़ अफसरोंको घेर लिया और दृढ़ताके साथ कहा कि वे कम्पनीका काम कभी न करेंगे। पर कठोर शासन, कठोर विचारप्रणालीका वज्र इनपर भी गिराया गया। २४ सिपाहियोंको गिरफ्तार करके उनपर विद्रोहका मुकद्दमा चलाया गया। फौजी अदालतने इनको तोपसे उड़ानेकी सजा दी।

इस बातको हुए लगभग एक सदी बीत गयी। चौबीस सिपाही अपने साथियोंके सामने मारे गये। बड़ी बड़ी संग्राम-भूमियोंमें सिपाहियोंने बड़ी बड़ी लोमहर्षण घटनायें देखी थीं, पर इस घटनाके सामने उन्हें कोई बात भयंकर नहीं मालूम हुई। यह दृश्य जितना हो भयानक था उतना ही गंभीर, क्षोभ और मनो-वेदना पैदा करनेवाला था। भारतीय और गोरी सेना एक स्थान-पर इकट्ठी हुई। तोपें भरी गईं, दंडित चौबीसों सिपाही लाये

* Kaye's Sepoy War, Vol. I. 206 note.

गये। बंगाली सेनाके सेनापति मनरो इस भयानक घटनाके संचालक बने। उनकी आज्ञासे सबसे पहले चार सिपाही बांधे गये। कई भीषणमूर्त्ति गोलंदाज इस अन्तिम कामके लिये खड़े हुए। मनरोकी आज्ञा होते ही तोपें चलीं और चारों सिपाही मारे गये।

इस भयानक दृश्य और भयानक कार्यसे हिन्दुस्तानी सिपाहियोंके चमकते हुए मुखोंपर हवाई उड़ने लगी। नीचा सिर किये हुए सबकी आंखोंसे दो दो चार बूंद आंसू टपक पड़े। जिस अंग्रेज़ी फौजके अधिक इनाम मिलनेपर उनमें असन्तोष था उसी गोरी फ़ौजके सामने गोरे अफ़सरकी आज्ञासे अपने चार सैनिकोंकी दुर्दशा देखकर मार्मिक दुःखसे सिपाही अचेतसे हो गये। पहले चारके बाद दूसरे चार सिपाही लाये गये। इस तरह चौबीसों सैनिक मारे गये, खड़े खड़े सबने वज्रकी आंखोंसे इस दृश्य को देखा। अंग्रेज़ जातिका रौब कायम रखनेके लिये यह भयंकर नाटक रचा गया था, पर इसका अन्त यहीं न हुआ। पटनेमें छः सिपाहियोंका इसी प्रकार विचार हुआ और इसी तरह उन्हें भी सजा मिली। सब सिपाहियोंने गम्भीर मनोवेदनाके साथ यह दृश्य भी देखा।

यह कठोर दंड व्यर्थ नहीं गया। सिपाहियोंने कम्पनीके प्रतापके सामने सिर झुकाया। अबसे कोई कुछ न बोलता। अबसे वे यह समझ गये कि कम्पनीका काम अपने घरका काम नहीं है, कम्पनीके विरोधसे उनके प्राणतक लिये जा सकते हैं। इस

परिणामने कुछ कल्याणकी भी आशाकी सूचना दी। क्लाइवके जमानेमें जब गोरी फौजें असन्तुष्ट हो गई थीं, तब हिन्दुस्तानी फौजोंने उनका साथ न दिया। हिन्दुस्तानी फौजोंके बलपर क्लाइवने गोरी सेनाको दबा दिया। यदि इस समय भारतीय सिपाही गोरे अफसरोंका कहा न मानते तो सरकारको बड़ी असुविधा होती। पर सिपाहियोंने फिर आज्ञापालनमें देर न की। सिपाहियोंके इस अटल विश्वास और स्वामिभक्तिको क्लाइव अच्छी तरह जानता था। इन्हीं सिपाहियोंपर विश्वास करके क्लाइवने अपने सहायक स्मिथ और फ्लेचरको गोरी फौजोंका असन्तोष दूर करनेको लिखा था। सेनापतिकी आज्ञा मिलते ही भारतीय सिपाहियोंने अंग्रेज़ अफसरोंपर भी बंदूकें तान दीं, यह देखकर क्लाइवकी जानमें जान आई*। उसने समझ लिया कि विपत्ति टल गई, समझ लिया कि यदि गोरी फौज भी विद्रोही हो जाय तब भी चिन्ता नहीं।

बंगाली सिपाही केवल योद्धापदके कारण ही सम्मानित न थे बल्कि उच्च श्रेणीके ब्राह्मण और क्षत्रिय होनेके कारण समाजमें उनका सम्मान था। वे कुल मर्यादासे गौरवान्वित और धार्मिक शासनके रक्षक थे। दक्षिण देशकी सेना भी इसी तरह उच्च जाति और उच्च धर्मकी उपासक थी। इनके नियम और व्यवहार-प्रणालीकी ओर अभीतक किसीने दृष्टि न डाली थी। पर

* Browne's History of Bengal Army. Vol. I. P. 689, Sepoy War. Vol I, P. 210

आखिर सैनिकविभागके कर्मचारी सेनामें एकके बाद एक नियम प्रचलित करने लगे। सबसे पहले दक्षिणी सेनामें अंग्रेज़ी ढंगसे हजामत बनानेकी रीति प्रचलित की गई। इसके बाद कानोंमें वाली पहनने और तिलक लगानेका रिवाज हटाया गया†। इसके बाद उनको पगड़ीके स्थानपर अंग्रेज़ी ढंगकी टोपी दी गई।

सिपाही न तो तत्त्वज्ञानी होते हैं और न कार्य-कारणकी खोज किया करते हैं। उनके हृदयमें कौतूहल और सन्देह रहा करते हैं। इस कौतूहल और सन्देहके कारण बहुत बार वे न्याय मार्गसे हटकर अन्याय-मार्गकी ओर चले जाते हैं। नयी टोपीके व्यवहारकी आज्ञा मिलते ही उन्हें अपनी जाति और धर्मके नाशका भय हुआ। अंग्रेज़ी टोपी देखकर उन्होंने सोचा कि इस बार सरकारने उन सबको ईसाई बनानेका निश्चय कर लिया है। इसके बाद एक और संदेहने उन्हें पागल बना दिया। उनके दिलमें बैठ गया कि यह सब टोपियाँ गाय और सुअरके चमड़ेसे बनाई गयी हैं, इसलिये हिन्दू और मुसलमान दोनोंके छूनेके योग्य नहीं। दाढ़ी मुंडाना, बाली उतारना, तिलक न लगाना आदि बातोंने पहले ही शंका पैदा कर रखी थी। हिन्दू सिपाही जैसे तिलक न लगानेसे असन्तुष्ट थे वैसे ही मुसलमान दाढ़ी कटानेसे नाराज़ थे। इस प्रकार दोनों प्रकारके सिपाही कम्पनीके राजको अनिष्टकारी मानने लगे। सन् १८०६ में

---

† Standing order of Madras Army. Pera 10 Sec. II. Sepoy War Vol. I. P. 213.

वे परस्पर अपने धर्म और जातिकी रक्षा करनेके लिये बातचीत करने लगे। अप्रैल और मईमें सिपाहियोंको अवकाश था। इन महीनोंमें अंग्रेज़ अफसर कभी ही सेनाको देखते और परेट कराते थे। इसलिये सिपाही निकम्मे रहकर आमोद प्रमोदमें समय बिताते या ब्राह्मण साधुओंसे तरह तरहकी बातें सुनते थे, ऐसे समयमें वे टोपी पहनने न पहननेका आन्दोलन करते थे। ब्राह्मणों और साधुओंसे धर्मनाशकी बात सुनकर उनकी घबराहटका कुछ ठिकाना न रहता, इसलिये ऐसे अवकाशके समयोंमें ही इस तरहका आन्दोलन उनमें जोरसे बढ़ जाता।

कम्पनीसरकारके सम्बन्धमें सिपाहियोंको अनेक प्रकारकी आपत्तियां थीं। वे जब सरकारके लिये अपनी जान देते हैं तब उन्हें सूबेदारसे ऊपरके ओहदे क्यों नहीं दिये जाते? वे अपनी विश्वस्तता और दक्षताके कारण उच्चपदके योग्य थे, पर उन्हें उच्चपद नहीं मिलते थे। सिपाही जिस समय अपने कामपर लगे होते उस समय अंग्रेज़ अफसरकी नज़र पड़ते ही बन्दूक उठाकर सलामी देनी पड़ती, पर एक गोरा सिपाही हिन्दुस्तानी अफसरको कभी सलाम नहीं करता, वह चुपचाप अफसरके सामनेसे चला जाता। यह बात अंग्रेज़ अफसरोंके विषयमें ही थी। परेटके समय अंग्रेज़ अफसर गलतीसे अशुद्ध वाक्य बोलते अशुद्ध आज्ञा देते और उसकादोष सिपाहियोंके सिर मढ़ते। जो सिपाही नौकरी करते करते अफसर बने, या बूढ़े हो गये, उनकी हर एक बातकी गोरे सिपाही नकल करके चिढ़ाते। सिपाही

साफ ही कहा करते थे कि उनके मरहट्टा और निजाम अफसर इनसे बहुत भले थे। ब्रिटिश कम्पनी इन सिपाहियोंको कार्यवश ऐसे स्थानों और देशोंमें ले जाती जिसका उन्होंने कभी नाम भी नहीं सुना होता। ऐसे स्थानोंपर अगर वे मर गये तो उनकी समाधि धर्मके अनुसार कौन करेगा, यह चिन्ता भी सिपाहियोंको लगी रहती थी। अपने बालबच्चोंकी फिकरका तो कुछ कहना ही नहीं। भारतीय राजा लोग जब किसी देशको जीतते तब पहले दर्जेके वीर सिपाहियोंको जमीनें इनाममें देते थे, पर कम्पनी केवल पीठ ही ठोक देती थी। बहुत बार अफसर लोग सिपाहियोंका बुरी तरहसे अपमान कर देते थे। यह कहा जाता है कि सेनापति आर्थर वेलजलीने अपने घायल सिपाहियोंको निर्दयताके साथ गोली मार देनेका हुक्म दिया था।

सिपाहियोंकी इस तरहकी शिकायतें बहुत कुछ काल्पनिक होनेपर भी सचाईके आधारपर थीं, विरक्त और असन्तुष्ट होनेपर भी सिपाही अपने कामको बाकायदा करते जाते थे, उनके असन्तोषका कोई लक्षण प्रगट नहीं होता था। अन्तमें तिलक हटाने और गोल टोपी पहननेकी बातसे वे चुप न रह सके। उन्होंने सोचा कि अब जाति और धर्मके नाश होनेका सूत्रपात हुआ। उनका विचार हुआ कि कम्पनी सरकार अब उनको अपनी जाति और अपने धर्ममें मिलाना चाहती है, इससे परलोकमें घोर कुम्भीपाक नरक भोगनेका विचार उनके मस्तिष्कोंमें घूमने लगा। कहां वे सोच रहे थे कि धर्म और सचाईके साथ अपना

जीवन पूरा करके वे परलोकमें स्वर्ग भोगेंगे और कहां इधर धर्मनाशके कारण मौतके बाद नरकका द्वार उन्हें अपने लिये खुला दिखायी दिया। सन्तोष और प्रसन्नताके स्थानपर असन्तोष और दुःख उनपर प्रबल हो गया। उन्होंने समझ लिया कि अब अपना सर्वस्व देकर भी धर्मकी रक्षाका समय आ गया। इसलिये वे शान्त न रहे, वे अपनी जानतक देकर जाति और धर्मकी रक्षाके लिये तैयार हो गये। 'गाय और सुअरके चमड़ेकी टोपियाँ बनी हैं, इस विचारसे हिन्दू और मुसलमान दोनों अपने अपने धर्मको बचानेके लिये मिलकर उठ खड़े हुए। इस सिपाहियोंके उत्थानके नेता दूरदर्शी न थे। मैसोरके जिस मुसलमान राजाके राज्यका नाश हुआ था—वह हैदरअली विलौड़के किलेमें कम्पनीसे पेंशन पा रहा था। उसके पास धन और राज्यके भृत्य थे, वे चैनसे बैठे हुए राज्यके जमानेकी पिछली बातें याद किया करते थे। सिपाहियोंमें धर्मरक्षाका भाव जाग रहा था, हैदरअलीके खान्दानवालोंने उसे सहायता दी।

पर यह काम सहज न था। सिपाही, अंग्रेज़ अफसरोंकी मातहतीमें थे। इस समय (१८५६) बहुतसे पुराने अफसरोंने आराम करनेके लिये छुट्टियां ली थीं—बहुतोंने पेंशन ली थी। इनके स्थानपर नये अफसर नियत हुए थे। इनके साथ सिपाहियोंकी विशेष घनिष्ठता न थी। बहुत बार तो यह अपने सिपाहियोंतकको न पहचान पाते थे। परेटके समय वे सिपाहियोंको नये आगन्तुकोंकी तरह देखते थे। ऐसे समयमें काम हुआ।

मई महीनेके पहले सप्ताहमें जनरल अनू अपना काम समाप्त करके सेंटजार्ज किलेमें आराम कर रहे थे, तब उन्हें विलोड़की सेनाके असन्तोषका समाचार मिला। एक सैनिक-दल प्रगटरूपसे विद्रोही हो गया था। जनरलने मद्रासके सेना-पति क्रोडकसे मुलाक़ात करके उन्हें विलोड़े रवाना किया। क्रोडकने विलोड़े आकर जो कुछ देखा वह जनरलके कहनेके अनुसार सत्य था। इस विषयमें विचार और धीरताके साथ जो कुछ होना चाहिए था वही हुआ। जो सेना विद्रोही हो गई थी उसे मद्रास भेजा गया और उसके स्थानपर दूसरी सेना रक्खी गई। फौजी अदालत इस विषयके विचारके लिये बैठी। दो प्रधान षड्यन्त्रकारियोंको बेतोंकी सजा दी गई, पर इससे बीमारीकी छूत न गई, समग्र सेनामें विद्वेषभाव जाग उठा।

इस बीमारीका इस अवसरपर अधिक इलाज न हुआ, किसी प्रकारकी सतर्कताका अवलम्बन न किया गया। विलोड़को शान्त समझकर वैसे ही रहने दिया गया। पर भीतर ही भीतर विद्वेषकी आग सुलग रही थी। सिपाही लोगोंके मुंहसे सुनते थे कि 'हमारा धर्म नाश हो रहा है, यह सुन सुन कर वे सरकारके विरुद्ध उत्तेजित हो रहे थे। विलोड़की ब्रिटिश सेनाकी रक्षाका कोई स्थायी प्रबन्ध न हुआ। इधर पदच्युत राज-वंश धीरे धीरे सिपाहियोंके हृदयमें द्वेषभावकी आग सुलगा रहा था। गोल टोपी दिखाकर लोग कहते थे कि बस अब सिपाही शीघ्र ही ईसाई धर्म ग्रहण करेंगे। किलेके भीतर बाहर सब कहीं

इस प्रकारका आन्दोलन होने लगा। गोल टोपीने हिन्दू मुसलमान सिपाहियोंको क्रोधित कर दिया।

यह सब आन्दोलन और घटना विलोड़के अंग्रेज़ अफसरोंको ज्ञात हुई। इसे रोकनेका उन्होंने कुछ भी यत्न न किया। अफ़सर इन बातोंसे इतना परे थे कि एक सिपाहीने अपने अफसरसे यह सब बातें कहीं तो अफसरने उसे पागल समझकर लोहेकी सांकलसे बँधवा दिया। सारी सेनाको व्यर्थ बदनाम करनेके अपराधमें उस सिपाहीको सजा देनेका प्रबन्ध हुआ। पर शीघ्र ही वह समय आगया जब उसकी भविष्यवाणी सत्य हुई। अन्तमें १० जुलाई (१८५६) को विद्रोह प्रगट हुआ। इससे पहले दिन सैनिक किलेके भीतर गये थे और वहां अंग्रेज़ोंके विरोधमें सभी बातें खुले तौरपर होने लगीं।*

इस समय विलोड़ेमें चार दल यूरोपीय सेना थी। रातमें एक दम गोरी सेनापर हमला करके उसे पराजित कर देना अधिक कठिन न था। आधीरातको काम शुरू हुआ। जो सिपाही पहरेपर थे उन्हें विद्रोहियोंने गोलीसे मार डाला, जिसने बाधा दी उसे भी गोलीसे मारा। अस्पतालमें जितने गोरे थे वे सब बुरी तरहसे मारे गये। आधीरातको एकाएक विप्लव उठ खड़ा हुआ। रातको बंदूकोंकी आवाजोंसे अफसर लोग चौंक चौंककर सोतेसे उठ बैठे। कई बाहर निकले, पर बहुतसे मारे गये। कुछ किसी तरहसे बचकर गोरी सेनामें चले गये और जो गोलियोंसे

* Kaye's Sepoy War. Vol. I. P. 228. note.

बचे थे, उन्हें किसी तरह सज्जित करके मुकाबिला करने लगे। पर रणमत्त सिपाहियोंकी संख्या धीरे धीरे बढ़ने लगीं। इसलिये इनके आक्रमणसे अपनी रक्षा करना यूरोपीय सिपाहियोंके लिये सुसाध्य न हुआ। इसमें केवल सिपाही ही न थे, बल्कि पुलिसके कर्मचारी भी सिपाहियोंको उभार रहे थे। पदच्युत सुलतानकी ओरसे इन्हें खाना मिलने लगा और हर समय उत्साहव्यंजक बातें कही जाने लगीं। टीपू सुलतानके तीसरे बेटेने घटनास्थलपर उपस्थित होकर सिपाहियोंको उत्साहित किया। अपने हाथसे वह सिपाहियोंको पान खिलाने लगा, फिर मुसलमानवंशके राज्यकी भविष्यवाणी की गयी। जिस समय खूनके प्यासे सिपाही चारों ओर गोरोंकी हत्या कर रहे थे, जब चारों ओर "दीन दीन" शब्दकी पुकार मच रही थी, जब किलेके चारों ओर खून बह रहा था तब सुलतानके विश्वस्त कर्मचारीने किलेपर सुलतानी झंडा खड़ा कर दिया, अपना पैतृक झंडा हवामें लहराता देखकर फिर सुलतानके जीमें जी आया। उन्होंने सोचा कि अब हमारा भाग्य बदला। भारतीय सिपाहियोंसे गोरे हार गये। सुलतानके आदमियोंने लूट शुरू की, सिपाही भी लूटने लगे। थोड़ी देरमें लूटके सामानसे सज्जित होकर सिपाही और सुलतानके आदमी किलेसे बाहर निकले। किलेमें जो अंग्रेज़ स्त्रियां थीं वे मौतसे बचीं पर उनके साथ बहुत बुरा व्यवहार किया गया, उन्हें बहुत शीघ्र मुसलमान बनाकर निकाह पढ़ानेकी आशाएँ की जाने लगीं।*

* इसमें १४ गोरे अफसर और ९९ गोरे मारे गये थे। घायलोंकी संख्या अधिक थी।

जब किलेके भीतर यह शोचनीय कांड हो रहा था, जब अंधेरेमें अंग्रेज़ अपने प्राण खो रहे थे, तब भी अंग्रेज़ अपने उद्योगसे चुप न थे, निरुत्साह न हुए थे, अंग्रेज़ सेनाका अफ़सर मेजर कोट्स नामक पुरुष किलेके बाहरके भागमें नियुक्त था। किलेके भीतर गोलियां चलने और शोरगुल होनेसे उसने समझ लिया कि विपत्ति आ गई। थोड़ा भी आतंक देखकर शीघ्र आर्काटकी छावनीकी ओर भागा। आर्काटमें कर्नल गिलस्पसकी अधीनतामें एक दल गोरा सेना थी। शामको सात बजे मेजर कोट्सने आर्काट पहुंचकर समाचार दिया। समाचार सुनते ही, पन्द्रह मिनिटके भीतर गिलस्पस अपनी सेना लेकर बिलोड़ेकी ओर रवाना हुआ। तोपें भी रवाना कर दी गईं, एक भारतीय सेनाका रिसाला था, बिगुल बजतेही वह भी तैयार होकर चल पड़ा। जरा भी गड़बड़ हो जाती तो बड़ी विपत्तिका सामना करना पड़ता। इसलिये थोड़ी सेना पीछे छोड़ कर गिलस्पस शीघ्र आगे बढ़ा।

बिलोड़ेके किलेके पास पहुंचकर गिलस्पस भीतर घुसनेकी तरकीब सोचने लगा। किवाड़ भीतरसे बंद और विद्रोही सेना द्वारा रक्षित थे इसलिये बिना तोपकी सहायताके जानेका रास्ता नहीं मिल सकता था। तोपें पीछे आरही थीं। किलेके भीतर भी अंग्रेज़ थे। यदि किसी तरह भीतर घुसा जाय तो विजय सहज हो सकती है;इस विचारसे गिलस्पसने अकेले ही भीतर घुसनेका निश्चय किया। किलेकी दीवारें ऊंची थीं, चढ़नेका कोई मार्ग न

था। अंग्रेज़ोंने ऊपरसे रस्सा लटका दिया। इस रस्सेके सहारे गिलस्पस चढ़कर अपने अंग्रेज़ भाइयोंसे मिला। गिलस्पसने सब अंग्रेज़ोंको तैयार करके आप सेनापतिका पद ग्रहण किया, दुश्मनोंपर आक्रमण करनेके लिये सब अंग्रेज़ तैयार हो गये। इतनी देरमें बाहर तोपें आ गईं। सुदक्ष रिसालेके हमले और तोपोंकी मारसे कुछ घंटोंमें ही गिलस्पसकी विजय हुई। बहुतसे मारे गये और बहुतसे जान बचाकर भाग गये। अब टीपू सुलतानके बेटोंकी नींद खुली। वे अपनी बादशाहत वापिस आई हुई समझ कर सो गये थे। वे सब कैद किये गये। फौजी अदालतमें विचार हुआ। टीपूके लड़कोंने माफी मांगी। उन्हें माफ किया गया।*

भारतमें यह सबसे पहला सिपाहीविद्रोह था। सरकारने इस घटनासे बहुत कुछ शिक्षा ग्रहण की। अचानक आधीरातको इस तरहके हमलेकी बात सुनकर सब अंग्रेज़ सावधान हो गये जिन आज्ञाओंके कारण सिपाहियोंको कुछ आपत्ति थी उन सबके रद्द करनेका इरादा किया गया। पर जो आग सिपाहियोंके भीतर जल चुकी थी वह इस तरह एकाएक शान्त न हुई। टोपी जलाई जा सकती थी, कंठी माला तिलक धारण किया जा सकता था, दाढ़ी रखाई जा सकती थी, पर वास्तविक शान्ति इससे कहीं दूर थी। जिस उत्तेजनाके कारण सिपाहियोंने अंग्रेज़ोंके विरुद्ध तलवार उठाई थी वह उत्तेजना शीघ्र शान्त होनेवाली न

* Kaye's Sepoy War. Vol I. P. 235 note.

थी। विलोड़ेका किला फिर अंग्रेज़ोंके हाथ चला गया था पर दो एक स्थानोंपर फिर भी सिपाहियोंमें उत्तेजना फैल ही रही थी। मैसोर, कर्नाटकके अतिरिक्त और भी अनेक स्थानोंके सिपाही असन्तुष्ट हो रहे थे। हैदराबादके सिपाही ऐसे बेचैन हो रहे थे कि वहां भी विप्लवकी आशंका की जा रही थी। पर निज़ाम और उनके योग्य मंत्री मीरआलमके असीम उद्योगसे सिपाही शान्त रहे। इस समय इन्होंने सच्चे मित्रका काम किया। जब सिपाहियोंमें गुप्त परामर्श हो रहे थे, अंग्रेज़ोंसे सिपाहियोंको घृणा हो रही थी, अंग्रेज़ी सत्ता उखाड़ फेंकनेके लिये सिपाही आतुर हो उठे थे, उस समय निज़ाम और उनके मंत्रीका अंग्रेज़ोंके पक्षमें बना रहना कम प्रशंसाकी बात नहीं है। निज़ामको अंग्रेज़ोंके पक्षमें देखकर उनके विरुद्ध भी लोगोंने षड्यन्त्र खड़ा करनेका विचार किया *।

इस आशंका और भयके समयमें दो एक नियमोंके कारण सिपाहियोंमें और भी अशान्ति फैल गई। कर्नल मैन्ट्रेसरने सेनापति बनकर दो एक ऐसे नियम प्रचलित किये जिससे घृणाका भाव अधिक बढ़ गया। कर्नलने बाजारमें बाजा न बजानेका नियम प्रचलित किया, इससे सिपाहियोंने विचार किया कि हमारी ब्याह-शादीके मौक़ेपर भी बाजेकी मनाही हो गई। हैदराबादके हर बाजार, रास्ते मुहल्लेमें यही चर्चा होने लगी। पुराने सिपाहियोंके अफसरोंने कप्तानसे, इस कायदेको,

* Kaye's Sepoy War. Vol I, P. 236 note.

रद्द करनेके लिये बड़े आग्रहसे कहा। पर सेनापतिने इसपर कुछ भी ध्यान न दिया। अन्तमें जब विलोड़ेकी घटना घटी तब सेनापतिकी आंखें खुलीं और उन्होंने इसके मर्मको समझा। पर इससे भी सिपाही सन्तुष्ट न हुए, वे ऐसे उत्तेजित हो गये थे कि कवायद्के समय अपनी अपनी टोपी उतारकर फेंकनेमें भी उन्होंने किसी तरहका संकोच न किया। चारों ओर विप्लवकी मूर्त्ति दीखने लगी। अन्तमें बड़े प्रयत्न और संकटोंके बाद हैदराबादकी इस विप्लवसे रक्षा हुई। इस विद्रोही सेनाको अन्य सेनाओंकी रक्षामें मछलीपट्टम भेजा गया।

शान्तिका राज्य इससे भी प्रतिष्ठित न हुआ। मैसोर राज्यके अन्तर्गत नन्दीदुर्गके सिपाहियोंके असन्तोषका समाचार मिला। इस किलेपर अधिक सेना न थी, पर किला पहाड़पर बना होनेके कारण बड़ा मजबूत था। बैंगलोर यहासे एक दिनका रास्ता था, युद्धोन्मत्त सैनिक बैंगलोरसे इस किलेमें आकर टिक सकते थे। अक्तूबर महीनेमें इस किलेके सैनिक अंग्रेज़ोंके विरुद्ध उठ खड़े हुए। हिन्दू और मुसलमान सिपाही एक उद्देश्यकी पूर्तिके लिये मेल करके खड़े हुए।

सिपाहियोंने मिलकर पहलेसे ही सलाहें कर लीं। उन्होंने अपने अफसरोंको मारनेका दिन नियत कर लिया। इस घटनाके लिये १८ अक्तूबरका दिन नियत हुआ। अपने अपने बालबच्चोंको किलेसे बाहर भेजकर सिपाही अपने प्रतिज्ञापालनके लिये तैयार होने लगे। १८ अक्तूबरकी रातको सिपाही अपने

अंग्रेज़ अफसरोंको कत्ल करते, पर सौभाग्यसे यह व्यर्थ खून भी न बहा। उसी दिन शामके आठ बजे एक अंग्रेज़ घोड़ेपर दौड़ता हुआ वहां आया और उसने सेनापतिसे आनेवाली विपत्तिके विषयमें कहा। अंग्रेज़ सेनापतिसे यह बातें कह ही रहा था कि उसी समय एक बूढ़ा हिन्दू फौजी अफसर सेनापतिसे आकर विद्रोहकी बातें कहने लगा। सेनापतिने देखा कि बात ठीक है और देर करनेका अवसर नहीं। उसी समय बैंगलोरकी फौजमें यह समाचार भेजा गया। सब अंग्रेज़ अफसर इकट्ठे होकर अपनी रक्षाके योग्य मजबूत स्थानमें लड़ाईके लिये तैयार होकर रास्ता देखने लगे। पर रातमें कोई हमला न हुआ, शान्तिसे सवेरा हुआ। शामको तीसरे पहर सेनापति डेविसकी मातहतीमें बैंगलोरसे सेना आ पहुंची।

नन्दीदुर्गमें गड़बड़ न हुई। अक्तूबर महीना बीत गया। नवम्बर मासके शुरूसे ही नवीन कठिनाइयां प्रगट हुईं। पालमकोटके मेजर वालेस और छः अंग्रेज़ अफसरोंके अधीन एक सेना थी। इस सेनाके सैनिकोंके बहुतसे रिश्तेदार विलोड़के विद्रोहमें मारे गये थे, इस मार्मिक दुःखके कारण वे ब्रिटिश कम्पनीके दुश्मन हो गये थे। नवम्बर महीनेमें मुसलमान सिपाही अंग्रेज़ अफसरोंका खून करनेके लिये षड्यन्त्र रचने लगे, कि किस प्रकार अंग्रेज़ अफसरोंके घरोंमें आग लगाई जाय, आग लगानेपर किस तरह आक्रमण किया जाय और अन्तमें किलेपर किस प्रकार अधिकार किया जाय। एक मलाबारीने सब समाचार

संग्रह करके अंग्रेज़ अफसरोंको सुनाया। समाचार सुनते ही मेजर वालेसने इसके निवारणका उपाय सोचा। मेजरकी मजबूती और दृढ़प्रतिज्ञताके कारण षड्यन्त्रकारी लोगोंने अपने काममें हाथ न लगाया। इसके दो दिन बाद तिरनावलीसे कर्नल डाइस पालमकोट आये और उन्होंने तमाम हिन्दू सिपाहियोंको एक जगह एकत्र करके कम्पनीका पक्ष समर्थन करनेके लिये कहा। सब हिन्दू सिपाही ब्रिटिश झंडेके नीचे काम करनेको तैयार हुए, सबने प्राणतक देनेकी प्रतिज्ञा की। इस प्रकारकी दृढ़तासे, जो कुछ होनेवाला था वह कुछ भी न हुआ। इस प्रकार मद्रास इलाकेका सिपाहीविद्रोह शान्त हुआ।

इन सब घटनाओंके छः मास बाद सरकारको होश आई कि इस देशके सिपाही धर्म और जातिको सबसे अधिक प्रिय मानते हैं। धर्म भ्रष्ट होनेकी आशंकाके कारण इनमें यह उत्तेजना फैली थी। अबतक जो इस प्रकारके नियम कायदे बने थे उन सबको सरकारने रद्द किया। प्रेमसे सिपाहियोंको सम्बोधन करके सरकारने उनके धर्म, जाति और प्रथाकी रक्षाका वचन दिया। दूसरी दिसम्बरको सरकारने सेनाओंके लिये एक घोषणापत्र निकाला। हरएक प्रान्तिक भाषामें अनुवाद कराकर वह हर एक सिपाहीके नाम भेजा गया। इस घोषणामें सरकारने लिखा कि, सरकार सदा अपने सिपाहियोंपर दया, प्रेम और सहानुभूतिका व्यवहार करती आई है। किसी देशकी सरकारने अपनी सेनाओंके साथ इतनी सहानुभूति नहीं की। यह आशा है कि लारेंस

और कूटके समयमें सेनाका जो सदाचार था, सेना अब भी वही सदाचार बनाये रक्खेगी, अगर सेनाने अपना सदाचार न बनाये रक्खा तो बाकायंदा उन्हें दंड देनेके लिए सरकार तैयार होगी। एक ओर यह घोषणा निकली, दूसरी ओर हत्यारोंको कठोर दंड देनेकी व्यवस्था हुई। हत्यारोंको फांसी दी गयी और बाकी उनके सहायक अपनी नौकरीसे हटा दिये गये। विलायतकी डाइरेक्टर-सभा इससे बहुत विरक्त हुई और उसने मद्रासके गवर्नर, प्रधान सेनापति और जनरलको नौकरीसे हटा लिया।

एक सालमें ही इस आकस्मिक विप्लवकी शान्ति हुई, साल भरमें ब्रिटिशसिंहका अप्रतिहत प्रताप फिरसे प्रतिष्ठित हुआ। नये वर्षके साथ नये प्रकारका आन्दोलन और नया तर्क प्रारम्भ हुआ। इस विप्लवके प्रारम्भ होनेके कारण क्या थे? क्या यह

१८०८ ई०

राजनीतिक उत्थान था? विप्लव और भीषण हत्याकांडके बाद, राजनीतिज्ञों और प्रधान सैनिकोंके दिमागोंमें यही प्रश्न चक्कर लगा रहा था। राजनीतिज्ञ अंग्रेज़ी गोल टोपीको ही इसका प्रधान कारण समझने लगे। पर प्रधान सैनिकोंको यह कारण उचित नहीं मालूम हुआ। इस विप्लवमें वे राजनीतिक चतुराई देखने लगे। वे कहने लगे कि नई टोपीको देखकर बहुतसे सिपाहियोंने प्रसन्नता प्रकट की थी और उसे पहननेके लिये उत्सुकता दिखाई थी। इसलिये विप्लवका कारण नई टोपी नहीं हो सकती। टीपू सुलतानकी पदच्युत सन्तान ही

इस गुप्त मंत्रणाका कारण थी। यदि पदच्युत सुल्तानके आदमी विलोड़ेकी ब्रिटिश कम्पनियोंको उत्तेजित न करते, उन्हें इनाम और लूटका लोभ न दिखाते, वे फिरसे नवाबी अमलदारीका स्वप्न न देखते तो यह गड़बड़ न होती। दक्षिणकी एक एक राजसन्तान प्रारम्भसे ही सिपाहीविद्रोहका कारण बनी। राजनीतिक और सैनिक विभागके कर्मचारियोंने अपनी अपनी ज़िम्मेदारीकी रक्षा की थी। एक सैनिक दलने गोल टोपीको असन्तोषका कारण बतलाया, दूसरेने राज्य लेनेकी नीतिको ही बुरा बतलाकर उसीको सिपाहीविद्रोहका कारण कहा।

एक तीसरे राजनीतिक दलने इस विद्रोहका कारण और ही बताया। इसका कहना था कि चारों ओर ईसाई धर्म प्रचार और ईसाई मन्दिरोंकी स्थापना देखकर लोगोंने अपने सनातनधर्मकी आशंकासे सिपाहियोंको उत्तेजित किया। इसके बाद एक विचित्र अफवा लोगोंमें फैली, इसके कारण प्रजामें बड़ी अशान्ति हुई। अफवा यह थी कि, 'बाजारका सारा नमक खरीदकर दो ढेर लगाये गये, और अंग्रेज़ोंने एकमें गायका खून और दूसरेमें सूअरका खून डाला। इस नमकसे हिन्दू मुसलमान दोनोंका धर्म नाश करनेका इरादा किया गया है।' यह अफवा दक्षिणी फौजोंमें भी फैली और इसी कारण जोशमें भरकर सिपाहियोंने सरकारके विरुद्ध हथियार उठाया।

विलोड़ेके विप्लवकी जांचके लिये जो समिति बनाई गई थी उसने बहुतसे कारण बताये। डाइरेक्टरोंने इन सब कार-

णोंको स्वीकार किया। उन्होंने सबसे बड़ा कारण भारतीय सेनाके राज्यपरिवर्तनको ही माना था, दूसरा कारण टीपू सुल्तानके पुत्रोंका विलोड़े किलेमें रहना बताया। यह तो सभाने कारण बताये थे, पर वहाँके अंग्रेज़ व्यापारियोंने डाइरेक्टरोंके नाम एक सीधा खत लिखा, उसमें तीसरा ही कारण बलवेका बताया। उन्होंने लिखा था कि, अल्पज्ञानी, समवेदना-शून्य और भारतीय रीति रिवाजोंसे अनभिज्ञ फौजी अफ़सर ही इसके कारण हैं, इसलिये हिन्दुस्तानी सेनायें सरकारका विश्वास नहीं करतीं। और तो क्या, लार्ड वेलजलीकी राज्यहरणकी नीतिसे मैसोरका राजवंश भिखारीकी दशामें है, इसलिये सर्व-साधारणको सरकारकी बातोंपर विश्वास नहीं। सरकार और प्रजा एक दूसरेसे बहुत पृथक् हो गई हैं, एक दूसरेपर विश्वास नहीं करतीं, उनमें बन्धुता नहीं; इसीलिये भारतवासी उत्तेजित होकर सरकारके विरुद्ध हथियार उठानेमें संकोच नहीं करते। *

विलोड़ेकी घटनाके बाद कुछ अन्यान्य कारणोंसे सिपाही अपने अफ़सरोंसे भिन्नसे ही रहे। अपने भविष्यका सुख और भविष्य जीवनकी आशाके विचारसे हिन्दुस्तानी सिपाही बनते हैं। आशा और विश्वास सिपाहियोंके जीवनको आनन्दमय बनाता है। इस आनन्दके सम्बन्धमें यूरोपीय सिपाहियोंकी अपेक्षा हमारे भारतीय सिपाही अधिक सौभाग्यशाली हैं। यूरोप

* Kaye's Sepoy War Vol I., P. 261.

के लोग सौभाग्यकी आशासे सेनामें भर्ती नहीं होते, बहुत कम सैनिक ऐसे होते हैं जो तलवार बजाकर सौभाग्य पानेकी इच्छा रखकर सेनामें भर्ती होते हैं। जिनकी दशा बिलकुल खराब हो जाती है, समाजमें जो आदरकी दृष्टिसे नहीं देखे जाते- वे ही इग्लैण्डमें सैनिक बनते हैं। इग्लैण्डके सैनिक सेनामें भर्ती होकर न किसी सुखकी आशा करते हैं और न आनन्दकी, उनके विचारमें सैनिक जीवन आनन्दशून्य होता है। बहुत कम लोग उनका स्वागत करते हैं, बहुत कम उनसे आशा रखते हैं। महारानीकी सेनामें भर्ती होकर बहुत कम सैनिकोंको आशा और आनन्द होता है।

पर भारतमें सैनिक जीवनको कोई घृणाकी दृष्टिसे नहीं देखता। सैनिक बनकर वह न तो समाजमें घृणापात्र होता है और न घरवालोंमें। सैनिक बनकर अपने गौरवसे वह अपने आप उन्नत होता है, संग्राम करके सब प्रकारकी सुखशान्तिका अनु- भव करता है। समय समयपर वह अपने घर जाता है, परिवार- वालोंसे मिलता है, अपना वेतन घर भेजता है। वंशपरम्परासे जो सैनिक बनते हैं वे इस बातको गौरव समझते हैं। कोई विकार, कोई अशान्ति उनके जीवनमें नहीं आती। जन्म भर नौकरी करके अन्तमें पेंशन लेकर आनन्दसे वे अपना जीवन विताते हैं। पर यूरोपीय सिपाहियोंके भाग्यमें यह सुख नहीं है। सेनामें दाखिल होनेको वे और उनका समाज बुरी दृष्टिसे देखता

है। सेनामें भर्ती होनेके बाद उनका सम्बन्ध एक प्रकारसे सबसे टूटसा जाता है।

पहले अंग्रेज़ अफसर सहृदय और सिपाहियोंपर अनुरक्त थे। वे सिपाहियोंको अपना हमजोली समझते, उन्हें पास बुलाकर बाजारकी बातें करते, पुराने जमानेकी कहानियां सुनते और समय समयपर सबको प्रसन्नता बढ़ानेकी कोशिश करते थे। सिपाही अफसरोंको आश्रयदाता, प्रतिपालनकर्ता समझते और उनका आज्ञापालन तथा पक्षसमर्थन करके सन्तुष्ट होते थे। वे अफसरोंको अपने शोकमें सान्त्वनादायक और अनिष्टके निवारक मानते थे। अर्थात् हर एक गुणसे अफसरोंने सिपाहियोंके हृदयोंपर वश किया था। सिपाही उन्हें पिताके समान समझते और उनको "बाबा लोग" कहनेसे बड़े प्रसन्न होते थे।

पर यह जमाना बहुत जल्द चला गया। इस समयकी उदारता, समवेदना समयके स्रोतमें लीन हो गई। ब्रिटिशराज जैसे जैसे बढ़ने लगा वैसे ही वैसे पुराने अफसरोंके स्थानपर नये नये अफसर आने लगे। उनकी क्षमता कम और असावधानी अधिक होती थी। अफसर लोग जनरलके हाथका खिलौना होते थे। पहले अफसरोंके हाथमें बहुत अधिक शक्ति थी, जो अफसर लड़ाईमें विजयी होता था, उसके नामसे सेनाका नाम रक्खा जाता था। पर समयने सब कुछ बदल दिया। ज्यों ज्यों राज बढ़ा त्यों त्यों अफसरोंकी शक्तियां कम होकर नाम मात्र रह गईं। इस कारण अफसर न सिपाहियोंसे मिलते

थे और न सिपाही अफसरोंको अपना रक्षक मानते थे। प्रधान जनरलके यहांसे जो आर्डर आता उसके सामने अफसर लोग सिर झुकाते और अपनी सेनामें उसको चलानेकी कोशिश करते, अर्थात् सिपाही और अफसरोंकी घनिष्ठताका नाश सा हो गया था।

दूरता, उदासीनता और अमित्रताके साथ साथ अफसरोंकी विलासप्रियता भी बढ़ गई थी। भारतमें रेलें दौड़ने लगी थीं। रेलोंने कलकत्तेको बम्बईके निकट कर दिया था। भारतका सम्बन्ध इंग्लैंडसे अधिक घनिष्ठ होता जा रहा था, इसलिये वहांकी विलासिता भी यहां आ रही थी। अंग्रेज़ी समाचारपत्र, अंग्रेज़ी पुस्तकें और अंग्रेज़देवियां भी भारतमें आने लगी थीं। इन सब चीजोंके संसर्गसे भारतीय सेनाके अफसर भी भारतीय आदमियोंसे दूर होते चले जा रहे थे। सिपाहियोंकी कहानियाँ सुनने और उनके खेल देखनेका अब उन्हें अवकाश ही कहां था? अपने देशकी किताबें, अखबार और स्वदेशकी सुन्दरियोंसे वे अपने आपको सौभाग्यशाली समझने लगे। जो मित्रता और सहानुभूति पहले सिपाहियोंके साथ थी अब वह न रही। सफेद और कालेका भेद अब प्रत्यक्ष दीखने लगा। नवीन मोहक भावोंकी तरंगोंमें अफसर बहने लगे।

अफसर और सिपाहियोंके बीचमें इस प्रकारका भेदभाव उत्पन्न होनेपर भी प्रगटमें किसीने किसी तरहका द्वेषभाव न आने दिया। लार्ड एमहर्स्ट और लार्ड विलियम बेंटिंकके जमानेमें वे शान्तभावसे

१८२२–१८३५ ई०

अपना काम करते गये। सन् १८०६ के छोटेसे सिपाहीविद्रोहके बाद किसीके हृदयमें कोई भाव न रहा। विश्वास, साहस और प्रभुभक्तिके साथ सिपाही सेनाका काम करते रहे। संग्राम करके उन्होंने लार्ड हेस्टिंग्सको विजेता बनाया। पर जब शान्तिके साथ सिपाहियोंने देशकी बातें सुनीं तब उनके हृदयोंमें फिर अशान्तिका उद्वेग उठा; ब्रिटिश कम्पनीकी अव्यवस्थाके विषयमें सिपाहियोंके जो अभियोग थे वे इस समय और भी अधिक प्रबल हो गये। मद्रास इलाकेसे इस विषयकी एक घटना और दी जाती है। सन् १८२२ में आर्काटकी छावनीमें एक लिखा हुआ कागज पहुँचा कि, "मुसलमानोंने अङ्गरेज़ोंकी अधीनतामें अनेक कष्ट सहे हैं। इस अधीनताके कारण उनकी प्रार्थना (नमाज) ईश्वरके निकट स्वीकार नहीं होती। इसी कारण उनमेंसे अनेक हैजेसे मरते हैं। खुदाका कोप (कहर) उनपर गिर रहा है। इस समय अपने धर्मकी रक्षाके लिये सबको प्राणपणसे यत्न करना चाहिये। दिल्ली और आर्काटमें असंख्य हिन्दू और मुसलमान हैं, अंग्रज़ोंकी संख्या तो नहींके बराबर है। सब एक दिनमें ही मारे जा सकते हैं ; हिन्दू और मुसलमानोंको मिलकर काम करना चाहिये, परिणाम शुभ होगा। अंग्रेज़ोंने इस देशवाले सब जागीरदारों और माफीके ज़मींदारोंकी जमीनें ले ली हैं। अंग्रेज़ हर तरहसे हिन्दुस्तानियोंको मारना चाहते हैं। अंग्रेज़ी सेनायें बुलाई जा रही हैं, अगले छः मासके भीतर सब भारतीय सेनाओंके हथियार ले लिये जायँगे। इसलिये हर एक सेनाके

सूबेदारको मिलकर दूसरे सूबेदारोंसे सलाहें करनी चाहिये। सूबेदार जमादारोंको सलाह देंगे। इस प्रकार सम्पूर्ण सेना तैयार हो जायगी। एक दिन इशारा किया जायगा बस उसी दिन सब सेनायें खड़ी हो जायंगी। १७ मार्च रविवारका दिन नियत है। एक आदमीकी मातहतीमें दस सिपाही अंग्रेज़ अफसरके घरपर जायँ और उसका काम तमाम कर दें। इसके बाद सूबेदार लोग कर्नल बनेंगे और जो उत्साहके साथ काम करेंगे वे अफसर बनाये जायँगे।”

यह किस आदमीकी भयानक लिपि थी, किसने यह उग्र विषका बिन्दु टपकाया था मालूम नहीं हुआ। छः नम्बर रिसालेमें पड़ी हुई इसकी एक प्रति मिली थी। आठ नम्बरकी सेनामें उसकी एक नकल और मिली थी। मिलते ही वे कागज़ सेनापतिके पास भेजे गये। कर्नल फाउलिसने बड़े उत्साह और यत्नसे काम किया। उन्होंने हर एक रेजीमेंटके अफसरोंको बुलाया और उस कागजमें जो कुछ लिखा था वह सुनाकर बताया कि वे सबका पूरा विश्वास करते हैं। इसके बाद, कागजमें जिन जिन छावनियोंका नाम था उन सबके अफसरोंको इसकी सूचना दी गई। पर उन्होंने किसी प्रकारका असन्तोष प्रकट न किया। नियत किया हुआ दिन भी शान्तिपूर्वक व्यतीत हुआ। यह भयानक षड्यन्त्र केवल कागजपर ही रह गया।

पर अधिक दिन शान्तिसे न बीते, अफसर लोग भी अधिक

दिन निर्भयतासे न विता सके। उक्त पत्रके कुछ दिन बाद मद्रासके गवर्नर सर टामस मनरोको एक हिन्दुस्तानी भाषाका पत्र मिला। पत्रके भावसे यह समझा गया कि वह सेनाके प्रधान प्रधान अफसरोंकी ओरसे आया था। उसमें साधारणतः भारतीय सैनिकोंका आत्मनिवेदन था, इसका भाव था कि "सब धन, सब सम्मान सफेद लोगोंको ही दिया जाता है। हिन्दुस्तानी फौजोंको श्रम और संकटोंके सिवाय और कुछ हाथ नहीं आता। तलवारके जोरसे हिन्दुस्तानी सेनायें किसी देशको जीतती हैं तो उसमें राज्य करते हैं अंग्रेजोंकी बाजारू औरतोंके लड़के, गोरे। यह हुकूमत करके कुछ ही दिनोंमें मालामाल हो जाते हैं। पर यदि एक हिन्दुस्तानी सिपाही सारी जिन्दगीभर मेहनत करे तब भी उसे पांच रुपयेसे अधिक नहीं दिखाई देते। मुसलमानोंके जमानेमें बड़ा भेद था। जब सेना राज्य जीतती तब उसे इनामके अलावा जागीरें मिलती थीं, अफसर बनाये जाते थे। पर कम्पनीके राज्यमें जो कुछ दिया जाता है सब गोरोंको।" यह पत्र किसी एक आदमीका लिखा हुआ हो सकता है, पर इसका जो भाव है, वह सब सिपाहियों और सबके हृदयोंकी बात थी। यह शिकायत सदा उनके हृदयोंमें जागती रही थी और उन्हें सदा इसका खयाल था। अन्तमें यह हृदयके भीतर न रह सकी, बाहर फूट ही पड़ी।

इसके बाद समय समयपर ऐसे नियम बने जिनके कारण सेनाके संगठनमें कुछ अन्तर आया, पर उससे किसी तरहका

वैमनस्य नहीं फैला। सर्वसाधारणकी शान्तिमें किसी प्रकारका आघात नहीं हुआ। लार्ड विलियम बेंटिंकको डाइरेक्टर-सभाने फौजोंका भत्ता कम करनेको कहा। लार्ड बेंटिंकने ऐसा ही किया, इससे फौजोंमें बड़ा असन्तोष फैला। पर यह असन्तोष अधिक समय तक न टिका। इस जमानेके अखबार स्वाधीन थे, उन्होंने सिपाहियोंके भत्तेका आन्दोलन बड़े जोर-शोरसे किया। अखबारोंका आन्दोलन असन्तोष निकालनेका सबसे अच्छा साधन है, खूब लंबे चौड़े लेख लिख और पढ़कर लोग समझने लगते हैं कि हमने बहुत आन्दोलन किया। बेंटिं-कके जमानेमें इसी तरह आन्दोलन करके अखबार ठंढे हो गये।

इस प्रकार सैनिक कर्मचारियोंका सम्पूर्ण असन्तोष धीरे धीरे शान्त हो गया, पर यह शान्ति प्रेमके साथ न थी। राज-नीतिक परिवर्तनोंके साथ उनकी आशा और शान्तिका भी परिवर्तन होने लगा। अफगानिस्तानकी लड़ाईमें सिपाहियोंने बड़े संकट उठाकर संग्राम किया, विजय की। जब यह विज-यिनी सेना अफगानिस्तानसे वापिस आ रही थी तब सिन्धके अमीरके साथ लड़ाई छिड़ गई। निर्भयता और वीरताके साथ भारतीय सेना बलोचियोंपर जा टूटी। प्रधान सेनापति सर चार्ल्स नैपियरने सेनाका यह साहस और उत्साह देखकर बेतरह प्रशंसा की। इसी समय सिपाहियोंको एक और संग्राममें उतरना पड़ा। अपने उसी साहस और वीरताके साथ वे महाराजपुरके संग्राममें सम्मिलित हुए। शीघ्र ही शान्ति स्थापित

हो गई, युद्धकी जलती हुई आग बुझ गई। पर शीघ्र ही एक नयी विपत्तिका सामना हुआ। जिन सिपाहियोंने सिन्ध विजय किया था उन्हींको सिन्धकी रक्षापर नियुक्त किया गया था, उन्होंने रक्षासे इनकार किया।

कालकी गतिके अनुसार ज्यों ज्यों समय बीता त्यों त्यों अंग्रेज़ी राज्य बढ़ता गया। इस राज्यवृद्धिके साथ साथ शान्ति भी बढ़ी। दुश्मनोंकी संख्या कम हो गई, देशी राजाओंने विद्रोहसे किनारा कर लिया। इसलिये सेनाकी उतनी अधिक आवश्यकता न रही। सेनाएं आरामसे छावनियोंमें पड़ी रहने लगीं, लड़ाइयोंके मैदानोंमें हल चलने लगे। जब काम नहीं तब उन्नतिकी आशा कहां ! सिपाही अपने भाग्यको परखनेके लिये सेनामें भर्ती होते थे ; पर अब उन्हें आशा नहीं रही। बल्कि किसी नये राज्यके जीतनेपर सिपाहियोंके कष्ट और भी अधिक हो जाते। लूट या इनाम तो कुछ मिलता ही नहीं था, बल्कि संग्राम करके राज्य लेनेके बाद भी पुलिसकी तरह वे विजित देशमें पहरा देते, अपनी जन्मभूमिसे दूर अज्ञात अपरिचित देशमें रक्खे जाते और अन्तमें उन्हें यह व्यवहार दुःखी और अशान्त बना देता। इसके बाद जब उनका भत्ता कम करनेका प्रस्ताव हुआ तब वे नये राज्योंके जीतनेका ही विरोध करने लगे। सरकारके शासनसे बाहर जहां अधिक वेतन मिलता था, वहीं यदि सरकारका राज्य हो जाता तो वेतन कम कर दिया जाता। जिन कामोंको करके वे इनामकी आशा करते थे अब उन्हीं कामोंके बदलेमें तनखाह

कम होने लगी। इसी कारण सिपाही नये राज्य जीतनेका विरोध करने लगे।

सिपाहियोंके मनोगत जिन भावोंका वर्णन ऊपर किया गया है, वे सिन्धराज्य लेनेके बाद प्रगट हुए। इसका एक उदाहरण यहां दिया जाता है। सन् १८४४ के फरवरी मासमें, गवर्नर जनरल लार्ड एलनबराको, ३४ नं०की सेनाके असन्तोषका समाचार मिला। यह सेना बंगालसे सिन्धको भेजी जा रही थी। रास्तेमें, फीरोजपुरमें, इन्होंने आगे बढ़ना रोक दिया। सिपाहियोंने कहा कि हमें लड़ाईके समय जो वेतन दिया जाता रहा है वही वेतन दिया जाय तब हम सिन्धमें काम करने जायँगे। सिपाहियोंकी यह दशा देखकर गवर्ननर जनरल लार्ड एलनबरा और प्रधान सेनापति नैपियरने सेनाकी शृंखलाकी ओर विशेष ध्यान दिया। बंगाल ७ नं० रिसालेने सरहदपर जाते हुए खुल-मखुल्ला विरोध किया था, बड़ी भारी कोशिश करके भी अफसर उन्हें काबूमें न ला सके। अफसरोंने अपने पाससे धन देना चाहा, उनकी सब मांगोंके पूरा करनेका वचन दिया, पर कोई बिगुलकी आवाजपर तैयार न हुआ। फीरोजपुरके निकट सेना बैठ गई। इसी समय एक अफवा फैली कि गोरे सिपाही भी हिन्दुस्तानियोंका साथ देनेको तैयार हैं। इस बातके सुनते ही सिविल कर्मचारी बड़ी चिन्तामें पड़े। एक गोरी फौजने यह कह भी दिया कि सिपाही अपना उचित वेतन मांगते हैं, इसलिये यह कोई असभ्यता या नीचता नहीं है। इस समय सतलजके दूसरी

पार सिकल पड़े थे। उन्होंने सिपाहियोंकी मांगको उचित बता-कर, उनसे हमदर्दी जाहिर की। सेनापतिने लिखा था कि, सेनायें हथियार देनेको तैयार नहीं, इनसे अगर किसी तरहकी सख्ती की गयी या जबर्दस्ती हथियार लेनेका प्रयत्न किया गया तो सारे सीमान्त प्रदेशमें आग लग जायगी। इस कारण इस सेनासे कुछ न कहा गया, यह जहांसे गयो थी वहीं वापिस भेज दी गयी। इसकी जगह सिन्धमें काम करनेके लिये दूसरी सेना भेजी गयी। पर यह रोग लगभग सभी सेनाओंमें फैल गया था। सब सिपाही विना भत्तेके काम करनेपर राजी न हुए। अन्तमें कई जगह भत्ता देनेका वादा भी किया गया। लार्ड एलनवराने लिखा था कि भारतीय सिपाहियोंके असन्तोषसे बहुत कुछ अनर्थ हो सकता है। भारत साम्राज्य विपत्तिमें पड़ सकता है। सिपाहियोंको सन्तुष्ट रखनेके लिये उनका वेतन बढ़ाते रहना ही सबसे अच्छा उपाय है। पर यह बढ़ाना कभी अन्याय या अविचारसे न हो; नहीं तो नये राज्य लेनेकी अपेक्षा लिये हुएकी रक्षा करना ही कठिन हो जायगा। लार्ड एलनवराकी यह उक्ति भी अयुक्त नहीं है।

कम्पनीके सिपाहियोंने जिस घोर विक्रमसे सिन्ध लिया था, उसी विक्रमके साथ उन्होंने पंजाबपर अंग्रेज़ी शासन भी स्थापित किया। पंजाब लेना बड़े महत्त्व और गौरवका काम था। इसी ग्रन्थके पहले अध्यायमें उसका वर्णन हो चुका है। जो वैमनस्य सिन्ध लेनेके बाद सिपाहियोंमें प्रगट हुआ था, वही पंजाब लेनेके

याद भी प्रगट हुआ। सिपाहियोंकी समझमें नहीं आया कि किस नियम और किस युक्तिसे अपने जीते हुए देशमें, वादमें, कम वेतनपर काम करें। यह उनकी समझमें न आया कि जिस विदेशी कम्पनीका राज्य स्थापित करनेके लिये वे अपनी जानकी परवा न करके कटते और मरते हैं, वीरता और साहससे देश जीतकर कम्पनीके गुमाश्तोंके हवाले कर देते हैं, उसी विजय, वीरता और त्यागके बदलेमें उन्हें कम वेतन मिले और भत्ता भी नहीं!

इन्हीं कारणोंसे सन् १८४९-५० में जो सेना पंजाबमें थी और जो सतलजके पार डाली गयी थी, वे दोनों कम वेतन लेनेसे इनकार करने लगीं। जिन जिन फौजोंको अपना वेतन कम लगता था और जिनके सामने शीघ्र ही यह प्रश्न उठनेवाला था, वे सब मिलकर इस विषयमें मंत्रणा करने लगीं। एक छावनीके प्रतिनिधि दूसरी छावनीमें जाकर मन्त्रणा करते और बहुत दूर होनेपर चिट्ठियोंसे भी सम्मतियां पूछी जाती थीं। रावलपिंडीकी फौजोंका असन्तोष सबसे पहले प्रगट हुआ। जुलाई महीनेके एक दिन प्रातःकाल सर कोलिन काम्बेलको समाचार मिला कि २२ नं० सेना वेतन लेनेसे इनकार करती है। ऊपरसे सिपाही शान्त, विनीत और स्थिर थे पर उनके भीतर अशान्ति और अस्थिरता थी। काम्बेलने इस बातको अच्छी तरह समझ लिया। उन्होंने यह भी विचार कर लिया कि दूसरी सेनायें भी शीघ्र ही इस उदाहरणका अनुकरण करेंगी, इस प्रकारकी

एकता, अस्थिरता और असन्तोषसे शीघ्र विप्लवका जन्म हुआ करता है। फिर यह दशा इस देशमें, ऐसे मौकेपर, आयी जब नया राज्य लिया था, इसका प्रबन्ध भी अच्छी तरह हाथमें आया न था, विपक्षी लोग सेनाओंके इस इरादेको अच्छा कह रहे थे। यद्यपि खालसा लोगोंके हथियार ले लिये गये थे, उन्होंने अंग्रेज़ी शासन स्वीकार किया था, पर द्वेषका धुंआ हर जगह फैला हुआ था। ताजे घावकी तरह देशके छिन जानेकी व्यथा हो रही थी। पहलेकी याद उनके हृदयोंमें शूल चला रही थी, वर्तमान दशाको देखकर वे हाथ मल रहे थे। ऐसी दशामें अगर सेनामें गड़बड़ हो तो यह सीधी बात थी कि सब खालसा सेनाके साथ उठ खड़े होते, फिर पंजाबको स्वाधीन करनेके लिये लिकल तलवार उठाते और अंग्रेज़ी राज्य आपत्तिके बादलोंसे घिर जाता।

ऐसे संकटके समय प्रधान सेनापति सर चार्लस नेपियर कार्यक्षेत्रमें आये। गवर्नर जनरल शिमलेकी ठंढी हवा खा रहे थे, नैपियर फौरन उनसे मिले। इसी बीचमें सेनापतिको समाचार मिला कि रावलपिंडीकी एक नहीं दो सेनायें कम तनखाह लेनेसे इनकार करती हैं और वजीराबाद तथा जेहलम-की सेनाओंने भी इनका ही अनुकरण किया है। झटपट गवर्नर जनरल, सेनापति, अपने अपने सहायकोंके साथ विचार करने बैठे। कई मेम्बरोंने सलाह दी कि इन विद्रोही सेनाओंके हथियार ले लिये जायँ, पर अधिकोंकी सम्मति यही रही कि हथियार

लेनेमें विघ्न खड़े होंगे। अन्तमें सर कास्वेलको लिखा गया कि गोरी सेनायें लेकर उन्हें प्रबन्ध करना चाहिये। यह पत्र पहुंचा भी नहीं—इससे पहले ही सर काम्बेलने लिखा कि—"आपका आदेश आनेसे पहले ही सिपाही शान्त हो गये, उन्होंने अपना इरादा छोड़ दिया।" इस तरह सिपाहियोंके एकाएक शान्त हो जानेका कारण यही कहा जा सकता है कि वे अपने अन्तिम कामके लिये तैयार न थे। उनका सरकारसे विरोध करनेका विचार था। रावलपिंडीमें एक गोरी सेना थी, आसपासकी छावनियोंमें भी गोरे थे। इन सबको एक जगह रखने और विपत्तिनिवारणके उपाय होने लगे।

अक्तूबरमें, नैपियर साहब, विशेष विशेष सैनिक केन्द्रस्थानों-को देखनेके लिये दौरा करते रहे। दिल्ली आकर उन्होंने सेनाओंका असन्तोष देखा। इन्होंने पक्का इरादा कर लिया था कि जबतक अधिक वेतन न दिया जायगा तबतक पंजाब जाकर काम न करेंगे। एक सेनाके सतलजपार जानेका हुक्म हुआ था, पर वह न गयी। यह सब बातें देखकर नैपियरने अच्छी तरह समझ लिया कि सिपाहियोंमें असन्तोष फैल चुका और वह सर्वव्यापी भी हो गया। यह असन्तोष एकाएक फूटकर विप्लवका रूप धारण कर सकता है। इसे रोकनेके लिये प्रधान सेनापतिने यथासम्भव पूरा यत्न किया।

वजीराबादकी सेनाओंका असन्तोष अधिक दिन न टिका। कम्पनीका एक योग्य आदमी सेनापति था। जान हियर्स उन्नति

करते करते सेनापति बना था, सैनिकोंसे मेल रखना और उनकी वातोंको मालूम करना उसका प्रधान गुण था। जब उसकी सेनाने वेतन लेनेसे इनकार किया तब उसने सबको परेटके मैदानमें बुलाया और एक लंबा भाषण देकर सबको मोहित कर लिया। तब सबने मान लिया और जो प्रधान दलपति थे उन्हें सजाके लिये सेनापतिके हवाले कर दिया। फौजी अदालतमें इनका विचार हुआ और उनमेंसे कुछको दस दस सालकी जेल और कुछको कालेपानीकी कड़ी सजा दी गयी।*

पर इन बातोंसे अशान्ति नहीं मिटी। बल्कि अनेक स्थानोंपर अशान्ति फैल गयी। यह अफवा उड़ी थी कि सिपाहियोंमें, भिन्न भिन्न स्थानोंपर, डाकद्वारा विप्लवके लिये पत्रव्यवहार हुआ, इसी कारण सिपाहियोंके पत्र जांचे गये पर उनसे कोई विप्लवकी बात सिद्ध† न हुई। पत्रव्यवहार किसीमें न हुआ—पर स्थिति देखते देखते भयानक हो गई। गोविन्दगढ़की ६६ नं० सेना उठ खड़ी हुई और उसने जबर्दस्ती किलेका दरवाजा रोक लिया। अगर यह सेना किलेपर अधिकार कर लेती तो फिर बाहरकी सेनाको बड़ी कठिनाई पड़ती। पर सेनापति ब्रेडफोर्डने बड़े साहससे हमला करके दरवाजा ले लिया। इस प्रकार किले और अंग्रेज़ अफसरोंकी रक्षा हुई। ६६ नं० सेनाको बर्खास्त कर दिया गया।‡

---

* Sir Charls Napier, Indian Mis-Government P. 59.

† Calcutta Review, Vol. XXII.

‡ Calcutta Review. Vol. XXII.

सर चार्ल्स नैपियरने लिखा है कि जब ६६ नं० सेनाके हथियार लिये गये, जब गोरखा सेनाने इसका स्थान ग्रहण कर लिया, तब सिपाहियोंका असन्तोष अपने आप शान्त हो गया। सिपाहियोंने देखा कि उन्हींके समान दूसरी पराक्रमी, वीर और योद्धा जातिने उनका स्थान ले लिया। इससे उनका कोई मतलब सिद्ध न हुआ, क्योंकि उनके स्थानपर दूसरे सैनिक कम्पनीको मिल गये। कम्पनीका काम अब दूसरे सैनिकोंसे होगा। पर सेनापति नैपियरने यह समझ लिया था कि सिपाहियोंने किसी बुरे अभिप्रायसे कम्पनीका सामना नहीं किया बल्कि अपने वेतन बढ़ानेके लिये उन्होंने ऐसा किया था। सरकार भी इस बातको समझ चुकी थी और इसलिये नियमानुसार वेतन देनेका आदेश दिया।

जिस प्रतिद्वन्द्विताके कारण सर नैपियरने अपने पदसे इस्तीफा दिया था, अब लार्ड डलहौज़ीके साथ वही प्रतिद्वन्द्विता शुरू हुई। जब प्रधान सेनापति सिपाहियोंकी उचित माँगका उचित प्रबन्ध कर रहे थे उस समय गवर्नर जनरल लार्ड डलहौज़ी शीतल वायुका सेवन करते थे। वापिस आकर डलहौज़ीने देखा कि फौजी लाटने सब आज्ञाएं भी प्रचलित कर दी हैं। डलहौज़ीने इसमें अपनी असम्मति प्रकाशित की। सर नैपियर यह कहकर अपनी कार्यवाहीका समर्थन करने लगे कि समय बड़ा नाजुक आ गया था, आज्ञा देनेमें देर करना उचित न था। पर डलहौज़ीने नैपियरकी इन युक्तियोंको अस्वीकार किया। वे दृढ़ताके साथ कहने लगे, जिस समयको संकटका समय कहा जाता

है, वह कोई ऐसा संकटका समय ही न था। नैपियरके कामोंकी आलोचना करके उन्होंने जो मिनट तैयार किया, उसमें लिखा—"प्रधान सेनापतिने सरकारको यह समाचार दिया था कि, पंजाबमें सेना असन्तुष्ट है, पिछले जनवरी मासमें सेना इतनी असन्तुष्ट हो गई थी कि सरकार विपत्तिमें थी। सेनापतिके इस समाचारको २६ मईके दिन आश्चर्यके साथ मैंने पढ़ा। सेनापतिने जिस भयकी सम्भावना की है, उसपर मैंने बड़ी सूक्ष्मतासे विचार किया। जो कुछ हो चुका उसके कागजपत्रोंको अच्छी तरह देखा। मैं इसपर कोई प्रश्न नहीं उठाता कि प्रधान सेनापतिने सब सेनाओंको सरकारके विरुद्ध विद्रोहमें मिला हुआ क्यों समझ लिया। मैं इस समय केवल यह कहना चाहता हूं कि सेनापतिके समाचारको पढ़ते समय मेरा जो भाव था, उसमें इस समय भी कोई परिवर्तन नहीं हुआ। भारतसरकार विपत्तिसे घिर गई है, इस बातका न पहले कुछ मतलब था न अब। भारत बाहरी शत्रुओंके आक्रमणोंसे मुक्त और भीतरी विवादोंसे शून्य है। ऐसी दशामें थोड़ेसे सिपाहियोंकी क्षणिक उत्तेजनासे कोई विपत्ति नहीं आ सकती मैं न तो सेनाको विद्रोही मानता और न साम्राज्यपर विपत्ति समझता हूं।"

सर चार्ल्स नैपियरने पश्चिमोत्तर देशकी फौजी छावनियोंमें घूम फिरकर जो कुछ देखा था और अपने अनुभवसे जो कुछ लिखा था, उससे लार्ड डलहौज़ीकी बात बिलकुल विपरीत थी। अनेक स्थानोंपर घूम फिरकर नैपियरने एक

ही असन्तोष देखा था। यह सत्य था कि इस असन्तोषने किसी स्थानपर विप्लवका रूप धारण न किया था, किसी जगहके सिपाहियोंने कम वेतनसे असन्तुष्ट होकर कम्पनी राज्यको उखाड़ फेंकनेका यत्न भी न किया था। पर इसमें कोई सन्देह न था कि उनके दिलोंपर चोट लगी थी, वे कम्पनीके विरोधके लिये किसी मौकेकी ताकमें थे। नैपियरने इस मर्मकी बातको समझा था। इसीलिये उन्होंने सिपाहियोंको सन्तुष्ट करनेका यत्न किया था, इसीलिये उन्होंने वेतन बढ़ाकर सिपाहियोंको प्रभुभक्त बनाये रखनेकी चेष्टा की थी।

पर अन्तमें इस चतुरता और उदारताका सम्मान न हुआ। दुःख और क्षोभसे नेपियरने सिर झुकाया। गवर्नर जनरल बनकर लार्ड डलहौज़ीने अपने शासनको अक्षुण्ण रक्खा। इधर नेपियरने इस्तीफा दिया, वह मंजूर हुआ। नेपियरने २२ मईको एक रिसालेको, पत्रमें अपना अभिप्राय लिखा था—"इस समय मेरी तिहत्तर वर्षकी अवस्था है और पिछले दस सालसे मैंने कठोर परिश्रम किया है; इसलिये शारीरिक और मानसिक शान्तिकी आवश्यकता है। भारतकी जलवायु और भारतके राजनीतिक झगड़ोंमें पड़े हुए मुझे यह शान्ति नहीं मिल सकती।"

गवर्नर जनरलसे मतभेद होनेके कारण, शारीरिक और मानसिक शान्तिके लिये सर नैपियर स्वदेश चले गये। इससे सैनिक प्रभुत्व और मर्यादाको भारी धक्का लगा। सिपाहियोंको यह भी मालूम हो गया कि उनका बड़ेसे बड़ा अफसर भी उनका संचा-

लक नहीं है। इंग्लैंडने जिसको सबसे बड़ा सेनापति बना दिया वह भी सेनाका भला नहीं कर सकता।

ऐसे बड़े अधिकारियोंमें आपसका विवाद देखकर साधारण आदमियोंके हृदयमें भी सरकारकी पीठ टूट जानेका विचार उत्पन्न हुआ। विचक्षण अफसर सर जार्ज क्लार्कने इस विषय-पर लिखा था—"मेरी अवस्था इस समय साठ सालकी है। अपने अनुभवोंसे मैंने समझा है कि तीन बातोंके विना सरकार कभी स्थिर नहीं हो सकती। सबसे पहली बात उच्च अधिकारियोंमें ऐसा मेल होना चाहिये जिससे आपसमें फूट न हो, कमसे कम भारतवासियोंको हमारी फूट मालूम न होनी चाहिये। इस समय साधारण भारतवासी भी समझने लगे हैं कि साहब लोगोंमें आपसमें मेल नहीं है।" लोगोंने इसी भावसे डलहौज़ी और नैपियरके झगड़ेको देखा और इसी कारण सरकारके शासनकी नींवको कमजोर समझ लिया। लोगोंका यह विचार सच था कि भारतमें अंग्रेज़ोंकी संख्या कम है पर मेल होनेके कारण वे हजार गुने अधिक हैं। यदि मेलके स्थानपर उनमें हिंसा और द्वेष फैल जायगा तो वे बलहीन हो जायंगे।

लार्ड एलनबराके समयमें भी शासकोंमें इसी प्रकारका मतभेद उपस्थित हुआ था। जो सेना सिन्ध भेजी जा रही थी, वह भी जानेमें हिचकिचाहट करने लगी। प्रधान सेनापतिने, सरकारसे बिना सम्मति लिये, अधिक वेतन देनेका वचन दिया। इससे गवर्नर जनरलको बड़ा दुःख हुआ। पर इस

समय इस विरोधका सर्वसाधारणको पता न लगा था। सिन्धमें लड़ाई हो रही थी, सबका ध्यान लड़ाईकी ओर था। पर डलहौज़ोके जमानेमें यह बात सर्वसाधारणको मालूम हो गई। हर एक छावनीमें सिपाही इसकी आलोचना करते थे। सरकारके आपसके इस विरोधसे सबको कम्पनीके राज़में फूट और राजनीतिक संघर्ष दीखने लग गया था।

सिपाही दृढ़प्रतिज्ञ थे। वे इस बातपर डटे हुए थे कि जबतक उन्हें अधिक वेतन न दिया जायगा तबतक वे नये जीते हुए राज्यमें काम न करेंगे। प्रधान सेनापतिको इसी झगड़ेके कारण विदा होते देखकर सिपाहियोंने समझ लिया कि कम्पनोका राज्य बढ़ानेसे कोई लाभ नहीं। नया राज्य लेनेके लिये लड़ना मरना उनके हिसाबसे अनुचित बात हो गई। वे अपनी पहलेकी दशासे वर्त्तमान दशाकी तुलना करके कर्त्तव्यका निश्चय करने लगे। यदि सिपाहियोंके हृदयोंमें भविष्यकी आशा जगाई गई होती, दूर विजित तथा अपरिचित देशोंमें कुछ अधिक वेतनकी आशा दी गयी होती तो वे प्रसन्नतासे कृतज्ञ होते; पर गवर्नर जनरल और प्रधान सेनापतिके कलहसे उन्होंने समझ लिया कि उन्हें निराशाके सिवा और कुछ हाथ न आयगा।

इसके बाद एक और घटनासे भी सिपाहियोंका असन्तोष प्रगट हुआ। ब्रह्मदेशमें संग्राम छिड़ गया था, बरमी लोग अंग्रेज़ोंके विरुद्ध समरयोजना कर रहे थे। इस युद्धके लिये सिपाही भेजनेका निश्चय हुआ। कलकत्तेसे जहाज द्वारा ब्रह्मा पहुँचा

जा सकता था; पर सरकारने सिपाहियोंसे वादा किया था कि वह कभी समुद्रयात्रा न करावेगी और सैनिकोंके धर्मके विरुद्ध कोई काम न करेगी। ब्रह्मा जानेकी आज्ञासे सिपाहियोंको सरकारके वादेमें शक हुआ। ३८ नं० सेनाने प्रतिज्ञा की कि वह समुद्रयात्रा करके अपने धर्म और जातिका नाश न करेगी। सिपाहियोंकी प्रतिज्ञाका समाचार सुनकर सरकार कुछ न बोली, बल्कि उसने सेनाको सन्तुष्ट रखनेका प्रयत्न किया।

लार्ड डलहौज़ीके भारत छोड़नेसे पांच साल पहले गोरी सेनाकी संख्या कुछ बढ़ी, पर इंग्लैंडसे जो सेना आई उसकी संख्या बहुत कम थी। १८५२ में तीनों प्रेसीडेंसियोंमें कुल २८ हजार सैनिक थे। सन् १८५६ में कुल २३ हजार गोरे ही शेष रह गये थे अर्थात् इन पांच वरसोंमें गोरी फौजोंकी संख्या कम हुई और हिन्दुस्तानमें अंग्रेज़ी शासन बढ़ा। इस समय इंग्लैंडको यूरोपकी लड़ाईमें लिप्त होना पड़ा था और इसी कारण वह भारतमें अधिक सेना न बढ़ा सका।

यह नहीं कहा जा सकता कि उस जमानेके यूरोपके राजनीतिक आन्दोलन और सामरिक घटनाका भारतपर कोई प्रभाव न था। क्रीमियाके संग्रामके अवसरपर इस घटनाका हाल मालूम हुआ था। रूस और इंग्लैंडके सम्बन्धमें भारतमें बराबर आन्दोलन हुआ। हर स्थानपर रूसके साहस, वीरता और इंग्लैंडकी शक्तिकी प्रशंसा हुई। पर अनभिज्ञता और अदूरदर्शिताने इस

आन्दोलनको भयानक बना दिया। सबके हृदयोंमें यह विश्वास जम गया कि इंग्लैंड हारेगा और अंग्रेज़ जातिका पतन होगा। एकाएक अफवाह उड़ी कि रूसने इंग्लैंडको जीतकर अपने राज्यमें मिला लिया और महारानी विक्टोरिया भागकर भारतके गवर्नर जनरलकी शरणमें आई हैं। इस अफवाहसे सर्वसाधारणकी जो रहीसही श्रद्धा ब्रिटिशराजपर थी वह भी चली गई और सब तुच्छ दृष्टिसे अंग्रेज़ी शासनको देखने लगे। इसके बाद जब क्रीमियासंग्राममें भारतीय सेनाको ले जानेका प्रस्ताव हुआ तब तो सब शंकित हो उठे और जाति तथा धर्मनाशके विचारने एक बेचैनी पैदा कर दी। एक सम्मानयोग्य भारतवासीने इस विषयपर लिखा था—"पार्लमेंटके क्रीमियासंग्राममें भारतीय फौजें लेजानेके प्रस्तावपर भारतके सब विचारशील पुरुष विस्मित हुए हैं।" यह विस्मय अकारण न था, बिना कारण यह शंका भारतीयोंके हृदयोंमें न उठी थी। भारतीय सेनाके हृदयका भाव सब समझते थे। सिपाही इस प्रस्तावसे विरक्त होंगे यह सब जानते थे।

सन् १८५६ के फरवरी मासमें भारतके शासनका भार दूसरेके हाथोंमें सौंपकर लार्ड डलहौज़ी तो विदा हुए। जैसी चतुरता और समझ तथा मौक़ेकी सूझ डलहौज़ीमें थी वैसी अन्य बहुत कम गवर्नर जनरलोंमें होगी। झटपट उन्होंने भारतकी हालत देखते देखते बदल दी, एक नये रूपमें भारतका संगठन कर दिया। जिस काममें वे हाथ डालते थे उसे एका-

भ्रता और दृढ़ताके साथ सम्पूर्ण करके छोड़ते थे। आठ साल उन्होंने भारतका शासन किया, इस बीचमें वे अपने निश्चित कर्त्तव्यसे तिलमात्र इधर उधर नहीं हुए। इन आठ बरसोंमें भारत जिस राजनीतिक प्रभावसे प्रभावित हुआ वह डलहौज़ीकी राजनीति ही थी। इसलिये इस अवसरपर ब्रिटिश जातिको जो कुछ लाभ हुआ उसका आधार डलहौज़ीको ही कहा जा सकता है। वे आलस्यरहित होकर काम करते, निर्भय होकर आगे बढ़ते और सहजमें सफलता प्राप्त करते थे। और कोई शासक उनकी तरह निश्चय और अध्यवसायके साथ काम नहीं कर सकता था। डलहौज़ी शीघ्रता और कार्यकुशलताकी मूर्ति थे, अपने साथियोंको पीछे छोड़कर वे शीघ्रतासे आगे बढ़ते थे।

डलहौज़ीके जमानेमें अनेक प्रकारकी आन्तरिक उन्नतियोंका प्रारम्भ हुआ था। रेल और तारका प्रयोग उन्होंने प्रारम्भ किया, गंगाकी नहरका प्रक्रम चलाया, दूर दूरके प्रदेशोंतक जाने आनेके लिये उत्तम सड़कें निकालीं। उनके ही समयमें स्कूलोंको सहायता देकर शिक्षाप्रचारका सुगम मार्ग खोला गया। डलहौज़ीकी आभ्यन्तरिक प्रबन्धकी योग्यताके कारण इंग्लैंड और यूरोपसे व्यापार बढ़ा। भारतवासी एक देशसे दूसरे देशके साथ व्यापार व्यवहार करने लगे, शिक्षा प्राप्त करके अपने देशको भी अपना समझने लगे।

डलहौज़ी जातीय भाव और चरित्रकी मूर्ति थे। वे सब बातोंको अंग्रेज़ी भाव और अंग्रेज़ी दृष्टिसे देखते थे। उनका हृदय

दृढ़ और व्यवस्थित था। उनके हृदयमें यह भाव अच्छी तरह दृढ़ था कि अंग्रेज़ी सभ्यता, शिक्षा, शासनप्रणाली आदि भारतीय सभ्यता, शिक्षा और शासनप्रणालीसे श्रेष्ठ है। अपनी सम्पूर्ण दृढ़ताके साथ वे इस विश्वासको कार्यरूपमें परिणत करनेमें लगे हुए थे। उन्होंने निश्चय किया था कि सारा हिन्दुस्तान सीधा ब्रिटिश शासनमें आ जायगा तो भारतवासी और अंग्रेज़ दोनोंका कल्याण होगा। यह विश्वास उनके हृदयमें बराबर बढ़ता ही जाता था और भविष्यके सुख तथा दृश्य, कल्पना द्वारा उनके सामने आया करते थे। इस विश्वासपर उनको इतनी दृढ़ श्रद्धा थी, इतना प्रबल आग्रह था कि वे कभी किसी बातसे पीछे नहीं हटे। उनकी कौंसिलके सब सदस्य उनके विरुद्ध हो जाते तब भी उन्हें अपने विश्वासपर वैसी ही श्रद्धा बनी रहती थी। वे जिस समय भारतमें आये तब सभासदोंमेंसे कुछको छोड़कर शेष सबके विचार पुरानी राजनीतिसे हट चुके थे। डलहौज़ीकी नई राजनीतिके लिये यह सुअवसर था। नवीन राजनीतिके शिष्योंको लेकर उन्होंने काम शुरू कर दिया, धीरे धीरे वे आगे बढ़े और सिद्धि प्राप्त की।

डलहौज़ी स्वाभिमानी और स्वेच्छाचारी थे। वे एकाग्र होकर बिना किसीका आश्रय लिये अविचलित भावसे काम करते थे। उनकी इच्छाको न कोई रोक सकता था और न बंधनमें ला सकता था। असाधारण आत्मगौरवसे वे सदा उन्नत और अटल उत्साहसे अपने मार्गमें अग्रसर रहते थे। वे सब विपत्तियों

और विघ्नोंको पार करके सफलतापर पहुँचते थे। डलहौज़ीकी योग्यता और स्वेच्छाचार सबसे अधिक प्रबल थे। इन्हीं दो गुणोंको लेकर वे अनन्त उत्साहके साथ मैदानमें आगे बढ़ते थे। डलहौज़ीके प्रकृत सिद्ध एक दोषके कारण उनकी राजनीति अनेक स्थानोंपर कलंकित हुई है, उनकी सफलताने अनेक स्थानोंपर अमृतके बदले विष पैदा किया है। जिसकी कल्पना और प्रतिभा देश-कालके योग्य नहीं वह कभी भारतका शासन योग्यताके साथ नहीं कर सकता। डलहौज़ीमें भारतके सम्बन्धकी न कल्पना थी और न प्रतिभा। इन दोनोंमेंसे एक भी डलहौज़ीके भागमें न थी। इस कारण जिसके वे भाग्यविधाता बने थे, जिस जातिका शासनसूत्र उनके हाथमें था उसके हृदयके भावोंको वे न कभी जान सके, न समझ सके। उनके विचारमें यह भी न आया होगा कि भारतवासी प्राचीन प्रथाके कितने भक्त होते हैं, प्राचीन प्रथाके प्रति भारतीयोंकी कितनी श्रद्धा होती है, प्राचीन राजवंशों और राज्योंके प्रति भारतवासी कितनी भक्ति रखते हैं इसपर न डलहौज़ीकी दृष्टि थी और न विचार। भारतवासी अपने प्राचीन संस्कारोंके कितने भक्त होते हैं यह डलहौज़ी समझते ही न थे। एक वंशपरम्पराका राजा जिसे सब सम्मानके साथ सिर झुकाते, जिसे सब श्रद्धा-भक्तिकी दृष्टिसे देखते, जो वंशपरम्परासे लाखों आदमियोंके गौरवका अधिकारी होता चला आया, वह एकाएक एक विदेशीकी आज्ञासे अपने वंशपरम्पराके राजसम्मानसे वंचित हो जाय, उसके

कारण प्रजाके विरागका डलहौज़ीको कभी विचार भी नहीं हुआ। वे कभी दूसरेकी दृष्टिसे कुछ न देखते थे, दूसरेके विचारोंकी उन्हें कभी चिन्ता ही न थी, दूसरेके हृदयका वे अनुभव ही न करते थे। जातीय विश्वास और जातीय अनुभूतिको पैरोंसे रौंदकर अपनी धारणा, अपने विश्वास और अपने मतलबके अनुसार काम करते थे।

ऐसी अद्वितीय धारणा और विश्वासके वशीभूत होकर डलहौज़ी कम्पनीका राज्य बढ़ानेपर लगे। उनकी इस नीतिने प्राचीनताके उपासक राजा और प्रजा दोनोंके मर्मोंपर आघात किया। भारतका नकशा देखते देखते महाराज रणजीतसिंहने कहा था कि सारे पंजाबका रंग भी लाल हो जायगा। डलहौज़ीके जमानेमें यह बात सच हुई। राज्यलक्ष्मीका दान कहकर डलहौज़ीने पंजाबपर ब्रिटिशराज स्थापित किया; उत्तराधिकारी न होनेका बहाना दिखाकर सितारा, झांसी और नागपुर ले लिये; अत्याचार और अराजकता कहकर अवधपर अधिकार किया; इस प्रकार डलहौज़ीने भारत साम्राज्यको पुष्ट किया; फिर कर्जके बदलेमें बरार लेकर राजनीतिक चतुराईसे भारतको सशंक कर दिया। नानासाहबकी पेंशन रोककर एक अनिष्टका सूत्रपात किया। इस प्रकार सहानुभूति, समवेदना और सहृदयताके अभावके कारण डलहौज़ीने हिन्दू मुसलमान दोनोंको ब्रिटिशराजका शत्रु बना दिया। पेंशन बंद होनेके कारण नानासाहब सरकारके शत्रु हो गये, पुत्रको गद्दी न देनेके कारण झांसीकी

महारानी लक्ष्मीबाईके हृदयमें क्रोधकी आग जल उठी, अवधपर कब्जा करनेके कारण बंगाली सिपाहियोंका हृदय छिल गया। इस प्रकार डलहौज़ीने भारतमें एक बड़े गदरका सब सामान एकत्र कर दिया। जो सरकार बड़े बड़े राज्योंको छीनकर राजाओंको एक साधारण आदमी बना सकती है उसके विरुद्ध होकर वे मौके ढूंढ़ें, इसमें आश्चर्य ही क्या है। परराज्यहरणकी नीतिके सम्बन्धमें कप्तान ब्रूसने राबर्ट सौदीसे कहा था कि—"यदि भारतमें हमारे राज्यका नाश हुआ तो हमारी यादगारमें थोड़ी सी बोतलोंके टुकड़े और कार्क ही बाकी रहेंगे। समुद्रके किनारेवाले देशोंमें हमारी सरकारके प्रति लोगोंकी श्रद्धा है, क्योंकि वहांके आदमी हमारे व्यापारके कारण धनी बने हैं, पर राज्योंमें हम चोरों और डाकुओंके समान हैं। वहांका हम सर्वस्व छीन लेते हैं, प्रजा दरिद्र हो जाती है। हमारे शासनको वे उस बरमेके साथ तुलना करते हैं जो गहरेसे गहरा छेद करता जाता है।"* एक और सूक्ष्मदर्शी लेखकने इस नीतिपर लिखा था—"टैक्स लेनेसे एकदम तो हम हाथ नहीं खींच सकते पर भारतीयोंको बिना सताये भी हमारा काम चल सकता है। चाहे हम उनके हृदयकी श्रद्धा भक्तिको न प्राप्त करें पर तोभी हम घृणा और विराग के पात्र तो न बनें। सबको एक दशा और एक स्थितिमें ला डालना बड़ा बुरा है। इससे उनके प्राचीन संस्कारोंको धक्का लगता है, भय बढ़ता है और धन तथा सम्पत्तिके हरणका विचार उत्पन्न

* Southey's Common Place Book. 4th Series P. 684.

होता है। हमने अब अपना भ्रम और उसका शोचनीय परिणाम समझ लिया है।" जान पाल रिचार्डने एक बार कहा था—"बहुज्ञताका एक बड़ा सुन्दर विद्यालय है, इसकी फीस बहुत अधिक है। हमने जो उपदेश पाये हैं, उनका प्राप्त करना दुर्लभ और भूलना उससे भी अधिक भयंकर है। इन उपदेशोंको प्राप्त करनेमें हमें बहुत व्यय करना पड़ा है। यदि हम इन्हें भूलें तो फिर दस गुनी कीमत देनी होगी। इन उपदेशोंके लिए हमने पिछले (ग़दरके) कई मास बड़ी उत्कंठा और हृदयकी पीड़ाके साथ बिताये हैं। इन कई महीनोंमें हमें केवल यही आशंका रही है कि हमारे हाथसे पूर्वके राज्यका शासन न चला जाय। हमपर विरोधियोंके एकाएक आक्रमण हुए और उनके हमपर हथियार उठे और हमने अपने देशवासियोंकी हारके दारुण समाचार भी सुने। उन उपदेशोंके चिह्न उस समयके इतिहासमें अंकित हैं। हमारा विश्वास है कि उन्हें कोई भूलनेका कभी विचार भी न करेगा। जिन्होंने इस विप्लवकी भयानकता आंखोंसे देखी है, जिन्होंने खूनके दरिया पार किये हैं, जिन देशी राज्योंने हमपर विश्वास रखकर हमारा साथ दिया, जिन भारतीयोंने प्रलोभनोंके मौके हाथसे खोकर हमारी रक्षा की, उनके रहते हुए, हमें जो उपदेश प्रकृतिकी ओरसे मिले उन्हें न भूलनेमें ही भलाई है। भारतको हमने अन्यायसे लिया यह सोचकर हमें आगे बढ़ना चाहिए।"†

† Westminister Review, New Series, Vol. XXII, P. 156, India Annexation, British Treatment of Native Princes

डलहौज़ीकी राज्यहरणनीतिको देखते ही विचारशील पुरुषोंको चिन्ता हो गई थी। इसके ऊपर डलहौज़ीकी अहंम्मन्यता और बधिरताने राजनीतिको अधिकसे अधिक समवेदनाहीन बना दिया था। एक स्पष्टवक्ता अंग्रेज़ने डलहौज़ीके विषयमें लिखा था—"वह अच्छेसे अच्छा और इतने महत्त्वका कर्मचारी हो सकता था पर वह शासनके लिये हीनसे हीन और निकृष्टसे निकृष्ट था।"* हम इन शब्दोंको दोहराकर भारतके एक प्रधान शासकको कलंकित करना नहीं चाहते। डलहौज़ीमें अनेक गुण थे पर शासनमें यह गुण दिखाई न दिये। दूसरे अंग्रेज़ जिस प्रकार शासन करके भारतीयोंकी श्रद्धाभक्ति सरकारके प्रति खींचना चाहते थे, डलहौज़ीने सदा उसका विरोध किया। जान मलकमने मेजर स्टुअर्टको लिखा था—"सारे भारतको थोड़ेसे ज़िलोंमें बाँटो, यह मैं स्पष्ट शब्दोंमें कहता हूं कि इससे हमारा राज्य भारतमें पचास साल रहेगा। पर यदि हम भारतके राजाओंको इसी प्रकार स्वाधीन रहने देंगे तो जबतक यूरोपमें हमारी सामुद्रिक शक्ति बनी रहेगी तबतक भारतपर हमारी जाति राज्य करेगी। जबतक यह प्रधानता रहेगी तबतक कोई शत्रु भारतमें हमारे राज्यको नहीं हिला सकता †।" मेजर इवान्सबेलने एक बार कहा था—"भारत तलवारसे लिया गया है और तलवारसे

* Evans Bell's Empire in India P. 126.

† Kaye's Life and Correspondence of Major. General. Sir John Melcolm. Vol II, P. 372.

ही रक्षित रहेगा।" इस बातसे मैं कितना विरक्त और हताश हुआ कह नहीं सकता। अगर इसका मतलब यही हो कि हमारा प्रताप सेनाद्वारा ही रक्षित है तो मैं कहूंगा यह बिलकुल गलत है। यदि वे यह कहें कि हम सेनाद्वारा ही सब कुछ कर सकते हैं प्रजाको रीति और श्रद्धाका अनादर कर सकते हैं तो मैं कहूंगा यह बिलकुल गलत है।

"हमारे राज्यकी सच्ची शक्ति हमारी उदारता, क्षमा और शासनका प्रबन्ध है। भले गुणों द्वारा शासन करने, सहानुभूतिका व्यवहार रखनेसे जो विश्वास और श्रद्धा पैदा होगी उसीसे हमारा साम्राज्य अटल होगा। लार्ड डलहौज़ीके शासन-भार ग्रहण करनेके बाद १८४८ से ही, भारतके सब सम्प्रदाय, जातियाँ और देशी राज्य असन्तुष्ट हुए। जहाँ सर्वसाधारणमें असन्तोष हो वहाँ ग़दरके लिये कोई छोटा मोटा कारण भी काफी होता है। जरा सी बातसे भी रोष प्रगट हो सकता है। जहाँ सन्देह, अविश्वास और असन्तोष है वहाँ उत्तेजनाका सूत्र शीघ्र हो हाथ आ सकता है।"*

लार्ड डलहौज़ीके दिमागमें कभी इस प्रकारकी बात भी नहीं आई, उन्होंने कभी सहानुभूतिका अनुभव भो नहीं किया। अवध-पर कब्जा करके लार्ड डलहौज़ीने जिस ग़दरका बीज बोया, समय पाकर वह महावृक्ष बन गया। पंजाबके बाद सर हेनरी लारेंसकी तीक्ष्ण प्रतिभाने देखा कि इस नये जीते हुए राज्यमें ब्रिटिश

* English in India. P. 34.

राज्यका कुछ भी सम्मान नहीं। पहले तो सिक्ख लोग अपने आपको अंग्रेजोंके अधीन करना ही नीचता समझेंगे, इसलिये सेना रखनी होगी। इसी विचारसे लारेंसने बहुतसी गोरी सेना पंजाबमें रक्खी, पर थोड़े दिन बाद यह सेना कम हुई; इस कारण हिन्दुस्तानी फौज रखनी पड़ी। क्रीमियाकी लड़ाईके कारण इंग्लैंडने भारतसे सेना मांगी। इससे लोग समझने लगे कि इंग्लैंडमें सेना कम हो गई इसलिये भारतसे मांग रहे हैं, भारतकी सहायताके बिना इंग्लैंडका कोई काम पूरा नहीं होता।*

इसके बाद जब अवध ब्रिटिशराजमें मिला लिया गया और नवाब वाजिद अली शाह तख्तसे उतारे जाकर मामूली पेंशनरोंमें गिने गये तब सर्वसाधारणका क्रोध और भी अधिक बढ़ा। पंजाबकी तरह अवध सरहद्का प्रदेश न था इसलिये वहाँ अधिक सेना रखना भी उचित न समझा गया। अंग्रेज़ोंकी एक छोटी सी सेनाने आकर अवधपर अंग्रेज़ी झंडा खड़ा कर दिया और वही सेना राज्यरक्षाके लिये वहां नियत हुई। सर्वसाधारणने देखा कि अंग्रेज़ोंने भारतके एक प्रधान राज्यका नाश किया। सब सोचने लगे कि धीरे धीरे सब स्वाधीन राज्य ब्रिटिशसिंहके मुँहमें जायँगे। अपना सर्वस्व विदेशियोंके हाथमें जाता देखकर वे दुःख, क्षोभ, और अपमानसे व्यथित हो उठे।

* क्रीमियाकी लड़ाईके समय भारतमें चंदा भी किया गया था—इससे सर्वसाधारणका विचार भी यह हो गया था कि इनके पास धन भी नहीं है—Kaye's Sepoy War P. 345 note.

अवध अंग्रेज़ोंके हाथोंमें चले जानेसे सिपाही भी असन्तुष्ट हुए थे, कारण, जिन बंगालकी सेनाओंसे अवध लिया गया था वे अधिकतर उसी देशके निवासी थे। अवधराज्यके हर गांव और कस्बेमें वर्दी पहने सिपाही ही सिपाही थे। यह सिपाही उन ब्राह्मण क्षत्रिय घरानोंके सम्मानित व्यक्ति थे। मुसलमान राज्यके नाश होने और वाजिद अली शाहके तख्तसे उतारे जानेसे वे असन्तुष्ट न थे पर उनके असन्तोषका कारण और ही था। जबतक अयोध्यामें नवाबी थी तबतक वे ब्रिटिश सेनाके सिपाही होनेके कारण अपनी ही जन्मभूमिमें गौरवकी दृष्टिसे देखे जाते थे—स्वदेशमें अनेक प्रकारकी सुविधायें थीं। किसी प्रकारका अत्याचार या अविचार होनेपर भी उनके विरुद्ध कोई कुछ न करता था। ब्रिटिश रेजीडेंटकी छत्रछायामें वे सुखसे रहते थे। सूक्ष्मदर्शी सर हेनरी लारेंसने लिखा था—"सिपाही पहले जैसे अपनी समाजमें सम्मानकी दृष्टिसे देखे जाते थे वैसे इस समय नहीं देखे जाते। इसी कारण वे परराज्यहरणको बुरा समझते हैं। हरएक राज्य ब्रिटिश शासनमें शामिल होनेसे उनका कार्यक्षेत्र भी अधिक हो जाता है। एक बार बम्बईकी एक सवारसेनाके एक अयोध्यावासी सैनिकसे परराज्यहरणकी नीतिके सम्बन्धमें पूछा गया था। उसने जवाब दिया कि—"राज्य लेना हमें पसंद नहीं। जब मैं घर आता था तब बड़े आदमीकी तरह सम्मान पाता था। गांवके बड़े बड़े आदमी सामने देखकर मेरा आदर करते थे, पर अब तो नीचसे नीच आदमी मेरे सामने चिलम पीते हैं *।"

* Kaye's Sepoy War. Vol I. P. 347 note.

अवधराज्य ब्रिटिश शासनमें मिला लेनेसे वहाँके सिपाही भी इसी प्रकार असन्तुष्ट हुए थे। नवाबके शासनमें वे, अपने देशमें, कम्पनीके सिपाहीके आदरसे सम्मानित होते थे, सब लोग उनका प्रताप मानते थे। कोई उन्हें नाराज न कर सकता था या उनके विरोधकी किसीमें हिम्मत न थी। पर जब अवधमें ब्रिटिशराज्य हुआ तब जैसा व्यवहार वहाँकी साधारण प्रजाके साथ हुआ वैसा ही सिपाहियोंके साथ भी हुआ और इसी कारण वे असन्तुष्ट हुए। प्रजा और सिपाही दोनों दुःखी हुए।

अवध लेनेसे ब्रिटिशराज्यपर सिपाहियोंको अधिक अश्रद्धा हो गई और कम्पनीपरसे उनका विश्वास जाता रहा। सिपाही केवल वेतनके लिये सैनिक नहीं, बल्कि वे अपने देशके प्रतिनिधि बनकर आगे बढ़ते हैं, यह भाव उनमें भी था। देश और समाजकी एकाग्र इच्छा उनके द्वारा व्यक्त होती थी। अपनी सेनामें वे दूर दूर देशोंके सैनिकोंसे मिलते, पत्रव्यवहार करते, एक दूसरेके भाव मालूम करते थे। सरकारके उद्देश्य और सरकारके कार्य बहुत बार उन्हें मालूम हो जाते पर कौतूहलवश उन सबका वे उलटा ही अर्थ करते थे। सरकारकी कार्यप्रणालीके गूढ़ तत्त्वोंको वे बिलकुल न समझ सकते थे, राजनीतिका मर्म समझना उनकी शक्तिसे बाहरकी बात थी। पर वे अपनी कल्पनासे उसके तरह तरहके अर्थ लगाते थे।

उनकी इन कल्पनाओंको उद्दीप्त करनेवाले लोगोंका अभाव न था। ब्रिटिश सरकारकी अपेक्षा तरह तरहकी कहानियाँ

उनसे कही जातीं, उन कथाओंसे ही बहुत बार उनके रोमांच हो उठते—बहुत बार उनकी नाड़ियोंमें जोरसे रक्त बहने लगता। कम्पनीके राजके कारण रातदिन उनके धर्म और जातिके नाशका डर था। जिस देशमें अंग्रेज़ी राज्य हो जाता उसीमें ईसाई धर्मका प्रचार करनेके लिये पादरी लोग प्रयास करते। सिपाही प्राण निकलनेपर भी जिन नीच जातियोंके हाथका छुआ पानी नहीं पी सकते थे*—वे ईसाई बनकर अंग्रेज़ोंमें मिलने लगे। फिर जीते हुए राज्योंमें अनेक देवता और ब्राह्मणोंके नामकी ज़मीनें ज़ब्त हुईं। सबने समझा कि बस अब कलियुग आ गया। छावनियोंमें अनेक साधू संन्यासी और सन्त जाते, वे इसी प्रकारकी कहानियां कह कहकर उनकी उत्तेजनाको और भी अधिक बढ़ाते थे। उनके निकट यह भी प्रस्ताव होता था कि फिरंगियोंको नाश करके वे सुखसे अपना समय व्यतीत कर सकते हैं। इसके

* सन् १८०० की ३१ जनवरीको कर्नल स्किनर उनराके राजासे संग्राम करके घायल हुए। घायल दशामें युद्ध क्षेत्रका वर्णन उन्होंने किया है। इसमें हिन्दुओंकी धर्मरक्षाका उदाहरण बड़ा मनोहर है। उन्होंने लिखा है—"तीसरे पहर तीन बजेके क़रीब घायल होकर मैं संग्रामभूमिमें गिरा, गिरकर बेहोश हो गया। दूसरे

चेत हुआ। होश आनेपर देखा कि चारों ओर घायल सिपाही पड़े हैं। धूपसे बचनेके लिए मैं किसी तरह सरकता २ पासवाले जंगलमें जा छिपा। पास ही दो भारतीय सैनिक थे—एक सूबेदार दूसरा जमादार, एकका पैर चूर हो गया था और दूसरेको ज़ख़्म लगा था। प्यासके मारे हम सब घबरा रहे थे; पर पास कोई न था। तमाम दिन भर हम मौतकी आशामें पड़े रहे। धीरे धीरे शाम हुई—चन्द्रमा उगे। रातको ऐसी भयानक सर्दी पड़ी कि मैंने प्रतिज्ञा की कि जो जीता बचा तो फिर फौजमें न रहूंगा। मेरे चारों ओर घायल 'पानी पानी' पुकार रहे थे। गीदड़

अतिरिक्त जिन सब प्राचीन राज्योंको कम्पनीने अपने राज्यमें मिला लिया था, उन सबने भी सिपाहियोंको उत्तेजित करनेमें किसी तरहकी कसर न छोड़ी थी। अनेक उपायों और अनेक रूपोंसे यह लोग सिपाहियोंके पास पहुंचते और उन्हें सरकारके विरोधमें उभारते। इनकी स्थिर प्रतिज्ञा धीरे धीरे सफल हुई थी। योगी ब्रह्मचारी और तमाशा करनेवाले मदारियोंके वेषमें ये लोग घूमते थे। इनका उद्देश्य धन, जन हरणकारी सरकारका अनिष्ट करना ही था। हर स्थान और हर जगह यह सेनाओंमें घूमते, आकस्मिक विप्लवके लिये लोगोंको उत्तेजित करते। समय समयपर इनकी साधना सफल हुई, भारतमें भयानक गदर हुआ।

गवर्नर जनरलके परिवर्त्तनके अवसरपर भारत और इंग्लैंड दोनों स्थानोंपर बड़ा आन्दोलन हुआ करता है। लार्ड डलहौज़ीके समान एक योग्य और कार्यकुशल आदमीकी जगह दूसरा

मुर्दों को चीर रहे थे—कई बार वे हमारी तरफ भी आये पर पत्थर फेंककर या पुकारकर हमने उन्हें भगा दिया। इस तरह भयानक रात बीती। सवेरे देखा कि एक आदमी और एक बूढ़ी हाथमें रोटियां और मटकेमें पानी लेकर आई। सब घायलोंको उसने एक एक रोटी और घड़ेसे पानी दिया। मुझे भी उसने यह दिया और ईश्वरकी दया समझकर मैंने ले लिया। पर सूबेदारने न लिया। वह क्षत्रिय था और बूढ़ी चमारिन। मैंने बहुत जोर दिया तब दृढ़ताके साथ सूबेदारने कहा—"हम जल्द मरेंगे। मौतसे कुछ घंटे पहले अपने धर्मको क्यों छोड़ें? अपने धर्मको कलंकित न करेंगे।"

Duke of Argyll's India under Dalhousie and Canning P. 75.

आदमी चुनना कम आन्दोलनकी बात न थी। जिसने आठ साल योग्यता और तत्परताके साथ भारतका शासन किया—उसका स्थान कौन लेता है यही सबकी चर्चाका विषय हो गया। भारत-वासी उत्सुकताके साथ नये शासकका नाम सुननेको व्यग्र रहे। अन्तमें मालूम हुआ कि, महारानीके पोस्टमास्टर, गवर्नर जन-रल बने।

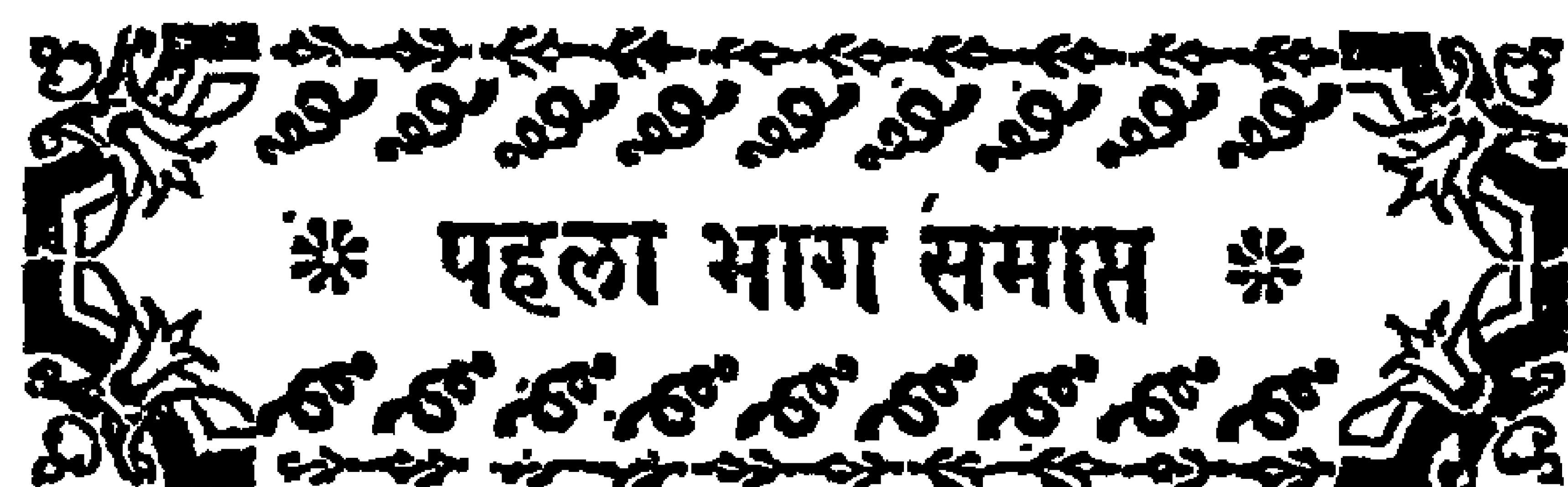
लार्ड कैनिंग न अनुदार थे न अयोग्य। ईटन और आक्स-फोर्डके विश्वविद्यालयोंमें उन्होंने शिक्षा पाई थी और साहित्य तथा गणितमें योग्य सिद्ध हुए थे। ग्लेडस्टन, फिलिमोर और ब्रूस उनके सहपाठी थे। यह सब अपने समयमें उच्च व्यक्ति सिद्ध हुए थे। इक्कीस वर्षकी अवस्थामें कैनिंगने विश्वविद्यालय छोड़ा। इस समय पार्लमेंटका दरवाजा उनके लिये खुला था, पर वहां जैसी वाक्-सिद्धताकी जरूरत होती है, वह गुण इनमें न था। कैनिंग लज्जाशील प्रकृतिका नौजवान था। उसमें सर-सता, सुन्दरता, कोमलता आदि गुणोंकी कमी न थी। एक युवतीका अनुराग खींचनेके लिये यह गुण काफी थे। सन् १८३५ की ५ वीं सितम्बरको एक कुमारीके साथ इन्होंने विवाह किया। यह कुमारी महिलाजनोचित गुणोंसे भूषित थी। विवाहके एक साल बाद कैनिंग पार्लमेंटमें प्रविष्ट हुए। कामन्स सभामें उन्हें छः सप्ताहसे कुछ अधिक ठहरना पड़ा। इसके बाद वे लार्ड-सभामें लिये गये। पहले वे परराष्ट्र विभागके अंडर सेक्रेटरीके पदपर नियुक्त हुए। अपने कामको उन्होंने बड़ी योग्यताके साथ

सम्पादन किया। फिर १८४८ में वे महकमे जंगलातके कमिश्नर बनाये गये। फिर मंत्रि-सभाके सभ्य और पोस्टमास्टर जनरल-के पदपर प्रतिष्ठित हुए।

ऐसे कार्यकुशल, विद्वान्, बुद्धिमान् आदमीके हाथमें शासन-भार देकर लार्ड डलहौज़ी विदा हुए। सन् १८५६ की पहली फरवरीको कैनिंग भारतमें आ गये पर लार्ड डलहौज़ीने उन्हें एक

१८५६ मार्चको शासनभार दिया। नये शासकने समझा कि डलहौज़ी अवधके संबंधमें कुछ कर जाना चाहते हैं; पर बात यह न था। डलहौज़ीने कैनिंगको पत्र लिखा था कि वे कुछ साधारण घटनाओंको सुलझा जाना चाहते हैं। कैनिंगने इसपर कुछ आपत्ति न की।

पहली फरवरीको लार्ड कैनिंग कलकत्ते पहुंचे और इसी दिन लार्ड डलहौज़ीने इनके हाथमें शासनभार दिया। लार्ड कैनिंगने बड़ी बुद्धिमत्तासे सब काम समझा, बड़े परिश्रमसे, विवेचनासे काम लिया। देश शान्त था, चारों ओर नये वसन्त-का आगमन था। जड़-जंगमके चित्त प्रसन्न थे। किसीको स्वप्न-में भी विचार न था कि देशमें बहुत शीघ्र बड़ा भारी तूफान आनेवाला है।



सन् १८५७

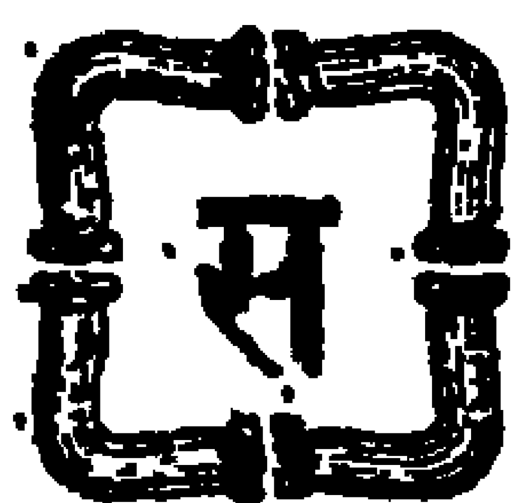
के

ग़दरका इतिहास

द्वितीय खण्ड

पहला अध्याय

नई राइफल--दांतसे काटनेके कारतूस--दमदमे और बारकपुरकी घटना--सिपाहियोंकी आशंका और इसी कारण उत्तेजना--बहरामपुरकी घटना-उन्नीसवीं रेजिमेंटकी गड़बड़।



न् १८५६ अनन्तकालके प्रवाहमें बह गया। सन् १८५७ प्रसन्नतापूर्वक भारतमें आया। सबको पूर्ण आशा थी कि शान्त और गम्भीर स्वभाववाले लार्ड केनिंगके शासनमें सन् १८५७ का सुख होगा। सन् १८५७ के आरम्भमें, भारतमें, जनवरी मास चारों ओर शांति और सुख था। अंग्रेज़ सेनापति अपने भारतीय सिपाहियोंको कर्त्तव्यरत और राजभक्त देख रहे थे, सिपाही भी शान्तिके साथ अपने अफ़सरोंकी आज्ञाका पालन

करते थे। सन् १८५७ का शीतकाल इसी प्रकार सुख-शान्तिसे बीता। सिपाहियोंकी किसी बातपर सेनापतियोंको कभी आशंका नहीं हुई। पर देखते देखते इस शान्त भावका अन्त आया, असन्तोष और हिंसाकी भयंकर मूर्त्ति प्रगट हुई। जो आकाश शान्त और निर्मल था, वही देखते देखते भयानक काले बादलोंसे घिर गया, चारों ओर बिजली कड़कने लगी, सब भयभीत होकर प्रतिक्षण सर्वनाशक संहारकी प्रतीक्षा करने लगे।

जो अंग्रेज़ी सरकारको घृणा और हिंसाकी दृष्टिसे देखते थे, सरकारके कामोंने जिनके हृदयोंमें आशंका पैदा कर दी थी, सरकारकी राजनीतिसे जो राजभ्रष्ट और पदभ्रष्ट हो गये थे, सरकारके नये प्रबन्धके कारण जो पीढ़ी दर पीढ़ीकी जमीनोंके हकोंसे बंचित हो गये थे, जिनका प्राचीन गौरव, प्राचीन स्वत्व, प्राचीन पद-मर्यादा लोप हो गई थी वे सब एक ही उद्देश्यको सिद्ध करनेके लिये कार्यक्षेत्रमें उतर पड़े। उनका यह उद्देश्य न महान् था न पवित्र, उसमें न धैर्य था न ज्ञान, बल्कि वे क्षुद्र स्वार्थके कारण कलंकित और मूर्खताके कारण निर्दय बन गये। कुछ भी हो, वे कार्यक्षेत्रमें उतरे। मौका पाकर, वे लोग सिपाहियोंको बहकाने लगे कि ईसाई अफसर उनके धर्म और जातिके नाश करनेपर उतारू हैं। प्रायः आधी सदी तक हिन्दू और मुसलमान सिपाही अंग्रेज़ अफ़सरोंके अधीन रहकर काम करते आ रहे थे, उनमें कभी किसी प्रकारकी घृणा या विद्वेष न देखा

गया। पर अपने धर्म और जातिके नाशके विचारसे उनमें आशंका पैदा हुई। एकाएक उनमें एक भयानक खबर फैली कि—"सरकारने भारतीय सिपाहियोंके लिये चर्बीवाले कारतूस तैयार किये हैं।" यह बात सत्य थी कि नयी बंदूकोंके लिये सरकारने नयी तरहके कारतूस तैयार कराये थे।

उस समयतक सिपाही "ब्राउन बस" नामक बंदूकका व्यवहार करते थे। पर जो नयी बंदूक बनी उसकी गोली बहुत दूरतक जाती थी। दुश्मनको और अधिक दूरसे मारा जा सकेगा इस विचारसे सिपाही खुश थे। जब उन्होंने सुना कि इस नयी बंदूक चलानेकी शिक्षा उन्हें दी जायगी तब उनके आह्लादका ठिकाना न रहा। हर एक सेना और छावनीमें इस विषयका आन्दोलन होने लगा, चर्चा चलने लगी। पर चर्बी मिले कार-तूसोंके बिना यह बंदूक भरी न जा सकती थी। यह कारतूस ही आपत्तिकी जड़ थे, कारतूसोंमें लगे फीतेको दांतसे काटकर बंदूकमें भरना पड़ता था। सिपाही नयी बंदूकोंके कारण प्रसन्न हो रहे थे, पर कारतूस देखकर उनका भाव बदल गया। उन्होंने सुना कि कारतूसोंमें लगा हुआ फीता गौ और सूअरकी चरबीसे बनाया गया है। हिन्दू और मुसलमान दोनों कोपदृष्टिसे सर-कारको देखने लगे।

सबसे प्रथम यह बात कहाँसे उठी, किस प्रकार समाचार सुनकर सिपाही शंकित हुए, पहले इसीका उल्लेख किया जाता है। कलकत्तेसे आठ मील उत्तरमें दमदमा नामक एक छावनीका

स्थान है। बहुत समय तक तोपख़ानेका प्रधान स्थान यही रहा है। वहां ही सिपाहियोंको अस्त्र शस्त्रकी शिक्षा दी जाती थी। बादमें दमदमेको तोपख़ानेके योग्य न समझ कर वह दूसरे स्थान-पर बदल दिया गया। जो मकान बने हुए थे वे और कामोंमें आने लगे। जब राइफल बंदूकका आविष्कार हुआ तब सिपाहियोंको उसकी शिक्षा देनेके लिये यही स्थान चुना गया। दमदमेके अतिरिक्त बंगालमें दो स्थान और इस सैनिक शिक्षाके लिये नियत हुए। जनवरी मासमें, इसी दमदमेके स्थानपर, एक ब्राह्मण सिपाहीसे एक नीच जातिके आदमीने पानी पीनेके लिये लोटा माँगा। इससे ब्राह्मण सिपाहीको बड़ा क्रोध आया, अपने आपको श्रेष्ठ ब्राह्मण कहकर उसने अछूतको लोटा देनेसे इनकार कर दिया। उस अछूतने हँसकर ब्राह्मण सिपाहीसे कहा—"कम्पनीके राज्यमें अब कोई ऊंच नीच नहीं रह सकता। अब तो सब एक हो जायँगे। नये कारतूस गौ और सूअरकी चर्बीसे बने हैं, सबको उनमें मुँह लगाना पड़ेगा इसलिये धर्म और जातिका नाश हुआ समझो।"

ब्राह्मणने दुःखी होकर अपने लश्करवालोंसे उस अछूतकी बात कही। थोड़ी सी देरमें दमदमेके हरएक सिपाहीके कानमें यह बात पहुंच गई। घोर विपत्तिकी आशंकासे सब घबरा उठे, सब अपने जीवनका अन्तिम परिणाम सोचकर चौंक गये कि गौ और सूअरकी चरबीसे बने कारतूसोंको दाँतसे काटना होगा, सब सोचने लगे कि गवर्नमेंटने हमारे धर्मका नाश करनेका नया जाल

रचा है। एक ही कल्पना, एक ही विचार और एक ही चिन्तासे उन्मत्त होकर सब सरकारको द्वेषकी दृष्टिसे देखने लगे। इस बातके बतानेकी सबको आवश्यकता न पड़ी, उसको बहुत कुछ बढ़ा चढ़ाकर भी किसीने किसीसे न कहा। साधारण भाषा और साधारण भावसे यह बात एक सिपाहीने दूसरेसे कही और इसीसे हरएक सिपाही अंग्रेज़ जातिको अपना घोर शत्रु मानने लगा। चमड़ेवाली गोल टोपी प्रचलित करनेसे वेलोरके सिपाही जैसे विरक्त हुए थे, दमदमेके सिपाही भी इस घटनासे वैसे ही शंकित हो उठे। पर टोपीसे कहीं अधिक घृणा सिपाहियोंको क़ारतूसोंसे हुई क्योंकि टोपी तो सिरपर ओढ़ी जाती थी, पर कारतूस दांतसे काटे जाते थे।

अंग्रेज़ोंने भारतपर अधिकार कर लिया था, यह अधिकार चाहे तलवारके जोरसे समझिये या राजनीतिसे; पर भारतवासियोंके हार्दिक भावोंको वे न समझे थे। भारतवासियोंका उन्होंने ऊपरसे जो कुछ देखा उसे ही भारतीयोंकी प्रकृति समझ कर उन्होंने सिद्धान्त बना लिया था। बहुतसे ऐसे सिद्धान्त थे जो भारतीयोंकी प्रकृतिके विरुद्ध थे। बहुतसे समाचार और घटनायें सरकारको मालूम होनेसे बहुत पहले ही सर्वसाधारणमें फैल जाती थीं। रेल, तार और डाकका इतना व्यवहार न होनेपर भी देशसे देश, छावनीसे छावनी—खबरें बिजलीकी तरह पहुँच जाती थीं*। सर्वसाधारणका यह कहना कि ऐसी ख़बरें हवा

* १८४१ में काबुलकी गड़बड़ और अंग्रेजोंकी हत्याकी बात सरकारको कई

पर चढ़कर हर जगह घूमा करती हैं, असत्य नहीं मालूम होता। देखते देखते बाजारोंमें ऐसी बातोंकी चर्चा होने लगती है, कोई उनकी गति नहीं रोक सकता। नये कारतूसोंकी चर्चा जब बाजार बाजारमें होने लगी, हरएक पल्टन और छावनीमें इसकी आलोचना होने लगी तब भी सैनिक अफसर या सरकार इससे अनभिज्ञ थी, उन्हें कुछ पता ही नहीं था। इसका कारण यह था कि अंग्रेज़ भारतवासियोंसे मिलकर रहना पसंद नहीं करते थे, बिना मिले उनके हृदयोंके भाव क्योंकर मालूम हो सकते थे। यही कारण था जिससे अंग्रेज़ यह समझ ही न सके थे कि भारतवासी धर्म और जातिको किस उच्च दृष्टिसे देखते हैं और प्राण देकर भी उनकी रक्षाको गौरव मानते हैं। अंग्रेज़ोंका यह विश्वास था कि बिना कारण, केवल अफवाहपर, भरोसा करके हज़ारों लाखों आदमी उन्मत्त नहीं हो सकते। इसलिये कारतूसोंकी अफवाहपर किसीने ध्यान न दिया। पर अफवाह सच थी, क्षण क्षणमें उसकी शक्ति बढ़ रही थी। अंग्रेज़ जिस अफवाहको तुच्छ समझकर सोचना तक व्यर्थ समझते थे—वही अफवाह सैकड़ों हजारों कोस दूरकी सेनाओंमें बिजलीकी तरह फैल रही थी, सिपाही सरकारके विरुद्ध तैयार हो रहे थे।

यह अफवाह किन लोगोंके द्वारा फैली या कौन कौन विशेष

दिन बाद मालूम हुई और लोगोंमें पहले ही चर्चा होने लगी। जो सिपाही बरमा जानेवाले थे उन्होंने बारकपुरके गदरका हाल सुन लिया और सेनापतिको इस बातका ज्ञान ही नहीं था। Sepoy War. Vol I, P. 491, Note.

आदमी इसके प्रवर्त्तक थे, इसका निर्णय करना कठिन है। पर इसमें सन्देह नहीं कि सरकारने जिनकी जागीरें, जमीनें और माफीके पट्टे जप्त किये थे, जिनके राज्य छीने थे, जो सरकारके कारण राजासे रंक और रावसे साधारण आदमी बनाये गये थे, वे सब सरकारके विरुद्ध चर्चा करनेमें उदासीन न थे। कलकत्ते-के निकट मोचीखोलेमें अवधके पदभ्रष्ट नवाब वाजिद अली शाह अपने दिन बिता रहे थे। उनकी अनन्त धनराशि और राज्य सरकारने ले लिया था। चाहे नवाब वाजिद अली शाह किसीको सरकारके विरुद्ध न भड़काते हों, किसीसे नये कारतूसोंकी चर्चा न करते हों; पर वे स्वयं ही सरकारके विरुद्ध उत्तेजनाका एक प्रधान कारण थे। नवाबकी बदौलत जो हजारों लाखों आदमी सुख भोग रहे थे, उनके कारण जिन लाखोंको चैनसे रोटी मिलती थी, उन सबने देखा कि उनके कुँआके कारण भूत नवाब साहबको कलकत्तेके पास कैद कर दिया गया। वे परिवार और वे आदमी सिपाहियोंको बताते थे कि नवाबके साथ अंग्रेज़ नीच व्यवहार करते हैं, नवाबके साथ विश्वासघात किया गया है। सिपाहियोंने देखा कि सरकारने एक प्रधान राजाको गद्दीसे उतार दिया, अब वह नये कारतूस चलाकर सर्वसाधारणका धर्मनाश करना चाहती है। थोड़े दिन बाद सब एक हो जायगा। ईसाइयोंके राज्यमें सब ईसाई हो जायँगे। इस भावनासे सिपाही घबरा उठे, उनकी शान्ति जाती रही। निराशा और विषादकी मलीन छाया घोर रूप धारण करके उनके सामने घूमने लगी।

सरकारके विरुद्ध दल, देशमें पहले ही मौजूद थे, वे सिपाहियोंको और भी अधिक उत्तेजना देकर आगे बढ़ानेमें सहायता करते थे। कारतूसोंकी बातने सब काम पूरा कर दिया। गौ और सूअरकी चर्बीके बने कारतूस हिन्दू और मुसलमान सिपाहियोंको भड़कानेके लिये काफी थे।

जैसे धीरे धीरे सुलगनेवाली आग जरासा हवाका झोंका पाकर जल उठती है, उसी तरह कारतूसोंकी बातसे सर्वसाधारणके हृदयोंपर जो विद्वेष जमा वह भी फूटनेको ही था। लार्ड डलहौज़ी जिस अनिष्टका बीज बो गये थे वह हरा होकर पेड़ बन चुका था, अब उसपर फल आनेकी तैयारी हुई। एकके बाद एक स्वाधीन राज्यको सबने ब्रिटिश कम्पनीके राज्यमें मिलते देखा था। डलहौज़ीके इस कैसर राज्य लेनेसे सर्वसाधारण प्रजा असन्तुष्ट थी। भारत सदैव प्राचीनता और धर्मका भक्त रहा है। धार्मिक स्वाधीन राज्योंको अंग्रेज़ोंके हाथ जाते देखकर प्रजा प्रसन्न न थी। राज्यसे किसी प्रकारका सम्बन्ध रखनेवालोंको प्रत्यक्ष हानि पहुंची थी इसलिये वे असन्तुष्ट थे, जमींदार और किसान जमीनके नये बन्दोबस्तसे असन्तुष्ट थे, इससे, क्षोभ और दुःख से, प्रजा अंग्रेज़ी राज्यको कोसती थी। इसके बाद जब नये कारतूसोंकी चर्चा फैली, बाजार बाजार, गली गली और घर घरमें अंग्रेज़ोंके द्वारा धर्म भ्रष्ट होनेकी बातें होने लगीं तब प्रजासे शान्त न रहा गया। कारतूसोंके आन्दोलनसे उत्तेजना बढ़ी और इस उत्तेजनाने अंग्रेजोंके प्रति जो द्वेष और

घृणाका भाव भरा था उसे प्रगट कर दिया। जो आग हृदयकी तहके भीतर छिपी थी, वह इस आन्दोलनकी हवासे जलकर सर्वस्व नाश करने लगी।

दमदमेसे कुछ मील उत्तर, गंगाके किनारेपर, बारकपुर नामक एक और छावनी है। जब कलकत्तेमें भारतकी राजधानी थी कभी कभी गवर्नर जनरल बारकपुरमें आकर रहा करते थे। यह स्थान बड़ा रमणीक है गंगाके किनारे गवर्नर जनरलका भवन बना है। सन् १८५७ के प्रारम्भमें, बारकपुरमें, चार भारतीय पैदल सेनायें थीं। इन चारोंमेंसे दूसरी और चौंतीसवीं रेजिमेंटने काबुलकी लड़ाईमें विजय प्राप्त की थी। बाकी तेंतालीसवीं और सत्रहवीं रेजिमेंटोंमेंसे पहली समयपर आज्ञा न माननेके कारण तोड़ दी गई थी, उसके स्थानपर एक नया दस्ता तैयार किया गया था। चौथी सत्रह नम्बरकी सेना दूसरे सिक्ख संग्रा[illegible] वीरतासे लड़ी थी। ३४ नं० के सेनापति कर्नल ह्वीलर थे, यह दूसरी फौजसे बदल कर आये ही थे। ४३ नं० सेनाका भार कर्नल कनेडीपर था, यह भी नये ही थे। सत्रहवीं और दूसरे नम्बरकी सेनाओंके सेनापति अपनी अपनी सेनाओंमें बहुत समयसे काम करते चले आ रहे थे। छावनीके अफसर चार्ल्स ग्रांट थे। जान हेअर्स सैनिक विभागके सेनापति थे।

सेनापति हेअर्सने २८ जनवरीको एडजूटैंट जनरलके दफ्तरको लिखा,—"बारकपुरके सिपाही धीरे धीरे विरक्त होते जा रहे

हैं, धीरे धीरे उनके हृदयोंमें द्वेषभाव जमता जा रहा है। कुछ षड्यन्त्रकारियोंने, शायद कलकत्तेके ब्राह्मणोंने, उन्हें बहका दिया है कि तुम्हें जबरदस्ती ईसाई किया जायगा। सरकारने जो विधवाविवाहको जायज़ करार देनेका कानून बनाया है, इससे चिढ़कर, शायद, विधवाविवाहके विरोधियोंने अदूरदर्शी सिपाहियोंको बहकाया है कि तुम्हारी धार्मिक क्रियायें बलपूवक उठा दी जायंगी और तुम ईसाई किये जाओगे। इस प्रकार सरकारके विरुद्ध सिपाहियोंको जोश दिलाकर वे अपना उद्द`श्य सिद्ध होनेकी आशा करते हैं।" इस समय चर्बी मिले कारतूसोंकी बात चारों ओर फैल रही थी और बारकपुरके सिपाही भी आलोचना कर रहे थे। शंका और अविश्वासने सबके हृदय अशान्त कर दिये थे। बहुतोंने तो अपने आप ही विश्वास कर लिया था और बहुतोंने दूसरोंके कहनेपर विश्वास किया था कि गौ-सूअर-भक्षक अंग्रेज़ सबको अपवित्र करना चाहते हैं। पहले तो उनके देशको इन्होंने अपने अधिकारमें कर लिया और अब धर्म भी लेंना चाहते हैं।

सिपाही लोग अब अपनी द्वेषबुद्धि प्रगट करने लगे। जो हिंसा और क्रोध उनके हृदयोंमें जमता जा रहा था, वह प्रगट होने लगा। वे अंग्रेज़ोंपर आक्रमण करके उनके नाश करनेकी प्रतिज्ञायें करने लगे। दमदमेमें कारतूसोंकी बात प्रगट होनेके कुछ दिन बाद ही बारकपुरमें तारका स्टेशन जला दिया गया। यह अग्निलीला शीघ्र समाप्त न हुई। एक रातके बाद दूसरी

रात आने लगी, प्रति रात्रिको अंग्रेज़ोंके बंगलोंपर आग बरसाई जाने लगी और तीर भी पहुंचे। केवल बारकपुरमें ही यह अग्निकांड प्रगट न हुआ बल्कि बारकपुरसे बहुत दूर रानीगंजमें भी इसी प्रकार अग्निलीला होने लगी। यहां दूसरी रेजिमेंटकी एक शाखा रहती थी। इसके बाद प्रति रात्रिको सिपाहियोंकी सभा होने लगी। वक्ता लोग कठोर और उत्तेजक भाषामें अंग्रेज़ोंको अत्याचारी और अपवित्र सिद्ध करने लगे कि "सरकार सबका धर्म नाश करने, जातिभ्रष्ट करने और सबको ईसाई धर्ममें दीक्षित करनेके लिये जाल रच रही है" यही इन सभाओं-का विषय था। केवल सभाओंतक ही यह मामला न रहा। उनके हस्ताक्षरोंकी चिट्ठियां कलकत्ते और बारकपुरके डाक-खानोंसे भिन्न भिन्न फौजी छावनियोंको जाने लगीं। पर न तो सब सिपाही इन सभाओंमें शामिल ही होते थे और न सबने हस्ताक्षर ही किये थे। इतना ही ज्ञात हुआ है कि, रातमें कुछ सिपाही एकत्र होते और दूसरे सिपाहियोंको सरकारके विरुद्ध उपदेश देते। अन्य छावनीवालोंको उत्तेजित करनेके लिए पत्र लिखे जाते। इस प्रकार हर एक छावनी और सेनामें चर्बी मिले कारतूसोंकी बात पहुंची। हर एक सेनाके सिपाही इससे भयभीत, त्रस्त और उत्तेजित हुए।

बारकपुरसे सौ मील उत्तर, गंगाके किनारे, बहरामपुर स्थानमें एक छावनी है। दिल्लीके बादशाहोंके नाममात्र अधीन बंगालके नवाबोंके सुरम्य भवन यहां बने थे। इतिहास-प्रसिद्ध

मुर्शिदाबादके नवाव अनेक वेगमों, दास दासियों और परिवारों सहित अपने भवनमें आनन्द भोगते हुए समय विता रहे थे। लोग नवावको नवावीसे वंचित देखते और अंग्रेज़ोंके अत्याचारोंका वखान करते थे। वहरामपुरमें गोरी फौज न थी, आसपास भी किसी स्थानपर न थी। १६ नं० भारतीय पैदल सेना, एक रिसाला और थोड़ेसे गोलंदाज वहाँ रहते थे। यह सिपाही यदि एकाएक उत्तेजित हो उठते और लोग, नवावके नामसे, इनकी सहायता करते तो वड़ी विपत्तिका सामना करना पड़ता इसमें सन्देह नहीं। पर लोगोंपर कभी यह भयंकर भूत सवार न हुआ, उन्होंने राजद्रोहका परिचय भी न दिया।

जव सर्वसाधारणके हृदयोंमें असन्तोष जड़ पकड़ गया हो, साथ साथ हिंसाका भाव भी प्रगट हो गया हो, ऐसे अवसर-पर विना सावधानीके असन्तोष और हिंसाकी गति नहीं रोकी जा सकती। उस अवसरपर अधिकारियोंने जो एक नियम प्रचलित किया था उससे इस आन्दोलनको और भी अधिक सहायता मिली। पहले ३४ नं० सेनाके कुछ सिपाही कुछ घोड़ों-की रक्षाका भार देकर एक स्थानपर भेजे गये, इसके एक सप्ताह वाद फिर कुछ आदमी वहाँ और भेजे गये। यह सव वहरामपुर-तक गये, वहरामपुरके सिपाहियोंने जव उनका काम ले लिया तव वे वापिस अपनी छावनी गये। एक स्थानके असन्तुष्ट सिपा-हियोंको दूसरे स्थानके असन्तुष्ट सिपाहियोंसे मिलने और एक दूसरेको उत्तेजित करनेका यह अच्छा मौका मिला। वारकपुरकी

सब बातें बहरामपुरवालोंको और बहरामपुरकी सब बातें बारकपुरवालोंको मालूम हो गईं।

जब ३४ नं० सेनाके सिपाही बहरामपुर पहुंचे तब वहांके सिपाही उनसे बड़ी प्रसन्नता और आह्लादसे मिले। लखनऊमें यह दोनों सेनायें एक ही स्थानपर थीं, इसलिये वे एक दूसरेके पुराने मित्र थे। अपने पुराने मित्रोंको पाकर १९ नं० सेनाके सिपाही चर्बी मिले कारतूसोंकी कथा बड़े आग्रहसे पूछने लगे। यह बात नयी न थी, इससे दो सप्ताह पहले डाक या पत्रवाहकके पत्र द्वारा सिपाहियोंको समाचार मिल गया था। सब सिपाही इसकी आलोचनामें मत्त हो चुके थे। पर बहरामपुरके सिपाहियोंमें द्वेष न जगा था। वे जातिनाश और धर्मनाशके डरसे अभी अंग्रेज़ोंके प्राणोंके लोलुप न हुए थे, बल्कि सिपाहियोंने यह बात सेनापतिसे कही। सेनापतिने दृढ़ताके साथ कहा कि यह बात गलत है, यदि सिपाहियोंको सन्देह हो तो वे अपने कारतूसोंकी चर्बीकी परीक्षा कर सकते हैं। सेनापतिके इस आश्वासन और सान्त्वनासे १९ नं० सेनाके सिपाही शान्तिपूर्वक अपना कर्त्तव्यपालन करने लगे। पर जब ३४ नं० सेनाके सिपाही आकर इनसे मिले तब उन्होंने दृढ़ताके साथ कहा कि अंग्रेज़ोंने हमारे धर्मनाश करनेका पक्का इरादा कर लिया है। बहरामपुरके सिपाहियोंने गम्भीर आशंकाके साथ उनकी बातें सुनीं। उनका दृढ़ विश्वास हो गया कि यह बात सत्य है—और सर्वथा सत्य है। बारकपुर राजधानी कलकत्तेके निकट है, राजधानीके

निकटके सिपाहियोंको सरकारके विचारोंका अच्छी तरह पता लग सकता है, इसलिये वारकपुरके सिपाहियोंकी बातें अटल हैं, सत्य हैं; यह विश्वास वहरामपुरके सिपाहियोंका हो गया। उनकी धारणा हो गई कि सचमुच पवित्र धर्म और जातिका नाश करनेके लिये फिरंगियोंने चर्वी मिलाकर कारतूस बनाये हैं और वे उन्हें दांतोंसे काटनेको कहते हैं। इस प्रकार वहरामपुरके सिपाही भी इस आतंक और चिन्तासे पृथक् न रह सके। दुश्चिन्ताके अनन्त प्रवाहमें उनके हृदय भी आलोड़ित हो उठे, शान्ति नष्ट हो गई, अशान्ति और अविश्वासकी लहरें उठने लगीं। वे सरकार और अंग्रेज़ जातिको अपना दुश्मन समझने लगे और दुश्मनोंसे, अपने धर्मकी रक्षाके लिये प्रतिज्ञाबद्ध हुए।

जिस दिन वारकपुरके सिपाही पहुंचे उसी दिन १६ नं० सेनामें आज्ञा निकली कि कल उन्हें कवायद करनी होगी। जिस दिन आज्ञा दी गई उस दिन शान्ति रही। सब शान्त थे, पर शामके वक्त सेनापति मिचलके सहायकोंमें बड़ी विरक्ति देखी गई। सवेरे कवायदके लिये उन्हें जो बंदूककी टोपियां दी गईं उन्हें लेनेसे सिपाहियोंने इनकार किया। उनका विश्वास हो गया था कि कारतूस अपवित्र चर्वीसे बनाये गये हैं। इस स्थान-पर यह कहना आवश्यक है कि कवायदसे पहले सवेरे कारतूस बांटनेकी रीति न थी पर व्यवहारके लिये जो कारतूस मेगजीन-से बाहर निकाले गये थे, उन्हें किसी किसी सिपाहीने देख लिया था। जिन कागजोंसे यह कारतूस बनाये गये थे, उन्हें एक एक

देखनेसे दो प्रकारके मालूम होते थे, सिपाहियोंने समझ लिया कि कारतूस दो तरहके हैं। यह वे पहले ही सुन चुके थे कि कलकत्तेसे नये कारतूस आये हैं। इन्हें देखकर वे समझ गये कि बस अब धर्मनाशमें कुछ देर नहीं है। फिरंगी शीघ्र ही उनकी स्वर्गकी राहमें पत्थर लगाने वाले हैं, शीघ्र ही वे अनन्त नरकके लिये प्रस्तुत किये जायंगे।

अपने सैनिकोंके अविश्वासकी बात सुनकर सेनापति मिचल शीघ्र ही सवार होकर सेनामें आये और गम्भीरताके साथ अफसरोंको उन्होंने अपने निकट बुलाया। यदि सेनापति धैर्यके साथ, सरकारकी न्यायपरायणताके नामपर, उन्हें समझाते तो अफसर शान्त हो जाते और साथ साथ सिपाही भी समझ जाते; पर हृदयकी उत्तेजना और क्रोधके धारण सेनापति अपने आपको शान्त न रख सके, उन्होंने अफसरोंको डराया और धमकाया। कर्नल मिचलने क्रोधके साथ कहा कि, यह कारतूस एक सालके बने हुए हैं, डरकी कोई बात नहीं है, इसपर भी अगर इनकार होगा तो तमाम फौज बरमा या चीन भेज दी जायगी जहाँ सिवाय मौतके और कोई गति नहीं। जो सरकारकी आज्ञा न मानेंगे उन्हें कठोर दंड दिया जायगा। सेनापतिकी इस कठोर बातसे अफसरोंका सन्देह दूर न हुआ। उन्होंने अपने कर्नलके मुँहसे सब बातें स्पष्ट सुननेकी आशा की थी, किन्तु वह पूर्ण न हुई। वे सेनापतिकी इस बातपर विश्वास न कर सके, बल्कि इससे उन्हें अफवाह सच मालूम हुई। उन्हें विश्वास हो गया

कि जरूर कारतूस अपवित्र वस्तुके बने हैं, अन्यथा सेनापति क्रोध-से न कहते। इसके बाद अफसरोंने जो आवेदनपत्र पेश किया उसमें भी इसी आशंकाका वर्णन था। सेनापति कर्नल मिचलने जिस क्रोधके भावसे आज्ञा दी उससे हमारा दृढ़ विश्वास हो गया कि जरूर कारतूस चर्बी मिलाकर बनाये गये हैं, अन्यथा उन्हें इतना क्रोध न आता। सेनापतिको क्रुद्ध देखकर अफसरोंका यही भाव हो गया था, वे अपने पवित्र धर्मकी रक्षाके लिये दृढ़प्रतिज्ञ हुए हैं।

सेनापति मिचल अपनी क्रोधभरी भाषामें व्याख्यान देकर चुप हुए, घोर सन्देहमें पड़े हुए अफसर चुपचाप अपने अपने स्थानको लौटे। सन्ध्या बीत चुकी थी। रात्रिका कोमल अन्धकार धीरे धीरे चारों ओर फैल रहा था। सेनापति मिच-लका हृदय एक अवश्यम्भाविनी विपत्ति देखकर कांप रहा था, वे हवाके साथ एक भयानक विपत्तिको खेलते देख रहे थे। वे क्या करें, १९ नं० सेनामें सब भारतवासी हैं, पास कोई गोरी सेना भी नहीं, पैदल सेनाके अतिरिक्त थोड़ेसे सवार और गोलंदाज भी छावनीमें थे। यह नहीं कहा जा सकता कि सेना-पतिने सवार और गोलन्दाजोंसे पैदल सेनाको दबानेका विचार किया, बल्कि सवारों और गोलन्दाजोंसे पैदल सेनाको डर दिख-लानेका उनका विचार था। उन्होंने डर दिखाकर सेनाको बाध्य करना चाहा और इसी विचारसे सवारों तथा गोलन्दाजोंको भी सवेरे कवायदके अवसरपर उपस्थित होनेकी आज्ञा दी।

आज्ञा देकर रातको दस बजे सेनापति लेटे पर नींद न आई। एकके बाद दूसरी चिन्ता उनके हृदयमें उठने लगी। वे चिन्ताके अथाह समुद्रमें तैरने लगे। इसी समय छावनीकी ओरसे उन्हें बाजेके साथ बहुतसे आदमियोंका कोलाहल सुनाई दिया। आधीरातके शोरने सेनापति मिचलके हृदयमें शंका पैदा कर दी। वे समझ गये कि सिपाही एकत्र होकर शीघ्र ही अंग्रेज़ अफसरोंपर विपत्ति लानेवाले हैं। जब भारतीय अफसर लोग मिचलके पाससे चले गये तब क्रमशः सिपाहियों-को उत्तेजना अधिक बढ़ गई। इसके बाद जब उन्होंने सुना कि सवारों और गोलन्दाजोंको भी सवेरेकी कवायदमें हाजिर होनेका हुक्म हुआ है, तब उनकी आशंका और भी अधिक बढ़ गई। वे समझे कि अपवित्र कारतूस जबर्दस्ती उनके हाथमें दिये जायँगे और सवार तथा गोलन्दाज उन्हें दबानेके लिये तैयार रहेंगे। दुःख, क्षोभ और क्रोधसे वे अपने धर्मकी रक्षाके लिये तैयार हुए। किस प्रकार दलबद्ध होकर वे एकत्र हुए, इस बातका पता भी नहीं चला। विपत्तिके अवसरकी ऐसी सूक्ष्म बातें मालूम होनी कठिन हैं। जब सबमें उत्तेजना फैली हो उस समय उन्हें एकत्र कर लेना साधारण बात होती है। बहरामपुरके सब सिपाही अपनी धर्मरक्षाके विचारसे उन्मत्त थे, सब अस्थिर और अनियमित हो गये थे। इनमेंसे कुछ अपनी अपनी बन्दूकें भरनेको कहने लगे, कुछ पुकारने लगे गोली मारो और कुछ अपवित्र कारतूसोंके मेगजीनकी ओर बढ़े। आधीरातके समय बहरामपुरकी छावनी तूफानका घर बन गई।

शोर सुनते ही सेनापति मिचल खड़े हो गये और झट वर्दी पहनकर बन्दूक लिये हुए छावनीकी ओर चले। सेनापतिकी समझमें यह बात न आई कि सिपाही बाकायदा सरकारके खिलाफ खड़े हुए हैं या योंही जोशके कारण बेकायदे उठ खड़े हुए हैं। खैर जो कुछ हो, उन्होंने सवारसेनाको फौरन तैयार होनेकी आज्ञा दी। गोलन्दाजोंको अपनी तोपें ठीक मौकेपर लगानेकी आज्ञा दी। सेनापतिकी आज्ञा सुनते ही सवार-सेना तैयार होकर घोड़ोंपर बैठी। अन्धेरेमें गोलन्दाज अपनी तोपें उन्मत्त सिपाहियोंकी ओर ले जाने लगे। सिपाहियोंने दूरसे तोपोंके पहियोंकी आवाज सुनी और मशालोंके प्रकाशमें रिसालेको आते देखा। इससे उनका हृदय और भी अधिक कांपने लगा, वे शङ्कित होकर अपने स्थानपर ज्योंके त्यों खड़े रहे, कोई न भागा। बहुतोंके हाथमें गोलीभरी बन्दूकें थीं पर किसीने उन्हें न दागा।

आधीरात बीत चुकी थी, घना अन्धेरा चारों ओर व्याप्त हो रहा था। सेनापति मिचल यूरोपियन अफसरोंको उठाकर तोपें लिये परेटके मैदानमें आये। उत्तेजित सिपाहियोंके हाथमें बन्दूकें थीं पर वे बाकायदा वर्दी पहने हुए न थे। इस समय भी सेनापति यदि शान्तिसे काम लेते, लोगोंको धैर्यपूर्वक समझाते, तो वे समझ जाते। पर सेनापति इस बातको न समझे कि धर्मनाश होनेके विचारसे सिपाही उत्तेजित हुए हैं, उन्होंने केवल कठोरतासे इस अशान्तिको दूर करनेका निश्चय

किया। उनकी आज्ञासे तोपें भरी गईं और सवार तोपोंके पास खड़े रहे। फिर उन्होंने भारतीय अफसरोंको सामने आनेकी आज्ञा दी। अफसर आकर फिर सेनापतिके सामने खड़े रहे, फिर वही क्रोधपूर्ण और उत्तेजनामय बातें सुनने लगे। उस समय सेनापति मिचलने जो बातें कही थीं वे कहीं लिखी नहीं गईं, इसलिए उनके शब्द उद्धृत नहीं किये जा सकते, पर उन्होंने कड़े शब्दोंमें जो वक्तृता दी थी उसका सारांश यही था कि, बिगड़े हुए सब सिपाही तोपोंसे उड़ा दिये जायँगे, इसके लिये वे अपने आपको भी निछावर करनेके लिये तैयार हैं। भारतीय अफसरोंने धैर्यपूर्वक सेनापतिकी बातें सुनीं, धैर्यपूर्वक विनयके साथ कहा कि, यह अवसर क्रोध और उत्तेजनाका नहीं है। सिपाही अनजान और संदिग्ध हैं। वे केवल अपना धर्मनाश होनेके विचारसे घबरा उठे हैं। वे उत्तेजनासे उन्मत्त और कार्यकारणसे अनभिज्ञ हैं। उनका विश्वास है कि सब तोपें और रिसाला उनका नाश करनेके लिये एकत्र किया गया है। यदि सेनापति तोपख़ाने और रिसालेको जानेकी आज्ञा दें तो सिपाही हथियार रख देंगे।

भारतीय अफसर चुप हुए। चुपचाप वे सेनापतिकी आज्ञाकी प्रतीक्षा करने लगे। कर्नल मिचल एकाएक कर्त्तव्यका निश्चय न कर सके। उन्होंने समझा कि घोर सन्देहके कारण सिपाही पागल हो उठे हैं, सरकारको हानि पहुँचानेके विचारसे नहीं। ऐसी दशामें यदि तोपख़ाने और रिसालेको एकाएक

सामने न लाकर केवल वे स्वयं आते और सिपाहियोंको शान्तिसे अधीन करनेका प्रयत्न करते तो कहीं अधिक बुद्धिमत्ताका कार्य होता। यदि उत्तेजित सिपाही बातोंसे शान्त न होते तो अलग खड़े रिसालेको वे तुरन्त सामने ले आते। पर ऐसा न करके वे भरी तोपें और रिसाला लेकर सिपाहियोंके सामने खड़े हो गये। इस दशामें जबतक सिपाही अधीनता स्वीकार न कर लें तबतक उन्हें जानेकी आज्ञा नहीं दी जा सकती। इस दुविधामें पड़नेके कारण एकाएक सेनापति कर्त्तव्यका निश्चय न कर सके। अन्तमें उन्होंने भारतीय अफसरोंको आज्ञा दी कि इस समय तोपखाने और रिसालेको वापिस किया जाता है, पर सवेरेकी कवायदमें सबको उपस्थित होना होगा। अफसरोंने फिर नम्रतापूर्वक कहा कि, इस तरह करनेसे सिपाही न तो शान्त होंगे और न उनकी शङ्का ही दूर होगी। कवायदके समय तोपख़ाने और रिसालेको अपने सामने देखकर वे फिर शंकित होंगे, इसलिये इस समय तोपख़ाने और रिसालेको वापिस जानेकी आज्ञा देकर सुबहकी कवायद बन्द रखनेकी आज्ञा देना भी अधिक उचित होगा। सेनापतिने इसमें आपत्ति न की। आज्ञा पाकर तोपख़ाना और रिसाला अपने अपने स्थानको गया, सिपाही कुछ शान्त हुए।

दूसरे दिन सवेरे १९ नं० सेना परेटके मैदानमें एकत्र हुई। इस समय सैनिकोंमें न उत्तेजना थी और न उद्वेगका भाव ही था। किसी प्रकारकी आपत्तिके बिना यथानियम उन्होंने सब

आज्ञाओंका पालन किया। एकाएक उत्तेजित हो उठनेके कारण वे अपने आप लज्जित हुए थे, पर अधिकारी शान्त न थे, कर्त्तव्यपालन करते देखकर भी वे निश्चिन्त न रहे। इस बातकी जांच शुरू हुई कि किन कारणोंसे सेनामें उत्तेजना फैली थी। कई दिन तक लगातार भारतीय और यूरोपीय अफसरोंकी गवाहियाँ हुईं। इसके बाद सिपाहियोंने किसी प्रकारकी अधीरताके लक्षण न दिखाये, बाकायदा वे सब आज्ञाओंका पालन करते थे। मुर्शिदाबादके नवाब नाजिम इस समय सर्वसाधारणमें शान्ति बनाये रखनेका बहुत प्रयास कर रहे थे। कर्नल जार्ज मेकग्रेगर नामक सैनिकसे सलाह करके उन्होंने बहुत काम किया। नवाबका प्रयास सफल हुआ। मुर्शिदाबादके किसी शासकने किसी प्रकारकी गड़बड़ न की। सब शान्त रहे।

जो सेनाके अफसर होते हैं, सैकड़ों हजारों वीर जिनकी आज्ञामें रहते हैं, उन्हें सदा धैर्य और ज्ञानसे काम लेना चाहिए, नाजुक मौकोंपर घबराकर बिना विचारे काम कर डालनेसे परिणाम बड़ा भयानक हो जाता है। जो वीरत्वसे उन्नत, साहससे अचल और कर्त्तव्यपालनमें सावधान हैं वे अपने अधिनायकको प्रकृत वीर, धीर, गम्भीर और योग्य देखना चाहते हैं। पर सेनापति मिचल १९ नं० सेनाके निकट अपने धैर्य और गाम्भीर्यका परिचय न दे सके। सेनापतिके दोषसे बहुत बार अनेक हानिकर कार्योंका सूत्रपात हो जाता है। इस अवसरपर सेना-

पति मिचलके दोषसे ऐसी ही हानिका सूत्रपात हुआ। यदि मिचलकी उग्रता और क्रोध न दिखाते तो शायद सिपाही उत्तेजित न होते तथा भारतीय अफसर भी सिपाहियोंको समझाते।



दूसरा अध्याय

सरकारके समयोचित कार्योंमें विलम्बके कारण—भिन्न भिन्न शासन विभागोंकी कठिनाइयां—चर्बीवाले कारतूसोंकी जांच—वारकपुरके सिपाहियोंका असन्तोष वढ़ना—सिपाही मंगल पांडेय—३४ नं० सेनामें गड़वड़—१९ नं० सेनाके हथियार लेना।

एक भारतीय साधारण कहावत है कि "विपत्ति अकेली नहीं आती।" वहुत अंशोंमें यह सत्य है। संसारके इतिहासमें, हरएक शासन प्रणालीमें, देखा जाता है कि जव जव वड़े वड़े अनर्थ हुए हैं, तव तव उन देशोंकी सरकारोंको उनके होनेका स्वप्नमें भी विचार न था। धीरे धीरे विपत्तिके वोज महावृक्ष वन जाते हैं, शासकोंको उनका ज्ञान ही नहीं होता या कुछ होता भी है तो वे उसे नाचीज समझकर उपेक्षा करते हैं, अन्तमें वही शासनके चक्रकी गति रोक कर खड़ा हो जाता है। जव इस प्रकार भारतव्यापी आन्दोलन हो रहा था, चारों ओर अशान्तिकी लहरें लहरा रही थीं, हरएक हृदयमें अज्ञात आशंका विचर रही थी उस समय भी सरकार वेखवर थी। भारतवर्ष वड़ा भारी देश है, उसमें सैकड़ों जातियां, हजारों धर्म, सेकड़ों भाषायें हैं, ऐसी दशामें विदेशी सरकार भारतीयोंके हृदयकी वात कैसे समझ सकती थी। साथ ही

सरकारकी इच्छा और उसके कामोंको भारतवासी नहीं समझते थे। राजा और प्रजा दोनों अन्धेरेमें एक दूसरेका मुंह देख रहे थे, कोई किसीका भाव न समझ सकता था। सिविल कर्मचारियोंका सम्बन्ध सर्वसाधारणसे था, उन्हें जब इस विपत्तिका आभास मिला तब उन्होंने सरकारको सचेत किया। पर सरकार तक पहुंचनेमें इस समाचारको देर लगी, इसी कारण खबर मिलने तक रोग असाध्य हो गया।

भारतके सैनिक कार्योंका सम्पूर्ण भार फौजी लाटपर है; पर शासनका सम्पूर्ण अधिकार गवर्नर जनरलको होनेके कारण सैनिक विभागका काम भी उसे ही व्यवस्थित रखना पड़ता है। अपनी जिम्मेदारी समझकर गवर्नर जनरल फौजी लाटपर उसका भार देते हैं। इन दोनों प्रधान स्वामियोंके एक स्थानपर रहनेसे किसी बातके निर्णयमें अधिक समय नहीं लगता। पर बहुत बार यह होता है कि गवर्नर जनरल भारतके एक भागमें होते हैं और फौजी लाट दूसरे भागमें। सन् १८५७ के शुरूमें ही यह बात हुई थी। लार्ड कैनिंग कलकत्तेमें थे और फौजी लाट उत्तरपश्चिम प्रदेशमें। सेनापति बंगालमें थे और एडजूटेंट जनरल मेरठकी छावनीमें। इन सबका कर्त्तव्य था कि चर्बीवाले कारतूसोंके विषयमें जांच करते। पर न तो सब एक स्थानपर थे और न सबके दफ्तर ही एक जगह थे। इसलिये ठीक समयपर कुछ भी न हुआ और विपत्ति सामने आ खड़ी हुई।

राज्यके प्रधान प्रधान कर्मचारियोंके भिन्न २ रहनेके कारण ही

विलम्ब नहीं हुआ, वल्कि शासन विभागोंकी विस्तृत कार्यप्रणाली भी इस देरका कारण बनी। हरएक विभागमें अधिकारप्राप्त बड़े बड़े शासक नियत हैं। जैसे किसी ऊंचे महलपर चढ़नेके लिये एकके बाद एक सीढ़ीपर पैर रखना पड़ता है, उसी प्रकार किसी बातके लिये सरकारके एक विभागसे दूसरे विभागमें और एक अधिकारीसे दूसरे अधिकारीके पास उसकी कार्यवाही जाती है। किसी जिम्मेदारीकी बातके लिये नीचेवाला अधिकारी अपनेसे ऊपरवाले अधिकारीको चेतावनी दे देगा, ऊपरवाला सब मामला अपनेसे ऊपरवालेके सामने रक्खेगा। इस प्रकार अन्तमें प्रधान सरकारके सामने बात पेश होगी। २२ जनवरीको ७ नं० सेनाके सेनापति लेफ्टिनेंट ब्राइटने, दमदमेसे, चर्बीवाले कारतूसोंसे सिपाहियोंकी घृणा और उत्तेजनाकी बात अपनेसे ऊपरवाले सेनाध्यक्षको लिखी। मेजर वोन्टनने दूसरे दिन यह पत्र दमदमेके प्रधान सेनापतिके सामने रक्खा। इस सेनापतिने बारकपुरके सेनापतिको लिखा। कर्नल हेअर्सने यह बात कलकत्ते-के एडजूटैंट जनरलको लिखी। बात वहुत आवश्यक थी और शीघ्र योग्य प्रवन्ध होना चाहिये था। कर्नल हेअर्सने लिखा था कि, यथासम्भव शीघ्र यह विषय भारतसरकारके सामने रक्खा जाय तथा यह भी लिखा था कि सिपाहियोंको अपने अपने कारतूस तेलसे नरम करनेकी आज्ञा दी जाय। कर्नल हेअर्सका पत्र २४ जनवरीको एडजूटैंटके दफ्तरमें पहुंचा। उस दिन समय न मिलनेके कारण कुछ विचार न हो सका। दूसरे दिन रविवार

था इसलिये हेअर्सका "बहुत आवश्यक" पत्र योंही पड़ा रहा। २६ जनवरीको एडजूटैंट जनरलने कर्नल हेअर्सका पत्र भारत-गवर्नमेंटके सेक्रेटरीके पास भेजा। दूसरे दिन सरकारने कर्नल हेअर्सके प्रस्तावका अनुमोदन करके एडजूटैंटको आज्ञा दी। २८ जनवरीको सरकारकी आज्ञा हेअर्सके पास पहुंची। पत्र पाकर सेनापतिने बारकपुरके सब सिपाहियोंको सरकारकी आज्ञा सुननेका हुक्म दिया, पर अधिक देर हो गई थी। उससे पहले दिन, कवायदके समय, एक भारतीय अफसरने सेनापतिसे पूछा था कि कारतूसोंके विषयमें सरकारकी आज्ञा आई या नहीं। पर उस दिन तक कोई आज्ञा न आई थी इसलिये कहा गया कि कोई आज्ञा नहीं आई। यदि सेनापति और सरकारके बीचमें एडजूटैंटका दफ्तर न होता तो सेनापतिको चार दिन पहले सरकारकी आज्ञा मिल जाती। जिस समय दफ्तरोंके कागजी घोड़े दौड़ रहे थे उस समय लोग सरकारके विरोधमें भयानक षड्यन्त्र रच रहे थे।

यह भयानक आग बंगाल छोड़कर पश्चिमोत्तर देश आगरा व अवधमें भी जा लगी। पहले वह किसीको भी भयानक न दिखाई दी, धीरे धीरे अलक्षित रूपसे फैलती गई, सरकारके विरुद्ध लोगोंको उत्तेजित करती रही। सरकारने इस विषयको साधारण समझा था; उसका विचार था कि मामूली तौरसे सान्त्वना दे देनेसे सिपाही शान्त हो जायंगे। उसे यह विचार ही न था कि यह साधारण आन्दोलन एक दिन सरकारको उलट पुलट

देगा। सरकार चाहे अनजान थी, किन्तु आन्दोलन धीरे धीरे शक्तिशाली हो रहा था, वह भयानकसे भी भयानक बनता जा रहा था। लार्ड केनिंगको गवर्नर जनरल बने थोड़े ही दिन हुए थे, वे सब महकमोंके कामोंको पूरी तरहसे जांच न सके थे, उन्हें अनेक विषयोंमें अपने सेक्रेटरियोंपर निर्भर रहना पड़ता था। सरकारके फौजी सेक्रेटरी इस विषयके जिम्मेदार थे। किसी तरहकी गड़बड़ होनेपर गवर्नर जनरलको नेक सलाह देना भी उन्हींका कर्त्तव्य था। कर्नल रिचार्ड वार्च सरकारके फौजी सेक्रेटरी थे। इनके चरित्र और कर्त्तव्यनिष्ठापर सबकी श्रद्धा थी। कर्नल वार्चने जब सुना कि दमदमेमें सिपाही असन्तुष्ट हैं, तब उसी क्षण वे जांचके लिये दमदमे पहुंचे।

दमदमेमें पहुंच कर कर्नल वार्चने सुना कि यद्यपि चर्वी मिले कारतूस बने हैं पर वे दमदमे या प्रेसीडेंसीकी दूसरी छावनियोंमें एक भी सिपाहीको नहीं दिये गये। अस्तु, कर्नल वार्च सिपाहियोंका जोश ठंढा करनेका यत्न करने लगे। वे समझ गये कि दमदमेमें जो हुआ है, वही दूसरे स्थानोंपर भी हो सकता है। जहां जहां नयी रायफलकी शिक्षा देनेका प्रबन्ध किया गया है, उन सब स्थानोंपर कारतूसोंके कारण सिपाही उत्तेजित हो सकते हैं इसलिये जहां तक हो शीघ्र इस उत्तेजनाकी शान्ति होनी चाहिए। यह निश्चय करके कर्नल वार्च गवर्नर जनरलसे मिले और शीघ्र सिपाहियोंको शान्त करनेके उपाय प्रयोग करनेकी आज्ञा मांगी। आज्ञा मिल गई, उसी समय

घोषणा हुई कि दमदमे और मेरठमें किसी तरहकी चर्बीसे बने कारतूस सिपाहियोंको न दिये जायंगे। चिकनाईके लिये, जिस तरहका तेल चाहें उस तरहका सिपाही काममें ला सकते हैं। अम्बाले और स्यालकोटकी छावनियोंमें भी यही आज्ञा प्रचारित हुई। फौजी लाटको भी इसमें किसी तरहकी आपत्ति न थी। किन्तु मेरठ छावनीसे अधिकारियोंने इसका विरोध करके लिखा कि, कारतूसोंके साथ चर्बीका प्रयोग सिपाही पिछले कई बरसोंसे कर रहे हैं, कारतूसोंमें बकरेकी चर्बी दी जाती है। कलकत्तेके फौजी अधिकारियोंने इसपर कोई आपत्ति न की। उन्होंने लिखा कि, यदि सिपाही कारतूसोंके साथ बकरेकी चर्बी या मोम प्रयोग करते हैं तो वह दी जाय।

यह बात सत्य थी कि कलकत्तेके किले और मेरठमें जो कारतूस भेजे गये थे वे अपवित्र चर्बीसे बने थे, तथा सन् १८५६ के अक्तूबर मासमें स्यालकोट और अम्बालेकी छावनियोंमें भी यह कारतूस गये थे, पर सिपाहियोंको इस्तेमालके लिये नहीं दिये गये थे। उस समय तक सिपाही नई रायफलें लेकर कवायद सीख रहे थे, कारतूस भरकर चलाना उन्हें नहीं सिखाया गया था। कई सप्ताह तक केवल बंदूक लेकर सिपाही सीखते रहे, जब कारतूसोंकी जरूरत हुई तब तेल या मोमका व्यवहार करके वे कारतूस चलाने लगे।

इससे भी सिपाहियोंको धैर्य न हुआ। जिस गम्भीर आतंकसे वे अधीर हो उठे थे, वह दूर न हुआ। एक छाव-

नीसे दूसरी छावनी तक जो शोर मचा था उससे सब सिपाही अन्धकारमे थे। अधिकारियोंने समझा था कि चर्बीसे बने कारतूसोंको दांतसे काटकर बंदूकमें भरनेसे ही सिपाही नाराज हैं, अपवित्र चर्बी मुँहमें लगनेसे ही धर्मका नाश होता है, इसीलिये मेरठमें मेजर वोटनने आज्ञा दी कि सिपाही कारतूसोंको दांतसे न काटकर हाथसे काटें, पर सिपाही इससे भी सन्तुष्ट न हुए। वे तो चर्बीके स्पर्शको भी अपवित्र मानते थे। दूसरे कारतूस दांतसे जल्दी कट सकते हैं, हाथसे नहीं। सिपाहियोंको कुछ दिन अभ्यास करानेसे दांतसे काटनेकी आदत भी हो गयी थी, इसी कारण वे असन्तुष्ट ही रहे।

सन् १८५७के प्रारम्भमें, सेनापति हेअर्सने बारकपुरसे लिखा कि—"कुछ दिनसे मैं यहाँके सिपाहियोंके हार्दिक भाव देखता आ रहा हूं, वे कुछ भड़कानेवाले लोगोंकी बातोंसे अधीर हो उठे हैं। इन भड़कानेवाले लोगोंने सिपाहियोंको यह विश्वास करा दिया है कि सरकार तुम्हें शीघ्र ही ईसाई बनावेगी।" सेनापतिको यह बात असत्य न थी। ज्यों ज्यों दिन बीतते थे त्यों त्यों सिपाही अधिक असन्तुष्ट होते जाते थे। नित्य नई अशान्ति और नित्य नया असन्तोष प्रगट होता था। बारकपुरके सब सिपाही इसी प्रकारकी आशंकासे त्रस्त थे। फौजी अफसर समझाने लगे कि सरकार तुम्हारे धर्ममें किसी तरहका हस्तक्षेप नहीं करना चाहती, तुम्हें किसी तरहके चर्बीवाले कारतूस

न दिये जायंगे। वे जैसा चाहें वैसा तेल या मोम काममें लावें। पर सिपाही ऐसे असन्तुष्ट हो उठे थे कि वे सेनापतिकी बातसे सन्तुष्ट ही न होते थे। वे सन्देह करने लगे कि कारतूसोंका कागज अपवित्र चर्बीसे बनाया गया है। इन कारतूसोंका कागज ऊपरसे चिकना था इसलिये सिपाहियोंकी समझमें यह बात जल्दी आगई। इसके बाद जब इस कागजको आगमें जला कर देखा तब उसमें चटचट आवाज आई और चर्बी जलनेके समान दुर्गन्ध भी आई इसलिये सिपाहियोंको अपनी जाति और धर्मके नाशका विचार और भी अधिक हो गया।

सेनापति हेअर्स सिपाहियोंको सन्तुष्ट करनेमें लगे थे, सिपाहियोंके साथ उनकी समवेदना थी, वे उनका हार्दिक भाव समझते थे। उन्होंने देखा कि जाति और धर्मनाशकी आशंकासे वे ज्ञानशून्य हो गये हैं। हिन्दू और मुसलमान दोनोंकी एक ही दशा है। ऐसे अवसरपर कठोर दंडका कुछ भी असर नहीं हो सकता, प्रेमसे उन्हें समझाना उचित है। इसी विचारसे सेनापति हेअर्सने कवायदके समय हिन्दुस्तानी भाषामें सिपाहियोंको सम्बोधन करके कहा कि तुम्हारा डर बिना कारण है। जिस सरकारका तुम काम कर रहे हो और जिन अंग्रेज़ अफसरोंके मातहत हो वे नहीं चाहते कि तुम्हारे धर्ममें किसी तरहका हस्तक्षेप हो। कोई तुम्हें ईसाई बनाना नहीं चाहता अंग्रेज़ बिना जाने किसीको अपनेमें नहीं लेते। जो ईसाई ग्रन्थोंको पढ़ और समझ सकते हैं वे अगर अपनी मर्ज़ीसे ईसाई बनना चाहें

तो वन सकते हैं। पर ईसाई धर्ममें दीक्षित होनेसे पहले उनसे अच्छी तरह पूछ लिया जाता है कि वे धर्मको समझ गये या नहीं। धार्मिक शिक्षा और धार्मिक विश्वासके विना कोई ईसाई नहीं वन सकता। धैर्यके साथ कहकर सेनापतिने सिपाहियोंसे पूछा कि वे इस बातको समझे या नहीं? सिपाहियोंने सिर हिला कर सम्मति दी। सेनापतिने समझा कि सिपाही शान्त हो गये, आशंका दूर हो गई। पर व्याख्यानकी शक्ति अधिक दिन सिपाहियोंको शान्त न रख सकी। वारकपुरकी जिस सेनाने सेनापति हेअर्सका व्याख्यान सुना था, वह थोड़े दिन बाद ही फिर धर्मनाशकी आशंका करने लगी। दिनके वाद दिन वीतने लगे, पर सरकारकी ओरसे इसका कोई निश्चित उपाय न हुआ। वारकपुरके सिपाही चुपचाप अपना कर्त्तव्यपालन करने लगे, पर जो शान्ति एक वार उनके हाथसे निकल गई वह वापिस न आई। वे कहने लगे कि पतनका समय आ गया। वहुतसे गोरे सिपाही और गोरा तोपखाना उनके सामने खड़ा किया जायगा।

उनका यह विचार अतिरंजित हो सकता है, पर असत्य न था। जब वारकपुरके सिपाहियोंके असन्तोषकी खवर कलकत्ते पहुंची तव गवर्नर जनरलको भी विपत्तिका ज्ञान हुआ। भारतीय आकाशके एक कोनेपर एक छोटेसे मेघका उदय हुआ था। इस मेघकी कालिमा धीरे धीरे वढ़ती और घनघोर होती जाती थी। जब भारतका सैनिकदल सरकारका विरोधी हुआ है, तव सरकारपर निश्चय आपत्ति आवेगी यह विचार अधिकारियोंके

दिमागोंमें घूमने लगा था। उस समय बंगालमें अधिक गोरी सेना न थी। कलकत्ते और दानापुरमें केवल एक यूरोपीय सेना थी। बहरामपुरके सिपाहियोंके हंगामेके एक सप्ताह बाद कर्नल मिचलको आज्ञा हुई थी कि वे विद्रोही सिपाहियोंके हथियार लेनेके लिये उन्हें बारकपुर लावें। रंगूनकी गोरी फौज लानेके लिये कलकत्तेसे एक जहाज भेजा गया था। पर बारकपुरवालोंको इसकी खबर भी न थी, यहां तक कि सेनापति हेअर्सको भी इसका ज्ञान न था। सिपाहियोंकी बातोंपर उन्होंने कान न दिया, उनका विचार था कि सिपाही आजकल हरएक बातको बढ़ाकर कहनेके आदी हो गये हैं। पर अन्तमें उनकी मोहनिद्रा टूटी। उन्हें मालूम हुआ कि उनकी अपेक्षा सिपाहियोंको अधिक मालूम है। रंगूनसे यूरोपीय सेना कलकत्ते आ पहुंची, यूरोपियनोंको बड़ी प्रसन्नता हुई।

सिपाहियोंके समान सरकार भी चिन्ताग्रस्त थी। सिपाहियोंकी घृणा, सिपाहियोंका क्रोध, और इससे भी बढ़कर उनका आज्ञोल्लंघन देखकर सरकार सन्देहमें पड़ गई। बिलकुल गुप्त रूपसे सरकार अपनी रक्षाका प्रबन्ध कर रही थी, बड़े बड़े फौजी अफसरोंको भी यह बातें न बताई जाती थीं, पर न मालूम सिपाहियोंको इनकी खबर कहांसे लग जाती थी। हरएक छावनीमें आन्दोलन हो रहा था, सरकारकी इस सावधानीपर सिपाही और भी अधिक शङ्कित हो उठे। बारकपुरके सिपाही ऊपरसे शान्त थे, पर भीतरसे वे धर्मरक्षाके लिये मरनेको भी

तैयार हो चुके थे। धीरे धीरे सिपाहियोंमें यह छूतकी बीमारी बहुत वेगसे फैलने लगी। बारकपुरकी तरह कलकत्तेकी भारतीय सेना भी धर्मरक्षाके लिये तैयार हो गई। गवर्नर जनरलने प्रधान सेनापतिको १६ मार्चको लिखा—"४३ नं० सेनाने २ नं० सेनाके हाथका छुआ भोजन नहीं किया; कारण उसने चर्बीवाले कारतूसोंको दांतसे काटकर लगाया था। ७० नं० सेनाके किसी किसी सिपाहीने २ नं० सेनावालोंको कारतूस काटनेसे मना किया है।" सिपाहियोंका हार्दिक भाव समझकर लार्ड कैनिंगने प्रधान सेनापतिको यह लिखा था—"सिपाहियोंकी उत्तेजना अधिकाधिक बढ़ती जाती थी। बारकपुरके सिपाही कलकत्तेके किले और दूसरे स्थानोंके पहरोंपर नियत थे। १० मार्चको शामके समय २ नं० सेनाके आदमी किलेमें पहरा दे रहे थे। इसी समय खजानेका पहरा ४३ नं० सेनाको दिया गया। शामको २ नं० सेनाके दो सिपाही आकर सूबेदारसे मिले, सूबेदार अपने दैनिक कामकी किताब देख रहा था। सिपाहियोंने कहा कि हम किलेसे आ रहे हैं, आज आधी रातको कलकत्तेके सिपाही २ नं० सेनासे मिलेंगे, अगर सूबेदार अपनी सेना लेकर मिलें तो सरकारकी शक्ति सुगमतासे तोड़ी जा सकती है। यह खबर सुनते ही सूबेदारने दोनोंको कैद करनेकी आज्ञा दी। दोनों कैद किये गये। दूसरे दिन उनका विचार हुआ और दोनों चौदह चौदह वरसके लिये जेल भेजे गये।

सेनापति हेअर्सने समझ लिया कि ऐसी साधारण बातसे समयपर बड़ा भयानक काण्ड उपस्थित हो सकता है। इसलिये सावधानीके साथ वे इसकी जड़ खोद फेंकनेको तैयार हुए। उनका पहला व्याख्यान सिपाहियोंने शान्तिसे सुना था, इसलिये उन्होंने दूसरा व्याख्यान देनेका इरादा किया। लार्ड कैनिंग इससे सहमत थे। गवर्नर जनरलसे सलाह करके सेनापति हेअर्सने १७ मार्चकी सुबह बारकपुरकी सेनाको परेटके मैदानमें एकत्र होनेकी आज्ञा दी। निश्चित समयपर सिपाही परेटके मैदानमें एकत्र हुए। घोड़ेपर बैठकर हेअर्स फिर सिपाहियोंके सामने आकर गम्भीर और तेज आवाजमें कहने लगे कि—"सरकारके दुश्मन सिपाहियोंको भड़काते हैं, वे सिपाहियोंको बताते हैं कि सरकार उनके धर्म और जातिका नाश करेगी, पर यह बात बिलकुल असत्य है। राजभक्त सिपाहियोंको उन डराने और बहकानेवालोंसे दूर रहना चाहिए। कम्पनीके शासनमें कम्पनीके अधीन सिपाही सुखसे हैं, इस सुखमें वे किसी तरहका विघ्न न आने दें। इसके बाद हेअर्सने कारतूसोंके सम्बन्धमें कहा कि, जो कागज अच्छी तरह बनाये जाते हैं वे ऊपरसे चिकने दिखाई देते हैं। भारतके राजा लोग इस तरहके चमकदार चिकने कागज सदा काममें लाते हैं। चिट्ठियोंके कागज निकालकर अफसरोंके हाथमें देते हुए उन्होंने कहा कि, इन्हें देखो यह तुम्हारे कारतूसके कागजोंसे भी अधिक चिकने हैं, सिपाही इन कागजोंको ले जाकर अच्छी तरह देखें और

जांच करें। काश्मीरके महाराज गुलाबसिंहका पत्र निकालकर उन्होंने सिपाहियोंको दिखाते हुए कहा कि, काश्मीरके महाराजने यह चिट्ठी मुझे लिखी है। इसका कागज़ कितना चिकना और चमकदार है। अगर किसी सिपाही या अफसरको मेरी बातपर विश्वास न हो तो वह श्रीरामपुरके कागजके कारखानेमें स्वयं जाकर अपनी आंखोंसे कागज बनते देख सकता है। इसके बाद हेअर्सने कहा कि, १९ नं० सेनाने आज्ञा भङ्ग करके घोर अपराध किया है। इसलिये सरकार उससे नाराज है। अधिक सम्भव है कि सरकार इस सेनाके हथियार ले लेनेकी आज्ञा दे। यदि सरकारने यह आज्ञा दी तो सारी गोरी और काली पैदल सेनाओं तथा तोपखानोंको, उनसे हथियार ले लेनेके अवसरपर इस मैदानमें फिर एकत्र होना पड़ेगा। इसके बाद सेनापतिने कहा कि—"तुम्हारे शत्रु यह कहते फिरते हैं कि बहुतसे सवार और तोपखानेवाले एकाएक आकर सेनाओंपर आक्रमण करेंगे। इस झूठी बातपर भरोसा करके तुम अपने मनमें शङ्कित और उत्तेजित मत हो। मेरी आज्ञाके बिना कोई काली या गोरी फौज बारकपुरमें नहीं आ सकती। जो फौजें आवेंगी, उनके आनेकी सूचना मैं तुम्हें दूंगा। तुमने कोई अपराध नहीं किया, तुम्हारे विरुद्ध कोई अपराध सिद्ध नहीं हुआ, इसलिये तुम बिलकुल न डरो। तुम्हें जिस बातकी जरूरत या शिकायत हो, वह अफसरोंसे कहो। तुम्हारी जाति और धर्मके विरुद्ध कोई काम न होगा। पर यदि तुम आज्ञा न मानोगे तो कड़ी सजा दी जायगी।"

गम्भीर स्वरसे भाषण देकर हेअर्स मौन हुए। सिपाही चुपचाप परेटके मैदानसे अपने अपने स्थानको गये, पर अशान्ति दूर न हुई। जो सुख शान्ति काफूरकी तरह उड़ गई थी वह न लौटी। सेनापति हेअर्स अपने इस दूसरे भाषणमें भी अकृत-कार्य रहे। मनमें तोलकर बात बोलनी चाहिए थी। हृदयके आवेगमें एकाएक कोई बात कह डालनेसे, बहुत बार वह लाभके स्थानपर हानिकर हो जाती है। लार्ड कैनिंगने यह आशंका की थी कि गम्भीर उत्तेजनाके कारण हेअर्स सिपाहियोंका उद्वेग कहीं और अधिक न बढ़ा दे। अन्तमें कैनिंगकी आशंका सत्य हुई। हेअर्सने कहा था कि १९ नं० सेनासे बारकपुरमें हथि-यार ले लिये जायँगे और उस समय सबको उपस्थित रहना होगा। व्याख्यानदाताने यह स्वप्नमें भी विचार न किया था कि सुननेवाले उसके शब्दोंका उल्टा अर्थ लगावेंगे। यह समा-चार किसीको भी प्रगट नहीं किया गया था कि १९ नं० सेनाके हथियार ले लिये जायँगे। गवर्नर जनरलने प्रधान सेनापतिको लिखा था कि—"१९ नं० सेनाके सिपाही जल्दी जल्दी मार्च करते हुए आ रहे हैं, आशा की जाती है कि ३०. मार्चको वे बारकपुर पहुँच जायँगे। यह वे नहीं जानते कि उनके हथि-यार ले लिये जायँगे और फौजसे उनका नाम कटेगा। मेरे विचारसे यह बात उनसे न कहना ही अच्छा है।" पर बिना विचारे सेनापति हेअर्सने सब सेनाके सामने यह बात कह दी, अब उसका फल फला। उनकी शान्ति पैदा करनेवाली वक्तृताने

विष पैदा किया। जब सिपाहियोंने सेनापतिके मुंहसे सुना कि उनके सहयोगियोंके हथियार ले लिये जायँगे तब उनका क्रोध और अधिक भड़का। उन्होंने सोचा कि इस प्रकार एक एक करके सबके हथियार ले लिये जायंगे। समुद्रपारसे एक गोरी सेना आई है, क्रमशः और आवेंगी। फिर हरएक सिपाहीके हाथमें जबर्दस्ती अपवित्र चर्बीवाले कारतूस दिये जायँगे। बारकपुरके सिपाही गम्भीर मार्मिक वेदनासे अधीर हो उठे। सब अस्थिर, चिन्तित और क्रोधित हो उठे। सबके मुँहसे "गोरे आये, गोरे आये" सुनाई पड़ने लगा। सिपाही क्षण क्षणमें अपने आपको धर्मभ्रष्ट जातिभ्रष्ट और गोरोंसे आक्रान्त समझने लगे। जो आग आज तक प्रत्येक हृदयमें छिपी थी वह अब जल उठी।

सेनापति मिचल २० मार्चको १९ नं० सेनाको लेकर बहरामपुरसे चले थे। इस सेनाने फिर किसी प्रकारकी उत्तेजना न दिखाई। रास्तेमें सेनापतिकी आज्ञा बराबर मानती रही। ३० मार्चको अपनी सेनाके साथ बारकपुर पहुंचकर मिचल सरकारकी आज्ञाको प्रतीक्षा करने लगे। इससे पहले ही मिचलको समाचार मिल चुका था कि बारकपुरके सिपाही सरकारके खिलाफ खड़े हो चुके हैं। पहले दिन २९ मार्चको एक उत्तेजित सिपाहीको तलवारसे दो गोरे अफसर घायल हो चुके थे।

२९ मार्चको बारकपुरके सिपाहियोंमें बड़ी सनसनी फैली थी। तीसरे पहर यह खबर फैली कि कलकत्तेमें कई एक गोरी

फौजें जहाजसे उतरी हैं। वे शीघ्र हो वारकपुर आवेंगी। इस समाचारकी सत्यताकी जांचका न किसीको विचार था न समय, सब सरकारके विरुद्ध उत्तेजित हो उठे। यह दिन रविवारका था। अंग्रेज अफसर छुट्टीमें अपना समय आनन्दसे विता रहे थे, सिपाहियोंमें क्या हो रहा है, इसे किसीने नहीं देखा। सपिाहियोंमें मंगल पांडे नामक एक सिपाही था। यह हट्टा कट्टा वलिष्ठ और नौजवान ब्राह्मण सात सालसे सेनामें वीरताके साथ काम करता आ रहा था। यह कट्टर धार्मिक था। २९ मार्चको जब गोरी फौजके आनेकी खबरसे छावनीके सब सिपाही त्रस्त, चिन्तित और उत्तेजित हो रहे थे उस समय भङ्गके नशेमें चूर मंगल पांडेसे स्थिर न रहा गया। उसने सोचा कि बस अब जाति और धर्मके नाशका समय आ गया। उत्तेजना और नशेकी झोंकमें यह नौजवान हथियारोंसे खूब तैयार होकर अपनी वारकसे निकला। बाहर आकर कहने लगा कि, कोई अपवित्र कारतूसोंमें हाथ न लगावे—"सदाके लिये हिन्दू धर्मका नाश करके नरकका द्वार न खोले। एक बिगुल बजानेवाला पास खड़ा था। उससे मङ्गल पांडेने कहा कि बिगुल बजाकर सब सेनाको एकत्र करो। पर बिगुलचीने बिगुल न बजायी। फिर भी मङ्गल पांडे चारों ओर घूमने लगा। उस समय वहाँपर एक अंग्रेज़ अफसर खड़ा था, उसीको निशाना करके मङ्गलने पिस्तौल छोड़ा, पर निशाना न लगा।

इस समय ३४ नं० सेनाके सिपाही पास ही खड़े थे। पर

न उन्होंने मङ्गलके साथ मिलकर युद्ध घोषणा ही की और न उसे पकड़कर हथियार छीननेकी कोशिश ही। इसी समय एक हवलदारने एडजूटैंटके घर जाकर ख़बर दी। लेफ्टिनेंट बग नामक एक अंग्रेज ३४ नं० सेनाका एडजूटैंट था। समाचार मिलते ही बग फौजी पोशाक और हथियारोंसे सुसज्जित होकर हाथमें भरा पिस्तौल लिये घोड़ेपर बैठकर आया। आते ही उसने कहा—"वह कहाँ है, वह कहाँ है?" पास ही एक तोप थी। इसी तोपकी आड़से मङ्गल पांडेयने सवारपर निशाना लगाकर बन्दूक छोड़ी। गोली बगको नहीं लगी, पर उसका घोड़ा गोली खाकर गिर गया। घोड़ेके गिरते ही बग भी गिरा, पर झट खड़ा होकर उसने मङ्गलपर पिस्तौलका फायर किया। निशाना खाली गया। तलवार निकालकर बग मङ्गलकी ओर लपका, एक गोरा तलवार लेकर उसकी सहायताके लिये आया। मङ्गल भी तलवार निकालकर दोनोंके मुकाबिलेके लिये डटा। एक ओर वीर मङ्गल पांडे और दूसरी ओर दो यूरोपियन युद्धकुशल अफसर। तीनोंके हाथमें तलवारें, हरएकका प्राण लेनेके लिये हवामें घूमने लगीं। चारों ओर चार सौ सिपाही खड़े थे, सब खड़े खड़े यह तमाशा देख रहे थे। किसीने किसीका पक्ष न लिया। बड़ी वीरता और फुर्तीसे दोनोंका वार बचाते हुए मङ्गल पांडेने अपने विपक्षीको घायल कर उसे जमीनपर सुला दिया। दो वीर अंग्रेज़ इस अकेलेको काबूमें न ला सके। दोनों अंग्रेज़ोंके प्राण संकटमें थे। जब

मंगल एकको गिरा चुका तब दूसरे अंग्रेज़के प्राण बचानेके लिये एक मुसलमान हिम्मत करके सामने आया। इस सैनिकका नाम शेख पल्टू था। जैसे ही मंगलने गोरे अफसरको लक्ष्य करके तलवार उठाई वैसे ही पल्टूने पीछेसे आकर उसकी बांह पकड़ ली। पल्टूका बायां हाथ तलवारसे कटकर लहूलुहान हो गया, पर उसने उसे छोड़ा नहीं। इस प्रकार अंग्रेज़ अफसरके प्राण बचे। जो अंग्रेज़ गिर गया था वह भी मरा नहीं था, घायल हुआ था।

दोनों अंग्रेज़ोंके शरीर लहूलुहान हो गये थे। खूनसे लथपथ होकर दोनों अपने अपने निवासस्थानमें पहुंचे। इस समय क्रोधसे सेनापति वगने उपस्थित सिपाहियोंसे कहा—"डरपोक नराधम पाखंडियो! तुमने आंखके सामने अपने अफसरको लहूलुहान होते देखा और कोई मददके लिये आगे न बढ़ा।" सिपाहियोंने कुछ भी उत्तर न दिया। लेफ्टिनेंट बग अपनी सेनामें अधिक आदरणीय न था। वह अपने गुणोंके कारण किसी सिपाहीका हृदय न जीत सका था। इसी कारण सिपाही केवल तमाशा देखते रहे—उसकी बातका भी किसीने उत्तर न दिया। जब दोनों अंग्रेज़ चले गये तब सिपाहियोंने पल्टूसे मंगलको छोड़ देनेके लिये कहा। किसी किसीने यह कहकर पल्टूको भय भी दिखाया कि यदि वह मंगलको न छोड़ेगा तो उसे गोलीसे मार देंगे। पर जबतक दोनों घायल अफसर अपने स्थानपर न पहुंचे तबतक पल्टूने मंगलको न

छोड़ा। इस समय मंगलको किसीने गिरिफ्तार न किया। इसका कारण धर्म और जातिनाशका डर और अंग्रेज़ोंको विद्वेषकी दृष्टिसे देखना ही था। वीर धर्मको जलांजलि देनेके कारण सिपाही इतिहासके सामने दोषी कहे जा सकते हैं, पर अफसर यदि सोच समझकर शान्तिके साथ काम लेते, भविष्यपर दृष्टि रखकर यदि सरकार नीतिका अनुसरण करती, तो यह इतिहास खूनके रंगसे न लिखा जाता। अदूर-दर्शी, अनजान और खोटे मनुष्योंके बहकानेमें आकर सिपाही कुमार्गपर चले, फिर भी उनका यह दोष माफ किया जा सकता था। पर जिस सुसभ्य सरकार और शिक्षित सेनापतियोंके अधीन वे थे उनकी त्रुटियां क्षमा करने योग्य नहीं।

सेनाकी इस गड़बड़का समाचार सेनापति हेअर्सके पास पहुंचा। सेनापतिके दो पुत्र भी सेनामें अफसर थे। दोनों उस समय पिताके निकट ही थे। समाचार सुनते ही फौजी पोशाकके साथ हथियारोंसे सुसज्जित होकर सेनापति घोड़ेपर बैठकर सेनाकी ओर चले, उनके दोनों पुत्र भी तैयार होकर पिताके पीछे पीछे घोड़ोंपर चले। परेटके मैदानमें जाकर सेनापतिने सुना कि मंगल पांडे पागलोंकी तरह सेनामें घूमता हुआ अपने जाति-धर्मकी रक्षाका उपदेश दूसरे सिपाहियोंको दे रहा है। उसके चारों ओर बहुतसे सिपाही जमा हैं, कोई वर्दी पहने खड़ा है, कोई वैसे ही नंगे बदन। न कोई उत्तेजित युवककी बातका जवाब देता है और न उसे पकड़ता ही है।

अपने पवित्र धर्मके नाशकी आशंकाके विचारसे सब सरकार-को शत्रुकी दृष्टिसे देखने लगे थे।

विरक्त और उत्तेजित होनेपर भी सिपाहियोंने मंगल पांडेकी तरह प्रगटमें युद्धघोषणा न की। मंगलको सहायता करके दोनों अफसरोंके प्राण लेनेकी भी किसीने कोशिश न की। मंगल सिपाहियोंको भीरु और कायर कहकर धिक्कार रहा था, अंग्रेज़ोंके विरुद्ध हथियार न उठानेसे उन्हें अनन्त नरकका डर दिखा रहा था, पर सिपाही कुछ भी निश्चय न कर सके कि अब उन्हें क्या करना चाहिये। आवेगसे उनका हृदय चञ्चल हो गया था, मर्मवेदनासे अन्तःकरण खिन्न हो गया था, इतनेपर भी वे किसी भयानक कांडके लिये तैयार न हुए थे। वे पहले जैसे गम्भीर और मौन थे वैसे ही अब भी गम्भीर और मौन रहे। यह गम्भीरता और शान्ति प्रलयकी सूचना थी। भयानक तूफानके पहले प्रकृतिमें जैसे शान्ति आती है, यह शान्ति भी वैसी ही थी।

सेनापति हेअर्स घटनास्थलपर पहुंचे। दोनों पुत्र पिताकी सहायताके लिये साथ थे। तीनोंके हाथमें भरे हुए पिस्तौल थे। मंगल पांडेको उस समय भी किसीने गिरफ्तार न किया था। सेनापतिने जाकर अफसरोंसे पूछा कि वह जवान अबतक गिरफ्तार क्यों नहीं किया गया। अफसरोंने कहा कि ज़मादारने उनकी आज्ञाका पालन नहीं किया। सेनापतिने क्रोधित होकर कहा—"क्या? आज्ञाका पालन नहीं किया?

मैं हुक्म देता हूं कि जो मेरे साथ आगे न बढ़ेगा उसकी जान मेरे हाथकी गोलीसे जायगी।" एक अफसरने सेनापतिसे कहा—"आप सावधान हों, पागल सिपाहीके हाथमें गोलीभरी वंदूक है।" सेनापतिने निर्भीकतासे कहा—"रहने दो उसकी वंदूक।" अफसर चुप हो गया। सेनापतिने मंगल पांडेकी ओर घोड़ा बढ़ाया। उनके दोनों पुत्र और मेजर रास नामक एक सैनिक उनके पीछे चले।

निर्भय होकर सेनापति हेअर्स आगे बढ़े, उनका यह भाव देखकर जमादारने आज्ञा मान ली। जमादार और पहरेके सब सिपाही सेनापतिके पीछे चले। हाथमें वंदूक लिये मंगल पांडे अधीरताके साथ टहल रहा था। सेनापतिको देखकर मंगलने वन्दूक उठाई। सेनापतिके पुत्रने कहा—"पिता, विद्रोही सिपाही आपकी ओर वन्दूक उठा रहा है।" पुत्रकी ओर देख-कर निर्भयताके साथ सेनापतिने कहा—"अगर मेरी मौत हो तो मेरे वाद तुम जाकर इस विद्रोहीकी जान लेना।" पर मंगलने सेनापतिको निशाना न किया। उसने देखा कि उसके साथियोंमेंसे कोई भी साथ देनेको तैयार नहीं, सरकारके विरुद्ध किसीने युद्धघोषणा न की, इसलिये हताश होकर उसने वन्दूककी नली अपने शरीरमें लगाकर पैरके अंगूठेसे घोड़ा दवा दिया। अपनी वन्दूकसे मंगल घायल होकर गिर गया।

सेनापतिने देखा कि मंगलने उसकी जान न लेकर अपनी

दे दी। उसी समय सच्चे वीरकी तरह हेअर्सने शीघ्र डाक्टर बुलवाया। घावकी परीक्षा करके उसे अस्पताल भेजा। फिर सिपाहियोंके बीचसे धीरे धीरे घोड़ेको चलाते हुए वे कहने लगे कि, तुमलोग व्यर्थ डर रहे हो। सरकार तुम्हारे धार्म्मिक मामलोंमें कभी हस्ताक्षेप नहीं करेगी। एक आदमी सरकारी अफसरकी खुले तौरपर हत्या करनेको तैयार हुआ, उस मौकेपर इतने सिपाहियोंके होते हुए भी उसे गिरफ्तार नहीं किया गया, यह देखकर उन्हें दुःख हुआ है। सेनापतिको यह बात सुनकर सिपाहियोंने कहा—“वह भंगके नशेमें पागल हो गया था।” सेनापतिने कहा—“अगर वह पागल हो गया था तो जैसे पागल हाथी या कुत्तेको गोलीसे मार देते हैं, वैसे ही उसे क्यों नहीं मार दिया गया।” किसी किसी सिपाहीने कहा कि उसके हाथमें गोलीभरी बंदूक थी। घृणाके साथ सेनापतिने कहा—“क्या तुम गोलीभरी बंदूकसे डरते हो?” सिपाही चुप हो गये। घृणाके साथ सेनापति वहांसे चले आये। इस समय चतुर सेनापतिको साफ मालूम हो गया कि सिपाही सरकारके विरुद्ध हो गये हैं। इसी कारण वे वीरधर्मसे भी पतित हो चुके।

शामको वे अपने निवासस्थानको वापिस लौटे। एक चिन्ताके बाद दूसरी चिन्ताने उनके हृदयको आन्दोलित कर दिया। पर वे कर्त्तव्यज्ञानसे शून्य न हुए। सब सेनाको मालूम हो चुका था कि १९ नं० सेनाके हाथियार ले लिये जायंगे।

उनके पास इस कामको पूरा करनेकी आज्ञा आ चुकी थी। ३१ मार्च मंगलवारको सवेरे इस विद्रोही सेनाके हथियार ले लेनेका निश्चय किया गया था। सब यूरोपियनोंके हृदयोंमें चिन्ता थी कि शायद यह सेना अपना वीरवेश और वीरचिह्न उतारनेसे इनकार करे, प्रगटमें विद्रोह घोषणा करे और बंगालकी अन्यान्य सेनायें उनके साथ मिलकर अंग्रेज़ोंकी हत्या करें। बारकपुरके अंग्रेज़ोंमेंसे बहुतोंका विश्वास था कि हथियार लेनेसे पहले दिन ही, अर्थात् सोमवारको यह सेना विद्रोही हो जायगी। उत्तेजित सिपाही सब अंग्रेज़ों और उनके बालबच्चोंको मार डालेंगे। मंगल पांडेकी तलवारसे दो अंग्रेज़ अफसर घायल हो चुके थे, इस कारण उनका यह सन्देह और भी अधिक था। बहुत सी अंग्रेज़ स्त्रियां अपने छोटे बच्चोंके साथ बारकपुरसे कलकत्ते भेज दी गईं।

३० मार्चको १६ नं० सेना बारकपुरसे एक मंजिलपर थी। उस दिन बारकपुरके सिपाहियोंकी ओरसे कुछ जासूस उनसे जाकर मिले। इन जासूसोंने अपने पुराने मित्रोंको सरकारके खिलाफ खड़े होनेका अनुरोध किया। यदि उनके यह बन्धु अपने अंग्रेज़ अफसरोंको मारकर विद्रोहका झण्डा खड़ा करें तो दोनोंका मिलकर कलकत्तेकी गोरी सेनाको हराना सुगम हो जाय। पर १६ नं० सेनाके सिपाही इस प्रस्तावपर राजी न हुए। बारकपुरकी सेनाके इन जासूसोंसे उन्होंने कहा था कि, पहले जो कर चुके हैं वे उसीके लिये लज्जित हैं, वे अपनी

राजभक्ति सिद्ध करनेके लिये दुनियाके किसी भागमें भी सरकारके लिये लड़नेको तैयार हैं। सरकारका नमक खा कर वे उसका विरोध करना नहीं चाहते, उस दिन रातको भी वे सरकारके विरोध करनेके विचारसे खड़े न हुए थे। जिनके दिये हथियारों और वस्त्रोंसे वे वारवेश धारण किये हुए हैं, जिनकी युद्धशिक्षासे वे विजयी हैं, अब उन्हींके विरुद्ध वे खड़े न होंगे। बारकपुरके जासूस चुपचाप वापस आगये। १६ नं० सेनाकी बारकपुरकी सेनासे मित्रता थी और इसी मित्रताके कारण उन्होंने बारकपुरके सिपाहियोंका इरादा प्रगट न किया। वे धैर्यपूर्वक अपनी सजाके लिये तैयार थे। पर सरकार और उसके अफसर अपना धैर्य खो चुके थे, वे इस राजभक्त सेनाके हथियार लेकर अपनी विपत्तिका मार्ग खोल रहे थे।

३० मार्च बीत गई। मधुर वसन्तका मनोहर प्रातःकाल इस अपराधी सेनाके सामने उदय हुआ, पर प्रकृतिके इस आनन्दको सिपाही अनुभव न कर सके। प्रातःकालका प्रकाश उनके हृदयोंके गहरे अन्धेरेको दूर न कर सका। सेनापतिकी आज्ञासे अन्तिम बार अपनी वर्दी पहनकर उन्होंने बारकपुरकी ओर प्रयाण किया। उनका हृदय गम्भीर दुःखसे अधीर था, किन्तु बाहर उस अधीरताका कोई लक्षण न था। वीरप्रथाकी अवज्ञाके कारण उनके हृदय अनुतप्त और कठोर दण्डके कारण त्रस्त थे; ऐसी दशामें ही वे आगे बढ़े। बारकपुरसे

एक मीलपर सेनापति हेअर्स उनका रास्ता देख रहे थे। उनके आनेपर हेअर्स आगे आगे होकर परेटके मैदानकी ओर जाने लगे। इस स्थानपर प्रेसीडेंसीकी अंग्रेज़ और हिन्दुस्तानी फौजें खड़ी थीं। १६ नं० सेना इस मैदानमें आकर अपने निश्चित स्थानपर खड़ी हुई। उसके सामने तोपें लगी हुई थीं और तोपोंके पास अंग्रेज़ी सेना तैयार खड़ी हुई दृश्यको और भी भयङ्कर बना रही थी। हथियार लेते समय यदि आज्ञा न माने तो उसके लिये तोपें भरी हुई थीं। पर सेनाने आज्ञा पालन की, वीरताके अन्तिम शोचनीय दृश्यको उसने कलंकित न किया चुपचाप अपने हथियार उतारकर रख दिया। ३४ नं० सेना भी खड़ी थी, सबने अपने पुराने मित्रोंको वीर-धर्म विसर्जन करते देखा। दो दिन पहले यह सेना भी अपने सेनापतिके विश्वासको खो चुकी थी, इसी सेनाके मंगल पांडेने दो अंग्रेज़ अफसरोंको घायल किया था। शायद मौके पर यह सेना बिगड़ खड़ी हो, इसी विचारसे अफसरोंने सेनापति हेअर्सको सावधान किया था। पर किसी प्रकारकी अशान्ति न हुई। १६ नं० सेना अपना हथियार छोड़कर चुपचाप खड़ी थी। सेनापतिने सदय भावसे कहा—"सरकारकी आज्ञासे आजसे तुम सेनासे निकाल दिये गये पर जो सरकारकी वर्दी तुम पहने हुए हो वह नहीं ली जायगी। सेनापतिकी आज्ञा मानकर तुम बहरामपुरसे बारकपुर तक शान्तिके साथ आये, इसी शान्तिके इनाममें सरकार तुम सबको तुम्हारे

पहुंचनेका मार्गव्यय देगी।" सेनापतिकी यह अन्तिम बात निरस्त्र सिपाहियोंके हृदयमें प्रवेश कर गई। सब इस दया और सभ्यताके लिये सेनापतिको धन्यवाद देने लगे, सबने ईश्वरसे उनके दीर्घजीवनकी प्रार्थना की। सिर झुकाकर सेनापतिने सबका आशीर्वाद लिया। उस समय सिपाही खुले तौरसे कहने लगे कि हमने दूसरोंके बहकानेमें आकर अपराध किया, सब अपने भाग्यको दोष देने लगे, सबने ३४ नं० सेनाको अपराधोंका कारण बताया। इनमेंसे एक सिपाहीने आगे बढ़कर सेनापतिसे कहा कि—"हमें कमसे कम दस मिनिटके लिये फिर हथियार लेनेका हुक्म दे दीजिये, हम ३४ नं० सेनाके सिपाहियोंसे इसका बदला लेंगे।"

जब १९ नं० सेनाके हथियार ले लिये गये तब, सेनापति हेअर्सने ऊंची आवाजमें और सब खड़े हुए सिपाहियोंको सम्बोधन करके कहा—"इस फौजमें चार सौ ब्राह्मण और डेढ़ सौ राजपूत हैं, आज सबको अपने अपने घर जानेकी आज्ञा मिल गई। अब यह सब अपने पवित्र तीर्थस्थानोंको जा सकते हैं, अपने बापदादोंके पूज्य देवताओंकी उपासना कर सकते हैं। सरकार इनके धर्म या विश्वासमें किसी तरहका हस्तक्षेप न करेगी। यह जो अफवाह उड़ रही है कि सरकार सबका धर्मनाश करनेके लिये तैयार हुई है, बिलकुल असत्य है।" उपस्थित सिपाहियोंने चुपचाप सेनापतिकी बातें सुनीं। फिर गोरे सिपाहियोंसे घिरे हुए १९ नं० सेनाके सिपाही धैर्यके साथ वहाँसे रवाना

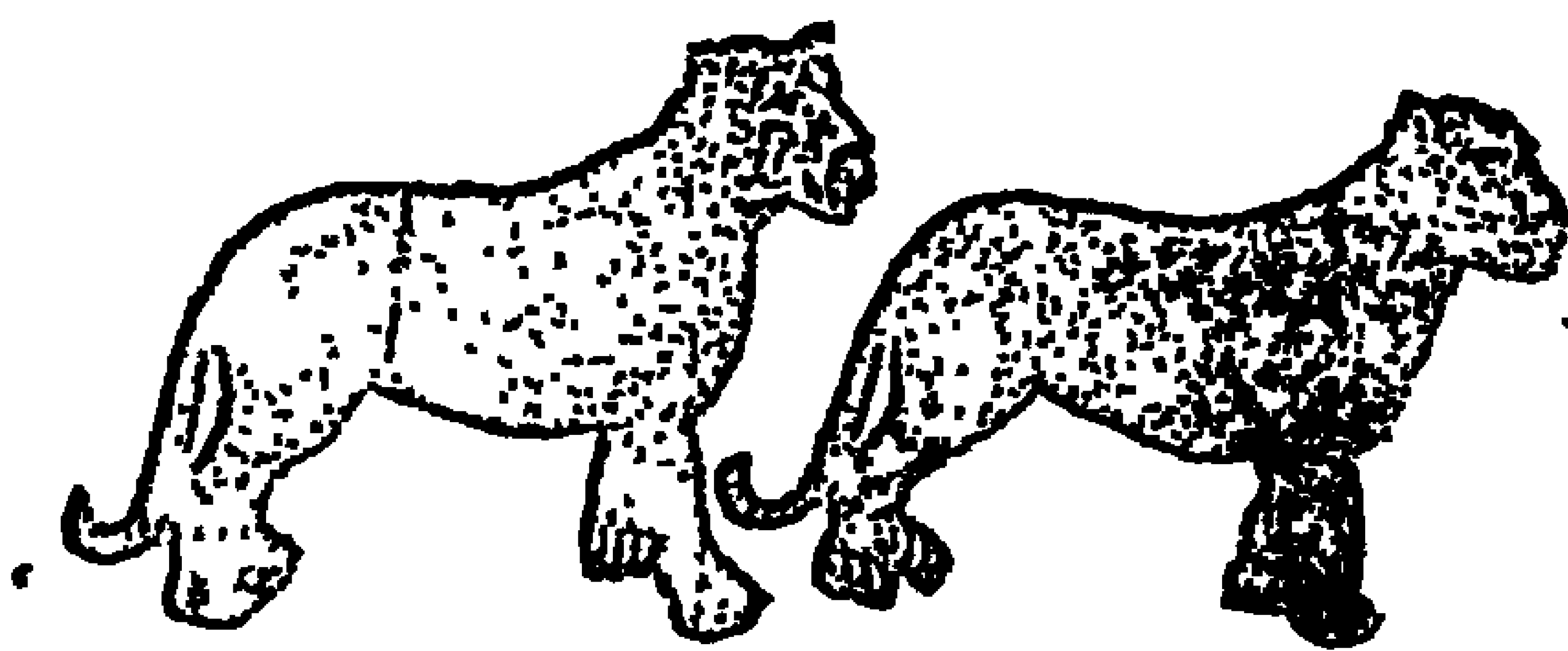
हुए। जाते हुए उन्होंने फिर सेनापतिको आशीर्वाद दिया। इस प्रकार ६ बजेतक यह कार्य समाप्त हो गया। दुःखी हृदयसे सेनापति अपने भवनमें आये, ३१ मार्चको उन्हें जैसा शोचनीय काम करना पड़ा वैसा उन्होंने अपने जीवनमें कभी नहीं किया था। इस दिन उन्हें एक अनुरक्त और पुरानी सेनाको बर्खास्त करना पड़ा, पर यह काम बिना किसी विघ्नके समाप्त हुआ, इसके लिये उन्होंने ईश्वरको धन्यवाद दिया।

सरकारने भयानक विपत्तिके निवारणके लिये सेनाको बर्खास्त किया था, पर इससे उस विपत्तिका निवारण न हुआ। यह सिपाही दूसरेके बहकानेमें आकर, सेनापतिकी त्रुटिसे थोड़ी देरके लिये जोशमें आ गये थे। यदि शान्तिसे काम लिया जाता, इन्हें समझाया जाता तो विपत्तिके अवसरपर यह सरकारका दाहिना हाथ बनकर काम करते। लेफ्टिनेंट कर्नल मेकग्रेगरी बहरामपुरमें इस सेनाके साथ कुछ दिन रहे थे, उन्होंने साफ लिखा है कि इस सेनाके समान राजभक्त सेना मैंने दूसरी नहीं देखी *।

हथियार ले लेनेके लिये जब यह बहरामपुरसे बारकपुर लाये गये तब रास्तेमें इन्होंने अपने सेनापतिको किसी भी आज्ञाका अपमान न किया। जब ३४ नं० सेनाके जासूसोंने जाकर इन्हें बहकाया तब भी यह अपनी अन्नदाता पालनकर्त्ता सरकारके विरुद्ध न हुए। जब बारकपुरके मैदानमें इनके हथियार ले लिये गये

* Martin's Empire in India, Vol II. P. 132.

तब भी वे शान्त रहे। हथियार दे देने और निकाल दिये जानेके बाद भी इन्होंने सेनापतिको आशीर्वाद दिया और सरकारका भला मनाया, निकाल दिये जानेके बाद बहकानेवाली ३४ नं० सेनासे इन्होंने युद्ध करना चाहा था। इससे अधिक विश्वास और राजभक्तिका क्या प्रमाण चाहिए? बहुतोंका मत था कि शायद हथियार ली हुई सेना अपने घर वापिस जाती हुई रास्तेमें गांवोंको लूटेगी, पर यह आशंका निर्मूल सिद्ध हुई। आगे चलकर जब पश्चिमोत्तर देश और बंगालकी एक एक सेना सरकारके विरुद्ध लड़नेको तैयार हुई तब भी यह हथियार ले लिये हुए सिपाही उनसे न मिले। इससे अधिक और राजभक्ति क्या हो सकती है।*



* Mead's Sepoy War, P. 62.

तीसरा अध्याय



मंगल पांडे और जमादारको प्राणदण्ड—दूसरी सेनाओंका डर—अम्बालेकी घटना—प्रधान सेनापति एनसनका भाषण—मेरठकी घटना—बड़े लाट और फ़ौजी लाटमें मतभेद—हड्डियोंका चूरा मिला मैदा—चायपार्टी—लखनऊकी घटना।



ना किसी प्रकारकी अशान्तिके १९ नं० सेना बर्खास्त हो गई इस समाचारसे लार्ड कैनिंगको प्रसन्नता हुई। समाचार मिलते ही उन्होंने फौजी लाटको तार द्वारा यह खबर दी। अंग्रेज़ इससे निश्चिन्त हुए। वे प्रतिक्षण सिपाहियों द्वारा एक भयानक कांडकी आशंका—सिपाहियोंकी तलवारोंसे अपने बाल-बच्चोंके कत्ल होनेका स्वप्न देख रहे थे। इस समाचारसे सब डर जाता रहा।

१९ नं० सेनासे निश्चिन्त होनेके बाद अब सरकारको ३४ नं० सेनापर ध्यान देनेका अवसर मिला। ६ अप्रैलको मंगल पांडेका मुकदमा हुआ। जजने पांडेको फांसीकी सज़ा दी। मंगल पांडेका घाव गहरा था, उसके आराम होनेकी भी आशा न थी। पर इस दशामें भी पांडेने धीरता, गम्भीरता और पूर्णशक्तिका परिचय दिया। ८ अप्रैलको सारी सेनाके सामने उसे फांसी

दी गई। १० अप्रैलको जमादारका मुकदमा हुआ। जमादार-पर यह अपराध था कि अंग्रेज़ अफसरको घायल होते देखकर भी उसने मंगलको गिरफ्तार करनेका हुक्म न दिया और न अफसरोंकी सहायता की। २१ तारीखको जमादारको भी प्राण-दण्ड दिया गया। अफसरोंकी मदद करनेवाले शेख पल्टूको सिपाहीसे हवलदारका पद दिया गया।*

मंगल पांडे और जमादारको सजा दी गई पर ३४ नं० सेनाके विषयमें अभीतक कुछ न किया गया था। सारी सेनाने मंगल पांडेकी तलवारसे दो अंग्रेज़ अफसरोंको खूनसे लथपथ होते देखकर भी किसीने अफसरोंकी मदद न की थी। सेनापति इस सेनासे असन्तुष्ट थे। बारकपुरके अंग्रेज़ोंका विश्वास था कि इस सेनाके हाथमें हथियार रहते हुए पद पदपर अशान्तिकी आशंका है। अंग्रेज़ अफसर जब रातमें निकलते या एक स्थानसे दूसरे स्थानपर अपना कर्त्तव्य पूरा करने जाते तब उनके हृदयमें यह विचार बना रहता था कि लेफ्टिनेंट बगकी तरह विद्रोही सिपाही उन्हें भी घायल करेंगे। शामके बाद स्त्रियोंमें बैठकर वे जो आमोद प्रमोद करते थे इस डरके कारण उन्हें वह सब छोड़ना पड़ा। इस सेनाका विचार न होनेके कारण वे सरकारसे विरक्त हो गये थे। पर बहुत विचारके बाद भी गवर्नर जनरलको इस विषयमें कुछ करनेकी हिम्मत न हुई। उन्हें शंका थी कि किसी कड़े दण्डकी आज्ञा देते ही, कदाचित् सारे सिपाही बिगड़ उठें।

* Martin's Empire in India, Vol. II, P. 133.

इसलिये वे ३४ नं० सेनाकी उत्तेजनाके कारणोंको बारीकीसे जांचने लगे। इस तरह सारा अप्रैल महीना बीत गया, न उससे हथियार लिये गये और न किसी तरहकी सजा ही दी गई। जिनको इसको जांचका भार दिया था उन्होंने सब बातोंका पता लगाकर अन्तमें सम्मति दी कि इस सेनाके सिक्ख और मुसलमान विश्वासी हैं पर हिन्दू नहीं। इन विचार करनेवालोंने यहांतक अपनी सूक्ष्म बुद्धिका परिचय दिया कि कलकत्तेके जिलेके जिस सूबेदारने ख़बर देनेके कारण दो विद्रोही सिपाहियोंको कैद किया था उसे भी अविश्वासी कह डाला।* ३४ नं० सेनाके बहुतसे आदमी अपने कामसे दूसरे स्थानोंपर गये थे, २९ मार्चको वे वहां थे ही नहीं। अन्तमें गवर्नर जनरल विश्वासी और राजभक्तोंको छोड़कर बाकीके हथियार ले लेनेका विचार करने लगे।

इस आज्ञाके प्रचारित होनेसे पहले ही भारतकी अन्यान्य सेनाओंमें भी वैमनस्यके लक्षण दीखने लगे। गवर्नर जनरल चिन्तित हुए। बहरामपुर और बारकपुरके सिपाहियोंके आन्दोलनसे जो आतङ्क पैदा हुआ था वह धीरे धीरे बढ़ता गया। वे शान्त, विचारवान और ज्ञानी थे। पर शान्ति और विवेकसे भी जो भाव बढ़ रहा था, वह न रुका। जनवरी मासमें जो एक छोटा सा बादलका टुकड़ा दिखाई दे रहा था वह अप्रैलमें आकाश भरमें घटाके रूपमें फैल गया। बारकपुरकी घटनाका अन्त होनेके पहले, जमादार और मंगल पांडेके फांसीपर लटक-

*Kaye's Sepoy war, vol. 1 P. 551. note.

नेके भी पहले, सुदूर हिमालयसे सेनाकी नाराजीके समाचार आये। हिमालयसे बंगालतक जितनी फौजी छावनियाँ थीं उन सबके सिपाही त्रस्त और क्रोधित हो उठे थे। सब सिपाही सरकारसे नाराज हो गये, हरएक छावनीमें नई बंदूक और चर्बी मिले कारतूसोंका आन्दोलन जोरसे चलने लगा था।

कलकत्तेसे हजार मील दूर, उन्नत पर्वतमालाके निकट, अम्बाला छावनी है। इस स्थानका पुराना नाम अम्बालय है। पांडवोंकी माता कुन्ती यहींकी राजपुत्री थी इसलिये उस स्थानका यह नाम पड़ा। इस अम्बालयको बादमें अम्बाला कहने लगे। इसके पूर्व विस्तृत कुरुक्षेत्रका मैदान है, जहाँ कौरव पांडवोंकी द्वेषाग्नि खूनकी धारासे बुझी थी, पृथ्वीराज और समरसिंहके प्राणोंके साथ भारतका गौरवसूर्य डूबा था, मरहटोंने सिंहासनके लिये अपनी जन्मभूमिकी स्वाधीनता खोई थी, जहाँ हिन्दू और मुसलमान विजेता और विजित—अनन्त कालके लिये अनन्त निद्रामें सोये थे, वह भयानक और शान्त कुरुक्षेत्र अम्बालाके साथ ही गहरी नींदमें सोया हुआ मालूम होता है। जिस समय सभ्यताका अभिमानी यूरोप जंगलोंसे परिपूर्ण था, जिस समय यूरोपीय जातियाँ दरख्तोंकी छालों और जानवरोंके चमड़ोंसे अपनी लज्जा निवारण करती थी, शिकार करके पेट भरती थीं; अम्बालाका उस समयका इतिहास भी उज्ज्वल था। उसी अम्बालाको सरकारने भी अपनी छावनी बनाया। प्रधान सेनापति एनसन् मार्चके मध्यमें यहाँ आकर गर्मी

बितानेके लिये शिमला जानेवाले थे उसी समय उन्हें सिपाहियोंकी नाराजगीका समाचार मिला। यहाँ भिन्न भिन्न दलोंको भिन्न भिन्न तरहकी बंदूकोंके व्यवहारकी शिक्षा दी जाती थी। यह लोग रणनिपुण वीर थे। कारतूस देखकर उनमें अपवित्र चर्बी लगी समझकर यदि लोग अपने धर्मनाशके भयसे हिल उठे तो आश्चर्यकी बात नहीं, उन्हें भी शान्तिके साथ समझानेकी आवश्यकता थी।

प्रधान सेनापतिके साथ ३६ नं० सेना अम्बाला गई थी। इसी सेनाके दो अफसर पहले अम्बाला जा पहुँचे थे। जब ३६ नं० सेना वहां पहुँची तब वे मिलनेके लिये इस सेनामें आये। जब दोनों अफसर तंबूमें पहुंचे तब सूबेदारने इनको बिना सलाम किये घृणाके साथ कहा कि, अब आप हमको ईसाई बनानेपर उतारू हुए हैं, अपवित्र कारतूसोंसे सबके धर्म और जातिका नाश करना चाहते हैं। इस समय लेफ्टिनेंट मार्टिन सिपाहियोंको नई बंदूकका चलाना सिखा रहे थे। इन दोनों अफसरोंने शीघ्र मार्टिनको यह समाचार दिया। इसी समय एक सिपाहीने बालककी तरह पुकारकर कहा कि—"मेरा धर्म नाश हो चुका। मेरे साथी मेरे साथ खाना नहीं चाहते।" मार्टिन चिन्तित हुए। एकके बाद एक आशंकाकी लहर उठने लगी। जांच करनेपर उन्हें मालूम हुआ कि चर्बी मिले कारतूसोंके व्यवहारसे छावनीके सब सिपाही उद्विग्न हैं। कितने यह भी कहते थे कि मैंने चर्बीवाले कारतूस चलाये हैं इसलिये घर जानेपर घरवाले मेरा छुआ

भोजन न करेंगे। सिपाहियोंमें इस प्रकार विक्षोभीकी लहर देखकर मार्टिनने सब बातें प्रधान सेनापतिके सामने रखनी चाहीं। पर सरकारके दफ्तरकी कार्यप्रणालीके अनुसार उसे प्रधान सेनापतिके सामने स्वयं यह बात रखनेका अधिकार ही न था। नियमानुसार उसे सब बातें सेनाके सहायक एडजूटैंटको लिखनी पड़ीं। प्रधान सेनापतिको सिपाहियोंकी चंचलताकी खबर पहले ही थी। २३ मार्चको उन्होंने अस्त्रशिक्षा देखी। इससे पहले दिन तीसरे पहर उन्हें समाचार मिला था कि सिपाही उनसे प्रत्यक्ष मिलकर अपनी कुछ प्रार्थना करना चाहते हैं। प्रधान सेनापतिने सब सेनाओंको एकत्र करके अपनी बात कहनी चाही, इसलिये दूसरे दिन सब सेनायें परेडके मैदानमें एकत्र हुईं। भारतीय अफसर सेनापतिके सामने खड़े हुए। प्रधान सेनापति हिन्दुस्तानी भाषा नहीं जानते थे इसलिये लैफ्टिनेंट मार्टिन उनकी बात भाषामें समझानेको प्रस्तुत हुए। प्रधान सेनापति एक एक वाक्य कहकर रुक जाते और मार्टिन उसकी भाषा करके सेनाको सुनाते। फिर सेनापति उनसे पूछते कि वे इसका मतलब अच्छी तरह समझ गये या नहीं, फिर वे आगे कहते। उनके भाषणका मर्म यह है:—

"सैनिकोंको नयी बंदूक चलानेकी शिक्षा देनेके लिये यहाँ जो सैनिक शिक्षालय बनाया गया है उसमें जो सैनिक और अफसर शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं उनसे मैं कुछ बातें कहना चाहता हूं। अपने कामोंको बड़ी योग्यतासे सम्पादन करनेके कारण ही

वे अफसर बनाये गये हैं, मुझे आशा है कि इस मौकेपर भी वे अपनी योग्यताका पूरा परिचय देंगे। उनके अधीन जो भारतीय सेना है उसके उपकारके लिये वे अपनी सम्पूर्ण शक्ति और योग्यताका प्रयोग करेंगे। जिस सरकारका वे काम कर रहे हैं, उसपर झूठा सन्देह करना उचित नहीं। इस समय जो बंदूक फौजोंको दी गई है, वह पहलेकी बंदूकोंसे कहीं अधिक अच्छी है। इस बंदूकके लिये नई तरहकी कारतूसोंका बनाना आवश्यक हो गया। इन कारतूसोंको देखकर हर एक सिपाही सोचने लगा है कि सरकार उनके सनातन धर्म और जातिका नाश करना चाहती है। पर यह बात कितनी असत्य और कितनी निर्मूल है यह एक क्षण सोचनेसे ही समझमें आ सकती है। अगर इस तरह सरकार सबका धर्म नाश भी करे तो इससे सरकारका क्या लाभ? क्या मुझे कोई स्पष्ट रूपसे समझा सकता है कि सरकारका, धर्म नाश करनेसे, कोई विशेष लाभ होगा? मैं स्पष्ट शब्दोंमें कहता हूं कि किसीके धर्ममें रुकावट पैदा करना, पुराने रीति रिवाजोंमें बाधा डालना, या किसीके विश्वासमें विघ्न पैदा करना, सरकारकी इच्छा नहीं है। मेरा विश्वास है कि सब कोई इस वेबुनियाद शकको अपने हृदयोंसे निकाल देंगे। जिन कारतूसोंके सम्बन्धमें सिपाही लोग युक्तिके साथ आपत्ति करेंगे वे उन्हें काममें लानेको न दिये जायँगे। पर अपने सेनापतियोंकी बातपर भी जो विश्वास नहीं करते, वे सच्चे वीर सैनिक नहीं माने जा सकते। अपनी पालक

सरकार और ऊपरवाले अफसरोंकी आज्ञाका पालन करना ही सच्चे सिपाहीका लक्षण है। आज्ञा न माननेवालोंके साथ कैसा व्यवहार करना चाहिये इसे सरकार अच्छी तरह जानती है। पर हम डर दिखाना नहीं चाहते। जिनके हृदयोंमें साहस और सच्ची वीरता है उन्हें उनका कर्त्तव्य समझाना व्यर्थ है। मैं निश्चित रूपसे कहता हूं कि, सरकार केवल सेनाओंके ही नहीं बल्कि इस जमीनके रहनेवाले किसी आदमीके धर्म और जातिके विषयमें कभी हस्तक्षेप नहीं करना चाहती। आजतक सरकारने कभी ऐसा नहीं किया और न कभी आगे ऐसा करेगी। मेरे सामने जो भारतीय अफसर खड़े हैं, उनपर मेरा विश्वास है। मैं आशा करता हूं कि ये लोग अपने अधीन सैनिकोंको यह बातें समझावेंगे। मेरा विश्वास है कि यह अपने पवित्र सैनिक धर्मको कलंकसे बचावेंगे और अबतक वे जिस उन्नत चरित्रका परिचय देते आ रहे हैं उसे ज्योंका त्यों बनाये रक्खेंगे।”

इतना कहकर प्रधान सेनापति चुप होगये। जब सेनापति हेअर्सकी हिन्दुस्तानी भाषाका सैनिकोंपर कुछ असर न पड़ा था तब प्रधान सेनापतिकी भाषाका अनुवाद सुनकर वे क्या मान सकते थे? जो अफसर प्रधान सेनापतिके सामने खड़े थे उन्होंके कानोंमें उनके शब्द पड़े थे। भाषण समाप्त होनेपर तीन आदमियोंने मार्टिनके पास जाकर कहा कि, प्रधान सेनापतिने अपने भाषणमें उनके प्रति जो सम्मान प्रगट किया उसके लिये वे

कृतज्ञ और सन्तुष्ट हैं। यद्यपि सरकारकी सदिच्छापर उन्हें पूरा विश्वास है, पर दुःखके साथ कहना पड़ता है कि कारतूसोंके सम्बन्धमें एकका विश्वास है तो दस हजारका नहीं है। इस समय सबका यह विश्वास हो गया है कि कारतूसोंके द्वारा सरकार सबका धर्मनाश करना चाहती है। यह विश्वास केवल सैनिकोंका ही नहीं, बल्कि उनके गाँव और बस्तीवालोंतकका यही विचार है। सिपाही नये कारतूसोंको काममें लानेको तैयार हैं। पर इसी कारण उन्हें अपनी बिरादरीसे बाहर और भाई बन्धुओंसे पृथक् होना पड़ेगा, यह बात सिपाही लोग अपने पितासमान प्रधान सेनापतिसे निवेदन करना चाहते हैं। यदि वे इन नये कारतूसोंको काममें लायेंगे तो सदाके लिये जाति और घरवालोंसे पृथक् हो जायंगे। सरकारकी आज्ञा पालन करने, और अपने सेनापतिकी बात माननेसे वे जन्म भरके लिये सबसे बिछुड़कर अकेले रह जायंगे। मार्टिनने यह बात प्रधान सेनापतिसे कहनेका वादा किया। उसने अपना वादा पूरा भी किया। उसका पत्र एडजुटेंट जनरलके दफ्तरमें पहुंचा। उसने स्पष्ट रूपमें लिखा था—"सैनिकोंमें अनेक बुद्धिमान् और विश्वस्त आदमी हैं। यह कहते हैं कि हम अपने सेनापतियोंकी आज्ञाका पालन करेंगे पर इससे वे जाति और धर्मसे च्युत कर दिये जायंगे। मुझे भारतीयोंके हार्दिक भाव समझनेका जो कुछ अवसर मिला है, उससे उनकी यह बात सत्य है। भारतवासियोंका हृदय धर्मनाशके विचारसे विचलित हो उठता है। उनके सामने अनेक

कल्पित भयके भयानक चित्र दौड़ा करते हैं और इसी कारण वे अपनी दिमागी शक्ति खो बैठते हैं। उनका जो कुछ विचार है वह हर तरहसे बुद्धि और युक्तिके क्षेत्रसे बाहर है, और उनका इसपर पूरा विश्वास है। इस समय इस बड़े भारी देशके अधिकांश निवासी क्यों उत्तेजित हो उठे हैं सो मैं निश्चित रूपसे तो नहीं कह सकता पर मेरा विश्वास है कि नये कारतूसोंको वे गौ और सुअरकी चर्बीसे बना मानते हैं। चारों ओर यही अफ़वाह उड़ी है और इसी कारण यह उत्तेजना है।" लैफ्टिनेंट मार्टिनका यह पत्र एडजूटेंट जनरलके दफ्तरसे प्रधान सेनापतिके पास गया। सेनापति एनसन चिन्तित हुए। उसी दिन उन्होंने गवर्नर जनरलको लिखा—"सैनिक स्थिर और सन्तुष्ट होंगे, इसकी चिन्ता नहीं, किन्तु मैं यह सोच रहा हूं कि वे अपने भाई बन्धुओंसे अपमानित होंगे।" एनसन सोचने लगे कि अब इस विषयमें क्या किया जाय, सिपाहियोंको पहलेके समान किस प्रकार राजभक्त बनाये रखा जाय। वे एकाएक कोई उपाय निश्चित न कर सके। व्याख्यान देकर या डर दिखाकर सिपाहियोंको अनुरक्त करना व्यर्थ था। ऐसा करनेसे उनके हृदय अधिक विद्रोही होंगे, वे सरकारको अपने धर्मका शत्रु समझेंगे। एनसनके विचारमें एक बार आया कि नई बंदूककी शिक्षा उठा दी जाय। पर यह कायरता होगी। अन्तमें प्रधान सेनापतिने यह निश्चय किया कि नये कारतूसोंके सम्बन्धमें जबतक मेरठसे खबर न आवे तबतक अम्बालामें इनका व्यवहार ही रोक दिया जाय।

इधर कलकत्ताके गवर्नमेंट हाउसमें बैठे हुए गवर्नर जनरल अम्बालाके असन्तोषपर विचार करने लगे। नई बंदूककी शिक्षाका रोकना उन्हें अच्छा न मालूम हुआ। प्रधान सेनापतिको गवर्नर जनरलने लिखा—"अम्बालामें जो सैनिक नई बंदूककी शिक्षा पा रहे हैं, वे शायद नई कारतूसोंके व्यवहारपर आपत्ति न करेंगे। कारतूसोंका कागज हर तरहसे शुद्ध है। इस कागज़में ऐसी कोई चीज नहीं है जिससे सिपाहियोंकी जाति और धर्मके नाश होनेकी संभावना हो। इस समय यदि शिक्षा रोकी गई—सीखकर सिपाही यदि अपनी अपनी सेनाओंमें वापिस न गये—तो हमारा उद्देश्य नष्ट हो जायगा। इससे सिपाही यही सोचेंगे कि कारतूसोंमें जरूर कोई अपवित्र पदार्थ ही था। सरकारने बिना समझे उसे प्रचलित किया था और अब समझकर उठा दिया। इससे सरकारकी शक्ति और दृढ़ताकी हानि होगी। इसलिये मेरे विचारसे अम्बालामें कारतूसोंका व्यवहार जारी रखना चाहिये। इससे सीखनेवालोंके संस्कारोंमें किसी प्रकारका परिवर्तन न होगा, क्योंकि वे यह समझ चुके हैं कि कारतूसोंके कागजमें कोई अपवित्र पदार्थ नहीं लगा है। उनका यह विश्वास देखकर दूसरे सिपाही भी उनका अनुकरण करेंगे और अन्तमें समझ जायंगे कि कारतूसोंमें अपवित्र पदार्थ नहीं है। पर यदि कारतूस रोक दिये गये तो सिपाहियोंको पूरा विश्वास हो जायगा कि कारतूस अपवित्र थे और इस कारण सरकारपर उनकी अधिक अश्रद्धा होगी। उनके इस सन्देहको दूर करना भविष्यमें असम्भव हो

जायगा।" इसी युक्ति द्वारा गवर्नर जनरलने अम्बालामें कारतूस-के प्रचारकी आज्ञा दी। उन्होंने सोचा था कि कारतूसोंका व्यव-हार रोकना सरकारकी कमजोरी कहावेगी। इसलिये अम्बालामें कारतूसोंका व्यवहार जारी रहा।

गवर्नर जनरलका पत्र अम्बाला पहुंचनेके पूर्वही प्रधान सेना-पति शिमलाके लिये रवाना हो चुके थे। हिमालयकी शीतल वायुमें चारों ओरका दृश्य बड़ा रमणीक था। इस सुखके आवे-शमें उन्होंने गवर्नर जनरलको लिखा—"शिमलेका दृश्य बड़ा सुन्दर है। जल, वायु उत्कृष्ट है, मैं हृदयसे चाहता हूं कि यहां आकर आप भी अपने स्वास्थ्यकी वृद्धि करें।" पर स्वास्थ्य बढ़ानेका यह समय न था। हिमालयकी शीतल वायुका आनन्द लेनेका समय कहां था? पंजावसे लेकर वंगालतक गम्भीर आतङ्क छा रहा था। चारों ओरसे शंकाजनक समाचार आकर गवर्नर जनरलको चिन्तित कर रहे थे। उच्छृंखल सिपाहियोंके कारण पहले वारकपुरमें जैसी अग्निलीला हुई थी वैसी ही अव अन्यान्य स्थानोंपर होने लगी। अप्रैल महीनेमें, अम्बालामें, यह घटना वार वार होने लगी। सरकारने कारतूसोंके सम्बन्धमें जो निर्णय किया था वह सिपाहियोंको मालूम हो गया था। कारतूसोंका व्यवहार वन्द न होनेसे उन्हें यह आशंका तो न हुई कि सरकार जवर्दस्ती उनका धर्मनाश कर रही है, पर जातिसे निकाले जानेकी आशंका ज़रूर उनके हृदयोंको व्यथित कर रही थी। जव अपने गांव और घर जायंगे तव घरवाले उनके

हाथका छुआ भोजन न करेंगे, इसी चिन्तासे वे पागल हो रहे थे। इस आन्दोलनके साथ साथ अम्बाला अग्निलीलाका घर बन गया। रातके बाद रात आने लगी—रोज यूरोपियन अफसरों और सिपाहियोंके बंगलोंमें आग लगने लगी। अम्बालाके गोरे अधिकारी घबरा उठे। भयानक गर्मीकी रातमें आग देखकर सब शंकित हुए। आग लगानेवालोंको पकड़नेके लिये विचारक नियत हुए, पर फल कुछ न हुआ। बहुत कुछ जांच करनेपर भी उन्हें कोई अपराधी न मिला। २२ अप्रैलको सैनिक विद्यालयके एक सिपाहीका घर जल गया, दूसरी रातको ६० नं० सेनाके पांच घर भस्म हो गये। कहा जाता है कि इस महीनेके अन्तमें एक सिक्खने अपनी गवाहीमें यह कहा था कि नये कारतूसोंका व्यवहार जारी रखनेके कारण प्रतिज्ञा करके सिपाहियोंने इन सब घरोंको जलाया है।* पर जांच करनेपर कोई भी अपराधी सिद्ध न हुआ। किसीने कसम खाकर गवाही न दी और न किसीको गवाही देनेके लिये तंग ही किया।†

प्रधान सेनापति दो सालसे भारतमें थे। इतनी देरसे वे भारतीय सिपाहियोंका आचार व्यवहार और रहन सहन देखते आ रहे थे। पर भारतियोंके हार्दिक भावको वे भी न समझ सके थे। स्वयं उन्होंने स्वीकार किया है कि अम्बालाकी घटनासे वे बड़ी असमंजसमें पड़ गये। हरएक रातको घर जलते और कोई

* Holme's History of the Indian mutiny P. 92

† Kaye's Sepoy War. Vol 1 P. 562.

अपराधी सिद्ध न होता यह सचमुच आश्चर्यकी बात थी। अप्रैल महीनेके अन्तमें उन्होंने गवर्नर जनरलको लिखा—"हम अम्बालाके अग्निकाण्डके किसी अपराधीको गिरफ्तार न कर सके। यह आश्चर्यकी बात हो कही जा सकती है। लोगोंने जिस बातको अनिष्टकर समझा है उसके लिये ही विरुद्ध गुप्त दल बना कर षड्‌यन्त्रमें लिप्त हुए हैं और जो जानते हैं वे उनके डरसे प्रगटतक नहीं करते, इससे समझा जा सकता है कि बात कहांतक बढ़ी हुई है।" इस लिखनेके तर्जसे साफ मालूम होता है कि अंग्रेज अधिकारी बातकी तहतक नहीं पहुंचे थे। वे केवल बाहरी दृश्यको देखकर बातको समझनेकी कोशिश कर रहे थे। भारतीय सिपाही अंग्रेज़ोंको किस प्रकार अविश्वासकी दृष्टिसे देखने लगे थे, यह भी सेनापतिके पत्रसे प्रगट होता है। वे इस समय अपने आपसका अनैक्य और विरोध भूलकर अंग्रेज़ोंके विरुद्ध तैयार हो रहे थे। उनके हृदय अधिकारियोंकी अमंगल कामनासे पाषाणमय हो रहे थे। इसीलिये कोई अपने भाइयोंकी बात अंग्रेज़ अधिकारियोंके निकट प्रगट न करता था।

समय बीतने लगा। कालके अनन्त स्रोतमें दिनके बाद सप्ताह और सप्ताहके बाद मास बीता पर किसी प्रकार शान्ति न हुई। जिस भयानक मेघसे भारतीय आकाश घिर गया था उसके दूर होनेके कुछ भी लक्षण दिखाई न दिये। पहले यह विचार किया गया था कि हिन्दू ही इस गड़बड़के कारण हैं। ३४ नं० सेनाका जब विचार किया गया तब यही सिद्धान्त

बनाया गया था कि सिक्ख और मुसलमान इस आन्दोलनसे मुक्त हैं। १९ नं० सेनाके सब हिन्दुओंके हथियार लिये गये थे, इससे भी यही सिद्धान्त बनाया गया था। पर इसकी आलोचना बादमें होगी कि सन् १८५७ की लड़ाईका कारण केवल हिन्दू ही थे या और भी। अंग्रेज़ोंके सामने हिन्दू मुसलमान दोनों एक ही श्रेणीमें थे। अप्रैल मासका अन्त होनेके पूर्व ही गवर्नर जनरलकी समझमें यह बात आई कि समस्त भारतवासी उनके विरुद्ध हैं। हिन्दू और मुसलमान दोनों उनका अनिष्ट करनेके लिये तैयार हैं।

इस आपत्तिके मौकेपर सेनापतिको धीरता और विचारसे काम करना उचित था। पर जनरल एनसन कार्यदक्षताका परिचय न दे सके। भारतीय आकाश घनघटाच्छन्न हो रहा था, नवीन बादल क्रमशः प्रलयकी सूचना दे रहे थे, पर प्रधान सेनापतिको अब भी चेत न हुआ। जिसके हाथमें सारी सेनाओंकी बागडोर थी, जो सब बातोंके लिये जिम्मेदार था, वह हिमालयकी शान्त वायुमें स्वास्थ्य बढ़ा रहा था। विपत्ति भयानक रूप धारण करती जा रही थी पर उसे चिन्ता न थी। गवर्नर जनरलकी मन्त्रिसभा इस बातमें व्यस्त थी कि उत्तेजित सिपाहियोंको किस प्रकार शान्त किया जाय, पर प्रधान सेनापति शिमलामें वायु सेवन कर रहे थे। गवर्नर जनरलकी मन्त्रिसभासे सेनापतिका कोई सरोकार न था। उन्हें प्रति वर्ष प्रधान सेनापति पदके लाख रुपये और मन्त्रिसभाके साठ

हजार रुपये मिलते थे। पर मन्त्रिसभाका कुछ काम न करके भी वे यह रुपया ले रहे थे।* दरिद्र भारतकी सुख शान्तिका जिम्मा लेकर भी वे अशान्तिके प्रारम्भमें बेफिकर थे।

लार्ड कैनिंगको जो आशंका थी वह सत्य हुई। हिन्दू और मुसलमान इस सम्मिलित उद्देश्यके साधनके लिये एकत्र हुए थे इसका प्रमाण मिला। नई राइफल बंदूक ही इस आन्दोलनका कारण थी क्योंकि चर्वी मिले कारतूस सिवा इसके और किसीमें व्यवहार ही नहीं होते थे। सबसे पहले पैदल सेनाको ही यह कारतूस व्यवहारके लिये दिये गये। पैदलोंमें अधिकतर हिन्दू थे और सवारोंमें मुसलमान। पैदलोंसे ही सरकारको अधिकतर आशंका थी। इसलिये अधिकारियोंने इन्हींपर दृष्टि रक्खी थी। पर अब मेरठसे समाचार आया कि रिसाला भी सरकारके विरुद्ध उठ खड़ा हुआ।

मेरठ एक बड़ी छावनी है। उस समय काली और गोरी दोनों तरहकी सेना वहाँ थीं। गोलन्दाजोंकी पर्याप्त संख्या थी। पैदल और सवारोंको इसी स्थानपर सैनिक शिक्षा दी जाती थी। नये कारतूस बनानेका सबसे बड़ा कारखाना भी यहीं था। यूरोपीय और हिन्दुस्तानी सिपाहियोंका निवासस्थान पृथक् पृथक् था। उस समय १८५३ गोरे सिपाही और २९२२ हिन्दुस्तानी सिपाही थे। मेरठके सिपाही सरकारसे नाराज हैं यह खबर पहले ही उड़ चुकी थी। इसलिये पश्चिमोत्तर देशके

* Martin's Indian Empire Vol. II P. 139.

सब सिपाही और सब सेना मेरठके समाचारोंके लिये उत्सुक थीं। सब आने जानेवालोंसे सिपाही लोग मेरठका हाल पूछा करते थे। अप्रैल मासमें सब आशंका कर रहे थे कि मेरठमें किसी न किसी प्रकारकी घटना होगी। सिपाहियोंका यह दृढ़ विश्वास हो गया था कि सरकार उनका धर्म नाश करनेपर तुल गई है। कहा जाता है कि, जो आदमी सरकारके विरुद्ध सिपाहियोंको उत्तेजित कर रहे थे उनमेंसे एक इस समय मेरठमें रहता था। यह साधु या सन्यासीके वेषमें हाथीपर चढ़कर घूमा करता था। शान्ति रक्षकोंका इसपर शक हुआ, उन्होंने इसे मेरठसे चले जानेको कहा। अपने नौकरों और अनुयायियोंके साथ इसने स्थान छोड़ा, पर मेरठसे न गया। बहुतोंका अनुमान है कि वह सिपाहियोंसे मिल गया था।*

मेरठके समान और किसी छावनीमें कारतूसोंका आन्दोलन इतना अधिक न हुआ। जातिनाशकी आशंकासे और कहींके सिपाही इतने त्रस्त भी नहीं हुए थे। दिनपर दिन मेरठके सिपाहियोंकी नाराजी बढ़ी, यह नाराजी अन्तमें कट्टर शत्रुताके रूपमें बदल गई। ३ नं० रिसाला इस समय मेरठमें था। वह वीरता और साहसके लिये प्रसिद्ध था। लार्ड लेक इसकी बड़ी प्रशंसा करते थे। उनके अधीन इसने दिल्ली, लाहौर और भरतपुरमें बड़ी वीरता दिखाई थी। इसके बाद अफगानिस्तान, अलीवेल और सोब्रांवके संग्रामोंमें यह बड़ी बहादुरीसे लड़ी थी। इसमें

* Kaye's Sepoy War Vol. 1. P. 516.

ऊंचे दर्जे और जातिके हिन्दू थे। यह लोग अधिकतर तलवार और कभी बंदूकका व्यवहार करते थे। अप्रैल मासके अन्तमें पहले तो इस रिसालेने अपने अफसरोंकी आज्ञा माननेसे इनकार किया। इन्हें न कोई नया हथियार दिया गया था और न नई चीज। अबतक ये जिस कारतूसको दांतसे काटकर बंदूकमें लगाया करते थे उसे हाथसे काटनेकी आज्ञा दी गई थी। इस रीतिके प्रचलित करनेका क्या उद्देश था यह समझानेके लिये कर्नल स्मिथने सबको परेटके मैदानमें एकत्र होनेकी आज्ञा दी। २४ अप्रैलको सवेरे एकत्र होनेका समय था। इससे पहले दिन शामको अफवाह उड़ी कि रिसालेवाले कारतूसको हाथसे न छुएँगे। इसी दिन यानी २३ अप्रैलको हवलदार हीरासिंहने कप्तानसे कहा कि सैनिक कारतूसोंसे बेहद नाराज हैं। अच्छा यह हो कि कलकी कवायदमें कारतूस न दिये जायँ। रातको दस बजे कप्तानने यह बात अपने बड़े अफसर एडजूटेंटको लिखकर भेजी। कप्तानने साफ लिखा था कि यदि कारतूस दिये गये तो सारी सेना सरकारके विरुद्ध हो जायगी। सेनापति कर्नल स्मिथ पहले तो कवायद बंद करनेको तय्यार हुए। पर एडजूटेंटने समझाया कि ऐसा करनेसे हमारी कमजोरी प्रगट होगी। इसलिये जो आज्ञा दी गयी थी वह वैसीकी वैसी रही। निश्चित समयपर सब एकत्र हुए। जब कारतूस दिये गये तब ९० सैनिकोंमेंसे ८५ने उन्हें स्पर्श न किया, सिर्फ हीरासिंह आदि ५ ने वह आज्ञा मानी। कर्नल स्मिथने सरकारकी सदाशयता और

नये, कारतूसोंकी उपयोगिता बतलाई, पर यह व्यर्थ था। कवायद बंद रही। सेनापतिने ८५ आदमियोंके हुक्म न माननेकी जांच शुरू कराई।

कर्नल स्मिथ मौका देखकर काम करना नहीं जानते थे। वे उद्धत प्रकृतिके और सेनाके अप्रिय सेनापति थे।* इसलिये उनका काम सैनिकोंको प्रिय नहीं लग सकता था। वे उसी समय रिसालेके सेनानी बने थे, पर उनके रूखे बर्तावके कारण सिपाही सन्तुष्ट न थे। भारतीय सैनिक अपने धर्म और आचार विचारके सबसे अधिक पक्षपाती थे। वे धैर्यपूर्वक अपने प्राणोंकी आहुति दे सकते थे, पर अपने आचार विचारोंपर जरा भी धक्का लगने देना उन्हें पसंद न था। धर्मके विरुद्ध कोई बात, झूठी या सच्ची हो तोभी, वे विश्वास कर लेते थे और धर्म त्याग देनेसे पहले प्राण त्याग देनेमें अपना गौरव समझते थे। यह पश्चिमोत्तर देश आगरा व अवधके कड़े वीर थे। तीन नम्बर रिसालेमें येही लोग थे। ये विचारशील और ज्ञानी थे, ये जिस बातपर जम जाते उसे मरकर भी न छोड़ते थे। सरकारने अपनी गलतियोंसे जो विषवृक्ष बोया था उसके फल आनेका समय आ गया था। कर्नल स्मिथने शान्तिसे काम न लिया, यदि वे सिपाहियोंसे उनकी आशंकाका कारण पूछते तो वे कृतज्ञ होते। पर यह कुछ भी न हुआ। फल यह हुआ कि रिसालेके समान अन्यान्य सेनाओंमें भी अशान्ति फैल गई।

* Holmes' Indian Mutiny P. 100.

इन सब घटनाओंसे लार्ड कैनिंगने समझ लिया कि शीघ्रही भयानक विपत्तिका सामना करना होगा। यद्यपि वे सदा शान्त और गम्भीर रहनेवाले पुरुष थे फिर भी वे उपस्थित विषयके कारण चिन्तित हो उठे। प्रसन्नताके बदले चिन्ता और धैर्यके स्थानपर अशान्ति उनके हृदयको हिलाने लगी। चारों ओरके भयानक दृश्यसे वे घबरा उठे, चारों ओर उन्हें घोर भयानक दृश्य देखा। केवल सैनिकोंमेंसे नहीं, क्रोधकी चिनगारियाँ प्रजामेंसे भी निकल रही थीं। मेरठकी तरह भारतके अन्यान्य स्थानोंमें लोगोंका विश्वास हो गया था कि अंग्रेज़ हिन्दू मुसलमान दोनों-का धर्मनाश करनेके लिये तैयार हैं। जब किसी बड़े अनिष्टकी आशंका लोगोंमें फैलती है तब सर्वसाधारणकी कल्पनाशक्ति जाग उठती है। इस कल्पनाशक्तिके सहारे लोग तरह तरहकी अफवाह फैला देते हैं, जिससे सर्वसाधारणमें भयानक आतङ्क छा जाता है। ये अफवाहें कहाँसे निकलती हैं और कौन किस प्रकार इनका प्रचार करता है यह कोई मालूम नहीं कर सकता। बातों ही बातोंमें अजब अफवाहें सर्वत्र प्रचलित हो जाती हैं। इस समय सर्वसाधारणमें यह अफवाह प्रचलित हुई कि सरकारने भारतवासियोंका दीन ईमान लेनेके लिये मैदेमें हड्डियाँ पीसकर मिलाई हैं और घीमें अपवित्र चर्वी मिलाकर भेजी गई है। अंग्रेज़ोंने भारतवासियोंकी जाति और धर्मका नाश करनेके लिये यह जाल रचा है। और तो क्या, लोग जिन कुओंका पानी पीते हैं उनमें गौ और सुअरका रक्त डाला गया है और इसी कारण

शीघ्रही भारतके हिन्दू और मुसलमान दोनोंका धर्मनाश होगा।" बाजार, गली, मुहल्ले और घरोंमें यह चर्चा होने लगी। न मालूम ये अफवाहें कहाँसे गढ़ी जाती थीं, कौन सी जगह इनका आविष्कार होता था, कौन इनका प्रचारक था, पर जो चर्चा एक स्थानपर होती वह देखते देखते देशके एक कोनेसे दूसरे कोनेतक फैल जाती थी। सब उसपर विश्वास करते थे और इसी कारण 'अब क्या होगा' यह सोचकर भयभीत होते थे। जिन आविष्कारक दिमागों या स्थानोंसे ऊपरवाली अफवाहोंका जन्म हुआ था, वहींसे एक और विचित्र अफवाहका भी आविष्कार हुआ। लोगोंने सुना कि बड़े बड़े अंग्रेज़ोंने सब धनी, रईसों, ज़मींदारोंको एकत्र करके अपनी पाव रोटी खानेकी आज्ञा दी है।

इस तरहकी जितनी अफवाहें उस जमानेमें उड़ी थीं उन सबमेंसे मैदेमें हड्डियाँ पीसकर मिलानेकी अफवाहने लोगोंको बड़ा उत्तेजित किया। मार्च मासमें बारकपुरकी छावनीमें ये अफवाह उड़ी। अप्रैल मासके मध्यतक सारे पश्चिमोत्तर प्रदेशमें यह चर्चा होने लगी। अंग्रेज़ बड़े चिन्तित हुए। इस समय आटेका मूल्य बढ़ गया था, गरानी हो गई थी, इसलिये व्यापारियोंने मेरठसे आटा खरीदकर लानेके लिये सरकारकी नावें किरायेपर कर ली थीं। जब यह आटा कानपुर पहुंचा तब भाव कुछ नीचा हुआ। व्यापारियोंने फिर दूसरा चालान किया, पर इसके पहुँचते ही यह अफवाह उड़ गई कि यह आटा अंग्रेज़ोंकी मैशीनोंमें तैयार किया गया है और सर्वसाधारणका

धर्मनाश करनेके लिये उन्होंने इसमें गौकी हड्डियाँ पीसकर मिला दी हैं। यह अफवाह विजलीके वेगके समान कानपुर और उसके आस पास तथा वहाँकी सेनाओंमें जा पहुँची। एक क्षणमें मेरठसे आये हुए आटेकी विक्री विलकुल वंद हो गई, मानों किसी अलक्षित मंत्रशक्तिसे सर्वसाधारणकी रुचि परिवर्तित हो गई। किसी सिपाहीने इस मैदेमें हाथ न लगाया, प्रजाके नीचसे नीच आदमीने भी उसका स्पर्श न किया। वह मैदा वहुत सुन्दर था और वाजारके आटेसे सस्ता था, पर कोई उसको ओर देखना भी पसन्द न करता था। एक क्षणमें यह समाचार एक स्थानसे दूसरे स्थान और वहाँसे तीसरे स्थानपर पहुँचने लगा। सव अंग्रेज़ोंको अपना धर्म-द्रोही समझ घृणा और द्वेषकी दृष्टिसे देखनेलगे। सव सोचने लगे कि यह मैदा वाजारमें और अधिक आवेगा, अंग्रेज़ धर्मनाश करनेके लिये इसे और भी सस्ता करेंगे—धीरे धीरे सवको गौकी हड्डियाँ खिलाकर ईसाई वना लेंगे। इससे सव चिन्तित हो उठे, सव घवरा उठे, यह घवराहट ही ज्वालामुखी हो गई। जिन्होंने मेरठका मैदा खरीदा था उन्होंने उसे फेंक दिया, जिन्होंने रोटियाँ वनाली थीं उन्होंने उसे भी फेंक दी, जो खा गये थे वे गंगास्नान आदिसे शुद्ध होनेकी चिन्ता करने लगे। कहा जाता है कि कानपुरके आटेके व्यापारियोंने अपना आटा चढ़ी दरपर वेचनेके विचारसे यह अफवाह उड़ा दी थी कि मेरठका मैदा अंग्रेज़ोंने अपनी मशीनोंमें गायकी हड्डियाँ मिला कर पीसा है। सम्भव है यह अफवाह व्यापारियोंकी ही उड़ाई

हुई हो—क्योंकि एक व्यापारी दूसरे व्यापारीकी चीजमें खराबी बताता ही है, पर इसका कारण चाहे जो हो, सर्वसाधारणपर इसका बहुत असर हुआ। सबका यह विश्वास हो गया कि अंग्रेज़ इस समय, चाहे जैसे हों, सबका धर्मनाश करनेपर तुले हैं। उस समय मशीनसे चलनेवाली आटा पीसनेकी चक्कियाँ भारतमें पांच सात स्थानोंपर ही लगी थीं। उनका चिकना, साफ और सस्ता आटा बहुत सुन्दर था,पर उसके इन गुणोंके ही कारण लोगोंने यह अफवाह उड़ा दी।

जिस तरह मैदेमें हड्डियाँ मिलानेकी अफवाह देश भरमें फैल गई थी और इसके मूलका पता न लगा था, उसी तरह एक अफवाह और फैली तथा उसके निकासका भी पता न लगा। पश्चिमोत्तर प्रदेश आगरा व अवधमें, लोगोंने एक रोटी बनाई, और वह रोटी एक गांवसे दूसरे गांव तथा दूसरेसे तीसरे गांवमें घूमने लगी। एक गांववाले दूसरे गांव पहुँचाते, दूसरे गांववाले तीसरे और तीसरेवाले चौथे—इस प्रकार वह रोटी गांव गांवमें घूमती फिरती थी—कोई उसे न रखता था। इस रोटीको बड़ी भारी बला समझकर लोग फौरन अपने गांवसे विदा करते थे। पहले तो सरकारको भी इसका पता न चला। पर गुड़गांवके डिप्टी कमिश्नरने सबसे पहले लेफ्टिनेंट गवर्नरको इस रोटी घूमनेके विषयमें लिखा। ले० गवर्नरने हरएक जिलेके मजिस्ट्रेटको इसकी जांच करनेकी आज्ञा दी। जांच हुई पर इसका रहस्य न खुला। किसी किसी मजिस्ट्रेटने लिखा कि यह किसी बड़े भारी

बलवा होनेकी सूचना है। किसीने लिखा कि यह मूर्ख हिन्दुस्तानियोंकी मूर्खताका एक नमूना है और कुछ नहीं, किसी किसीने दुष्ट आदमियोंकी दुष्टता कहकर सरकारको उनके दमनका उपदेश दिया। पर बहुतोंकी ऐसी सम्मति हुई कि यह रोटी घूमना सबको एक सूत्रमें बाँधना है, शीघ्रही सब सरकारके विरुद्ध खड़े होंगे। रोटी भेजनेका मतलब यह है कि समयपर तैयार रहो। एक प्रधान कर्मचारीने गवर्नर जनरलको लिखा कि, रोटी सर्वसाधारणकी जीवनरक्षाकी चीज़ है। इस रोटीको एक गांवसे दूसरे गांव भेजनेसे यह मतलब निकाला जाता है कि सरकार तुम्हारी रोटी छीन रही है, इसलिये इसकी रक्षा करनेको तैयार हो। बहुतोंका विचार था कि एक गांवकी बीमारी, हैजा आदि, दूसरे गांव भेजनेके विचारसे हिन्दुस्तानी रोटी दूसरे गांवमें भेजते थे।* रोटी भेजनेसे वे समझते थे कि बीमारी अगले गांवमें चली जायगी। किसी किसीने यह भी लिखा है कि इस रोटी भेजनेका यह अर्थ था कि वे दूसरे गांववालोंको बताते थे कि इस रोटीमें हड्डियोंका आटा है। किसी किसीने अपनी अकलकी दौड़ और भी तेज़ करके लिखा कि इस रोटीके भीतर सरकारके विरुद्ध षड्यन्त्र फैलानेवाले पत्र रक्खे जाते थे। खैर, रोटीके विषयमें तरह तरहकी सम्मतियाँ हैं। कोई उसे भारतवासियोंकी मूर्खताका एक चिह्न मानते हैं और कोई सरकारके विरुद्ध किसी षड्यन्त्रकी

*Kaye's Sepoy war vol I. P. 572, note.

सूचना। इसका असली मतलब चाहे जो हो, पर सर्वसाधारणमें इससे उत्तेजना फैली यह सत्य और निर्विवाद है। जहाँ होकर यह रोटी गई वहाँके सब आदमी उत्तेजित और व्याकुल हो उठे। वहाँ वहाँके आदमियोंमें प्रतिक्षण एक नई बात देखनेकी आशंका फैल गई।

जिस समय चर्बी मिले कारतूसोंका आन्दोलन हो रहा था, हड्डियोंसे मिले मैदेके कारण लोग उत्तेजित होरहे थे, रहस्यमय रोटी एक स्थानसे दूसरे स्थान भेजी जा रही थी, उस समय किसी किसीकी नजर नानासाहबपर पड़ी। पहले भागमें लिखा जा चुका है कि नानासाहब कानपुरके निकट बिठूरमें रहते थे। पेशवाका सम्मान, पेशवाका पदगौरव इस समय अस्त हो चुका था, सम्पूर्ण सम्मानसे वंचित, स्वदेशसे दूर, पैत्रिक पेंशनसे हीन, नानासाहब अपना समय बिता रहे थे। महाराष्ट्र जातिके विजेता अधिनायक बाजीरावका पुत्र कालके फेरमें पड़कर अपना समय बितानेके लिये बाध्य था। जो साहस और वीरतामें सबका वरणीय था, शक्तिकी महिमाको जो दीर्घ काल तक स्थायी रख सका था, उसीका पुत्र साधारण व्यक्तिकी तरह निवास कर रहा था। १८५७ में नानासाहब भ्रमणके लिये निकलकर सबसे पहले यमुनाके किनारे कालपी गये। इसके बाद दिल्ली देखकर १८ अप्रैलको वे लखनऊ पहुंचे। सर हेनरी लारेंस अवधके कमिश्नर थे। अवध अंग्रेज़ी शासनमें मिल चुका था और नवाब वाजिद अली शाह कलकत्तेके पास एक

स्थानपर कैदमें पड़े थे। नवाबी हटनेसे सब अंग्रेज़ोंसे रुष्ट थे— बहुतसे सरकारको शत्रुकी दृष्टिसे देखते थे। सरकारके कर्मचारियोंकी असावधानीसे अवधवासी विरोधी हो उठे थे। अवधके प्राचीन राजमहल तोड़ दिये गये थे, पवित्र मन्दिरोंको सरकारकी सम्पत्ति कहकर ले लिया गया था और सबसे बढ़कर, जमीनका लगान नवाबी जमानेसे भी अधिक बढ़ाया गया था। बहुतसे ताल्लुकेदारोंकी जमीन जप्त की गई थी। इसलिये अवधकी प्रजा अंग्रेज़ी शासनसे रुष्ट थी *। नवाबके जमानेमें वे बड़े आनन्दमें थे। पर अंग्रेज़ी राज्य होते ही उनका वह आनन्द और सुख लुप्त हो गया। उनके सम्मानित राजभवन गिरा दिये गये, चिरपूज्य देवालय सरकारने ले लिये, सदासे चली आई जमीनें छीन ली गईं, जो राजकर वे सदासे देते आ रहे थे वह बढ़ाकर दूसरे रूपमें लिया जाने लगा। इन कारणोंसे अवधके जमीन्दार और सर्वसाधारण अंग्रेज़ोंसे ऐसे रुष्ट और विरक्त हो गये थे कि वे आंख बचाकर अंग्रेज़ोंपर पत्थर फेंकनेसे भी न हिचकते थे। जिस दिन नानासाहबने लखनऊकी यात्रा की, उसी दिन सर हेनरी लारेंसने गवर्नर जनरलको

*अवधकी लगानके विषयमें कमिश्नर गेरिन्स साहबने स्वीकार किया है कि किसी किसी स्थानपर अधिक टैक्स बढ़ाया गया था—Mutinies in Oudh p. 9. Annual Report on the Administration of the province of Oudh for 1858-59. p. 32 Camp Holmes' Indian Mutiny p. 96, note.

पत्र लिखा—"इस शहरमें ६-७ लाख आदमी रहते हैं। इनमें (कल सुना है कि) २० हज़ार हथियार छीने हुए सैनिक भी हैं। यह लोग सब भूखों मर रहे हैं अन्नके लिये लालायित हैं। आज एक आदमीने कमिश्नर साहबपर पत्थर फेंका। प्रधान इंजीनियर एंडर्सन साहब जब मेरे साथ गाड़ीमें जा रहे थे तब उनपर एक ढेला फेंका गया। राजभवन तोड़नेसे सर्वसाधारणमें बड़ा वैमनस्य है। इस तरहके और भी काम होंगे—यह सुनकर लोगोंका वैमनस्य और भी अधिक बढ़ता जा रहा है। धार्मिक मन्दिरोंपर जो सरकारने कब्ज़ा किया है, इस कारण लोग बहुत अधिक असन्तुष्ट हैं। लगान लेनेका तरीका अच्छा नहीं कहा जा सकता। ताल्लुकदारों और जमीन्दारोंकी बहुत अधिक हानि हुई है। फैजाबाद जिलेके ताल्लुकदारोंमें किसी किसीकी आधी और किसी किसीकी सारी जमीन ले ली गई है।"*

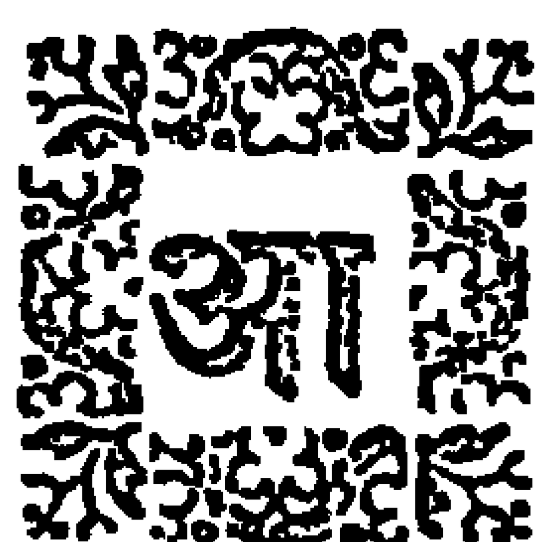
इस मार्मिक असन्तोष और उत्तेजनाके समय नानासाहब लखनऊ पहुंचे। किसी किसीने तो यहांतक लिख डाला है कि नानासाहब इन उत्तेजित लोगोंको एक गरोहमें लानेके लिये ही लखनऊ गये थे। पर इसका कोई प्रमाण नहीं मिलता। नानासाहब अच्छे भावसे लखनऊ गये, सादगीसे वे लोगोंसे मिले, उन्होंने वहांकी शिल्पकलाके नमूने देखे। इस सादगीके भीतर किसी प्रकारका छलकपट न था। वाजिद अली शाहकी

* Kaye's Sepoy war. vol. 1. p. 577-578.

चौथा अध्याय



भिन्न भिन्न स्थानोंकी साधारण दशा—राइफल बंदूकके कारखानेमें सिपाहियोंके मनोगत भाव—३ नं० रिसालेका विचार—३४ नं० सेनाके हथियार लेना—अवधकी गड़बड़ ।



आ चैत्र बीत गया। भारतका नया वर्ष अपनी नई ज्योति और कोमलताके साथ प्रगट हुआ। जैसे जैसे वैशाखकी गर्मी बढ़ने लगी वैसे ही वैसे सिपाहियोंकी उत्तेजना, आकुलता और उन्मादकी भी अधिकता होती गई। लार्ड कैनिंगने आशा की थी कि शीघ्र ही शान्ति होगी, सब काम पहलेके अनुसार हो जायंगे। इसी आशामें बैठे वे कलकत्तेमें काम कर रहे थे। चारों ओरसे सिपाहियोंकी उत्तेजनाके जो समाचार उनके पास आ रहे थे, वे एक दूसरेसे अधिक भयावह और दारुण प्रतीत होते थे। वे सब ऐसे बेमेलके थे कि उनका तुलना करके परिणाम निकालना कठिन था। लार्ड कैनिंग समझ गये कि हिमालयसे लगाकर बंगालतक चारों ओर अशान्तिका साम्राज्य है। पर इस अशान्तिमें भी उन्हें शान्तिकी आशा थी। बारकपुरमें उसके बाद फिर किसी प्रकारकी गड़बड़ न हुई। वहांके सिपाही धैर्यपूर्वक अपने कर्तव्यका पालन करते थे। दमदमेके

सिपाही नयी राइफलकी शिक्षा ग्रहण कर रहे थे। इससे अधिकारी समझते थे कि सिपाही उनके आश्वासनसे शान्त हो गये हैं। उत्तर भारतकी सैनिक छावनियोंमें भी विशेष असंतोष नहीं देखा जाता था। स्यालकोटके सिपाही भी नयी राइफलकी शिक्षामें आगे बढ़ रहे थे। मई मासके प्रारम्भमें यहांकी सेनाओंका निरीक्षण करके सर जान लारेंसने गवर्नर जनरलको लिखा था—"नयी बन्दूकोंसे सिपाही प्रसन्न हैं। पहाड़ी प्रदेशोंमें इनके द्वारा उन्हें विशेष सुविधा होगी, इस बातको वे समझ गये हैं। यहांके अफसरोंने कहा है कि सिपाहियोंने इसके सम्बन्धमें कोई सन्देह प्रगट नहीं किया और नयी बंदूकोंके व्यवहारमें भी उन्होंने कोई आपत्ति नहीं की।" अम्बालासे सेनापति वर्नार्डने पहली मईको पत्र लिखा था—"यहां आग लगी, पर इसके लिये सिपाहियोंको दोषी बनानेका कोई कारण दिखाई नहीं देता। बाहरसे न तो सिपाही मिलने पाते हैं और न उनके कामोंमें किसी तरहका संदेह ही किया जा सकता है। नयी बंदूककी शिक्षाका काम अच्छी तरह चल रहा है। प्रायः उनके निकट खड़ा रहकर देखता रहता हूं और इसी कारण स्पष्ट कह सकता हूं कि उनमें किसी प्रकारका असन्तोष या रोष नहीं दिखाई देता।"

इस प्रकार मई मासके प्रारम्भमें, गवर्नर जनरलके पास भिन्न भिन्न स्थानोंसे शान्तिके समाचार आने लगे। इससे वे समझे कि सिपाहियोंकी जाति और धर्मनाशकी आशंका धीरे धीरे विलीन

हो रही है। नयी राइफलकी शिक्षाके कारण जो अशांति थी वह दूर हो गई। लार्ड कैनिंग सन्तुष्ट हुए। उनका हृदय स्थिर हुआ और स्थिरताके साथ वे राज्यकी भीतरी उन्नतिकी ओर दत्तचित्त हुए। शान्तिके समय शान्त भावसे जिन राजकार्यों का आरम्भ किया जाता है, उन सबकी ओर उन्होंने ध्यान दिया। वे बम्बईके गवर्नरको फारस राज्यके साथ लड़ाई और सन्धिके व्ययके विषयमें पत्रादि लिखने लगे। पश्चिमोत्तर प्रदेशके लेफ्टिनेंट गवर्नरसे सर्वसाधारणकी शिक्षा और स्त्रीशिक्षापर पत्र-व्यवहार होने लगा। हैदराबादके रेजीडेंटके साथ नवाबके उत्तराधिकारके सम्बन्धमें, बड़ौदेके रेजीडेंटके साथ गायकवाड़की राजनीतिका परामर्श होने लगा। जिस समय गवर्नर जनरल इन सब शान्तिके कामोंमें लगे थे, उस समय एकाएक घटनाओंकी गति दूसरी ओर बढ़ी। आकाशमें छाया हुआ शान्त मेघ सहसा वज्राघातसे कड़क उठा।

मेरठके ३ नं० रिसालेके ८५ आदमियोंने कारतूसोंका स्पर्श न किया था; इस कारण कर्नल स्मिथने सेनापति ह्यूटको लिखा था। ह्यूटने इन सैनिकोंके उच्छृंखल होनेके कारणकी जांचकी आज्ञा दी। जांचसे मालूम हुआ कि कारतूसोंमें अपवित्र चर्बीकी आशंकाके कारण ही सैनिकोंने उसे नहीं छुआ। साधारण आदमियोंकी बातोंके कारण उनका चित्त बिगड़ गया है और वे प्रतिक्षण अपने धर्मके नाशकी आशंकासे भयभीत हैं। सर्वसाधारणकी घृणाके कारण वे कारतूसमें हाथ

लगानेका भी साहस नहीं कर सकते।* मेरठकी यह घटना प्रधान सेनापतिके सामने रक्खी गई। उक्त रिसालेके अंग्रेज़ अफसर बड़ी उत्सुकतासे प्रधान सेनापतिकी आज्ञाकी प्रतीक्षा करने लगे। इन सबका विश्वास था कि अपराधी सैनिक बिना किसी विचारके फौजसे खारिज होंगे। यदि ऐसा हो तो संभव है छावनीके अन्यान्य सिपाही बिगड़ें और सब मिलकर अंग्रेज़ोंके खिलाफ भयानक कांड करनेपर तैयार हो जायं। मेरठके एक अंग्रेज़ने इसी विश्वासपर, ३० अप्रैलको, साहसके साथ लिखा था—"हम इस समय सेनाके ही कारण सुरक्षित हैं। हमारी रक्षाके लिये और सिपाहियोंको रखा जाय यह क्या मजेकी बात है!"

देखते देखते मई मासके दो दिन बीत गये पर प्रधान सेनापतिके यहांसे कोई उत्तर न आया। सिपाहियोंकी आशंका धीरे धीरे कम होने लगी। पर अंग्रेज़ अफसर पहलेके समान आग्रहसे उत्तरकी प्रतीक्षामें थे। दिनके बाद दिन बीते पर उनकी उत्कण्ठा कम न हुई। अन्तमें प्रधान सेनापतिने इस विषयमें अपनी आज्ञा भेजी। ६ मईको एडजूटेंट जनरलने गवर्मेंट सेक्रेटरीको लिखा कि ३ नं० रिसालेके जिन ८५ आदमियोंने कारतूस स्पर्श करनेसे इनकार किया था उनके विषयमें प्रधान सेनापति एनसनकी आज्ञा आई है कि, फौजी अदालतके समक्ष उनका विचार हो। ६ मईके पहले ही सेनापतिकी आज्ञा आ

* Holmes' Indian Mutiny P. 101.

चुकी थी, पर ६ को फौजी अदालत विचारके लिये बैठी। इस अदालतमें १५ विचारक थे। इनमें नौ हिन्दू और छः मुसलमान अफसर थे। इनका सभापति एक अंग्रेज़ अफसर था। ६ से शुरू होकर ८ मईको विचार समाप्त हुआ। हरएक सिपाहीको, आज्ञा पालन न करनेके अपराधमें, दस दस सालकी कड़ी कैदकी सजा दी गई।

९ मईको प्रातःकाल सेनापति ह्यूट सारी सेनाके सामने, इस कठोर दंडको कार्यरूपमें परिणत करनेके लिये तैयार हुए। सारी सेनायें परेटके विशाल मैदानमें एकत्र होने लगीं। इस दिन मेरठकी विस्तृत सैनिक भूमिपर सूर्यका प्रकाश न था, आकाश मेघोंसे घिरा था, जोरकी हवा चल रही थी। इस दुर्दिनके समय सारी सेनायें सेनापति ह्यूटके सामने खड़ी हुईं। ऊपरके आकाशकी तरह उनके हृदयोंमें भी गाढ़ा अन्धेरा था और गंभीर आशंकाकी वायु रह रहकर चल रही थी। पासही सब तोपें गोरे सैनिकोंके अधिकारमें तैयार थीं। किसी तरहकी आज्ञा न माननेसे तोपों द्वारा उड़ा देना ही इसकी मंशा थी। पर न उन्होंने आज्ञाका उल्लंघन ही किया और न इस कठोर दंडसे किसी तरहका विद्वेष ही प्रगट किया। सब अंग्रेज़ अफसर चुपचाप इस कठोर दृश्यको देख रहे थे। बहुतोंके हृदय विचलित हो उठे, वीर सैनिकोंके शोचनीय परिणामसे बहुतसे दुःखी हुए। पर किसीके मुंहसे कोई बात न निकली। एक अफसरने २४ अप्रेलको कवायद बंद रखनेका प्रस्ताव किया था, उसे

सेनापति एमसनने ऐसा फटकारा था कि वह सबको याद था।* बिना जबान हिलाये सब गंभीर आशंका और आश्चर्यके साथ सेनापतिके कामोंको देखने लगे। धीरे धीरे एक ओर खड़े हुए अपराधी सैनिकोंके शरीरपरसे वर्दियाँ उतारी गईं, हरएकके हाथमें हथकड़ियाँ और पैरोंमें बेड़ियां पहनाई गईं। उन्होंने 'उफ़' तक न की, किसीने किसी तरहका भाव भी प्रगट न किया। वीरताकी अवमाननाके शोचनीय दृश्यपर पटाक्षेप होनेमें भी तीन घंटे लगे। इन कैदी सिपाहियोंमेंसे किसी किसीने सेनापति ह्यू.टसे हाथ जोड़कर क्षमाकी प्रार्थना भी की, पर परिणाम कुछ न हुआ। सबने उनका दारुण अपमान देखा, अन्तमें वे साधारण कैदियोंकी तरह अपनी दस सालकी सजा भोगनेके लिये जेलखाने भेजे गये।

इस स्थानपर उन सिपाहियोंके मुकदमेके विषयमें कुछ कहना आवश्यक है। ऊपर कहा जा चुका है कि उक्त फौजी अदालतमें पन्द्रह भारतीय अफसर विचारक और एक अंग्रेज़ विचारपति था। इन पन्द्रहमें नौ हिन्दू और छः मुसलमान थे। मई महीनेकी ६, ७ और ८ तारीखको इनकी पेशी हुई। क्या तरीका काममें लाया गया था यह सर्वसाधारणके सामने नहीं रक्खा गया क्योंकि १८५७ के मई मासमें सजा दी गई और सन् १८५८ के दिसम्बरमें उसकी रिपोर्ट दी गई।† इस मुकदमेके विषयमें

* Martin's Indian Empire. Vol. II P. 146.

† Martin's Indian Empire. Vol II. P. 244 note.

सर्वसाधारणको तरह तरहका सन्देह हुआ। अपराधियोंको जैसी कठोर सज़ा दी गई थी उससे तरह तरहके दोष सरकारपर लगाये गये। ३ नं० रिसालेके सिपाही कठोर अपराधके अपराधी माने गये थे, पर उनकी ओरसे सफाई देनेवाला कोई न था। ऐसी क्या बात थी जिसके कारण उन्होंने आज्ञा नहीं मानी, उनका कारण कहांतक सत्य था, इसकी न जांच हुई न पेशी। इस बातके सालभर बाद जो रिपोर्ट प्रकाशित हुई थी उसमें लिखा है कि १५ विचारकोंमेंसे १४ की राय थी कि इन्हें दस २ सालकी कड़ी सज़ा दी जाय। पर सज़ा देते समय उनके, पहले व्यवहार और सेवाओंका विचार आया, साथ ही फैली हुई अफवाहोंकी बारी भी आई, पर सभापति ह्यूटने लिखा है कि इन कारणोंसे उन्हें दण्ड नहीं दिया गया। आज्ञा न माननेके कारण वे अपराधी हुए, कारतूसपर गायकी चर्बीका सन्देह करके उन्होंने सैनिक नियमोंका भंग किया, उन्हें अपने कामपर किसी तरहका दुःख नहीं हुआ, किसी तरहकी दयाकी प्रार्थना उन्होंने नहीं की। इस विचारके बाद सेनापति ह्यूटने उन सैनिकोंकी सज़ा पांच साल की, परन्तु अधिकांशको दस सालकी सज़ा हुई। दूसरे सैनिकोंके सामने उन्हें हथकड़ी और बेड़ी पहनाते हुए भी लज्जा न आई। इस कठोरताके कारण उनकी कम निन्दा नहीं हुई। और तो क्या, जब प्रधान सेनापति एनसनको मालूम हुआ कि परेटके मैदानमें वीर सिपाहियोंको हथकड़ियां और बेड़ियां पहनाई गईं, तब उन्होंने भी इसे अमानुषी

न्याय कहा। पर हृयूइटने प्रधान सेनापतिके आज्ञानुसार काम किया था इसमें सन्देह नहीं।* इस घटनाको आदिसे अन्ततक देखनेसे मालूम होता है कि प्रधान सेनापतिने पहले हीसे विचार-प्रणाली निश्चित कर दी थी। मुकदमा होनेसे पहले ही अंग्रेज़ अफसरोंको मुकदमेका परिणाम मालूम हो गया था। मेरठके कमिश्नर ग्रिथेड साहब किसी सरकारी कार्यवश अलीगढ़ गये थे। वे १० मईको वापिस आनेवाले थे, परन्तु एक दिन पहले ही वापिस आ गये, क्योंकि उन्हें मालूम था कि सिपाहियोंको सजा दी जायगी, इस अवसरपर संभव है किसी तरहकी गड़बड़ हो जाय। वापिस आते ही ग्रिथेड साहबने उचित प्रबन्ध कर दिया।† जब सिपाहियोंकी सजासे पहले ही अंग्रेज़ोंको यह मालूम हो गया था कि उन्हें यह सजा दी जायगी तब यह निश्चित है कि अधिकारियोंने सिपाहियोंका दमन करना सोच लिया था। इसी कारण न्याय और सफाईका कोई लक्षण नहीं दीखता। अधिकारियोंने समझा था कि इससे दूसरे सिपाही दब ज़ायँगे पर ऐसा नहीं हुआ। जो पवित्र सैनिकधर्मसे दीक्षित होकर अपनी वीरताका परिचय संसारको दे रहे थे, बाहुबलसे जिन्होंने अंग्रेज़ोंकी कीर्ति अमर की थी, उनकी यह शोचनीय अवस्था, यह अधःपात देखकर सिपाहियोंका क्रोध जाग उठा था। यह क्रोध साधारण न था इस क्रोधमें खूनकी प्यास थी। अंग्रेज़ोंकी

* Martin's Indian Empire. vol. II. P. 145 note.

† Ibid P. 145.

कठोरताके कारण अंग्रेज़ोंके खूनकी प्यास उनमें जाग रही थी। अपने साथियों और सहयोगियोंकी दुर्दशा आंखके सामने देख-कर सरकारके ऊपर उनका क्रोध जाग उठा था। यदि अधिकारी इस समय धैर्यसे काम लेते, समदर्शिता दिखाते तो यह क्रोध भयानक रूप धारण न करता। पर वे धैर्यको त्याग चुके थे। कड़ाईसे अपना सम्मान बनाये रखना ही उनका संकल्प था। इसी कारण महाविपत्तिका जन्म हुआ।

जिस समय ३ नं० रिसालेके सिपाहियोंको कड़ी सजा दी गई, उसी समय एक और सेनासे हथियार लिये गये। बारक-पुरकी ३४ नं० सेनाके मंगल पांडे और जमादारको फांसीपर चढ़ा दिया गया था। सिपाहियोंने चुपचाप खड़े खड़े दो अंग्रेज़ अफसरोंको घायल होते देखा था। उनको किसी तरहकी सजा न दी गई थी। २२ अप्रेलको जमादार ईश्वर पांडेको परेटके मैदानमें फांसी दी गई। फांसीके तख्तेपर खड़े होकर ईश्वर पांडेने सिपाहियोंको सम्बोधन करके कहा था कि, मैंने जो कुछ किया उसका दण्ड मुझे मिल रहा है, तुममेंसे कोई सरकारके विरुद्ध न होना।* इसके बाद लार्ड कैनिंग यह सोच रहे थे कि सिपाही पहलेके समान सरकारकी आज्ञाका पालन करते हैं या नहीं। उनका विश्वास था कि इस सेनाके सब आदमी विरोधी नहीं हैं, इसी कारण सबको एक समान दण्ड देना भी उचित नहीं। जब लार्ड कैनिंग इस तरहकी

* Kaye's Sepoy War Vol. 1 P. 584 note.

चिन्ता कर रहे थे उस समय बारकपुरके अंग्रेज़ अफसर इस सेनाके दण्डकी आज्ञा देखनेके लिये विशेष उत्सुक हो रहे थे। इनका प्रस्ताव था कि ३४ नं० सेनाके हथियार भी ले लिये जायं। सेनापति हेअर्सका दृढ़ विश्वास था कि इस सेनाके हथियार लिये बिना इसके योग्य सजा न होगी। सेनापति एनसनने शिमलेसे यही प्रस्ताव लिखकर भेजा। गवर्नर जनरलकी मंत्रि-सभामें इस विषयपर खूब तर्क वितर्क हुआ, अन्तमें ३० अप्रैलको लार्ड केनिंगने अपना मन्तव्य लिखा। उन्होंने आज्ञा दी कि हथियार लेनेके सिवा और कोई साधारण दण्ड नहीं दिया जा सकता, इससे अन्यान्य सैनिकोंको भी शिक्षा मिल जायगी। पर सेनामेंसे किसी किसीको अपराधी न होनेके कारण मुक्त भी किया जायगा। ४ मईको इस सेनाके हथियार लेनेकी आज्ञा दी गई।*

इस आज्ञाके दो दिन बाद, अर्थात् ६ मईको ३४ नं० सेना भी दण्ड भोगनेके लिये तैयार हुई। प्रातःकाल परेटके मैदानमें एकत्र होकर सबने अपने अपने हथियार और वर्दियां उतार दीं। गोरे सिपाहियोंसे घिरकर वे अपने निर्दिष्ट स्थानमें गये। सरकारने अन्यान्य सेनाओंको सावधान करनेके लिये इस सेनाको भी तोड़ दिया। इसके तोड़ देनेसे भी जो आशा की

* जिस जमादारने १० मार्चको कलकत्ताके खजानेपर पहरा देते हुए दो विद्रोही सिपाहियोंको गिरफ्तार किया था उसे राजभक्त समझकर इस दण्डसे मुक्त किया गया।

गई थी वह सफल न हुई। सेनासे निकाले हुए यह ५०० ब्राह्मण और क्षत्रिय सिपाही अपनी हिंसावृत्तिको पूरा करनेके लिये तैयार रहे। पहले निकाली हुई १९ नं० सेना भी पश्चिमोत्तर देशके अवध इलाकेकी थी और यह ३४ नं० सेना भी नाम कटा-कर अवध पहुंच गई। इन सिपाहियोंको सरकारपर जरा भी श्रद्धा न थी। विषण्ण और मलिन वेषसे यह लोग अपने अपने घर पहुंचे। अंग्रेज़ोंके विरुद्ध इनकी हिंसावृत्ति जाग उठी थी। इसलिये अवधमें धीरे धीरे ग़दरके चिह्न इकट्ठे हो रहे थे। लार्ड कैनिंगको वाजिद अली शाहके अवधप्रान्तसे जितना डर था उतना और किसी अन्य प्रदेशसे न था। नानासाहब लखनऊ गये थे। सर हेनरी लारेंसके पत्रमें इस बातका कोई उल्लेख न था पर लार्ड कैनिंग चिन्तित हो उठे थे। इसी समय लखनऊकी एक सेनापर अधिकारियोंको संदेह हुआ; इसी कारण उसके विषयमें प्रस्ताव हुआ कि वह दूसरी जगह भेज दी जाय। अफसरोंका विश्वास था कि सिपाहियोंका सम्बन्ध नगरके प्रतिष्ठित आदमियोंसे है इस कारण इनके स्थान परिवर्त्तनसे भी गड़बड़ होगी फिर भी अधिकारियोंने सिपाहियोंको दूसरे स्थानपर भेजना ही अधिक उपयुक्त समझा। जब गवर्नर जनरलके सामने यह प्रस्ताव उपस्थित हुआ तब लार्ड कैनिंगने सर हेनरी लारेंसको इस विषयमें सम्पूर्ण दायित्व दे दिया। पर गवर्नर जनरलका हुक्म पहुँचनेसे पहले ही सर हेनरी लारेंसके चित्तमें एक और ही चिन्ताका उदय हुआ। वे समझ गये कि अन्यान्य स्थानोंके

सिपाही भी सरकारसे असन्तुष्ट हैं। इनको यदि वहाँ भेजा गया तो फल यह होगा कि एक एक मिलकर ग्यारह हो जायंगे। यह समझकर सर हेनरीने किसी सेनाको इधर उधर न किया। असन्तुष्ट सिपाहियोंको उन्होंने लखनऊमें ही रक्खा। इससे उनकी तीव्र बुद्धिका परिचय मिलता है।

सर हेनरी लारेंसने ४८ नं० सेनाको लक्ष्य करके गवर्नर जनरलको पत्र लिखा था। इस सेनाके सैनिक अपने जातिनाशकी आशङ्कासे सरकारपर बेतरह बिगड़ उठे थे। अप्रैल मासके शुरूमें इस सेनाके डाक्टर वेल्स बीमार हुए। उन्होंने अस्पतालमें जाकर एक बोतलका कार्क खोलकर, बिना गिलासके ही मुँह लगाकर दवा पी ली। डाक्टरके खयालमें यह बात नहीं आई थी कि मुझे बोतलको मुँहमें लगाकर, दवा पीता देखकर हिन्दू सिपाही इसका अर्थ यह लगावेंगे कि डाक्टरने दवा और बोतल जूठी करके उनकी जाति और धर्मके नाशका रास्ता साफ कर दिया। जब सिपाहियोंने सुना कि अंग्रेज डाक्टर जूठी दवाके द्वारा उनका धर्मनाश करना चाहता है, तब वे घबरा उठे, उनमें उत्तेजना फैल गई और हरएकको अपनी जाति तथा धर्मरक्षाकी चिन्ता पड़ गई। सेनापतिने वह बोतल तोड़ कर फेंक दी और ऐसा करनेके कारण डाक्टरका तिरस्कार भी किया। पर ४८ नं० सेना इतनेसे सन्तुष्ट न हुई। धीरे धीरे अप्रैल मास भी बीत गया। मई मास आ गया पर सिपाहियोंकी आशङ्का घटनेके स्थानपर बढ़ती ही गई।

अवधमें ७ नं० सेना और थी। मई मासकी पहली तारीख-को यह भी कारतूस छूनेसे इनकार कर बैठी। उसने यह कह कर आत्मसमर्पण किया कि हमसे पहलेवाली सेनाने कहा है कि इन कारतूसोंमें अपवित्र चर्बी लगी है। दूसरी मईको सर हेनरी लारेंसको यह समाचार मिला। पहले तो उन्होंने इसपर विश्वास ही नहीं किया, अन्तमें मालूम हुआ कि समा-चार सत्य है। यह सेना लखनऊसे ७ मीलके अन्तरपर थी। १५ दिन पहले यह बिलकुल शान्त थी। पर मई मासके शुरू हीमें इनमें भी परिवर्त्तन दिखाई दिया। अपने धर्मनाशकी आशङ्कासे यह लोग भी विचलित हो उठे। अफसर लोग इन्हें व्यर्थ समझाने और दिलासा देने लगे कि कारतूसोंमें किसी प्रकारकी चर्बीका प्रयोग नहीं किया गया है। वे जैसे कारतूस पहले काममें लाते थे, यह भी वैसे ही बने हैं। पर सम्पूर्ण सेनाने कारतूस छूनेसे इनकार कर दिया। सब सरकारके विरोधके लिये प्रतिज्ञावद्ध हुए। अनेक लेखकोंने इस सेनाके सम्बन्धमें अनेक प्रकारकी बातें लिखी हैं। किसीका कहना है कि १९ नं० सेनाके विद्रोही सिपाहियोंने इन्हें बहकाया, किसीने लिखा है कि गुप्तदूत इनके पास आये थे, पर निश्चित रूपसे कुछ पता नहीं लगा *। जो कुछ हो, यह सत्य है कि मई मासके प्रारम्भमें ही ७ नं० सेना विद्रोही हो गई। उसने ४८ नं० सेनाको एक पत्र लिखकर भेजा जिसमें लिखा था कि धर्म और जातिकी

* Kaye's sepoy war. vol 1. P. 583.

रक्षाके लिये अन्तिम समय तक तुले रहो। २ मईको उसके सेनापतिने घोड़ेपर चढ़कर सारी सेनाका निरीक्षण किया। उन्होंने देखा कि सिपाहियोंका सन्देह किसी प्रकार नहीं जाता है, वे अपने अफसरोंका कहना नहीं सुनते। ३ मई आई पर उनकी दशामें किसी तरहका परिवर्तन न दिखाई दिया। सर हेनरी लारेंसने जब सुना कि ७ नं० सेना बिगड़ रही है, तब वे स्थिर न रह सके। अब वे कठोर कार्यके लिये तत्पर हुए। सिपाहियोंके हथियार ले लेनेका उन्होंने निश्चय किया। उन्होंने यह भी इरादा कर लिया कि हथियार लेते समय यदि सेना कहना न माने तो उसे तोपसे उड़ा दिया जाय। ३ मईकी शामको सर लारेंस बहुतसी तैयार सेना और थोड़ीसी तोपें साथ लेकर ७ नं० सेनामें आये।

इस समय सन्ध्या बीत चुकी थी। निर्मल आकाशमें निर्मल चन्द्रमाकी स्निग्ध ज्योति धीरे धीरे विकसित हो रही थी। मेघ शून्य आकाशमें तारे प्रगट हो रहे थे। प्रकृतिके इस मोहक भावसे मानो सम्पूर्ण संसार मोहित हो रहा था। यह अंग्रेज़ोंके विश्राम-दिवस रविवारकी रात्रि थी। धार्मिक अंग्रेज़ इस रात्रिमें ईश्वरप्रार्थना किया करते हैं, परन्तु सर हेनरी लारेंसके लिये तो ईश्वरप्रार्थनासे अधिक आवश्यक कार्य विद्रोही सेनाको दण्ड देना था। रातको सिपाहियोंके हथियार लेलेने या उन्हें तोपोंसे उड़ा देनेके लिये वे विस्तृत परेटके मैदानमें पहुंचे। रात्रिकी निस्तब्धता भंग हुई। सैनिकोंके चलने फिरने, घोड़ोंके

हिनहिनाने और तोपोंके गड़गड़ानेसे सेनानिवेश फिर जाग उठा। ७ नं० सेना मैदानमें लाई गई। पहले तो उनकी समझमें न आया कि मामला क्या है, पर जब उन्होंने अपने सामने हथियारबन्द गोरी सेना और भरी हुई तोपें देखीं तब समझकर चिन्तित हुए। वे समझ गये कि इस समय जो ज़रा भी अपराध हुआ तो भरी हुई तोपोंमें वत्ती लग जायगी। वे डरसे कर्त्तव्यविमुख होकर अफसरोंके सामने आकर खड़े रहे। पहलेकी उच्छृंखलता जाती रही। इस समय उन्होंने अपने अफसरोंकी आज्ञाका पालन किया। उनके सामने सर हेनरी लारेंस दूसरे अंग्रेज़ अफसरोंके साथ घोड़ोंपर सवार खड़े थे और उनके पीछे तोपें लगी थीं। गलतीसे एक गोलंदाज़ने अपने हाथकी वत्ती ऊंची की, सिपाहियोंने समझा कि वस अब तोपोंमें वत्ती लगने ही वाली है, इसी भयके कारण वे स्थिर न रह सके। पहले एक सैनिक भागा, उसे देखकर दूसरा भागा। इस तरह लाइनमेंसे कई स्थान खाली हो गये। इस प्रकार १२० सैनिक मैदानसे भाग गये, तब बाकी सिपाही अफसरोंकी आज्ञाके अनुसार बढ़ने लगे और सवार भागे हुए सिपाहियोंके पीछे दौड़े। इधर ७ नं० सेनाके शेष सब सिपाहियोंने हथियार रख दिये। इसमें एक पहर रात बीत गई। घोर रात्रिमें जब सब शान्तिसे निद्राका सुख भोग रहे थे उस समय हथियार रखकर ७ नं० सेना अफसरोंकी आज्ञाका रास्ता देख रही थी। निर्मल चन्द्रमा शान्त आकाशमें खिल रहा था, सौन्दर्यमयी

प्रकृति अपने आप मोहित हो रही थी, किन्तु ७ नं० सेनाका शोचनीय दृश्य अभी समाप्त न हुआ था। धीरे २ एक २ सैनिक हथियार और वर्दी रखकर मामूली तौरसे खड़ा रहा। आधीरातको सर हेनरी लारेंस सिपाहियोंके हथियार आदि लेकर वापिस लखनऊ पहुंचे। सिर्फ वे यह आश्वासन दे आये थे कि जो निरपराध सिद्ध होंगे वे फिरसे भर्ती कर लिये जायँगे। लारेंसकी इस बातसे सैनिक सन्तुष्ट हुए। वे खिरत्नसे अपने भागे हुए साथियोंको खोजने लगे। भागे हुए सिपाही उनके समझानेसे वापिस आये। दूसरे दिन दोपहरके समय ७ नं० सेनाका निवासस्थान फिर भर गया।

इसी दिन सर लारेंसने गवर्नर जनरलको पत्र लिखा कि, "७ नं० सेनाके साथ जो कुछ किया गया उसका परिणाम अच्छा रहा। पर मैंने बहुतोंके मुंहसे सुना है कि ४८ नं० सेनाके सैनिकोंने भागे हुए ७ नं० सेनाके सैनिकोंका तिरस्कार किया है। उनका कहना था कि यदि वे दृढ़ताके साथ खड़े होते तो अंग्रेजों-पर गोली चालना उनके लिये कठिन न था। पर मैं इन बातों पर विश्वास नहीं करता।" जो कुछ हो, पर सिपाहियोंमें जैसी उत्तेजना फैली थी और सर्वसाधारणके मस्तिष्कोंसे जैसी प्रतिपल नई अफवाहें जन्म ले रही थीं, उसपर हेनरी लारेंस धैर्यके साथ विचार करने लगे। वे यह तो समझ गये थे कि विपत्ति प्रतिपल बढ़ती जा रही है, ज्यों २ समय बीतता जा रहा था त्यों २ विरोधके लक्षण स्पष्ट होते दीख रहे थे। उनके

सब यत्न व्यर्थ हुए। सरकार कोई कारण या उपाय न सोच सकी। सिपाहियोंके मुंह बंद थे, वे अपना कोई षड्यन्त्र या गुप्तबात अफसरोंको न बताते थे। पर समय आनेपर सब एक होकर अपने उद्देश्यके लिये यत्न करते थे। ७ मईको ४८ नं० सेनाके रहनेका स्थान जल गया। इस सेनाके सूबेदारने ७ नं० सेनाका पत्र अफसरोंके सामने पेश किया था। सबसे पहले इस सूबेदारके घरमें ही आग लगी। दूसरे दिन हेनरी लारैंसने जले हुए सैनिकोंके निवासस्थानको देखा। सिपाहियोंने लारैंससे इसके लिये दुःख प्रकाश किया और अपनी सम्पत्ति जलनेके कारण दुःखी भी हुए। इस समय तक अंग्रेज़ोंकी समझमें भी अवधके सिपाहियोंका भाव अच्छी तरह न आया था। सबके दिलोंमें सर हेनरी लारैंस न थे। वे अपनी सूक्ष्मबुद्धिके कारण बहुत आगे तककी बात सोच लेते थे। उनके विचार और बुद्धिके इस समय अनेक सुफल दिखाई दिये थे। कारतूसोंमें चर्बी होनेका सन्देह इस विवादकी जड़ है यह वे बहुत पहले समझ गये थे। सिपाहियोंके साथ इस समय उनकी जो बातें हुई थीं उसका अधिकांश वे स्वयं लिख गये हैं। ६ मईको इस आशयका पत्र हेनरी लारैंसने लार्ड कैनिंगको लिखा था—"अवधकी सेनाके एक गोलंदाजसे एक घंटे तक मेरी बातें हुईं। यह जमादार जातिका ब्राह्मण और ४० वर्षकी अवस्थाका है। इस आदमीका विश्वास है कि, पिछले दस सालसे सरकार अनेक प्रकारके उपायों और चालोंसे भारतवासियोंका धर्मनाश करनेपर उतारू है। मैं

उसकी इस बातसे चौंक उठा। उसका विश्वास है कि, हम जिस चतुराईसे भारतपर अधिकार जमाते जा रहे हैं, जिस चतुराईसे भरतपुर, लाहौर आदि जीते, वैसीही चतुराईसे हिन्दुओंके खानेपीनेकी चीजोंमें भी हड्डियोंका चूरा मिला देते हैं। जब मैंने उससे कहा कि यूरोपमें हमारी बड़ी भारी ताकत है, पिछले रूस संग्राममें हमने थोड़े समयमें अपनी फौजोंकी तादाद चौगुनी कर ली थी, अगर जरूरत हुई तो छः महीनेमें हम भारतमें बहुत सी गोरी सेना ला सकते हैं, फिर हमें हिन्दुस्तानके सिपाहियोंकी जरूरत ही न होगी, तब उसने कहा कि, आप धन और जन दोनोंसे शक्तिशाली हैं, परन्तु गोरी सेना लाना बहुत खर्चेका काम है, इसीलिये हिन्दुओंको समुद्र पार लेजाकर आप लोग पृथ्वी विजय करना चाहते हैं। तब मैंने उससे कहा कि यद्यपि भारतीय सिपाही स्थलकी लड़ाईमें अच्छे हैं; पर वे अपने निकृष्ट भोजनके कारण समुद्री लड़ाईके अयोग्य हैं। आश्चर्यसे मेरी ओर देखकर जमादारने उत्तर दिया कि, हां हमारे भोजनमें ताकतवर चीजें नहीं होतीं, इसी कारण आप हम सबको अपनी इच्छानुसार चीजें खिलाकर बलवान बनाना और पृथ्वीके हरएक भागमें ले जाना चाहते हैं। जमादार बार २ कहने लगा कि, इस समय सब जो बात कहते हैं मैंने वही बात आपसे कही है। मैंने उससे कहा कि, जो मूर्ख और विश्वासघातक हैं वे ही ऐसी बातें कह सकते हैं, पर समझदार और सज्जन आदमी कभी ऐसा विचार भी नहीं कर सकता। उसको

मेरी बातपर विश्वास हुआ या नहीं इसके बारेमें उसने कुछ नहीं कहा, पर उसने केवल यही कहा कि, हममें सब ग्वाले और किसान हैं, प्रधान आदमी जिस मार्गपर चलेंगे सभी उनका अनुसरण करेंगे। मैंने उससे कहा कि सन् १८४६ में, काबुलमें, जो भारतीय सिपाही डेढ़ सौ लड़के लड़की छोड़ आये थे उन सबकी रक्षा मैंने की। मैंने इनमेंसे एकको भी ईसाई नहीं बनाया, वापिस आकर सब उनको लौटा दिये। जमादारने कहा—हां यह बात मुझे याद है, उस समय मैं लाहौरमें था। इसके बाद उसने कहा कि, "अकालके समय लड़के लड़कियोंको खरीदकर अंग्रेज़ लोग उन्हें ईसाई बनाते हैं। यह जमादार हमारी सेनामें पिछले बीस सालसे काम कर रहा है, इसके कामोंमें पहले कभी विश्वासघात या सन्देह नहीं पाया गया, योग्यतापूर्वक कार्य करनेके कारण हमने इसे सिपाहीसे जमादारका पद दिया, पर इस समय इसके हृदयमें जो चंचलता दीख रही है वह घोर विश्वासघातकता है।" इसी दिन उन्होंने पश्चिमोत्तर प्रदेशके लेफ्टिनेंट गवर्नर कालविन साहबको भी एक पत्र लिखा। इस पत्रमें उन्होंने उत्तर भारतके सब किलोंपर पूरी देख रेख रखनेका अनुरोध किया था परिणामदर्शिताके लिहाजसे इस समयकी उनकी अनेक बातें भविष्यवाणी कही जाती हैं। सर लारेंसने जिस आशंकाके कारण कालविन साहबको पत्र लिखा था वह समयपर प्रत्यक्ष हुई। पश्चिमोत्तर प्रदेशमें, हरएकके हृदयमें, छिपी आग दहक उठी थी। अब वह प्रगट होने ही वाली थी।

घटनाओंका स्रोत इतनी शीघ्रतासे बदला रहा था कि बहुत जल्दी २ बातें पुरानी हो जाती थीं। सर लारेंसका पत्र यदि लिखनेके साथही गवर्नर जनरलके पास पहुंच जाता तो वह भविष्यवाणी समझी जाती, पर कलकत्ते पहुंचते २ वह पत्र भूतकालकी घटनाओंमें लीन हो गया। गवर्नर जनरलकी मंत्रिसभामें अवधकी सेनाकी उच्छृंखलता और उसे दिये हुए दण्डपर तर्क वितर्क हो रहा था। सिपाहियोंके आज्ञा न माननेपर भिन्न २ सदस्य अपनी भिन्न २ सम्मति दे रहे थे। पर सर हेनरी लारेंसने सिपाहियोंको जो फिर सेनामें भर्ती करलेनेका आश्वासन दिया था उसे सबने असंगत कहा। एक सभासद डोरिन तो सिपाहियोंको हलका दंड देनेके बिलकुल विरुद्ध थे। उन्होंने अपनी सम्मति पृथक् लिखी—"विद्रोहकी संक्रामकता जितनी शीघ्र नष्ट हो उतना ही अच्छा है। हलकी सजाओंसे इसका नाश न होगा, अब कठोरताके साथ काम करनेकी आवश्यकता है। जो सेनायें आज्ञा न माननेके कारण दोषी हुई हैं उन सबको सैनिक कानूनके अनुसार कड़ेसे कड़ा दंड दिया जाय। मेरी सम्मतिमें यदि सेनाका परिचालन अच्छी तरह हो तो वह विद्रोही नहीं हो सकती। यदि यह सिद्ध हो कि ७ नं०के अफसरोंने विद्रोहका परिचय दिया तो मेरे विचारसे उन्हें अपनीही सेनामें कैद करना चाहिये।" १० मईको डोरिन साहबने अपनी यह सम्मति लिखी। जिस विश्वासके अधीन होकर उन्होंने यह लिखा था उसीके अनुसार यह कहा जा सकता है कि जिस

देशमें सुशासन हो वहांकी प्रजा कभी विद्रोही नहीं हुआ करती। जिस धारणाके अनुसार डोरिन साहबने विद्रोहियोंको कैद करनेकी सम्मति दी थी उसीके अनुसार सर्वसाधारण डोरिन साहबके लिये यही सम्मति दे सकते हैं,क्योंकि वे सभाके सदस्य थे। लार्ड केनिंगके सामने वे ब्रिटिश राज्यके यथेच्छाचारी परिचालक थे।* उनकी अवस्था ६० सालकी थी। पर वे अपनी परिपक्व बुद्धिका कुछ भी परिचय न दे सके। भारतके अतिरिक्त और किसी स्थानपर वे अधिक समयतक न रहे थे तथा सिविल सर्विसके सिवा और कोई काम न किया था, इसलिये उनका ज्ञान संकुचित था। वे समय २ पर लार्ड केनिंगकी धीरता देखकर अधीर हो उठते थे। जिस समय भारतसे ब्रिटिश राज्यकी जड़ें हिल रही थीं उस समय डोरिन साहब प्रधान सभासदके पदपर थे।

जिस दिन डोरिन साहबने अपनी सम्मति लिखी, उसी दिन एक दूसरे सभासद जनरल लोने भी अपनी सम्मति लिखी। सेनापति लो बहुत कालतक भारतमें रहकर भारतीयोंके आचार विचार और रीति रिवाजसे परिचित थे। भारतमें वैसे परिणामदर्शी और अभिज्ञ राजपुरुष एक आध ही थे। डोरिन साहबने सिपाहियोंके आज्ञोलंघनके विषयमें चर्बी वाले कारतूसों-

---

* Mutiny in Bengal Army: By one who has served under Sir Charlse Napier, p. 13. Martin's Indian Empire vol 11, P. 140

का नाम भी न लिया था। उनकी सम्मतिमें कारतूस तो सिपाहियोंका बहाना था, वस्तुतः सरकारके विरुद्ध उन्होंने द्रोह ही निश्चय किया था। यद्यपि वे तैंतीस सालसे सरकारका काम कर रहे थे पर उन्हें भारतकी भीतरी दशाका ज्ञान ही न था। कलकत्तेसे पचास मील दूरतक भी वे कभी न गये थे। वे भारतीयोंकी सामाजिक और धार्मिक अवस्थाओंसे अपरिचित थे।* पर सेनापति लो उनके समान कूपमंडूक न थे। उन्होंने अवधकी गड़बड़के विषयमें स्पष्ट लिखा कि, सिपाहियोंने जातिनाश और धर्मनाशकी आशंकाके कारण कारतूस छूनेसे इनकार किया। विद्रोहके विचारसे उन्होंने कभी उच्छृंखलता नहीं दिखाई। धर्मनाशके डरने उन्हें सरकारके प्रति विद्रोही बना दिया।

सरकारके एक और सभासद ग्रांट साहबने भी अपनी सम्मति लिखी थी। लो साहबके साथ सहमत होकर उन्होंने लिखा था कि धर्मनाशकी आशंकासे भयभीत होकर सिपाहियोंने उच्छृंखलताका परिचय दिया। इस कारण १९ नं० और ३४ नं० सेनाओंके विषयमें जो कुछ किया गया था वही ७ नं० के साथ भी करनेकी उन्होंने सम्मति दी।†

इधर सर हेनरी लारेंस चुप न थे। जिस समय गवर्नर

---

* Mutiny of Bengal Army. P. 13. Martin's Indian Empire vol. II. P. 141.

† Martin's Indian Empire. vol. II P. 141.

जनरलकी सभाके मन्त्री लोग अपनी अपनी सम्मतियाँ लिख रहे थे, उस समय सर हेनरी अपने कठिन कर्त्तव्यका पालन कर रहे थे। वे मन्त्रिसभाके मन्तव्य जाननेके लिये व्यग्र न थे, अपने कामको उन्होंने नियमित रक्खा। उन्होंने सब सिपाहियोंको न निकाला। जिनका अपराध प्रमाणित न हुआ उन्हें उन्होंने फिर भर्ती किया। प्रायः सब अफसर और पन्द्रह सिपाही निकाले गये। भारतीय अफसरोंमें प्रायः दो एक रहे। लगभग दो सौ सैनिक दण्डसे बचे। सरकारपर पहले जो उनका अविश्वास होगया था, वह बहुत कुछ जाता रहा। केवल इतनी क्षमा दिखाकर ही वे शान्त न रहे। जिन्होंने राजभक्तिका परिचय दिया था, उनका उन्होंने यथोचित आदर किया। उन्हें अफसरका पद देकर सम्मानित किया गया। पारितोषिक देनेके समय एक छोटासा दरबार हुआ। इसमें गोरी और काली सेनाओंके अतिरिक्त लखनऊके प्रसिद्ध प्रसिद्ध आदमी भी बुलाये गये थे। सर हेनरीने ओजस्विनी भाषामें व्याख्यान दिया कि, सरकार किसीका धर्मनाश करना नहीं चाहती। इस विषयमें वह सदासे सबको समान भावसे देखती आती है। दिल्लीके मुसलमान बादशाहोंके जमानेमें ही हिन्दुओंको कितना सताया जाता था यह सब जानते हैं। पर ब्रिटिश सरकार हरएक धर्म और जातिवालेका समान आदर करती है। थोड़ेसे दुष्ट लोग जहां तहां थोड़ेसे अंग्रेज़ोंको देखकर लोगोंको बहकाते फिरते हैं कि इन थोड़ेसे अंग्रेज़ोंका सहजमें ही नाश किया जा

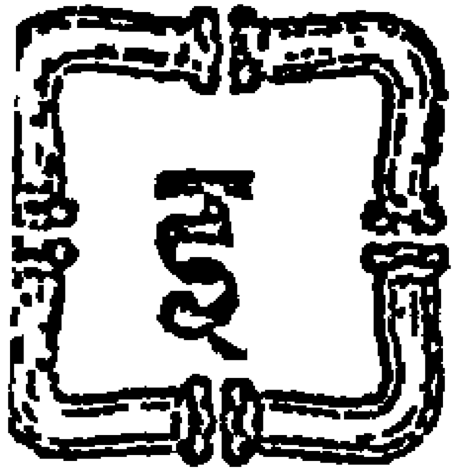
सकता है। पर जिस जातिने छः महीनेके भीतर रूसके विरुद्ध पचास हज़ार सेना तैयार करके भेज दी वह हिन्दुस्तानमें तीन महीनेमें उससे दूनी सेना भेज सकती है। यह कहकर सर हेनरी लारेंसने अपने हाथसे सिपाहियोंको इनाम बांटा, उनसे नम्रता-पूर्वक भाषण किया।* दूसरे अंग्रेज़ोंने भी सर हेनरीके दृष्टान्तका अनुकरण किया। भारतीय अफसरोंके साथ मिलकर उन्होंने उन्हें प्रसन्न कर दिया। इस प्रकार प्रधान कमिश्नरकी बुद्धिमानीसे अवधकी गड़बड़ कुछ कालके लिये शान्त हो गई। जब सरकारने ३४ नं० सेनाके निकाल देनेकी आज्ञाको हरएक वारिकमें पढ़े जानेका आदेश भेजा तब हेनरी लारेंसने उसका पालन न किया। उन्हें आशंका थी कि सिपाहियोंके कठोर दण्डकी बात सुनकर अवधके सिपाही विक्षुब्ध होंगे और इसी कारण वे फिर सरकारके विरुद्ध हो जायंगे। इसी तरहकी दूरदर्शितासे इन्होंने बंगालकी सेनाओंको भी कुछ कालके लिये विद्रोहसे दूर रक्खा। यद्यपि अन्तमें अवध भी विद्रोहकी आगसे जल उठा था। वहां भी रक्तकी प्यास भयानक रूपसे जाग उठी थी पर और स्थानोंपर ग़दर शुरू होगया था तब भी अवध शान्त था, पर भयानक समय निकटसे भी निकट चला आ रहा था। देखते देखते प्रबल वेगसे वह आही पहुंचा।

---

* The Rev. T. Cave Browne's Punjab and Delhi. vol. 1. P. 32-35. Martin's Indian Empire P. 142.

पांचवां अध्याय

मेरठसे गदरका प्रारम्भ


स इतिहासमें, शुरूसे अवतक, जिस छिपी आगके धीरे धीरे बढ़नेका वर्णन किया गया है, वह अव प्रगट हुई। अवतक जो आशंका थी वह सत्य हुई। मेरठके ३ नं० रिसालेके सिपाहियोंको जिस प्रकार हथकड़ियों और बेड़ियोंसे जकड़कर जेलख़ाने भेजा गया था, उसका वर्णन किया जा चुका है। उस समय उनमें किसी प्रकारकी उत्तेजना वा विद्रोहके लक्षण न दिखायी दिये थे। पर साथियोंके सामने उनकी जो शोचनीय दशा हुई थी उससे बादमें बड़ी भयानक घटनाका जन्म हुआ। वे चुपचाप शान्तिसे जेल चले गये और उनके साथी छावनीमें लौट आये। अंग्रेज़ सारे विद्रोहोंका अन्त हुआ जानकर आमोद प्रमोदमें लग गये। सैनिक अफ़सर शतरंज बिछाकर किश्त देनेकी चिन्तामें थे, सिविल कर्मचारी ६ मईकी घटना पर हँसकर साथियोंसे बातें कर रहे थे, स्त्रियाँ सुख शान्तिसे आनन्दमें प्रसन्न थीं; पर सिपाहियोंमें न प्रसन्नता थी, न आनन्द। उनके हृदय एक अलक्षित अग्निज्वालासे जल रहे थे। वे अपने चिरकालसे आदरणीय धर्म और समाजकी बातें सोच रहे थे। वे सोच रहे थे कि यदि हम अपने धर्मकी रक्षा करते हैं

तो हथकड़ी बेड़ियोंसे जकड़े जाकर जेलमें ठूंसे जाते हैं या गोरोंको बंदूकका निशाना बनते हैं। चर्बीवाले कारतूस लेनेसे इनकार करनेके कारण बहुतसे नौकरीसे निकाले जा चुके। उन्होंने देखा कि अब सरकार नौकरीसे हटा देनेकी जगह चिरकालके लिये कड़ी कैद देने लगी है। उनके साथी जेलमें इस समय दुःख भोग रहे हैं। पीछे उनके बाल बच्चे और घरवाले बिना अन्नके उनसे भी अधिक दुर्गति भोगेंगे। इस भयानक करुणाजनक दृश्यको सोचते सोचते उनके हृदयका भाव बदल गया। वापिस आकर उन्होंने अपने जेलमें पड़े साथियोंके मकानोंको खाली देखा, बेड़ियोंकी झनकारोंके साथ साथ उनका जेलकी ओर शनैः शनैः जाना, अन्तिम बार करुणाजनक निराशदृष्टिसे उनकी ओर ताकना, उन्हें बार बार याद आने लगा। उनके बाल बच्चोंकी दुर्दशाका विचार करके वे अधीर और आकुल हो उठे। उनकी शान्ति चली गई, आशा लुप्त हो गई, प्रसन्नता और आह्लाद सब दूर हो गये। हिन्दू और मुसलमान एक ही चिन्तासे चिन्तित, एक ही दुःखसे दुःखी थे; उन्होंने इसका बदला लेनेका दृढ़ निश्चय कर लिया।

३ नं० सेनाके अफसरोंने जेलमें जाकर उनके हिसाब किताब और बाल बच्चोंकी अवस्थाके विषयमें जांच की। इस समय उन सिपाहियोंने आश्रयहीन अपने बाल बच्चोंकी दुर्दशाका विचार करके जो करुणाजनक कातरता प्रगट की उससे अफसरोंके हृदय भी दुःखी हो उठे। तीन अफसरोंने इन दुर्दशाग्रस्त

सिपाहियोंके आश्रयहीन स्त्री पुत्रोंके भरणपोषणके लिये चन्दा इकट्ठा करनेका इरादा किया। इस समय कैदी सिपाही केवल अपने परिवारकी चिन्तासे चिन्तित थे, उन्होंने अंग्रेज़ोंके विरुद्ध न किसी कठोर भाषाका प्रयोग किया और न विद्वेषका भाव ही। कैदी सिपाही अधिक समय तक हथकड़ी बेड़ियोंसे जकड़े न रहे, अधिक समयतक उन्हें चिन्तामें लंबी सांसें भी न लेनी पड़ीं। शीघ्रही उनके साथियोंने जेलखानेपर धावा मारकर उन्हें जेलसे मुक्त कर दिया। शीघ्रही वे भी अपने साथियोंके साथ मिल कर अंग्रेज़ोंके विरुद्ध अग्निलीलामें सहयोग देने लगे।

जिस दिन पलासीके विस्तृत मैदानमें, शत्रुओंके षड्यन्त्रसे, अभागे सिराजुद्दौलाका अधःपात हुआ था, जिस दिन लार्ड क्लाइवकी चतुराईसे बङ्गालमें अंग्रेज़ी राज्यकी नींव दृढ़ हुई थी, उस दिनके बाद एक सौ बरसतक ऐसी भयानक घटना न हुई, अंग्रेज़ कभी ऐसी विपत्तिमें फँसकर एक एक क्षणमें अपने नाशके लिये शंकित न हुए थे। मेरठसे दिल्ली और दिल्लीसे सम्पूर्ण पश्चिमोत्तर भारतमें यह आग जा पहुँची। आदमीके खूनसे चारों ओर होली खेली जाने लगी। इस घोर विपत्तिके समय भी लार्ड कैनिंगकी धीरतामें कुछ अन्तर न आया। जनवरी मासमें आशंकाका जो छोटासा बादल भारतीय आकाशके एक कोनेपर दिखाई दिया था वह मई मासके मध्यमें संसार भरमें फैल कर ओले बरसाने लगा। पर लार्ड कैनिंग इससे हताश न हुए। वे धैर्यपूर्वक अन्यान्य स्थानोंके राजपुरुषोंसे

सलाह करके शान्तिका उपाय करने लगे। उनके सामने इस समय विस्तृत और कठोर कार्य था। इस कार्यक्षेत्रमें प्रवेश करके वे घबराये नहीं, चूके नहीं। तरह तरहकी चिन्ता उनके मस्तिष्कको हिलाती थी, एकके बाद दूसरी आशंकायें हृदयको आन्दोलित करती थीं। पर वे धीरता और दूरदर्शितासे च्युत न हुए। सामने महाविपत्ति थी। इस विपत्तिसे वे साम्राज्यकी रक्षा करना चाहते थे। वे यह समझ गये थे कि विपत्ति जैसी बड़ी है, उसीके अनुसार उसके प्रतिरोधका आयोजन भी होना चाहिये। पर उनके पास अधिक गोरी सेना न थी। इससे भी वे विचलित न हुए। सब उनकी इस दृढ़ताको देखकर आश्वस्त थे। लार्ड कैनिंग इस समय अपना बल बढ़ा रहे थे। वे स्थान स्थानसे सेनायें एकत्र करके विपत्तिसे रक्षा का मार्ग सोच रहे थे। इस बड़ी विपत्तिका सामना करनेके लिये वे अपनी सम्पूर्ण शक्तिसे तैयार हुए।

यह समय पछताने और सोच विचारमें पड़नेका न था, और नो लार्ड कैनिंगको यह कहकर आक्षेप करनेका ही अवसर था कि अविचारसे भारतमें ब्रिटिश राज्यपर विपत्ति आई। अंग्रेजोंने लगातार राज्य बढ़ाया पर उसकी रक्षाका कोई प्रबन्ध न किया। अनुदार और संकीर्ण नीतिके बल पर, भारतके एक राज्यके बाद दूसरे पर ब्रिटिश झंडा लहराने लगा। एक राज्यके बाद दूसरा राज्य भी भ्रष्ट होने लगा। इससे सर्वसाधारणमें असन्तोष भी बढता ही चला गया। सरकारके हर एक कामको वे आशंकाकी

दृष्टिसे देख रहे थे, दूसरे, सब स्थानोंपर जितनी होनी चाहिए, उतनी गोरी सेना भी न थी। लार्ड कैनिंगने भारतमें गोरी-सेना-रखनेका बहुत यत्न किया, पर वे सफल न हुए। भारतसे चीनमें वे गोरी सेनाको भेजनेके लिये सहमत न थे। भारतसे चीनका ऐसा कोई सम्बन्ध भी न था। पर भारतसे फारस सेना भेजी गई थी, चीन भी गई थी। ब्रिटिश सरकारकी आज्ञाके अनुसार लार्ड कैनिंगको सब कुछ करना पड़ता था। अब विपत्तिका सामना हुआ। भारतमें यूरोपीय सेना रखनेके पक्षमें लार्ड कैनिंगने जो जो बातें कही थीं; वे सब ठीक उतरीं। इतने आक्षेपके होते हुए भी वीरकी तरह लार्ड कैनिंगने बीते हुएकी चिन्तामें ज़रा भी समय न खोया। पीछेकी ओर न देखकर उन्होंने आगे दृष्टि बढ़ाई।

बम्बईसे जो सेना फारस गई थी वह इस समय वापिस बम्बई आ गई थी। इससे लार्ड कैनिंगको सन्तोष था। जो सेना चीन जा रही थी, उसे भी वे अपनी सहायताके लिये भारतमें वापिस लाना चाहते थे। साम्राज्यके कामके लिये चीन जाती हुई सेनाको रोकना बड़ी जिम्मेदारीका काम था। पर सारी जिम्मेदारी अपने ऊपर लेकर उन्होंने उस सेनाको वापिस बुला लिया। केवल इसी प्रकार सेना संग्रह करके लार्ड कैनिंग चुप न हुए, साथ ही साथ वे अन्यान्य उपायों द्वारा सर्व-साधारण प्रजाको शान्त करनेका यत्न कर रहे थे। शारीरिक बलकी अपेक्षा मानसिक बल पर उनको अधिक विश्वास था।

इसी मानसिक शक्तिका परिचय देनेके लिये इस समय वे अग्रसर हुए। वे यह जान गये थे कि जातिनाश और धर्मनाशकी आशंकाके कारण अधिकांश प्रजा सरकारके विरुद्ध हुई है। इसलिये लार्ड कैनिंगने एक वार और सर्वसाधारणको मीठी मीठी बातोंसे समझानेकी कोशिश की। एक घोषणा तैयार की गई। इसमें गवर्नर जनरलने लिखा कि बहुतसे धूर्तों और स्वार्थियोंने सैनिकों तथा भारतकी प्रजाको यह विश्वास करा दिया है कि सरकारने उनके धर्मपर हस्तक्षेप किया है। पर सरकारने कभी इस प्रकारका काम नहीं किया। अपनी प्रजाको धोखा देनेकी इच्छा सरकारके हृदयमें कभी उदय नहीं हुई। सरकार सर्वसाधारणको सावधान करती है कि वे इन धूर्तोंकी बातोंपर कभी विश्वास न करें। ये धूर्त लोग भले और सीधे आदमियोंको भी कुमार्ग पर चलाकर विपत्तिमें डालना और उन्हें सर्वस्वहीन करना चाहते हैं। इस घोषणा पत्रका अनुवाद भारतकी भिन्न २ भाषाओंमें हुआ। हर एक छावनी और नगरमें इन अनुवादोंकी कापियाँ बांटनेके लिये भेजी गईं। हर कस्बे और नगरमें यह घोषणा पढ़ पढ़कर सुनाई जाने लगी। अधिकारियोंको आशा थी कि इससे शान्ति होगी। पर अन्तमें आशा दुराशामें परिणत हुई। सर्वसाधारणकी उत्तेजना अब और भी अधिक बढ़ गई थी। सरकारके सामने यह प्रस्ताव हुआ कि जो साहस और उत्साहसे राजभक्तिका परिचय दें उन्हें इनाम दिया जाय। बंगाल, पश्चिमोत्तर प्रदेश और पंजावके

लेफ्टिनेंट गवर्नर तथा अवधके कमिश्नरको यह सम्मान देनेका अधिकार दिया गया। पर जो उत्तेजना फैल चुकी थी उसमें इससे कुछ भी अन्तर न आया। सबका क्रोध जाग उठा था। क्रोध और हिंसासे सब ज्ञान शून्य हो गये थे। सरकारके प्रस्ताव और सरकारकी बातें कोई सुनता ही न था। लार्ड डलहौज़ीने जो विषवृक्ष बोया था वह अब खूब फल रहा था।

इधर कलकत्तामें जो अंग्रेज राजनीतिक काम कर रहे थे, उन्होंने लार्ड कैनिंगकी यथेष्ट सहायता नहीं की। वे केवल आशंकाका विस्तार कर रहे थे। ग़दरकी बातोंमें और भी नमक मिर्च लगा कर वे युरोपीय सम्प्रदायमें उसका वर्णन करके सबको व्याकुल कर रहे थे। इस समय अधिकांश अंग्रेजोंने धैर्य और कर्त्तव्य बुद्धिका परिचय नहीं दिया। वे भारतसे बैठे २ इंग्लैंडको जो पत्र लिखते थे उससे वहाँ भी आतंक फैल जाता था। इसी कारण लार्ड कैनिंगने ब्रिटिश सरकारको भी सावधान किया। उन्होंने साफ़ लिखा कि, कलकत्तेके अंग्रेज़ अपने पत्रोंमें अपने घर वालोंको जो कुछ लिखें उस पर बिलकुल विश्वास न किया जाय। कलकत्ते के अंग्रेज़ोंसे सहायता न मिलने पर भी कैनिंग अपने कर्तव्यसे विमुख न हुए। भिन्न भिन्न स्थानोंके अंग्रेज उनकी सहायताके लिये अग्रसर हुए थे। बम्बई और मद्रासके गवर्नरोंने इस विषयमें उदासीनता न दिखाई। लार्ड हैरिसने १८ मईको मद्रासके फौज भेजी। इसके बाद एलफिन्स्टनने एक सेना बम्बईसे कलकत्ते भेजी। जिन दो विचक्षण राजनीतिज्ञों पर पंजाब और अवधके

शासनका भार दिया गया था, वे दोनों इस समय अपनी योग्य बुद्धिका परिचय देने लगे। सर हेनरी लारेंस और सर जान लारेंस दोनों अपनी महान जिम्मेदारीको समझ कर होशियारीके साथ अविश्रान्त रूपसे काम पर जुट गये। दोनों भाई राजनीतिके महत्व, देशकी रक्षा, शासनकी कुशलता और सामने आये हुए कामको समझनेमें विशेष दक्ष थे। ब्रिटिश शासनकी रक्षाके लिये दोनों स्थिर प्रतिज्ञ थे। शत्रुओंकी कुटिल दृष्टिमें रहकर, विपत्तिके सामने डटकर दोनों अपनी सहिष्णुताका परिचय दे रहे थे। ब्रिटिशराजको विपत्ति पूर्ण देखकर दोनों, लार्ड केनिंगकी सहायताके लिये तत्पर हुए। विपत्ति देखकर उनका उत्साह और उद्यम बढ़ गया, दृढ़ता पूर्ण वेगसे विकसित हो उठी, साहस और अध्यवसाय सामने आया। एकाग्र चित्तसे वे लार्ड केनिंगकी वातोंका समर्थन करने लगे। लार्ड केनिंग इन्हीं बन्धुओंकी सहायतासे भारत साम्राज्यकी रक्षा करने लगे। विपत्ति जब पूर्ण वेगसे बढ़ जाती है, चारों ओर जब आपत्ति ही आपत्ति दिखाई देती है, विद्रोहकी लहरोंसे जब क्षण क्षणमें सबके हृदय हिलने लगते हैं, उस समय सब अपने आपको विपत्तिसे बचानेके लिये तरह तरहके प्रस्ताव करने लगते हैं, तरह तरहकी सलाहें देते हैं। इस मौकेपर एकको प्रधान समझकर उसकी बुद्धिपर भरोसा करना अच्छा होता है। अंग्रेज़ यद्यपि घबरा गये थे, पर फिर भी उनमें यह गुण था। लार्ड केनिंग लारेंसबन्धुओंके समान धीर और विपत्तिका

सामना करनेवाले पुरुष थे। जिस समय भारतकी गोरी सेना चीन जा रही थी उस समय सेनापति हेअर्सने सरकारके फौजी सेक्रेटरीको लिखा कि यह सेना वापिस भारत आनी चाहिए। सर हेनरी लारेंसने भी यही लिखा। मद्रासके प्रधान सेनापति ग्रांटने एक स्पेशल जहाज द्वारा इसी आशयका पत्र गवर्नर जनरलको भेजा। इधर सर जान लारेंसने एक विस्तृत विवरण इस आशयका भेजा कि विपत्तिसे बचनेके लिये सरकारको क्या क्या करना चाहिए। इस प्रकार सम्पूर्ण अंग्रेज़ शासक प्राणपणसे ब्रिटिश जातिके गौरवकी रक्षाके लिये तुल गये थे। भविष्य विपत्तिसे पूर्ण हो चुका था, चारों ओर भयानक आग अपनी कराल लपटें फैलाती चली जा रही थी। भारतकी खास खास छावनियोंके सिपाही अपने धर्मकी आशंकासे ब्रिटिश शासनके विरुद्ध खड़े हो चुके थे। वे किसी प्रकार न माने, किसी प्रकार उन्होंने पीछे पैर न रक्खा। एकाग्रताके साथ वे आगे बढ़े, महान् उत्साहके साथ उन्होंने अपना कार्य सम्पादन किया। चारों ओरको पृथ्वी भी रक्तसे स्नान करने लगी।

यह पहले ही कहा जा चुका है कि मेरठकी यूरोपीय और भारतीय सेनाका निवास पास पास न था। दोनोंके बीचमें बहुतसे मकान और दूकानें थीं। काली नदीकी एक शाखा दोनोंके बीच होकर बह रही थी। इसी कारण भारतीय छावनीकी बातें गोरी छावनीको शीघ्र मालूम नहीं होती थीं। ६ मईको ३ नं० रिसालाके सैनिक बेड़ियोंसे जकड़े जाकर जेल

भेजे गये थे। गोरोंने सारी आपत्ति मिटी समझकर प्रसन्नता प्रगट की थी। पर भारतीय सिपाही गहरा दुःख लेकर अपने निवाशको लौटे थे; शनिवारकी रात्रिको जब अंग्रेज़ खुलसे पड़े पड़े सो रहे थे तब भारतीय सिपाही अपने साथियोंकी दुरवस्था सोच सोचकर अंग्रेज़ोंके विरुद्ध उत्तेजित हो रहे थे। दुश्चिन्तासे उन्हें नींद न आई, हिंसाकी कठोर वृत्तिसे वे सब सुख खो चुके थे, निराशाने उनके धैर्यका भी अन्त कर दिया था। प्रातःकाल हुआ। उज्ज्वल सूर्यका उदय हुआ। दशों दिशायें प्रकाशित हो गयीं। रविवारका दिन था, स्नान करके नये नये कपड़े पहन पहनकर अंग्रेज़ उपासनाके लिये गिरजोंमें जाने लगे। किसी तरहकी गड़बड़की आशंका किसीको स्वप्नमें भी न थी। ९ मईको अंग्रेज़ोंके सब हिन्दुस्तानी बेयरों, खानसामोंने बाकायदा काम किया था, किसीमें किसी प्रकारका उद्वेग न था। पर १० मईको प्रातःकाल इनमेंसे कोई भी हाजिर न हुआ। अंग्रेज़ोंके जितने हिन्दुस्तानी नौकर थे वे सब इस समय न मालूम कहाँ गायब हो गये थे। पर उस समय किसीने इस-पर ध्यान नहीं दिया। अंग्रेज़ोंने इसे एक साधारण बात समझी। उन्होंने समझा कि नौकर किसी मामूली कारणसे सवेरे नहीं आ सके। यह मामूली कारण क्या था सो किसीने जांचा भी नहीं। इसलिये वे शान्तिके साथ अपनी प्रातःकालकी प्रार्थनाके लिये गिरजोंमें गये। प्रार्थना समाप्त करके वे उसी प्रसन्नताके साथ वापिस अपने अपने बङ्गलोंपर आये और उस दिनके

कामोंमें लग गये। प्रचंड सूर्य आकाशके मध्य भागमें आकर आग बरसाने लगा। इस समयतक भी अंग्रेज़ोंको विपत्तिका कुछ पता न था। पर भारतीय सिपाहियोंकी छावनी, बाजार और गलियोंमें उत्तेजनाका प्रवाह जारी था। सभी मानों किसी बड़े दारुण कामके लिये तैयार हो रहे थे। बहुतोंकी आकृतिसे दृढ़ता और असाध्य साधनके चिह्न दीख रहे थे। छोटे छोटे बालकोंतकने इसपर लक्ष्य दिया था, पर ऐसा बड़ा परिवर्तन अंग्रेज़ोंकी दृष्टिमें प्रारम्भमें न आया। किसी मेमने इस विपत्तिके विषयमें अपने स्वजनोंसे चर्चा की थी, पर किसीको उसकी बातपर भी विश्वास न आया।* इधर उत्तेजित सिपाही शस्त्रोंसे तैयार हो रहे थे, आस पाससे आकर और लोग भी उनमें मिलते जा रहे थे। जातिनाश और धर्मनाशकी आशङ्कासे अंग्रेज़ोंके विरुद्ध यह षड्यन्त्रकारी दल तैयार हो रहा था। अंग्रेज़ोंका समूल नाश ही इसका उद्देश्य था।

धीरे धीरे वैशाख मासका वह रविवारका दिन भी सायंकालमें बदल गया। प्रचण्ड सूर्य धीरे धीरे पश्चिम दिशामें जा छुपा। धीरे धीरे किरणें सूर्यमें ही समाने लगीं। सन्ध्याके कोमल अन्धकारके साथ साथ ठण्डी ठण्डी पवन लोगोंका चित्त शान्त करने लगी। मेरठके अंग्रेज़ शामकी प्रार्थनाके लिये तैयार होने लगे। एक पादरी अपनी स्त्रीके साथ उपासनाके लिये गिरजेमें जा रहे थे, इसी समय उनकी आयाने आकर समाचार दिया

* Martin's Indian Empire, Vol II P. 147.

कि सिपाही लड़ाईके लिये तैयार हैं। इसी समय सावधान होने-की जरूरत है। पर पादरीने आयाकी बात न सुनी, उन्हें वह बात पागलोंकी सी मालूम हुई। वे अपनी गाड़ीमें बैठकर स्त्री बच्चोंके साथ गिरजेमें जा पहुंचे। जब पादरी साहब गिरजेमें पहुंचे तब उन्हें होश हुआ, उन्होंने पास ही बन्दूककी आवाज़ें सुनीं। धीरे धीरे फायरपर फायर होने लगे, गिरजेमें जो अंग्रेज़ आ चुके थे वे सब एक दूसरेका मुँह ताकने लगे। इधर लगातार फायरपर फायर और सैकड़ों आदमियोंका कोलाहल शोर आकाशको गुंजाने लगा था। मानों किसी अपूर्व शक्तिके प्रतापसे एक क्षणमें चारों ओर प्रलयकालकी आग भड़क उठी थी। अब अंग्रेज़ोंकी समझमें आया कि सिपाही उत्तेजित होकर भयानक काण्ड करनेके लिये तैयार हुए हैं।

भ्रममें पड़कर अंग्रेज़ अधिकारियोंने पहले जो अविवेकके काम किये थे उन सबका फल अब सामने आया। शामके पांच बजेसे कुछ पहले ३ नं० रिसालाके सिपाही अस्त्र शस्त्रोंसे सज्जित होकर, घोड़ोंपर चढ़कर जेलखानेपर धावा करनेके लिये चले। इस जेलमें इसी सेनाके ८५ आदमी बेड़ियोंसे जकड़े पड़े थे। इस समय रिसालाका उद्देश्य इनको मुक्त करना था। एक क्षणकी भी उन्होंने देर न की। किसी तरहकी आशङ्का, डर, दुश्चिन्ता उनके मार्गमें न आई। वे बड़े वेगसे, अपार साहससे जेलखानेको तोड़ते हुए अन्दर घुस गये और एक लुहारके द्वारा अपने साथियोंकी बेड़ियाँ कटवा डालीं। ८५ आदमी बन्धन

मुक्त होकर इसी दलमें शामिल हो गये। उनका जेलका जीवन समाप्त हुआ, बेड़ियोंका क्लेश भी दूर हुआ। घोड़ोंपर चढ़कर अब वे अपने साथियोंके साथ चले। ३ नं० रिसालाका सबसे पहला लक्ष्य अपने साथियोंको जेलसे मुक्त करना था, इसके अतिरिक्त उनके सामने और कोई बात न थी कोई और निश्चय न था। इसलिये न उन्होंने जेलखानेको किसी तरहका नुकसान पहुंचाया न अनिष्ट किया। अंग्रेज जेलरका भी उन्होंने अपमान न किया।*

रिसालाके साथ ही साथ पैदल सेनायें भी युद्धके लिये उठ खड़ी हुई थीं। ११ नं० और २० नं० भी सेनायें जातिनाश और धर्मनाशकी आशङ्कासे बेहद उत्तेजित हो रही थीं। अंग्रेजोंके कामोंपर उनको विशेष घृणा और क्रोध था। अबतक वे केवल अवसर देख रहे थे। यह अवसर भी उनके सामने आ गया। अबतक वे शान्त भावसे अपने अंग्रेज अधिकारियोंकी आज्ञाका पालन जिस भावसे करते थे वह भाव भी उनका नष्ट हो गया था। हिंसाके आवेग और अन्तर्दाहसे वे अधीर हो गये थे।

* कैदियोंकी मुक्तिके विषयमें भिन्न भिन्न लोगोंकी सम्मति भिन्न भिन्न है। एकने लिखा है कि रिसालाके आनेसे पहले ही जेल टूट गई थी और सब कैदी बाहर हो गये थे। जेलकी रक्षक सेनाने सहायता की थी। Dr. O'Callaghan's scatt;'ered chapter on the Indian mutiny. किसी किसीकी सम्मतिमें केवल ८५ सिपाही ही छुटे थे और कोई नहीं। Commissioner William's report, Comp, Kaye's Sepoy War. Vol. II. P. 58 note.

अस्त्र शस्त्रोंसे सज्जित होकर युद्ध करनेसे वे न रुक सके। इस दिन शामके वक्त सेनापति कर्नल फिनिस घोड़ेपर चढ़कर अपनी ११ नं० सेनामें गये थे। अपनी सेनापर उन्हें पूरा विश्वास था। उन्होंने सोचा था कि अपने सेनापतिके समझानेसे सैनिक युद्धसे रुक जायंगे। जब वे अपनी सेनाको उपदेश दे रहे थे उस समय २० नं० सेनाके एक सिपाहीने उन्हें निशाना करके बन्दूक दागी। कर्नल फिनिस एक ही गोलीमें लोट पोट होकर घोड़ेसे गिर गये, एक क्षणमें उनके प्राण शरीरसे निकल गये। ११ नं० सेनाने २० नं० सेनाको गोली चलाते देखा। एक क्षणमें ११ नं० सेना भी उसके साथ हो गई।

इस प्रकार मेरठकी सम्पूर्ण भारतीय सेना विद्रोही होकर संग्राम करने लगी। हिन्दू और मुसलमान दोनोंने धर्मनाशकी आशंकासे अंग्रेज़ोंका नाश करनेके लिये हथियार उठाया। क्रोध और आवेशमें वे अपना ज्ञान खो चुके थे, इसलिये उनके किसी काममें विचार और ज्ञानका लेश न था। वे अंग्रेज़ स्त्रियों और बच्चोंपर भी निर्दयतासे हथियार चलाने लगे। जेल टूट गई थी, कैदी भी सिपाहियोंके साथ हो लिये थे। सिपाहियोंके उत्थानके साथ सम्पूर्ण मेरठ नगर भयानक कांडका लीला क्षेत्र बन गया। इस समय अनेक भारतीय सिपाही और भारतवासी अपना कर्त्तव्य भूले न थे। वे बराबर अपना काम कर रहे थे। खजानेके रक्षक सिपाहियोंने अपना कर्त्तव्य पालन किया। विद्रोही सिपाही एक रुपया भी वहाँसे न ले सके। इतनी हिम्मतके

साथ ख़ज़ानेकी रक्षा करके अन्तमें उन्होंने इसे अंग्रेज़ अधिकारियोंके हाथमें सौंप दिया।

इस समय मेरठमें दो पैदल अंग्रेज़ी सेना और एक तोपख़ाना था। भारतीय सिपाहियोंके खड़े होते ही यूरोपियन सेना खड़ी न हुई। इससे पचास साल पहले सेनापति गिलिप्स केवल एक गोरी सेना लेकर विलोड़े किलेकी रक्षाके लिये तैयार हुए थे। दक्षिण भारतमें जो कुछ अशान्ति हुई वह सब अकेले इस वीरने दृढ़तासे रोकी। पर, मेरठके यूरोपीय अफसरोंने, ग़दरके प्रारम्भमें, इस प्रकारकी दक्षताका कोई परिचय न दिया। उन्होंने केवल कवायदके मैदानमें ८५ आदमियोंके हथियार लेकर बेड़ियां पहनानेमें ही अपनी दक्षताका परिचय दिया था। पर इसी कारण विषवृक्ष फलेगा यह उन्होंने न सोचा था। वे शान्ति और आनन्दसे अपना समय बिता रहे थे। एकाएक भारतीय सिपाहियोंकी चढ़ाई—चारों ओर बंदूकोंकी तड़ातड़—मार मारकी आवाज़से वे किंकर्त्तव्य विमूढ़ हो गये। क्या करना चाहिये, यह उन्हें न सूझा। न उनमें शृंखला रही, न तरतीब और न कार्यतत्परताके ही लक्षण दिखाई दिये। ज्ञानशून्य, भ्रान्त और भयभीत होकर वे हक्केबक्केसे हो गये।

मेरठमें तीन प्रधान अंग्रेज़ सेनापति थे। इनमेंसे एक ३ नं० रिसालाका कर्नल, एक मेरठ छावनीका ब्रिगेडियर और एक मेरठकी सम्पूर्ण सेनाका अध्यक्ष था। ३ नं० रिसालाके कर्नल तो इस समय अपने आपको आपत्तिसे बचानेकी चिन्तामें था।

गड़बड़ देखकर इस सेनाके अन्यान्य अफसर जब हथियारोंसे तैयार होकर छावनीमें गये तब कर्नल स्मिथ न गये।* जब यह खबर आ गई थी कि ३ नं० रिसाला युद्ध कर रहा है, तब सेनापति स्मिथका कर्त्तव्य था कि वे अपनी सेनाके निवासस्थानमें पहुँचते, पर उन्होंने अपने कर्त्तव्यकी ओर कुछ भी ध्यान न दिया। उनकी इस उपेक्षाके कारण विपत्ति और भी अधिक बढ़ गई। वे कमिश्नरके घरपर गये, सेनापतिसे मिले, ब्रिगेडियरके पास भी गये। इस तरह सब कहीं गये, पर अपनी सेनामें न गये।† जबसे ३ नं० सेना रणमत्त हुई, तभीसे उसे अपने सेनापतिके दर्शन न हुए। सिपाहियोंके आक्रमणसे रक्षा पानेके लिये तमाम तोपें लगाई जा रही थीं, गोरे सिपाही हथियार लेकर तैयार हो रहे थे, पर कर्नल स्मिथने इन सबकी ओर कुछ भी

* ३ नं० रिसालाके सब अंग्रेज अफसर तैयार होकर विद्रोही सेनाके सामने गये थे पर सेनापति स्मिथ सारी रातमें एक बार भी दिखाई न दिये। वे अपने आपको बचानेके लिये अंग्रेजी छावनीमें जा रहे थे। Kaye's Sepoy War Vol. II.P. 63 note,

† सेनापति स्मिथने स्वयं एक विवरण लिखा है। उसमें वे कहते हैं कि, मैं पहले ग्रिथेड साहब कमिश्नरके पास गया, सुना कि वे घरपर नहीं हैं। फिर सेनापतिके घर गया वहां भी सुना कि वे भी नहीं हैं। फिर ब्रिगेडियरके पास गया। गोलंदाजोंके निवासमें ब्रिगेडियरसे भेंट हुई। मैं रातभर वहीं रहा, दूसरे दिन दिल्लीकी तरफ चला। Kaye's Sepoy War. vol II. P. 64 note.

ध्यान न दिया। यह वीरता और साहस दिखाकर उन्होंने अपने सेनापति पदका परिचय दिया था। पर ३ नं० रिसालेके कप्तान ग्रेगरी स्मिथ इस समय चुप न रहे। गड़बड़ होते ही वे अपने सिपाहियोंके सामने जा खड़े हुए और दृढ़ताके साथ उनसे परेटके मैदानमें चलनेको कहा। सिपाहियोंने कप्तानकी आज्ञा मानी, कप्तानका सेनामें अधिक सम्मान था। सहृदयताके कारण सब उनसे सन्तुष्ट थे। इस संकटके समय जब कप्तान ग्रेगरीने उन्हें अपने साथ चलनेको कहा तब सब उनके साथ हो लिये। सब कहने लगे कि हमने अपने साथियोंको जेलसे छुड़ाया है, इस कारण युद्ध होगा और उस युद्धके लिये हम तैयार हैं। सुनकर ग्रेगरीने सबको अपने साथ चलनेका हुक्म दिया। इस समय एक अंग्रेज़से ग्रेगरीकी भेंट हुई। उससे ग्रेगरीने पूछा कि सेनापति स्मिथकी किसी आज्ञाका आपको पता है? उस अंग्रेज़ने कहा कि सेनापति स्मिथ अपनी जान लेकर भागे हैं, उन्होंने कोई आज्ञा नहीं दी।* कप्तान ग्रेगरीने फिर कुछ न कहा। घोड़ा दौड़ाकर वे सेनाके पास चले गये। उन्होंने कैदियोंको रोकनेकी कोशिश की, पर उन्मत्त सिपाहियोंने उन्हें पहले ही विमुख कर दिया था। जिन ८५ सिपाहियोंकी बेड़ियाँ कट गई थीं उनसे ग्रेगरीकी भेंट हुई। वे वर्दी पहने, हथियारोंसे सजे दिल्लीकी ओर जा रहे थे। यहाँ यह कहना जरूरी है कि ३ नं० रिसालाके अधिकांश सिपाही मुसलमान थे, वे

* Martin's Indian Empire. vol II. P. 149. note

दिल्ली इसलिये जाना चाहते थे कि वहाँ मुसलमानोंकी बस्ती अधिक है, उनसे अच्छी सहायता मिलेगी। कप्तान ग्रेगरी इनके सामने आये। अपने कप्तानको इन्होंने पहचान लिया। पर कप्तानको हानि पहुँचाना इन्हें इष्ट न था। उनकी सदाकी सहायतासे यह लोग परिचित थे। घोर उत्तेजना और क्रोधके समय भी यह लोग कप्तानको भूल न सके। उनमें पहलेकी वही श्रद्धा आ गई, द्वेषका भाव उसके नीचे दब गया। कप्तानको सामने पाकर वे प्रसन्नतासे कहने लगे कि, हम मुक्त हो गये, अब हम आपको आशीर्वाद देते हैं। ऐसी आपत्तिके मौकेपर भी बिगड़े हुए सिपाहियोंने कप्तानके प्रति आदरका भाव व्यक्त किया था, उपकारीके उपकारको वे नहीं भूले थे। जरा भी देर न करके कप्तान ग्रेगरी इन्हें दिल्ली जानेसे रोकनेके लिये छावनीमें जाने लगे। रास्ता रणमत्त सिपाहियों और बाजारू लोगोंसे भरा था। सब हथियारोंसे सज्जित थे, अंग्रेज़को देखते ही बंदूक छोड़ते थे। एक मेम गाड़ीमें बैठी जा रही थी, एक सिपाहीने दौड़कर उसे संगीन भोंक दी। कप्तान ग्रेगरीने उस सिपाहीको अपनी तलवारसे मार डाला। मेम भी मर चुकी थी। इसी समय ग्रेगरीके कानके पाससे एक गोली सनसनाती हुई निकल गई। पीछे घूमकर उन्होंने देखा कि एक सिपाही दुवारा उनपर निशाना लगा रहा है यह देखकर ग्रेगरीने कहा—"क्या मुझे निशाना बना रहा है?" सिपाहीने चिल्लाकर कहा—"हाँ, मैं तेरा खून करूंगा।" ग्रेगरीने सोचा कि जो मैं

इसपर गोली छोड़ूंगा तो आस पासके दूसरे सिपाही फिर मुझे निशाना करेंगे। गोली न छोड़कर उन्होंने कहा—"क्या सिपाही सबका खून करना चाहते हैं?" पासके बहुतसे सिपाहियोंने एक साथ कहा "नहीं।" यह कहकर सबने उस सिपाहीको पीछेकी ओर ढकेल दिया। जब वे अपनी बारिक-की ओर जाने लगे तब सिपाहियोंसे कहा कि, तुममेंसे कोई मेरी स्त्रीकी रक्षा करनेके लिये तैयार है या नहीं? पासके बहुतसे सिपाहियोंने आगे बढ़कर आग्रहके साथ कहा कि हम हैं। कप्तानने कहा—मैं केवल चार आदमी नियत करना चाहता हूं। बहुतसे सिपाही 'मैं, मैं' कहकर चिल्ला उठे। ग्रेगरी पहले चार आदमियोंको अपने बंगलेपर भेजकर बाकी सबको अपने साथ लिये हुए छावनीकी ओर चले। निर्दिष्ट स्थानपर पहुँच कर कप्तानने सिपाहियोंको नियमपूर्वक पंक्तिमें चलाया। सब परेटके मैदानमें जा पहुंचे। जब दूसरी सेनायें उन्मत्त होकर फ़ायर कर रही थीं तब ३ नं० रिसाला अपने कप्तानकी आज्ञासे चुपचाप खड़ा था। उस समय मेरठके अंग्रेज़ इस रिसालाकी राजभक्ति और अपने अफसरोंपर आस्था देखकर बार बार प्रशंसा करते थे। इतिहासमें किसीने ३ नं० रिसालाकी निन्दा नहीं की। सबने उसकी विश्वस्तता और अफसरोंकी आज्ञा माननेकी प्रशंसा की है।

इस समय कर्नल विलसन तोपख़ानेके अध्यक्ष थे। जैसे ही उन्हें सिपाहियोंके युद्धका समाचार मिला उन्होंने सब

तोपें तैयार कराईं और शीघ्रही सिपाहियोंकी ओर बढ़े ! इधर सिपाही उन्मत्त होकर भयानक रूपसे गोलियां बरसा रहे थे। उनकी गोलियोंसे अंग्रेज़ अधीर हो गये थे, बहुतसे मर गये थे। बहुतसे अपने बालबच्चोंको लेकर किसी रक्षित स्थानमें जा छिपे थे। सम्पूर्ण मेरठ मानों किसी जादूगरके मन्त्रसे प्रेरित होकर उन्मत्त राक्षसकी तरह हुंकार ले रहा था। शामके साथ २ कोई संहारिणी शक्ति चारों ओर अपना प्रभाव जमा रही थी। अंग्रेज सेनापतिकी तोपें और गोरी सेनायें लेकर पहुंचने तक चारों ओर खून ही खून दिखाई देने लगा। सिपाहियोंका साहस और क्रोध बढ़ा हुआ था। उन्होंने इस अवसरपर बड़े उद्यम और उत्साहसे काम लिया। यदि वे बाकायदा लड़ते, यदि कोई रणनिपुण सेनापति उन्हें योग्यतासे युद्ध करानेका भार लेता तो उनका हथियार छीनना अंग्रेज सेनाके लिये असम्भव हो जाता। पर इस समय वे किसी नियमके अनुसार अंग्रेजोंसे युद्ध न कर रहे थे, कोई रण निपुण आदमी उनका संचालक न था, जिसे जैसी सूझ रही थी वह वैसी कर रहा था। वे पागल हो गये थे और अपना क्रोध निकालनेके लिये अंग्रेज़ोंके प्राण लेनेके लिये बन्दूकें चला रहे थे और अपने धर्म और जातिनाशक अंग्रेज़ोंको मारना ही उनका प्रधान कर्त्तव्य हो गया था। क्रोधके कारण उनकी बुद्धि स्थिर न थी। बिना बुद्धिके उनके सब काम अस्तव्यस्त हो रहे थे। अधीरताके कारण वे अपने उद्देश्यको सिद्ध करनेका मार्ग भी निश्चित नहीं

कर सके। एक दूसरेसे सम्मति करके कामका कोई तरीका न सोंचा गया था। जेलसे अपने साथियोंको छुड़ाकर वे चारों ओर फैल गये थे और जिस किसी अंग्रेज़को देखते या जिसपर अंग्रेज़ होनेका सन्देह होता उसीपर बन्दूक छोड़ते।

उत्तेजित सिपाहियोंको रोकनेके लिये गोरी सेनाको घटना-स्थलपर पहुंचनेमें देर लगी। जब सब सेना तैयार होकर खड़ी हुई और सिपाहियोंकी ओर तोपोंका मुख फेरा गया तब शाम हो चुकी थी। चारों ओर अन्धेरा फैल चुका था। भारतीय सिपाहियोंकी छावनियोंको भी गोरोंने खाली पाया। सब कहां गये वह कोई नहीं जानता था। पैदल सेनाकी बारिक और परेटका मैदान सब सूना था। सेनापति ह्यूटने किसी भी हथियारबन्द सिपाहीको सामने न पाया। जिनका आक्रमण रोकनेके लिये वे सेनाओंको तैयार करके लाये, जिन्हें उड़ानेके लिये वे तोपें भर कर लाये, वे न जाने कहां अन्तर्धान हो गये। सेनापति इससे बड़े खिन्न हुए। उन्हें अपना सब प्रयास व्यर्थ प्रतीत होने लगा। गोरी सेनाएं युद्धके लिये तैयार थीं। तोपें भरी हुई थी पर जिनके साथ युद्ध करना था उनका कहीं पता ही न था। रिसालाकी बारिकोंके पास कुछ सिपाही दिखाई दिये पर उनकी ओर बन्दूकें छोड़ते ही वे भी अन्धेरेमें मिलकर न मालूम कहां गायब हो गये। पासवाले बाग और घरोंमें सिपाहियोंके छिपनेका सन्देह होनेके कारण सेनापतिने दोनों ओर तोपें छोड़नेकी आज्ञा दी। भरी तोपें छूटीं

पर सिपाहियोंका पता न लगा। कुछ ठीक न होनेके कारण तोपोंके गोले खाली स्थानोंमें गिरकर ठण्ढे हो गये। केवल थोड़ी बन्दूकें और तोप चला करके अंग्रेज अपने आप लज्जित हुए। सेनापतिने समझा कि अब सिपाही इधर उधर बिखर गये हैं। पर गये कहां है, यह कोई निश्चित न कर सका। कर्नल विलसनने सलाह दी कि सिपाही गोरी छावनियों-की ओर गये होंगे। इसी विचारसे सेनापतिने सेनाको छावनी-की ओर बढ़ाया। सेना फिर अपने रहनेके स्थानपर आने लगी। इसी समय चन्द्रोदय हुआ, चारों ओर प्रकाश फैल गया। गोरी सेनाने देखा कि उनकी बारिकें और बंगले आगसे जल रहे हैं। चारों ओर प्रलयकी आग ऊँची ऊँची लपटों द्वारा सब कुछ भस्म कर रही है, लपटें बढ़ बढ़कर आकाश-से बातें करने लगीं। यह देखकर गोरे सैनिक जल्दीसे आगे बढ़े पर वहां उन्हें किसी सिपाहीका पता न लगा। सब बारिकें और बंगले जल रहे थे। उनके कड़कने और टूटनेका भयानक शब्द हो रहा था। खड़े खड़े गोरे सैनिक भी आश्चर्य-से स्तम्भित होकर भयानक दृश्य देखने लगे। पर उन्हें अपना बदला लेनेका मौका न मिला। रात भर वे उसी तरह परेटके मैदानमें खड़े रहे।

इस रातको मेरठमें जैसी भयानक घटना हुई थी उसका ठीक ठीक वर्णन इतिहासमें नहीं हो सकता। शामके कुछ समय बाद ही गोरी छावनीमें आग लगी थी। ज्यों ज्यों समय बीतता

था त्यों त्यों आग भयानक रूप धारण करती जाती थी। सिपाहियोंकी बारिकोंसे अफसरोंके बंगलों और अफसरोंके बंगलोंसे दूसरे अंग्रेज़ोंकी कोठियोंमें भी आगकी भयानक लीला होने लगी थी। इस आगका धुआं इतना घना और गाढ़ा था कि चन्द्रकी चन्द्रिका भी मन्दी पड़ गई थी। घरवालोंका आर्तनाद, विवश होकर जलनेवालोंकी करुणाजनक चीखें और सबसे अधिक उन्मत्त सिपाहियोंकी भयानक ललकारें आकाश भेदती थीं। सब घोड़े अस्तबलमें बंधे थे, वे बुरी तरहसे चीख़ चीख़ कर आगमें छटपटा रहे थे। मेमें और उनके बच्चे आगके कारण किंकर्त्तव्य विमूढ़ होकर इधरसे उधर भाग भागकर प्राण दे रहे थे। किसी अंग्रेज़ स्त्री बच्चेने कहीं अन्धेरेमें अपने आपको छिपाया, किसीने नौकरके घरमें छिपकर प्राण बचाये, कोई ज्ञानशून्य होकर आगमें जल मरे।

इस महा आपत्तिके समय अपने प्राणोंपर खेलकर बहुतसे भारतवासियोंने अंग्रेज़ स्त्रियों, बच्चों और पुरुषोंके प्राण बचाये। निष्पक्ष इतिहासलेखक अनन्त कालतक उनके गौरव, साहस और विश्वस्तताका बखान करेंगे। मेरठके कमिश्नर ग्रिथेड साहब और उनकी मेमने अपने हिन्दुस्तानी नौकरोंकी सहायतासे अपनी प्राण रक्षा की। इस समय सरदार मीरखां नामक एक सैनिक पुरुष मेरठमें रहता था। काबुलमें जो अंग्रेज़ कैद हो गये थे उनकी सहायता करनेके कारण सरकारने इस अफगान सरदारको ६०० रुपये मासिककी वृत्ति निश्चित कर दी

थी। मेरठमें गड़बड़ होते ही इस सरदार और ३ नं० रिसालाके एक अफसरने कमिश्नरको आत्मरक्षाके लिये तैयार होनेको कहा। कमिश्नर साहब अपनी मेम और कई एक शरणागत अंग्रेज़ स्त्रियोंको लेकर कोठीकी छतपर जा छिपे। सिपाहियोंने उसी समय कोठी घेर ली, शीघ्र ही नीचेसे आग लगा दी गई। घरमें जो कुछ सामान था वह लूट लिया गया। देखते देखते कोठीकी नीचेवाली मंज़िल जलने लगी। नीचेसे ऊपरवाली मंज़िलमें भी आग जा पहुंची। कमिश्नर साहब कई एक अंग्रेज़ स्त्रियोंके साथ छतपर अपना शोचनीय परिणाम देखकर निराश थे। नीचे चारों ओर धक धक आग जल रही थी। सिपाही खड़े हुए कमिश्नरकी मौतको आनन्दके साथ देख रहे थे। इस कठिन समयमें यदि उनके हिन्दुस्तानी नौकर अपनी जानपर खेलकर साहस न करते तो कमिश्नरके प्राणोंकी रक्षा न होती। कमिश्नरके प्रधान माली गुलाबसिंहने इस समय अपूर्व वीरता और आत्मत्यागका परिचय दिया। कोठीके नीचेवाली सब मंज़िलें जल रही थीं; ऊपर भी आग लग चुकी थी, चारों ओर रणमत्त सिपाही खड़े तमाशा देख रहे थे। गुलाब-सिंहने बड़ी बुद्धिमत्ताके साथ सोचा कि सिपाही लूटके लिये बड़े उत्सुक हो रहे हैं, उन्हें दूसरे स्थानकी सम्पत्ति लूटनेकी सलाह देकर यहांसे दूसरे स्थानपर भेज दिया जाय। इस विचारके पैदा होते ही गुलाबसिंह सिपाहियोंके साथ बड़ी सहानुभूति दिखाने लगा; साथ ही उसने कहा कि इस घरमें

ढूँढ़नेपर भी कुछ न मिलेगा क्योंकि कमिश्नर तो अपनी मेमके साथ गिरजा गये हैं। यदि सिपाही कुछ लेना चाहते हों तो मैं समीप ही एक गोदाम दिखा सकता हूं। उसे लूटनेसे बड़ी सम्पत्ति हाथ लगेगी। एक कड़वी (फूस) की गोदाममें अंग्रेज़ छिपे हैं। वे भी हाथ लग जायंगे।* यह सुनते ही सिपाहियोंने कमिश्नरकी कोठी छोड़ दी। कमिश्नरके नौकर सब कुछ जानते थे, फिर भी उन्होंने कुछ न कहा। सिपाहियोंने तलवारें निकालकर उन्हें डराया था। पर डरके मारे भी किसीने कुछ भी न कहा। सबने गुलाबसिंहकी बातका ही समर्थन किया। उन्होंने इस सम्बन्धमें जबानतक न हिलाई कि कमिश्नर साहब छतपर हैं। उनकी बातोंपर विश्वास करके सिपाही वहांसे चले गये। उसी स्थानपर नौकरोंने एक ओरसे रस्सी फेंक दी जिसके सहारे कमिश्नर और उनकी मेम तथा अन्य स्त्रियां नीचे उतरीं। इसके कुछ मिनिट बाद ही वह छत नीचे गिर पड़ी। पास ही एक बाग था, जहां इन विपत्ति-ग्रस्तोंने आश्रय लिया। सिपाही फिर उस ओर न गये। कमिश्नर, उनकी मेम तथा अन्य अंग्रेज़ महिलाओंने वृक्षोंमें छिप कर रात बिताई। दूसरे दिन सवेरेही गुलाबसिंह एक गाड़ी ले आया जिसमें बैठकर सब अंग्रेज़ी छावनीमें चले गये। एक शिक्षागृहमें बहुतसे अंग्रेज़, मेमें और बच्चे ठहरे हुए थे। मेरठमें

* Martin's Indian Empire. vol II. P. 150. Kaye's Sepoy War vol. I. P. 68-69, Appendix P. 664-665.

कोई किला न था। फौजियोंका विद्यालय ही किला बन गया था। इसीमें सबने शरण ली।

जैसे मेरठके कमिश्नर ग्रिथेड साहबकी जान बच गई थी वैसे सब अंग्रेज़ोंकी न बची। गोरे सिपाही अपने तोपख़ानेके साथ तैयार होकर सिपाहियोंको मारनेके लिये गये थे। छावनियोंमें उनकी स्त्रियां, बच्चे और सिविलियन अंग्रेज़ थे, इनकी रक्षाका कोई उचित प्रबन्ध न था। क्रोधित सिपाही और उनके साथ प्रजाके बहुतसे उन्मत्त पुरुषोंने इन असहायोंपर भयानक आक्रमण किया। ज्ञानशून्य होकर उन्होंने स्त्रियों और बच्चोंतकका घात कर डाला। उनके मनमें केवल बदलेका भाव था, अपने जाति-धर्मका नाश करनेवाले अंग्रेज़ोंका सर्वनाश करना ही उनका उद्देश्य था, अपार क्रोधके कारण विचार और ज्ञान तो उनसे दूर भाग गया था। जहां कहीं, अंग्रेज़ जातिका पुरुष, स्त्री या बच्चा उन्हें मिलता था, उसका ख़ून करनेमें लेशमात्र भी नहीं हिचकते थे। घोर शत्रुताके कारण उनका कलेजा पत्थर कासा हो गया था, स्त्री और बच्चोंके गिड़गिड़ानेपर भी उन्हें दया नहीं आती थी। उनकी आंखें कसाईकी तरह लाल और डरावनी हो गई थीं। बिना संकोच उन्होंने स्त्रियों और बच्चोंको मारा। छोटे २ बच्चोंके निरपराध ख़ूनसे उनकी तलवारें कलंकित हुई थीं। अंग्रेज़ोंके शासन और अंग्रेज़ोंकी शासनप्रणालीसे उनके दिल ऐसे ही फिर गये थे। इसी कारण वे ऐसे भयानक और नीच कामोंसे भी न हिचके।

ऊपर कहा जा चुका है कि इस विपत्तिके अवसरपर कप्तान ग्रेगरीने ३ नं० रिसालाको शान्त रक्खा था। ग्रेगरीकी स्त्रीने अपने बुद्धिबलसे अपने आपको बचाया। वह जिस घरमें रहती थी उसके बराबर ही एक यूरोपियन स्त्री रहती थी। जब सिपाही अंग्रेज़ोंके घरोंमें आग लगाने लगे और एकके बाद एक घर जलने लगा, तब ग्रेगरीकी स्त्री अपनी पड़ोसिनकी रक्षाके लिये तैयार हुई। उसने अपने नौकरोंको आज्ञा दी कि वे उस मेमको दूसरे निरापद स्थानमें पहुंचा आवें। नौकरोंको जानेमें कुछ देर लगी। इस देरके कारण वहां सब कुछ समाप्त हो गया। नौकरोंने जाकर देखा कि मेमका शरीर टुकड़े टुकड़े हुआ पड़ा है। इस अभागिनीको मारकर वे सिपाही ग्रेगरीके बंगलेके पास आये। ग्रेगरीके नौकरोंने अपनी मालकिनकी जान बचानेका दृढ़ निश्चय किया। उनकी स्वामिभक्ति और विश्वास किसी प्रकार विचलित न हुआ। नौकर सिपाहियोंसे कहने लगे कि, ग्रेगरी साहबने सदा सबका भला किया है, वे सदा सबके मित्र बने रहे हैं, उन्होंने कभी किसीका अनिष्ट नहीं किया, उनके घरमें आग लगाना पाप है। नौकरोंका यह यत्न सफल हुआ। जिस समय अंग्रेज़ोंके सब बंगले जल रहे थे उस समय भी ग्रेगरीका बंगला वैसे ही खड़ा था।

जिस समय सिपाहियोंने ग्रेगरीकी स्त्रीको अधिक विपत्तिमें डालना चाहा था उसी समय ग्रेगरीके भेजे ३ नं० रिसालाके चार सवार बिजलीकी तरह झपाटेसे वहां आ पहुँचे। आते ही वे

घोड़ोंसे उतरकर कोठीके बरामदेमें आये। ग्रेगरीकी स्त्रीने उनसे हाथ मिलानेके लिये अपना हाथ आगे बढ़ाया, पर चारों सिपाहियोंने उसे इज्जतके साथ सलाम किया और कहा कि अपने प्राण जानेतक हम आपकी रक्षा करेंगे। असाधारण प्रभुभक्तिके कारण उनका उत्साह सौगुना अधिक बढ़ गया था। इसी कारण अपने कर्त्तव्यमार्गसे वे जरा भी विचलित न हुए। घोर विपत्तिके अवसर पर वे अपने कप्तानकी स्त्रीकी रक्षाके लिये सन्नद्ध हुए। डरी हुई ग्रेगरीकी पत्नीको उन्होंने शान्तिसे घरमें बैठनेको कहा। बरामदेमें जानेसे अधिक भय था इसलिये विश्वस्त सिपाही उसे बरामदेमें जानेसे बार २ मना करने लगे। वह अपने मालिकके लिये बड़ी चिन्तित हो गई थी। उस समय सिपाहियोंकी रणमत्त हुंकार और आग लगनेकी तड़तड़ाती आवाजको छोड़कर और कुछ सुनाई न देता था। ऐसे समयमें स्त्रीको अपने पतिकी चिन्ता होने लगी। ग्रेगरी अपने कर्त्तव्यमें रत थे, उन्हें घर आनेकी फुरसत कहां थी। जब वे अपनी सेनामें शान्ति स्थापित कर चुके, सब सैनिकोंने उनकी आज्ञा मान ली, तब वे अपने घरको लौटे। मार्गमें उन्हें शंका होने लगी कि शायद वे अब अपने घरको राखका ढेर और अपनी स्त्रीको खूनसे लथपथ हुई देखेंगे, पर वापिस आकर उन्होंने देखा कि घर वैसे ही बना है और उनकी स्त्रीके शरीरपर कोई आघात नहीं लगा है। प्रभुभक्त सिपाही उनके घर और स्त्रीकी रक्षा के लिये नंगी तलवारें खींचे खड़े हैं। ग्रेगरीका हृदय शान्त हुआ, चिन्ता दूर हुई। वे शीघ्र ही अपनी स्त्री और शरणागत अन्य

अंग्रेज़ स्त्रियोंको साथ लेकर किसी निरापद स्थानमें जानेको तैयार हुए। मेमोंके कपड़े सफेद मलमलके थे, भागते हुए यदि किसी सिपाहीकी नजर पड़ गई तो विपत्ति आ जायगी, इस विचारसे ग्रेगरीने सबको घोड़ोंपर बैठाकर एक काला कपड़ा ऊपरसे ओढ़ा दिया। भागकर इन सबने एक टूटे हुए मन्दिरमें रात बिताई। थोड़ी ही दूरपर सिपाहियोंका शोर सुनाई देता था। इस समय अंग्रेज़ोंके निवासस्थान सिपाहियोंके क्रीड़ास्थल बन गये थे, पर वे तीन प्रभुभक्त सिपाही अपने कर्त्तव्यसे विमुख न थे। वे अब भी अपने कप्तानकी कोठीकी रक्षा कर रहे थे। धीरे धीरे सवेरा हुआ, उन्मत्त सिपाही अपने अपने कामोंसे निवृत्त होकर इधर उधर छिपने लगे। विपण्ण हृदय ग्रेगरी अपने घर वापिस आये। इस समय उनके नौकरोंने पूरी विश्वस्तताका परिचय दिया। नौकरने लूटे जानेके डरसे सब वर्तन गढ़ा खोद कर उसमें गाड़ दिया था। उस महाविप्लवके समय जब अंग्रेज़ अपने प्राण बचानेके लिये इधर उधर छिप रहे थे, जब किसीको किसी तरहको होश न थी—उस समय मामूली मामूली हिन्दुस्तानी नौकरोंने अपने कर्त्तव्योंका पालन किया। उनकी स्वामिभक्ति अटल थी, उनका कर्त्तव्यपालन प्रशंसनीय था। जरूरी चीजें लेकर ग्रेगरी स्त्रियोंसहित तोपखानेके सैनिक-निवासमें पहुंचे। जिन सिपाहियोंने अपने प्राणोंकी आहुति देकर रातभर कप्तानके घरकी रक्षा की थी, जो प्रभुभक्तिमें अटल सिद्ध हुए थे, वे भी अंग्रेज़ी सैनिकनिवासकी ओर जानेसे

संकोच करने लगे। वे सोच रहे थे कि गोरोंके पास जाते ही वे कैद किये जायंगे। अपने कर्त्तव्यको पूरा करनेके इनाममें शायद अंग्रेज़ उन्हें भी बेड़ियां पहनावेंगे, उन्हें जेलकी कठोर यातना दी जायगी। उनकी दुश्चिन्ता ऐसी बढ़ गई थी कि वे गोरी सेनाकी ओर जानेसे हिचकिचाने लगे। गोरी सेना और अंग्रेज़ क्रोधित होनेपर किस तरहके काम किया करते हैं यह वे अच्छी तरह जानते थे। उनकी इस दुश्चिन्ताको दूर करनेके लिये कप्तानने उन्हें समझाया। इसीसे समझा जा सकता है कि अंग्रेज़ी शासननीतिसे भारतवासी कहां तक डरे हुए थे। वे विचलित होकर क्या क्या सोच जाते थे। यह इससे और भी स्पष्ट हो जाता है। इस पूर्ण शंकास्पद शासनसे ग़दरका जन्म हुआ था। इतिहासके इस गंभीर सत्यको सदा हृदयपर लिख रखना चाहिए। अंग्रेज़ी सरकार शासनकी जिस नीतिका परिचय देती थी उससे सर्वसाधारणका सन्देह और भी अधिक बढ़ जाया करता था। सिपाहियोंको सरकारसे किसी तरहकी सहानुभूतिकी आशा न थी। सरकारके सभी कामोंकी आलोचना करके वे अपने सुखकी आशा नहीं करते थे, वे यदि कोई भला काम करते तब भी यही आशा करते थे कि सरकार उन्हें इसके लिये दण्ड देगी। एक इतिहासलेखकने इस विषयमें लिखा है—"हमारे किसी काममें अव्यवस्था और अधीरता प्रगट होतेही सिपाही सन्देह करने लगते थे कि इसमें कोई गुप्त मतलब है। मेरठकी भयानक रातको जिन सिपाहियोंने हमारी आज्ञाका

पालन किया और प्रभुभक्तिका परिचय दिया, उन्होंने भी साफ़ कहा था कि फौजी विभागके अधिकारियोंके न्याय और नीति-पर उन्हें विश्वास नहीं। वे केवल अपने कप्तानके कारण वाध्य होकर आज्ञा मान रहे हैं अन्यथा वे भी अंग्रेज़ोंके विरुद्ध युद्ध करते।"* सरकार और अधिकारी आतङ्कसे राज्य करनेकी नीतिके पक्षपाती रहे हैं, यह भीतर बैठा हुआ डर ही सिपाहियोंके उद्वेगका कारण था। श्मशानमें प्रेम और समवेदनाका लेश भी न था, इसी कारण क्या प्रजा और क्या सिपाही सब सरकार और उनके अधिकारियोंसे विरक्त थे। पर जहाँ ज़रा प्रेम और सहानुभूतिकी गन्ध उन्हें मिलती थी वहाँ वे अपने प्राणों-पर भी खेलकर अधिकारियोंको आज्ञाका पालन करते थे। कप्तान ग्रेगरीमें यह गुण था, इसी कारण विद्रोही सेना खूनसे अपने हाथ रँगनेके लिये तैयार होकर भी उनका कहा मान गई। पर सब अंग्रेज़ जाति ग्रेगरी नहीं थी। सब अंग्रेज़ डराकर और दबाकर राज्य करनेके पक्षपाती थे। यह डर ही ग़दरका मूल कारण था। यदि ब्रिटिश सरकार और अंग्रेज़ अधिकारी आतङ्क और दमनको सबसे ऊपर न रखकर दया और समवेदनासे काम लेते, उदारतासे शासनकी व्यवस्था की जाती, सदा सर्वदासे प्रजाके अधिकारोंको पददलित न किया जाता, न्याय और मनुष्यत्वसे काम लिया जाता तो भारतके प्रभुभक्त सिपाही कभी भी विद्रोही न होते। भारतके

* Martin's Indian Empire. Vol. II P. 150.

सिपाहियोंने शुरूसे प्रभुभक्तिका परिचय दिया था, अंग्रेज़ोंकी अधीनतामें उन्होंने स्वदेशवासियोंपर हथियार उठाकर अंग्रेज़ोंका राज्य स्थापित किया था, अपने देशवालोंको मारकर विदेशी अंग्रेज़ोंकी रक्षा की थी, पर "आतङ्क और दमन" वाली सरकार और अंग्रेज़ोंकी नीतिपर वे अधिक विश्वास न कर सके। भारतीय सिपाही प्रभुभक्त थे, विश्वासी थे, धीर थे, पर सरकार और अधिकारियोंकी नीतिके कारण वे अपने सब गुणोंको भूलकर पागलसे हो गये थे। जो हाल सिपाहियोंका था वही सर्वसाधारण प्रजाका भी था। जिन कारणोंसे सिपाही अन्ततक अंग्रेज़ोंपर विश्वास न कर सके उन्हीं कारणोंसे सर्व-साधारण प्रजाका भी अंग्रेज़ोंपरसे विश्वास उठ गया था। उन्होंने एकके बाद एक अपने स्वदेशी राज्यको अंग्रेज़ोंके हाथ जाते देखा था, अपने जमींदारों और ताल्लुकदारोंकी जमीनें छिनते देखा था और जमीनका लगान उनसे बहुत अधिक लिया गया था। ये सब कारण उनके असन्तोषके लिये पर्याप्त थे।

इस रातको मेरठ तथा आसपासके गांवोंके उत्तेजित आदमी भी सिपाहियोंके साथ थे। सिपाहियोंके साथ मिलकर ये लोग भी अंग्रेज़ोंका नाश करनेके लिये उतारू हो गये थे। ये लोग किसी वीभत्स और दारुण कामसे पीछे न हटे, अंग्रेज़ों-के बंगलों और घरोंमें आग लगाना, तलवारोंसे उन्हें मारना, घर बार लूटना आदि सब बातोंमें सिपाहियोंसे आगे ही थे। इन्होंने सम्पूर्ण मेरठ और खासकर अंग्रेज़ी बस्तीको भयानक

बीभत्स लीलाका क्षेत्र बना डाला। बड़ी कठिनतासे इस रातका अन्त हुआ। प्रातःकालका प्रचण्ड सूर्य अपने अनन्त प्रकाशके साथ उदय हुआ। भागे हुए और छिपे हुए अंग्रेज़ोंने धीरे धीरे सिर उठाया, अपने अपने स्थानसे वे रक्षाकी तलाशमें उठे। उनकी दुर्दशाका अन्त न था। घर और सारा सामान जल गया था, उनके मित्र और भाईबन्धु मारे गये थे, स्त्री और बच्चोंकी लाशें इधर उधर पड़ी थीं, उनके बाग और विश्राम करनेके स्थान श्मशान बन रहे थे, चारों ओर राखका ढेर, मुर्दोंकी लाशें और टूटा फूटा सामान पड़ा था। अपने मित्रों और स्त्रियोंकी लाशें देखकर चुपचाप आँसू गिराने लगे, अपने धन और सामानका हरण देखकर चुपचाप आहें भरने लगे। उनकी बदला लेनेकी प्रवृत्ति जाग उठी, पर बदलेके लिये उन्हें सामने कोई भी न दिखाई दिया। गोरे सिपाही अपनी बंदूकें और तोपें भरे हुए तैयार थे पर वे चलावें किसपर? मेरठके अंग्रेज़ इस अवसरपर ज्ञानशून्य और कातर हो गये थे। एकाएक विपत्ति आने और उसमें भय, उद्वेग और शोक होनेके कारण सिपाहियोंपर हमला करनेका उन्होंने अधिक प्रयास भी न किया। मेरठकी सारी गोरी सेना तैयार परेटके मैदानमें खड़ी थी। सिपाही मेरठसे दिल्लीके लिये रवाना हो चुके थे।

इस समय एक अंग्रेज़ सैनिक बदला लेनेसे बाज न आया। लेफ्टिनेंट मोलरने अपने मित्रकी स्त्रीको किसी हत्यारेके हाथसे मरी हुई देखकर उसकी खोज की। उसे मालूम हो गया कि बाजा-

रके एक कसाईने यह हत्या की है। मोलर बाजारमें जाकर शीघ्र उस कसाईको पकड़कर गोरी सेनामें ले आया। एक क्षणमें उसका विचार हो गया और उसे पासवाले आमके पेड़-पर फांसी दे दी गई। उस समय अंग्रेज़ बदलेके लिये ऐसे उत्तेज़ित हो उठे कि थोड़ेसे सन्देहपर भी हिन्दुस्तानियोंके प्राण वे इसी तरह ले लेते थे। तैयार होकर यह सिपाहियोंके सामने संग्राम न कर सके। जब सिपाही अंग्रेज़ोंके घर जलाकर उनकी हत्या कर रहे थे उस समय गोरी सेना अवसरपर न पहुंची। पर जब रातभर घोर काण्ड करके सिपाही दिल्लीके लिये रवाना हो गये तब सब निकले और जो शहरवाले, दूकानदार या किसान सामने मिलते उनमेंसे अधिकांशको अंग्रेज़ोंका हत्याकारी समझकर गोली मारते या फांसी दे देते। पर बड़े अधिकारियोंकी आज्ञा नादिरशाही आज्ञा न थी और इसी कारण हृदयमें बदलेकी आग होते हुए भी अंग्रेज़ अपने जीका पूरा वैर न निकाल सके।

अंग्रेज़ोंके कामोंसे उत्तेजित होकर सिपाहियोंने भयानक कांड किया था, पर इस अवसरपर भी भारतवासियोंने अंग्रेज़ोंकी सहायता की, इतिहासमें यह विवरण सदा अमर रहेगा। अपने देशवासियोंके आक्रमणोंसे इन्होंने विपन्न अंग्रे-ज़ोंकी रक्षा की। ऊपर इनकी कुछ बातें आ चुकी हैं, यहाँ और कुछ दी जाती हैं। ११ नं० सेनाके दो पैदल सिपाहियोंने दो अंग्रेज़ स्त्रियों और बच्चोंको अपनी रक्षामें अंग्रेज़ी सेनामें पहुं-

चाया। एक मुसलमानने कई ईसाइयोंको अपने घरमें छिपाकर रक्खा। इसमें उसकी जान जानेका भय था फिर भी उसने इसकी परवा न की। एक नौकरानी और एक धोबीने एक मेम और बच्चेकी रक्षा की। अपने कपड़ोंसे उसने मेमका मुंह ढक दिया था, पर दुर्भाग्यसे एक सिपाहीने घूंघट खोलते ही उसे पहचान लिया, तुरन्त तलवारसे उसके दो टुकड़े कर डाले। उसके बच्चोंकी जान धोबीने अपने घरमें छिपाकर बचाई।* मेरठकी भयंकर घटनामें ऐसे कोमल काण्ड भी हुए थे। साधारण आदमियोंने भी ऐसे महत्वके काम किये थे। निष्पक्ष इतिहासलेखक इस सत्यका अपलाप नहीं कर सकता, इतिहासका सम्मान नहीं घटा सकता। अंग्रेज़ इतिहासज्ञ और राजनीतिज्ञोंने मेरठके इस असन्तोषके समय सेनापति ह्यूटकी प्रशंसा नहीं की। जिस समय सिपाहियोंने जेल तोड़ी, सेनापतिने कुछ न किया। उनके अधीन बहुत बड़ी गोरी सेना और तोपें थीं। पर इतना होते हुए भी समयपर वे उपस्थित न हो सके। एकाएक हमला होनेके कारण वे घबरा गये थे, कुछ स्थिर न कर सके। ह्यूटके साथ साथ, लेखकोंने भारतके प्रधान सेनापतिपर भी दोषारोपण किया है। लार्ड एलनबराने एक बार अपने भाषणमें कहा था—"मेरठके सिपाही शामको ६ बजे हमारे विरुद्ध उठ खड़े हुए। इस समय वहाँ एक गोरी

* Kaye's Sepoy War. Vol. II. P. 74. Holmes' Indian Mutiny. P. 105.

पैदल सेना एक गोरा रिसाला और तोपखाना मौजूद था। इतना होनेपर भी उन्मत्त सिपाही तीस चालीस मीलका रास्ता तय करके दिल्ली चले गये। यह क्यों हुआ? मेरठके सैनिक अपने सेनापतिके विषयमें कुछ न जानते थे। ऐसे सेनापतिको सेनाके संचालनका भार देकर कोई सरकार योग्य नहीं कही जा सकती। इस समय भारतके प्रधान सेनापति कहाँ थे? वे अपनी सेनाके सामने क्यों नहीं आये? यह वे जानते थे कि विपत्ति धीरे धीरे बढ़ रही है, यह भी उन्हें मालूम था कि वह चारों ओर फैलती जा रही है, फिर भी वे आनन्दसे शिमलाकी ठंढी हवाका मजा ले रहे थे। जिसपर बड़ी भारी जिम्मेदारी थी उसका ऐसा करना प्रशंसाकी बात नहीं।"*

सिपाही एकाएक क्यों बिगड़ उठे, एकाएक उन्होंने मनुष्यरक्तकी धार क्यों बहा दी, अपनी सर्वसंहारिणी शक्तिका परिचय उन्होंने क्यों दिया? इसका कारण बताते हुए बहुतोंका यही कहना है कि रिसालाके ८५ आदमियोंको कड़ी कैदकी सजा देनेसे उनकी उत्तेजना बढ़ गई। इंग्लैंडके राजनीतिज्ञोंकी भी यही सम्मति है। ईस्ट इण्डिया कम्पनीके भूतपूर्व सभापतिका कहना था कि, चर्बीका सन्देह होनेके कारण सिपाहियोंने कारतूस छूनेसे इनकार किया था; इस कारण ८५ आदमियोंको दस दस सालकी कड़ी जेलकी कैद दी गई। यदि यह दण्ड न दिया जाता तो सिपाही अंग्रेज़ोंका रक्त बहानेपर कभी भी तैयार न

* Martin's Indian Empire. Vol. II. P. 154.

होते। एक दूसरे स्थानपर इन्होंने कहा था—"परेटके मैदानमें सबके सामने जब इन सिपाहियोंको बेड़ियोंसे जकड़ा गया उसी समय सेनामें बिजलीके समान शीघ्र गतिसे समवेदनाका भाव दौड़ गया था। इससे पहले सिपाहियोंको तरह तरहके सन्देह हुए थे, पर सबने उसे इतना अधिक अनुभव न किया था। जब उन्होंने जरासे अपराधके कारण अपने साथियोंको दस सालके लिये जेल जाते देखा तब सब उसे अपना शोचनीय अन्त समझने लगे।"* सेनापति ह्यूटने इस विषयमें कहा था कि सिपाहियोंने पहलेसे कोई सलाह मशविरा करके अंग्रेजोंपर हमला नहीं किया, अफवाह उड़ी कि एक सेना उनके हथियार लेने आ रही है, बस, इसीसे त्रस्त होकर वे उठ खड़े हुए। ६० नं० गोरी सेना शामको प्रार्थनाके लिये जानेको परेटके मैदानमें एकत्र हुई थी। सिपाहियोंने देखा कि अफवाह गलत नहीं है, क्योंकि, गोरी सेना मैदानमें जमा हो रही है। इसलिये उसी समय यह लोग अंग्रेजोंके खिलाफ उठ खड़े हुए। एक अंग्रेजने यही बात लिखी है।† फिर भी वह सिपाहियोंके उठनेका प्रधान कारण नहीं कहा जा सकता। सरकार अपनी नीतिके कारण चिरकालसे गदरका बीज बो रही थी। लार्ड डलहौज़ीने जबसे नाबालिग बच्चेको हटाकर पंजाबपर

* Martin's. Indian Empire Vol II. P, 153

† Indian Empire. Vol. II P. 147 Kaye's Sepoy War Vol. II P. 57.

कब्ज़ा किया था तभीसे सिपाहियोंके हृदय हिल रहे थे। इसके बाद उन्होंने जब नागपुर, झांसी, सितारा, अवध आदि प्रान्तोंमेंसे एकके बाद एकको लेते देखा तब उनके हृदय हिलने लगे। उन्होंने सोचा कि सरकार जिस चतुराईसे इन राज्योंका हरण कर रही है, उसी तरह एक दिन उनकी जाति और धर्मका सम्मान भी नाश करेगी। समयके परिवर्तनके साथ साथ भारतमें अनेक प्रकारकी नई बातें चल पड़ीं। अंग्रेज़ी शिक्षाके प्रभावसे जातिबंधन कुछ शिथिल पड़ा, इस कारण सिपाहियोंका धैर्य जाता रहा। वे शिक्षित और परिणामदर्शी न थे। वे साधारण बुद्धिवाले प्राचीन संस्कारोंके भक्त थे। इसलिये इन चिन्ताओंके कारण उनका हृदय व्यथित हो उठा। उन्होंने सोचा कि अंग्रेज़ोंने जैसे एकके बाद दूसरा राज्य लिया है वैसे ही अब उनके धर्मका नम्बर है। इसके बाद सर्वसाधारणमें नाना प्रकारकी अफवाहें उड़ने लगीं।* अपवित्र कारतूस और हड्डीमिले आटेकी बात चारों ओर फैल गई। इससे भयभीत होकर सिपाही किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो गये। एक ओर वे अपने जातिधर्मके नाशसे डरते थे दूसरी ओर हथियार छीने जाकर नौकरीसे छूट जानेका भी डर था। मेरठके सिपाहियोंके एक ओर कुआं था दूसरी ओर खाई थी। इस मौकेपर किसीने कह दिया कि गोरी फौजें तुम्हारे हथियार लेने आ रही हैं। पहले दिन वे देख चुके थे कि ८५ सैनिकोंके हथियार छीने जाकर वे

* लखनऊमें सर हैनरी लारेंससे जमादारने यही बातें कही थीं।

दस सालके लिये जेल भेजे गये थे। उसी समय उन्होंने देखा था कि गोरी सेना परेटके मैदानमें एकत्र हो रही है। उन्हें विश्वास हो गया था कि बस, यह सेना उनके हथियार छीनकर, उन्हें हथकड़ी और बेड़ियोंसे जकड़कर जेल भेज देगी। ३ नं० रिसाला सबसे अधिक उत्तेजित था, क्योंकि उसीके ८५ आदमी जेल भेजे गये थे। लगातारकी घृणा, क्रोध, लज्जा तथा क्षोभसे वे पागल हो गये थे। बाज़ार और बस्तीके आदमी भी उन्हें तरह तरहकी घृणासूचक बातें कहते थे।* इसलिये ६० नं० गोरी सेनाको जमा देखते ही वे तैयार होकर जेलख़ानेपर चढ़ दौड़े। जो आग सुलग रही थी वह एकाएक जल उठी। जब जल उठी तब फिर उसे कौन बुझा सकता था? फिर प्रतिहिंसाकी गतिको भी कौन रोक सकता था? फिर बदले ही बदलेका भाव उमड़ आया। ख़ूनके दरियामें तलवारें तैरने लगीं। हिंसाका वह ऐसा घोर काण्ड मचा कि मनुष्यता भी मानों भयसे कहीं लुप्त हो गयी।



* Kaye's Sepoy War Vol II. P. 57 note.

छठा अध्याय,



दिल्लीमें गदर।



तिहिंसा अपनी रक्तपिपासा बुझानेके लिये खप्पर आगे बढ़ा चुकी थी। मनुष्यता कभीकी विदा हो चुकी थी। चारों ओर पैशाचिक काण्ड होते दिखाई दे रहा था। मनुष्य जब बदला लेनेपर उतारू होता है, तब वह कैसा बन जाता है, इसके लिये गदरका उदाहरण ही काफी है। उस समय मनुष्यसे शैतान और राक्षस भी शरमाने लगते हैं। अंग्रेज़ोंकी राजनीतिने भारतीयोंके हृदयमें जो शंकाके बीज बोये थे वे अब फल गये थे। मेरठके बाद दिल्लीपर उन्मत्त सिपाहियोंका आक्रमण हुआ। दिल्लीका पुराना इतिहास घटनाओंसे भरा है। भारतवासी दिल्लीको नहीं भूल सकते। प्रतापी हिन्दू राजा पृथ्वीराजका प्रिय-निवास, मुगल सम्राट् अकबरकी प्रमोदभूमि दिल्लीको कोई भी भुला न सका था। समयके फेरमें पड़कर दिल्ली अपने गौरवसे हीन हो गई थी, मुगलवंशका राज्य उठ गया था, दिल्लीके स्थानपर कलकत्ता भारतको राजधानी बन गई थी, विस्तृत राज्य अंग्रेज़ोंके हाथमें चला गया था, इस गदरसे पचास साल पहले ही मुगल सम्राटके हाथसे राज्य निकल गया था, किलेमें रह-

कर वे पेंशन खा रहे थे, पर उनके वंशका गौरव, उनके सम्मान और उनकी शक्तिकी बात किसीके हृदयसे लुप्त न हुई थी। अकबरने जिस प्रभावशाली राज्यका विस्तार किया था, शाहजहांने जिसे समृद्ध किया था, औरंगजेबने जिसका प्रभुत्व स्थापित किया था, उसे इतनी जल्दी लोग भुला नहीं सकते थे। यद्यपि मुगलसाम्राज्य नाश हो चुका था, मुगलोंका झंडा सिवाय किलेके और कहीं उड़ता नजर न आता था, फिर भी मुगलोंका आदर और गौरव सबके हृदयोंमें था, सब उसे सिर झुकाते थे। कम्पनीका राज्य होनेके बहुत दिन बादतक मुगलबादशाहके नामके रुपये ढलते थे। अवस्था बदल जानेपर भी सर्वसाधारणके हृदयोंमें मुगलसम्राटकी इज्जत थी। मुगलोंके ज़मानेमें हिन्दू और मुसलमान दोनों बड़े २ सरकारी ओहदोंपर थे। दोनों प्रधान सेनापति भी थे। प्रधान मंत्रीतक हिन्दू थे। पर अब उनकी सन्तानने देखा कि उनका वह प्राचीन गौरव नहीं रहा, अंग्रेज़ोंकी राजनीतिके कारण उनका तिलभर मान भी नहीं रहा। इसलिये वे अंग्रेज़ोंकी अपेक्षा राज्य चले जानेपर भी मुगलसम्राट-की अधिक इज्जत करते थे। उनके ज़मानेमें उन्होंने जो आराम पाया था उसे कोई भूला न था। हिन्दू और मुसलमान दोनों किलेको देखकर सोचते थे कि उनके पूर्वपुरुष यहां राजदर्बारमें आते और बादशाह द्वारा सम्मानित होते थे। अंग्रेज़ोंने उन्हें अब अधिकारच्युत कर दिया है। * उनके पिता या दादा मुगल

* Martin's Indian Empire. Vol II. P. 156.

सम्राट्के अनुग्रह-भाजन बने थे, पर अंग्रेज़ी अमलदारीमें वे सबसे वञ्चित हो गये। इसलिये दिल्लीके बादशाहकी अवनति होनेपर भी उनकी दृष्टिमें वही सम्मान था। कवि उन्हें अपनी कवित्व-शक्तिका उद्दीपक मानते, शिल्पी अपने शिल्पविकासका केन्द्र समझते, ऐतिहासिक लोग उन्हें प्राचीन गौरवका स्थल बताते, और हिन्दू मुसलमान उन्हें आत्मसम्मानका आधार समझकर सन्तुष्ट थे।

ग़दरकी घटनाओंका वर्णन करनेसे पहले दिल्लीके राजवंशके सम्बन्धमें कुछ बातें कहनी अधिक आवश्यक हैं। मरहटोंने दिल्लीपर अधिकार कर लिया था, उत्तर भारतमें मरहटाशक्ति बढ़ती चली जा रही थी। ईसाकी उन्नीसवीं सदीके शुरूमें लार्ड लेक और वेलज़लीने दिल्लीके बादशाह शाह आलमको विजेता मरहटोंके हाथसे मुक्त कराया। इस समय शाह आलमकी अवस्था बहुत ही शोचनीय थी। ये बुढ़ापेसे झुक गये थे, अन्धे हो गये थे, शक्ति जाती रही थी। मरहटोंके हाथसे छूटकर बूढ़े बादशाह अंग्रेज़ोंके हाथ पड़े। मरहटोंको यह आशा थी कि वे भारतपर अपना राज्य स्थापित करेंगे, पर अंग्रेज़ोंके कारण उनकी आशापर पानी फिर गया। फरासीसियोंने भी कमजोर होकर भारत लेनेकी आशा त्याग दी। चारों ओर अंग्रेज़ोंका प्रताप और अंग्रेज़ोंका प्राधान्य हो गया। ख़ैर जो कुछ हो, अंग्रेज़ोंने ऊपरसे शाह आलमकी कभी बेइज्जती नहीं की। गवर्नर जनरल इस अभागे बादशाहका सदा सम्मान करते थे। पर यह सब सम्मान

[illegible] थी। अंग्रेज़ जातिने अपने स्वार्थसाधनमें किसी प्रकार-की कमी न की। शाह आलमको मरहटोंसे छुड़ाकर उन्होंने उनका राज्य अंग्रेज़ी शासनमें मिला लिया। दिल्लीकी लड़ाईमें जब लार्ड लेकने मरहटोंको हराकर शाह आलमको छुड़ाया तब भी वे इस अभागे बादशाहके साथ मरहटोंसे अधिक उदारताका व्यवहार न कर सके। मरहटोंने शाह आलमकी जो पेंशन नियत की थी वही अंग्रेज़ोंने भी रक्खी, उसमें कुछ भी न बढ़ा।

इस प्रकार अंग्रेज़ोंने शाह आलमको अपने कब्जेमें किया। एक दिन जो भारतका सम्राट कहलाकर सम्मानित होता था उसे आत्मपोषणके लिये दस लाख रुपया साल मिलने लगा। विजयी तैमूर वंशका इस प्रकार पतन हुआ। अद्वितीय सम्राट, अपार शक्तिशाली राजाओंका स्वामी, अंग्रेज़ कम्पनीकी दी हुई पेंशनसे पेट पालनेके लिये बाध्य हुए। इस गिरी हुई दशामें भी शाह आलमने धैर्य और सन्तोषका परिचय दिया। मुगल बादशाहोंमें अनेक भावुक कवि और सरस पुरुष हुए हैं। शाह आलमने भी अपनी भावुकताका परिचय दिया है। दीनता और हीनताके कष्टोंसे सताये जाकर भी उन्होंने उच्च कवित्वशक्तिका परिचय दिया था। इस अवसरपर बूढ़े सम्राटने कहा था—"बदकिस्मती-की गर्दिशने मुझे हिलाया, मेरी इज्जतको उड़ाया, और तख्तको दूर फेंक दिया। गहरे अन्धेरे गढ़ेमें डूबनेपर भी मैं सर्व शक्तिमान् ईश्वरकी दयासे उज्ज्वल होकर उठ सकूंगा।"* वृद्ध सम्राट्

* Martin's Indian Empire, Vol 11. P. 456.

अपनी कवितासे अपने आप मोहित रहते थे, करुण रससे भरी कविता बनाकर अपने आप आंसू बहाते, ऊंचे भावोंकी कविता लिखकर अपने दुःख दारिद्र्यको भूल जाते।

शाह आलम दरिद्र हो गये थे, अधिकारशून्य हो चुके थे फिर भी वे बादशाह कहलाते थे, उन्हें बादशाहकी इज्जत दी जाती थी। दिल्लीके बादशाहके नामसे हिन्दू मुसलमानोंका हृदय नाच उठता था, वे उनकी हृदयसे श्रद्धा करते थे। शाह आलम सब कुछ खो चुके थे, पर लोगोंके दिलोंसे वे न खोये गये थे। इस समय लार्ड वेलजलीने सोचा कि यह बिना मुल्कका बादशाह अगर अपने बापदादोंके किलेमें रहा, उसके चारों ओर विश्वस्त और राजभक्त प्रजा रही, तो सम्भव है, एक दिन इसके वंशवाले इसी नींवपर अपनी बादशाहतका महल फिर खड़ा करें। जो कभी ऐसा हुआ तो सरकारको मुसीबतका सामना करना पड़ेगा। इसलिये उन्होंने प्रस्ताव किया कि शाह आलमको मुंगेरके किलेमें रखा जाय। दूसरे स्थानपर भेजे जानेके समाचारसे बूढ़े बादशाह बहुत दुःखी हुए, यह दुःख उनके परिवारको भी हुआ। परिवारके सब स्त्री पुरुष बालक और नौकरचाकर तक डर गये। इसलिये लार्ड वेलजलीने बूढ़े और अन्धे बादशाहको अवनतिका अधिक क्लेश न दिया। उन्होंने यह सोचकर इस प्रस्तावको स्थगित कर दिया कि जब शाह आलमके पुत्र अपने पूर्वगौरवका स्वप्न भूल जायँगे, युवा होंगे और आमोद प्रमोदमें समय बितावेंगे तब वे आसानीसे दूसरे स्थानपर भेजे जा सकेंगे।

सन् १८०६ के दिसम्बरमें शाह आलमका परलोकवास हुआ। उनके बाद उनके पुत्र अकबर शाह उनके वारिस हुए। पिता-की तरह यह भी अंग्रेज़ोंकी पेंशन लेने और अपनी निर्द्दिष्ट-सीमा-पर राज्य करने लगे। हिन्दू और मुसलमान शाह आलमके पुत्रको उसी आदरकी दृष्टिसे देखते और भारतका प्रधान सम्राट कहते थे। भारतके राजा लोग उस समय भी उनसे सनद लेते थे। जब नया राजा सिंहासनपर बैठता तब अकबर शाह उसे खिलअत देकर अपनी बादशाहतके गौरवकी रक्षा करते थे। जब नया गवर्नर जनरल भारतमें आता, तब बादशाहतके सूचनास्वरूप खिलअत उसके पास भी भेजी जाती थी। सन् १८२७ ई० तक बादशाहके फर्मानके बिना अंग्रेज़ कम्पनी किसी देशपर कब्ज़ा नहीं कर सकती थी।* दिल्लीका अंग्रेज़ रेज़ीडेंट जूते पहने बादशाहके सामने जानेकी हिम्मत नहीं कर सकता था। जिस कम्पनीने बादशाहको पेंशन दी थी उसका प्रधान गवर्नर जनरल भी उनके सामने ज़ोरसे नहीं बोल सकता था, किसी तरहके अभिमान और प्रभुत्वका परिचय नहीं दे सकता था, वह नंगे पैर दूरसेही सलामें करता हुआ बादशाहके पास आता। राजमहलके भीतर वह जूता पहने या छतरी लगाये नहीं जा सकता था।† दीनता, पराधीनता और अवनतिके समयपर भी

* Boll's History of Indian Mutiny. vol 1. P. 454.

† Russell's My Diary in India vol II. P. 65. Martin's Indian Empire. vol 11 P. 457.

विजयी तैमूरके वंशका इतना आदर सम्मान था। इस गौरव तथा सम्मानसे उन्नत होकर अकवर शाहने अपने आधिपत्यका विस्तार किया। अंग्रेज़ कम्पनीने वादशाहको पेंशनभोगी बना लिया था, फिर भी उसकी इज्जतपर हाथ डालनेकी हिम्मत न थी। इस समयतक रुपयेपर मुगल वादशाहका नाम खुदता था। प्रजा अपने वादशाहकी प्रभुतासे प्रसन्न थी।

समय वीतने लगा। अंग्रेज़ कम्पनी अपने पैर जमाने लगी थी। मरहट्टोंकेहारने और फरासीसियोंके वैठ जानेसे अंग्रेज़शक्ति प्रधान हो चली थी। जो इंग्लैंडसे सौदा लेने देने और व्यापार करके चार पैसे फायदा उठाने आये थे, उनके अनेक राज्य भारतमें हो गये थे। अंग्रेज़ोंके भीतरी दुश्मन मरहट्टे और फरासीसी दब गये थे, बाहरके किसी शत्रुका डर न था। इसलिये अब कम्पनी अपने आपको प्रधान वनानेकी कोशिश करने लगी। दिल्लीके मुगलवादशाहपर ही सबसे पहले उनकी नज़र पड़ी। अबतक वे वादशाहके गौरवसे सम्मानित थे, रुपयेपर उन्हींका नाम था। उन्हींके नामसे खिलअत दी जाती थी। अंग्रेज़ोंको अपनी पेंशन खानेवालेकी यह प्रधानता खटकने लगी। मौका देखकर वे इस प्रथाको हटानेकी चिन्ता करने लगे। पहले विना वादशाहकी आज्ञाके कम्पनी किसी नये देशपर कब्ज़ा न कर सकती थी, चढ़ाई करनेसे पहले शाही फर्मान लेना पड़ता था। लार्ड एमहर्स्टने सन् १८२७ में वादशाहकी इस वातको माननेसे इनकार किया। वूढ़े अकवर शाहको

पेंशनके अलावा पांच लाख रुपया साल और देनेका वादा इस शर्तपर किया गया कि अब भविष्यमें कम्पनी किसी देशपर चढ़ाई करेगी तो वह बादशाहका फर्मान न लेगी।* इसी प्रकार और कई एक विषयोंमें कम्पनीने अपने लिये सुविधा कर ली। पहले गवर्नर जनरल बादशाहकी खास बेगम और बड़े शाहजादेको भेंट देते थे। भारतके अन्यान्य राजाओंको बादशाहके सामने जो कुछ करना पड़ता था वही कम्पनीके प्रतिनिधिको भी करना पड़ता था। सन् १८२२ में इस प्रथाको तोड़कर कम्पनीने अपनी स्वाधीनताका परिचय दिया। इस सालसे कम्पनीके प्रतिनिधिका भेंटका आना बंद हुआ। दिल्लीका रेजीडेंट भेंट देता रहा। पर १८२७ में वह भी बंद हो गया। इस प्रकार हर साल कम्पनी अपना हाथ पैर बढ़ाने लगी। प्रधान बेगम और शाहजादाको जो नजराना दिया जाता था, वह भी उठ गया। इन सब भेंटोंके बदले कम्पनी बादशाहको दस हजार रुपये साल और अधिक देने लगी। इससे भी आगे बढ़कर ब्रिटिश कम्पनी बादशाहका सम्मान घटाने लगी। दिल्लीकी हद्दसे बाहर बादशाहको न आने दिया जाता। प्रधान शाहजादाकी इज्जतमें तोपोंकी सलामी न होती। शाहजादा शाही इज्जतके साथ कहीं न जाने पाते।† इस प्रकार बादशाह अकबर शाहके वंशका गौरव घटाया जाने लगा। इस प्रकार सम्मानसे

* Ball's History of Indian Mutiny. Vol I. P. 454.

†Comp's Diary in India Vol II P. 63. Martin's Indian Empire Vol II. P. 459.

वञ्चित होकर बादशाह अपने परिवारके साथ किलेमें रहने लगे। प्रतिवर्ष कम्पनी बादशाहके सम्मानमें कमी करती जाती थी। बादशाह और उनका परिवार व्यर्थ क्रोधकी ज्वालामें जलता था। सन् १८३५में बादशाहके नामके रुपयेके बदले ईस्ट इंडिया कम्पनीके नामका रुपया चलाया गया।* दिल्लीके बादशाह अन्यान्य साधारण आदमियोंकी तरह पेंशन खाकर दिन बिताने लगे। जिनके पूर्वजोंने एक दिन कम्पनीके बनियोंको आश्रय देकर व्यापारकी आज्ञा दी थी, जिसके पिताने कम्पनीको बंगाल, बिहार और उड़ीसामें दीवानीके हक दिये थे, उसी कम्पनीके बनियोंके प्रभावसे बादशाहको अपनी शक्ति, सम्मान और चिह्नोंसे वञ्चित होकर कैदी बनना पड़ा।

तीस बरसके कम्पनीके राज्यने बादशाहकी यह हालत कर दी। तीस बरसमें मानों मुगल खान्दानका गौरव अस्त हो गया। कम्पनीने अपने स्वार्थके लिये यह सब कुछ किया, पर मुगल खान्दान और बादशाहके नामका जितना आदर था उसे कम्पनी भी दूर न कर सकी। दिल्लीका राजभवन सर्वसाधारणके सामने अपूर्व शोभाकी वस्तु थी। शाहजहाँका संसार प्रसिद्ध तख्ते ताऊस जहां बिछता था, औरंगजेबने जहां बैठकर संसार विजयीकी उपाधि ली थी, संसारके हृदयमें उस स्थानका आदर बहुत अधिक था। सब कुछ घटा देनेपर भी सर्वसाधारणकी श्रद्धाको कम्पनी भी घटा न सकी। कम्पनीके अधिकारी

* Kaye's Sepoy War. Vol. II. P. 9 note.

बादशाहके सम्मानमें जितनी ही कठोरताका बर्ताव करने लगे, अपने आपको बड़ा बनानेके लिये बादशाहके अधिकार जितना ही कम करने लगे, उतना ही अधिक सर्वसाधारणके हृदयोंमें बादशाहका मान बढ़ने लगा। लंबी सांस लेकर लोग भारतके बादशाहकी अवनत दशा समवेदनाके साथ देखने लगे; अकबर और शाहजहाँकी कथा कह कहकर दुःखी होने लगे।

सन् १८३७ की २८ सितम्बरको ८२ वर्षकी अवस्थामें अकबर शाहका देहान्त हो गया। इनके पुत्र बहादुरशाह बादशाहकी उपाधिके साथ सिंहासनपर बैठे। यह अन्तिम मुगल बादशाह धीर, शान्त, कवित्वप्रिय और स्वयं कवि थे। कम्पनीने बादशाहका जो वार्षिक वेतन नियत कर दिया था उससें गुजर न होती थी। अकबर शाहने उसे बढ़ानेकी कोशिश की थी। इसी लिए १८३० में उन्होंने लण्डनके डाइरेक्टरोंके पास एक दूत भेजा था। कम्पनीके डाइरेक्टरोंने कहा था कि, यदि बादशाह अपने सब बादशाहीके अधिकार त्याग कर दें तो तीन लाख रुपया साल और अधिक बढ़ा दिया जाय। पर अकबर शाह इसपर राजी न हुए थे। तीन लाख रुपया सालमें उन्होंने अपनी शाही मान और मर्यादा न बेची। उन्होंने कहा कि ईस्ट इण्डिया कम्पनीके साथ जो सुलह हुई है उसके अनुसार कम्पनी, धर्म और न्यायके नाते, बादशाहके परिवारके भरण-पोषणका तमाम खर्च पूरा करनेकी जिम्मेदार है। पर धर्म और न्यायकी दुहाई देना व्यर्थ था। अब बहादुर शाहने डाइरेक्टरोंके

सामने वही बात फिर रक्खी। बापने जो दलील पेश की थी, वही बेटेने की और कहा कि कम्पनी जो पेंशन देती है उससे खर्च नहीं चलता। बादशाहको उधार लेकर अपना खर्च चलाना पड़ता है और इस कारण उसपर बहुत कर्ज हो गया है।* पर मौखिक सहानुभूति दिखानेपर भी कम्पनीने कुछ न किया। बादशाहकी जो बरायनाम शक्ति थी उसीसे कम्पनीको चैन न थी। जो दीपक धीरे धीरे टिमटिमाता हुआ मन्द हो रहा था उसे बिलकुल बुझा देनेका हो अब कम्पनीने निश्चय किया। इसलिये उन्होंने बादशाहके सब अधिकारोंको रद्द करनेका फिर प्रस्ताव किया। बहादुर शाहने जो पेंशन बढ़ानेका प्रस्ताव किया था उसके उत्तरमें पहले तो लेफ्टिनेंट गवर्नरने उत्तर दिया कि इससे थोड़ासा व्यर्थ व्यय और बढ़ जायगा। इस समय लार्ड आकलैंड गवर्नर जनरल थे। उन्होंने कहा कि बहादुर शाह हमारे पहले प्रस्तावपर राजी हों तो रुपया बढ़ाया जा सकता है, पर बहादुर शाहने गौरवके साथ, अपने पिताकी तरह, इसको अस्वीकार किया। साथ ही विलायतके डाइरेक्टरोंके पास उन्होंने एक विश्वासी एजेंटके द्वारा फिर प्रार्थना की।

ऊपर कहा जा चुका है कि बहादुर शाहने पहले एक और दूत लण्डन भेजा था। यह दूत प्रसिद्ध ब्रह्मसमाजके संस्थापक राजा राममोहन राय थे। अकबर शाहने इन्हें "राजा" की पदवी देकर भेजा। पर राममोहन राय अपने गुणोंके

* Martin's Indian Empire Vol II. P. 459.

कारण सब स्थानोंपर आदृत थे। पर कम्पनीके डाइरेक्टरोंने बादशाहकी प्रार्थनापर कुछ भी ध्यान न दिया। अब बहादुर शाहने एक अंग्रेज़ द्वारा इसकी अपील कराई। उस समय जार्ज टामसन नामक एक अंग्रेज़ बड़ा वक्ता और दुर्बल लोगोंका पक्षसमर्थक था। जब यह भारतमें आया तब बहादुर शाहने उसे दिल्ली बुलवाया। लार्ड एलनबराने नजराना या भेंटकी प्रथा बन्द कर दी थी।* वार्षिक मुशाहरा बढ़ानेसे भी

* लार्ड एलनबराके मन्त्रियोंने एक बार उनसे बिना कहे बादशाहके पास जाकर उन्हें नजर दी थी। जब गवर्नर जनरलको मालूम हुआ तब उन्होंने इस प्रथाको सदाके लिये रोक दिया। मन्त्री विलियम एडवर्ड्सने इस नजरका विवरण लिखा है—"यह नियम था कि जब गवर्नर जनरल दिल्ली जाते तब कुछ आदमी बादशाहके पास जाकर उनकी मिजाजपुर्सी करते। इस मौकेपर उन्हें बादशाहके नजरस्वरूप कुछ अशर्फियां भेंट करनी पड़ती थीं। इसका मतलब यह था कि ब्रिटिश कम्पनी बादशाहके मातहत है और शाहको अपना मालिक मानती है। यह प्रथा पुरानी थी, इसलिये गवर्नर जनरलसे बिना कहे हम तीन सेक्रेटरी हाथीपर चढ़कर दिल्लीके राज्यभवनमें गये। हमारे साथ रेशमकी थैलियां थीं जिनमें नजरके लिए मोहरें थीं। पहले इत्तिला हुई, फिर जूते खोलकर नौकर हमको दीवानेखासमें ले गये, यहां बादशाह सिंहासनपर बैठे थे। उनकी अवस्था ७० वर्षकी मालूम होती थी। सिंहासनके पास जाकर हमने इज़्ज़तके साथ सलामें कीं, फिर थैलियां नजर कीं, बड़ी नम्रतासे मिजाज पूछा। हमारे हृदयोंमें बादशाहकी भक्ति और भयका संचार हुआ। तैमूरके खान्दानको अंग्रेजोंकी ओरसे यह अन्तिम नजर दी गयी थी। बादशाहने हमें खिलअत देनेकी आज्ञा दी। पगड़ी हमारे सिरपर और चोगा बदनमें पहनाया गया। लूलू बनकर हम वापिस आये—इससे हमारी शकलें पागलोंके समान मालूम होती थीं। इसी समयसे नजराना बन्द हुआ।" Kaye's Sepoy War. vol II Appendix P. 661-663.

इनकार हुआ। अपने सम्मान और इज्जतको घटानेके लिये वे तैयार नहीं थे। अपने अधिकारोंको इसी प्रकार रखते हुए जिससे डाइरेक्टर लोग वेतन बढ़ा दें इसका प्रयत्न करनेके लिये उन्होंने जार्ज टामसनसे कहा। पर जार्ज टामसन राजा राममोहन रायसे अधिक कुछ न कर सके। उन्होंने साफ कहा कि दिल्लीके बादशाह यदि अपने अधिकारोंको छोड़ें तो उन्हें अधिक पेंशन दी जा सकती है। पर शाह उन्हें छोड़ना नहीं चाहते, इसका मतलब यह हुआ कि डाइरेक्टर जो उनका भला करना चाहते हैं वह उन्हें स्वीकार नहीं।* डाइरेक्टरोंने क्या उपकार करना चाहा था? एक अवनत बादशाहके दुःखसे दुःखी होकर वे उसका क्या भला करना चाहते थे? कम्पनीकी यह अद्भुत दया और उपकार था। जिसका हृदय अपने आप खिन्न था, जो दुःखके समुद्रमें डूब रहा था, उसके उद्धारका अद्भुत बहाना था। पर सच यह है कि कम्पनीके अधिकारी दया और भलाईके लिये तो कभी तैयार ही न थे। वे अपने स्वार्थके लिये कुछ लाख रुपया देना चाहते थे। जिसकी बादशाहत काबुलसे विन्ध्याचलतक विस्तृत थी, अकबर और शाहजहाँ जिस क्षमतासे भारतके सम्राट् थे, उस खान्दानके सम्राट्की जो थोड़ी बहुत शक्ति शेष थी उसे कम्पनी थोड़ेसे रुपयोंमें खरीदना चाहती थी। इसे दया और उपकार कौन कह सकता

* Letter of the Court of Directors Feb. II. 1846. Kaye's Sepoy War Vol. II. P. 12 note.

है? यह तो स्वार्थसिद्धि, अकृतज्ञता और विश्वासघात है। व्यापारियोंकी कम्पनीने जिनकी छायामें आकर आश्रय लिया, जिन्होंने इन व्यापारियोंको व्यापारकी सुविधायें कर दीं, उसी मुगलवंशकी जड़ कम्पनीने काटी। उसके अन्तिम बादशाहको शाही सम्मानके बदले थोड़ेसे रुपये देने लगी। यदि उस कम्पनीके अधिकारी अपने आपको परोपकारी या दयालु कहें तो यह उनका ढोंग है।

दिल्लीके किलेमें बादशाहके साथ ५००० आदमी रहते थे। इनमें ३००० तैमूरवंशके थे, इसलिये वे बादशाहके रिश्तेदार थे। इस बड़े भारी परिवारके भरणपोषणके लिये बादशाहको सदा चिन्तित रहना पड़ता था। यह ऐसे दरिद्र हो गये थे कि बहुत बार भोजनमें भी कमी हो जाती थी। सन्धिके अनुसार कम्पनी शाहके परिवारके भरणपोषणके लिये जिम्मेदार थी पर इन्हें जो कुछ मिलता था उससे गुजर भी न होती थी।* जिनके बड़े भारी राज्यको लेकर कम्पनी धन और गौरवशालिनी हुई थी, वे उसी कम्पनीके कारण दरिद्र थे। जो सालाना बारह लाख रुपया दिया जाता था वह यदि पूरा होता तो बादशाहको कष्ट न होता, उनका परिवार भूखों न मरता।

बहादुर शाहने एक रूपवती सुन्दरी युवतीसे विवाह किया था। इस बेगमका नाम था जन्नतमहल। सुन्दरताके साथ २

* Indian Empire, Vol. II. P. 558. Russell's Diary Vol. II. P. 57.

जन्नतमहलमें साहस तेज और आत्मसम्मान था। अंग्रेज़ इतिहास लेखक इसके साहसकी प्रशंसा करते हैं।* इसके गर्भसे एक सन्तान पैदा हुई। इतिहासमें इस शाहजादाका नाम जवानबख्त है। बुढ़ापेमें इस बेटेके होनेसे बहादुर शाह बड़े आदर-से इसका लालन पालन करने लगे। यह उन्हें इतना प्यारा हो गया कि दूसरे शाहजादोंको छोड़कर वे इसे ही सिंहासन देनेकी इच्छा करने लगे। इधर अपनी योग्यता और सुन्दरतासे जन्नत महलने बादशाहपर अधिकार कर लिया था। बादशाह इसकी सलाहके बिना कोई काम न करते। इसने अपने बेटेको तख्तपर बैठानेका बादशाहसे विशेष आग्रह किया। इससे बहादुर शाह-का संकल्प दृढ़ हुआ। बादशाह और बेगम दोनों अपने बेटेका पक्षसमर्थन करने लगे। इसलिये मुगलवंशमें राजसिंहासनके लिये गड़बड़ मची।

सन् १८४६में बड़े शाहजादा दाराबख्तकी मौत हुई। बहादुर शाह इसवक्त ७० वर्षके थे। उनका अन्तिम समय भी दूर न था। इसलिये गवर्नर जनरल दिल्लीके अधिकारके विषयमें सोचने लगे। यह याद दिलाना काफी है कि उस समय लार्ड डलहौजी गवर्नर जनरल थे। एक तो वे इस वंशकी इज्जतसे ही बड़े नाराज थे। उनकी इच्छा थी कि बहादुर शाहके बाद दिल्लीके राजवंशका सब सम्मान समाप्त कर दिया जाय। पहले जब एक बार अधि-कार तोड़नेका प्रस्ताव हुआ तब डाइरेक्टर लोग इससे सहमत

* Kaye's Sepoy War Vol II, P. 14 note.

न हुए।* अब डाइरेक्टरोंने इस विषयकी रिपोर्ट मांगी। पर गवर्नर जनरल यह निश्चित न कर सके कि वारिस कौन होगा। शाहजादा फकरुद्दीन नामक एकतीस सालके जवानको सिंहासन मिलनेकी संभावना थी। यह शाहजादा अंग्रेज़ोंसे मिलता जुलता रहता था। इसलिये बहादुर शाहका सिंहासन इसे देनेसे लार्ड डलहौज़ीकी इच्छा बहुत कुछ पूरी होती। वे आसानीसे इसे अपने हाथ करके बादशाही अधिकारोंको काट फेंकते।

अपनी असुविधाओंको दूर करनेके लिये लार्ड डलहौजीने यही सोचा। सरकार अब अपने सामने बादशाहकी इज्ज़त नहीं देख सकती थी। उसे यह बहुत बुरा मालूम होता था। उन्होंने इस विषयमें साफ लिखा था—"हिन्दुस्तानके राजा या बादशाह पहले चाहे जो रहे हों पर अब उनका सम्मान जाता रहा। अब ब्रिटिश सरकार हिन्दुस्तानको बादशाह है। दिल्लीके मालिकोंने जो बादशाहत की थी वह इस समय हर तरहसे हमें मिल गई। इसलिये दिल्लीके नामधारी बादशाहको हम मुकाबिलेपर रखना मुनासिब नहीं समझते।"† लार्ड डलहौजीके शासनकी आलोचनामें यह पहले ही कहा जा चुका है कि वे भारतीय चरित्रको अन्ततक नहीं समझ सके। भारतवासी सदा प्राचीनताके पक्षपाती रहे हैं यह बात वे जानते ही न थे। ये भारतको भारतीयोंकी दृष्टि सेन देखते थे। दिल्लीके बादशाह शक्तिहीन और दरिद्र

* Kaye's Sepoy War Vol II, P. 16
† Ibid Vol II. P. 17 note.

हो गये थे फिर भी सर्वसाधारणकी दृष्टिमें वे आदरणीय थे। पर अपनी स्वार्थसिद्धिपर ही डलहौज़ीकी दृष्टि थी, इसलिये किसीके साथ सहानुभूति दिखानेकी भी उन्हें चिन्ता न थी। वहादुर शाहकी मौतके वाद उनके उत्तराधिकारीसे वादशाहकी पदवी ले लेनेका उन्होंने निश्चय कर लिया।

दूसरी वात, लार्ड डलहौज़ी दिल्लीके वादशाही महल (किले)को अपनी सेनाके काममें लानेका विचार कर रहे थे। इस किलेमें तैमूरके वहुत वंशवाले रहते थे। उत्तर भारतका वह एक प्रधान किला समझा जाता था। किसी तरह वूढ़े वादशाहको और कहीं रखकर इस किलेको हथियानेका ही उनका उद्देश्य था। इस वातका समर्थन करनेके लिये वे यह कहने लगे कि शत्रुओंके आक्रमणसे कम्पनी इसमें अपनी रक्षा कर सकेगी। इसी कारण वे किलेपर जल्दी अधिकार करना चाहते थे और वहादुर शाहकी मृत्युकी प्रतीक्षा करना भी उन्हें अच्छा न लगता था। उन्होंने लिखा कि दिल्लीसे वारह मील दक्षिण कुतुवमीनार है, जहां वादशाहके पूर्वपुरुषों और साधुओंकी कवरें हैं, यहां उन्हें रखना अधिक उपयुक्त होगा।

ऊपर ज़िन दोनों वातोंका उल्लेख किया गया उन्हें लार्ड डलहौज़ी अपने मार्गमें असुविधा ही समझते थे। पर इससे साधारण प्रजा कितनी असन्तुष्ट होगी इसका उन्होंने कभी विचार भी नहीं किया। जिस वंशकी दयासे कम्पनीके अधिकारों-की नींव पड़ी थी, उसीकी सन्तानके अधिकार और घरतक

छीननेकी नीतिको बेईमानी कहा जाय तो क्या बुरा है? भारतवासी कभी अपने उपकारीका उपकार नहीं भूलते, बाप दादोंके जमानेमें वे जिनके राज्यमें रहे थे, उस मुगलवंशकी वे इस जमानेमें भी उतनीही प्रतिष्ठा करते और सम्मान देते थे। पर लार्ड डलहौज़ीकी सरकार अपने वादों तथा सन्धियों और किये गये उपकारोंको भूल चुकी थी। उनके सामने स्वार्थ था। वे बादशाहसे अपनी सरकारको श्रेष्ठ सिद्ध करनेके लिये बादशाहको नचाना चाहते थे। वे अवसर ताक रहे थे।

जिस समय बहादुर शाह मुगलसम्राट कहे जाते थे, देश देशान्तरमें उनका सम्मान था, सब उनकी इज्जत करते थे, उस समय दाराबख्तका जन्म हुआ था। यदि दाराबख्त जिन्दा रहता तो उसे राजकीय सम्मानसे वञ्चित रखना कठिन होता, क्योंकि उसकी आंखोंमें सब बादशाही बातें घूम रही थीं। पर फकरुद्दीनके सम्बन्धमें यह कुछ न था। जब फकरुद्दीन पैदा हुआ तब बहादुर शाहकी मर्यादा संकुचित हो चुकी थी। उन्होंने अपनी आंखों बादशाही शान न देखी थी। इसलिये ऐसे आदमीको सिंहासनपर बैठाकर अधिकार छीन लेना डलहौज़ीके लिये एक साधारण बात थी।* उस समय भी बहादुर शाह सबको सनद देते, खिलअत देते, अधिकार और पदवी देकर सम्मानित करते थे। इसलिये सब राजा उन्हें बादशाह मानते थे। शाहजादा

* Kaye's Sepoy War. Vol II P. 15.

फकरुद्दीनने यह देखा था और इसीसे वह समझ सकता था कि एक दिन उसके पूर्वज भारतके सम्राट थे। पर वह अंग्रेज़ोंसे मिलता था इसलिये डलहौज़ीको उससे विशेष आशा थी। जब उत्तराधिकाराका झगड़ा खड़ा हुआ तब बहादुर शाह और उनकी बेगम जिन्नतमहलने फकरुद्दीनका विरोध किया था। लार्ड डलहौज़ीने डाइरेक्टरोंको लिखा था। बड़े वादविवादके बाद डलहौज़ीको उन्होंने सम्पूर्ण शक्ति दे दी थी।

जब यह सब कुछ हो गया तब डलहौज़ीने फकरुद्दीनको गुप्त रूपसे अपनी मंशा बतानेके लिये ब्रिटिश रेजीडेंट सर मेटकाफको लिखा। फकरुद्दीनने कहा कि यदि उसकी बादशाहकी उपाधि ज्योंकी त्यों बनी रहे तो वह तैयार है, वह शाही अधिकार और क़िला सरकारके हाथ सौंप देगा। इतनी जल्दी फकरुद्दीन राजी होंगे एजेण्टको ऐसी आशा न थी। उसी समय एक कागज लिखा गया, फकरुद्दीनने उसपर दस्तखत किया। एक गवाह भी हुआ। इस प्रकार गुप्तरूपसे सरकारने अपनी सब कार्यवाही कर ली। उस कागजपर मुहर भी लग गई। काम पूरा हो गया। फकरुद्दीन ब्रिटिश दूतके पाससे घर लौटे। बहादुर शाहके उत्तराधिकारीको बड़ी जल्दी बहलाकर सरकार खुश हुई पर फकरुद्दीनको इससे कुछ भी खुशी न हुई। अपना घर छोड़ना उन्हें बड़ा बुरा मालूम होने लगा। पर सरकारके विरुद्ध काम करना उनकी शक्तिसे बाहर था। रेजीडेंटके बहुत कहनेपर उन्होंने घृणाके साथ उसपर दस्तखत कर दिया था। पर यह घृणा उनके

हृदयसे न गई। पिताके वारिस होनेकी उन्हें कुछ भी खुशी न हुई। पछतावासे उनकी प्रसन्नता भाग गई।

ब्रिटिश रेजीडेंट और फकरुद्दीनमें यह सब बातें गुप्तरूपसे होनेपर भी बूढ़े बादशाह और उनकी बेगमको सब कुछ मालूम हो गया। जन्नतमहल इससे बड़ी विरक्त हुई। दुःख और अभिमानसे उसका हृदय आन्दोलित होने लगा। प्रतिक्षण उसे एक महापतनकी शङ्का होने लगी। बहादुर शाह इस विषयमें हतोत्साह जरूर हुए, पर एक बारगी उन्होंने हिम्मत न हारी। वे गवर्मेंटसे अनुरोध करने लगे कि उनके छोटे बेटेको सिंहासन दिया जाय। उनका ख्याल था कि उनकी स्त्रीके उद्योगसे किसी जमानेमें जवानबख्तका भाग्य पलटा खायगा। वे ऐसे वृद्ध हो गये थे कि हर समय मृत्युका डर बना रहता था। पर जो कुछ उन्होंने सोचा था उससे उलटा हुआ। वे जिन्दा रहे, उनका छोटा बेटा भी जिन्दा रहा, पर फकरुद्दीन इस लोकसे चल बसे। इससे बहुतोंको शक हुआ कि शायद फकरुद्दीनको जहर दिया गया हो।* शाहजादाकी मृत्युके समय शाही हकीम एहसानुल्ला उनका इलाज कर रहे थे। पर उनकी दवाने कोई असर न किया।

बूढ़े बहादुर शाहने बेगमके कहनेसे अपने छोटे बेटेको राज्य देनेकी कोशिश की थी। पर फकरुद्दीनसे वे नाराज न थे। उसकी मौतसे अधीर होकर वे शोक करने लगे। जिन्नतमहलने

* Kayes' Sepoy War. Vol 11. P. 27 note.

उन्हें सान्त्वना दी। धीरे धीरे शोक मिटा। फिर बहादुर शाह जवानवख्तको सिंहासन देनेका प्रस्ताव करने लगे। मिर्ज़ा कुरेश नामक एक शाहजादा बहादुर शाहके लड़कोंमें सबसे बड़ा था। इसने अपने लिये कोशिश शुरू की। इसने ब्रिटिश रेजीडेंटको जो आवेदनपत्र भेजा उसमें उसने साफ लिखा था—"वृद्ध पिता जवानवख्तको सिंहासन देनेके अभिप्रायसे हम सबको चुप रहनेके लिये कह रहे हैं। मेरी उनपर श्रद्धा और भक्ति है। उनके हर एक हुक्मको माननेके लिये मैं सदा तैयार हूं। पर बेगम ज़िन्नतमहलकी सलाहसे जब वे हमारे हक मार रहे हैं, तब मजबूरन मैं ब्रिटिश सरकारसे निवेदन करता हूं। मेरा विश्वास है कि इस प्रार्थनापर पक्षपात रहित विचार होगा। मैं तमाम शाहजादोंमें बड़ा हूं। मैं मक्का शरीफ हो आया हूं, तमाम कुरान मुझे जबानी याद है। मिलनेपर मेरी योग्यता भी आपको मालूम होगी।"

इस समय लार्ड कैनिंग गवर्नर जनरल थे। शासन कार्यके लिये नयी मन्त्रिसभाका संगठन हुआ था। नये गवर्नर जनरल और नई मन्त्रिसभाके सामने दिल्लीके राजवंशका मामला पेश हुआ। लार्ड कैनिंगको आये थोड़े ही दिन हुए थे। भारतकी भीतरी दशाका उन्हें पूर्ण ज्ञान भी न था। पहले गवर्नर जनरल लार्ड डलहौज़ीके कागजात उन्होंने देखे। उससे विदित हुआ कि उन्होंने दिल्लीका किला फौजी कामके लिये लेना चाहा था। कैनिंगको भी यह उचित मालूम हुआ। डलहौज़ीकी सब युक्तियाँ

ठीक जँची। वे यह सोचने लगे कि दिल्लीका किला तो लिया जाय, पर बूढ़े बादशाहका क्या किया जाय। वे नये थे, इसलिये आप कुछ न जानते थे, इस विषयमें भी लार्ड डलहौज़ीके कागजोंको उन्होंने ठीक समझा। उन्होंने कहा—"दिल्लीके बादशाहके सब अधिकार एक एक करके लोप हो गये। अब जो कुछ बाक़ी है, उसका लोप होना कुछ कठिन नहीं। बहादुर शाहकी मृत्युके बाद उनके वारिसकी "बादशाह" पदवी छीनी जा सकती है। गवर्नर जनरल और प्रधान सेनापति जो बादशाहको नजराना देते थे वह बन्द हो गई, रुपये परसे बादशाहका नाम उठ गया, अब बाकी प्रथा भी उठ जायगी। गवर्नर जनरलके कागजों और मोहरोंमें अब अधीनताका सूचक शब्द न होता था। भारतके अन्यान्य राजाओंको भी कह दिया गया कि अब वे अपने आपको बादशाहके अधीन न समझें। ब्रिटिश सरकार अपना अधिकार दिखानेके लिये अब शाही अधिकार स्वीकार नहीं करती। अब मिर्जा मुहम्मद कुरेश बादशाहके उत्तराधिकारी हैं। सरकार इनके अधिकारोंकी रक्षाके लिये तैयार है। इन्होंने अपने जमानेमें कभी बादशाही प्रभुताका अनुभव नहीं किया।" लार्ड कैनिंगकी यह बात मन्त्रिसभाने पसन्द की। उसी समय ब्रिटिश एजेंट सर मेटकाफको लिखा गया :—

"१—अगर दिल्लीके बादशाहके पत्रका उत्तर देना जरूरी हो तो एजेंट बादशाहको लिख दें कि गवर्नर जनरलने जवानबख्तको उत्तराधिकारी बना देना उचित नहीं समझा।

२—फकरुद्दीनके साथ जो बात तय हुई थी उन्हीं बातोंके अनुसार मिर्जा कुरेश दिल्लीकी राजसम्पत्तिके स्वामी न होंगे। जबतक बहादुर शाह जीवित हैं तबतक उनके किसी उत्तराधिकारीसे किसी तरहका समझौता न होगा।

३—बादशाहकी मृत्युके बाद सरकार मिर्जा कुरेशको बादशाहका वास्तविक उत्तराधिकारी प्रमाणित करेगी। इस विषयमें फकरुद्दीनसे जो शर्तें तय हुई थीं प्रायः वे सब काममें लाई जायँगी। केवल "बादशाह" का शब्द वे व्यवहार न कर सकेंगे "शाहजादा" कहलावेंगे। पर सरकार किसी तरहकी अधिक पेंशन न देगी।

४—भविष्यमें जो लोग उत्तराधिकारी होनेका दावा कर सकते हैं—ऐसे कितने ही आदमी खान्दानमें हैं—उन सबकी सूची बनाकर देनी होगी। चाहे बेटा हो या पोता, सबके नाम आने चाहिये। किसी दूरके रिश्तेदारका नाम उसमें न लिखा जाय।

५—दिल्लीके शाही खान्दानकी जो पेंशन नियत है उसमेंसे शाहजादाको १५ हजार रुपया माहवार दिया जायगा।"

सन् १८५६ के अन्तमें लार्ड कैनिंगने मुगलवंशको अपनी इस तरहकी राजनीतिका परिचय दिया था। उनकी इस नीतिमें न उदारता थी न महत्व। उन्होंने जो कुछ किया वह अपनी विद्या बुद्धिसे नहीं। लार्ड डलहौज़ी जो कागज तैयार कर गये थे वही कैनिंगने कार्यरूपमें परिणत किया। ब्रिटिश सरकार-

का यह निश्चय जब जिन्नतमहलको मालूम हुआ तब वह क्रुद्ध और क्षुब्ध हो उठी। जिसमें ज़रा भी सम्मान है वह इस प्रकार अपने सम्मानको मिट्टीमें मिलता नहीं देख सकता। जब उसने सुना कि उसकी वंशपरम्पराकी शाही पदवी और मर्यादा अब न रहेगी, जिस राजमहलमें वे रहते हैं वह भी छिन जायगा, तब उससे स्थिर न रहा गया। दुःख और क्रोधसे उसका धैर्य जाता रहा। अपने पुत्र जवानवख्तको बादशाहका उत्तराधिकारी न बनानेके कारण वह और भी उत्तेजित हुई। वृद्ध बहादुर शाहमें वह उत्तेजना भी न थी और तेज भी न था। वृद्धके रहते उसे उसके सम्मानसे कोई वञ्चित भी नहीं करता था। उसकी मौतके बाद वारिसोंके सम्बन्धमें सरकारकी जो इच्छा हो सो वह कर सकती है। पर जिन्नतमहल बहादुर शाहके समान भविष्यपर आशा लगाये न बैठी थी। वह पूर्ण युवती थी—तेजस्विनी थी। वह मौकेकी ताकमें थी। उसने सोचा कि संसारमें कोई अमर फल खाकर नहीं आया है। मृत्यु सबका रास्ता साफ कर रही है। इसी आशापर बेगम भी धैर्य धारण किये रही।

जिस जवानवख्तके लिये बेगम और बादशाह बराबर कोशिश करते चले आ रहे थे, वह बड़ा हुआ। पढ़ा लिखा, योग्य, साहसी युवा बन गया। पर इन गुणोंके साथ ही साथ ब्रिटिश सरकारपर उसको बड़ी घृणा हो गई। वह धीरे धीरे सरकारका शत्रु हो गया। जवानवख्तके द्वेषका कारण

मालूम करना कठिन नहीं है। उसके माता पिताने उसे सिंहासनपर बैठानेका यत्न किया था पर वे सफल नहीं हुए। सरकार उसके रास्तेमें कांटा थी। उसे आशा थी कि पिताके मरनेपर वह तख्तपर बैठेगा। सरकारके निर्णयसे वह आशा भी रसातलको चली गई। यह दुःख उसके हृदयसे न निकला। वह धीरे धीरे सरकारका शत्रु बन गया। वह अंग्रेज़ोंको घृणाकी दृष्टिसे देखने लगा।

दिल्लीके बादशाहके उत्तराधिकारके विषयमें सर्वसाधारणका कोई खास मत न था। चाहे जवानबख्त हो या मिर्ज़ा कुरेश, प्रजाके निकट दोनों आदरणीय थे। पर बादशाहके अधिकार छीने जानेकी खबरसे सब घबरा उठे। जो खान्दान एक दिन अफगानिस्तानसे विन्ध्याचलतक राज्य कर चुका था, सम्पूर्ण देशवासियोंने जिसके निकट एक दिन सिर झुकाया था उसके अधिकारोंपर सरकारको आपत्ति करते देखकर सब विचलित हो उठे थे। बादशाहके गौरवके लोपसे सबमें उत्तेजना फैल गई थी। सन् १८५७ के कुछ महीने भी बीतने न पाये थे कि दिल्लीके मुसलमानोंमें बेहद जोश दिखाई देने लगा। फारसके युद्धकी बातें तरह तरहसे वर्णित होती थीं, इससे सबका क्रोध बढ़ता था। बहुतसे लोग अंग्रेज़ोंकी शक्तिके नाशके अनेक उपाय सोच रहे थे। बहुतोंका विश्वास था कि भारतके उत्तर पश्चिमसे एक शक्ति प्रगट होकर अंग्रेज़ोंकी शक्तिका नाश करेगी। फारसवालोंने चढ़ाई कर दी है। लोग इस समय अपने दिमा-

गोंसे अजब अजब कल्पनाएं प्रगट करने लगे थे। रूस और फारसमें सुलह हो गई तथा दोनों मिलकर भारतपर हमला करेंगे। तुर्की सुल्तान और फरासीसी मिल गये। बाजारों, गलियों, मुहल्लों और छावनियों तकमें इस तरहकी चर्चायें होने लगी थीं। मुसलमानोंमें यह पहले हीसे प्रचलित था कि अंग्रेज़ भारतमें सौ वर्ष राज करेंगे। अब सब सोचने लगे कि भविष्य वाणी सच सिद्ध हुई।* सर्व साधारणने इसपर विश्वास किया। लोग विचारकर कोई काम न करते थे, उनके सामने उत्साहके साथ जो बात कही जाती, उसीपर तैयार हो जाते थे।

किसी किसीका यह भी मत था कि वृद्ध बहादुर शाह फारसके बादशाहसे मिले हुए हैं। फारसकी मददसे वे

---

* सर जेम्स आउटरामने जनवरी १८५८ में लिखा था—"हमारी सेनाने हमारा साथ छोड़कर हमसे युद्ध किया। इस युद्धकी उत्पत्ति हिन्दू सिपाहियोंसे नहीं, बल्कि मुसलमानोंसे हुई थी। मुसलमान धर्मान्धलोग हर स्थानपर प्रचार करते थे कि, भविष्य वाणी हुई है कि, एक सौ बरस तक ईसाइयोंका राज्य रहेगा इसके बाद फिर मुसलमानोंका अधिकार होगा। इसी वाणीका उल्लेख करके मुसलमान हिन्दुओंको अपने साथ मिला रहे थे। हिन्दू सीधे और विश्वासी होते हैं। जब मुसलमानोंने कहा कि अङ्गरेज सबको ईसाई बनाना चाहते हैं तब धर्म-प्राण हिन्दू भी खड़े हो गये। मुसलमानोंके साथ मिलकर वे हमसे लड़े।" यह भविष्यवाणी एक मुहम्मदुल्लाह नामक फकीरकी प्रचार की हुई थी।

सर आउटरामकी रायमें राज्य लेनेसे गदरकी उत्पत्ति नहीं हुई। इन्होंने धर्मान्धता और मुसलमानोंकी दुष्टनीतिको गदरका कारण बताया है। इसलिये उक्त वाणीकी बात कही। Kaye's Sepoy War. Vol. II P. 36 note.

अपने खोये हुए राजका उद्धार करना चाहते थें। दिल्लीके मुसलमान नमाजके साथ प्रार्थना करते थे कि फारसकी जीत हो। पर इस बातमें कुछ भी सचाई न थी। आजतक कुछ मालूम नहीं हुआ। जब पश्चिमोत्तर प्रदेशके लेफ्टिनेण्ट गवर्नर कालविन साहबके सामने यह बात पहुंची तब उन्होंने इसपर कुछ भी विश्वास न किया। इस विषयका कोई प्रमाण नहीं मिला कि जिससे बहादुर शाहपर यह कलंक रोपा जाय। उन्होंने स्वप्नमें भी न सोचा था कि फारसकी सहायतासे उनका राज्य वापिस मिलेगा। दिल्लीके मुसलमानोंकी उत्तेजना देखकर शायद किसीने यह शक किया हो। पर १८५७ के शुरूसे ही दिल्लीमें उत्तेजना थी। इसमें शक नहीं।

पर सरकारने अन्तमें गदरके कारण बूढ़े बहादुर शाहको दोषी ठहराया। जो अपनी अवस्था और चिन्ताके कारण किसीको उत्साहित न करते थे वे किस तरह दोषी बनाये गये, यह हम आगे लिखेंगे। इस स्थानपर उनके विषयमें एक सहृदय अंग्रेज़ने जो कुछ लिखा है, उसका सारांश दे देना मात्र पर्याप्त है—"जिसके बाप दादोंके बड़े भारी राज्यको सरकारने धीरे २ ग्रस लिया, वह केवल नामका बादशाह और खाली खजानेका मालिक है। दरिद्र और निर्धन आत्मीय बन्धुओंसे घर भरा हुआ है। ऐसे आदमीको अकृतज्ञताके दोषका दोषी बनाना बड़ी बुरी बात है। वह जिस दशामें पड़ा था उसमें क्या कम्पनीको वह धन्यवाद दे? बूढ़े और अन्धे शाह आलमको

मरहट्टोंके हाथसे छुड़ाकर कम्पनीने अन्नवस्त्रके लिए मुहताज बना दिया था। क्या इस बातके लिये वे कम्पनीको आशीर्वाद दें ? यह सच है कि मुसलमान बादशाहोंको जो अधिकार था वह अब हमें मिल गया। पर मुसलमान हाथमें तलवार लेकर विजय करनेके लिये इस देशमें आये थे और हम अपनी चीजें बेचने तथा खरीदनेके लिये आये थे। दिल्लीके बादशाहके नौकरोंकी दयापर हमारा काम चलता था। शाह आलमके पूर्वपुरुषोंने हमपर दया की थी। उसके मुकाबिलेमें हमने शाह-आलमके साथ कुछ भी नहीं किया।"

"ग़दरके बहुत पहलेसे दिल्लीके बादशाह शाह आलम बड़ी दुखी अवस्थामें थे। उनका महल पराधीनता और दासता-का निवास बन गया था। वे जानते थे कि इस समय जो कुछ उनका शाही मान है वह आगे चलकर उनके उत्तरा-धिकारियोंको भी न मिलेगा। यह मकान भी उनसे छीन लिया जायगा। दिल्लीसे बाहर किसी मुकामपर उनके वंशवालोंको कैद रहना होगा। बादशाहके कुटुम्बवालोंको सरकारके किसी काममें जगह न दी गई थी। सरकारने उन्हें दरिद्र बनाकर, कर्जसे दबा दिया था। दूसरी ओर उनकी आदतोंके लिये भी उनका तिरस्कार किया गया। सरकारने उनके परिवारवालों को सेनामें लेनेसे इनकार कर दिया। उन्हें हर कामसे पृथक् रक्खा। ऐसे हीन बनकर शोचनीय दशामें जीवित रहनेसे मृत्यु कहीं अधिक अच्छी है।"*

* Martin's, Indian Empire. vol. II. P. 458.

इस सहृदय लेखककी सरल लेखनीने आगे चलकर लिखा है—"जब दिल्लीका राजवंश हमें मित्र समझकर हमारे साथ भली तरह बरतता था, उस समय हमने उनको नुकसान पहुंचानेवाले कायदे बनाये। इसमें हमें जरा भी लज्जा न आई। दिल्लीके बादशाहके साथ हम जैसा बर्ताव करते थे उससे उनकी अवज्ञा ही हुई है। हमने सब कुछ किया पर इतना भी न देख सके कि एक राज्यरहित पुरुष अपने आपको बादशाह कहता रहे। हम इतना भी न सह सके।"* समयके प्रवाहमें दिल्लीका परिवर्तन हो गया था। दिल्लीके बादशाह विदेशी व्यापारियों-के हाथकी कठपुतली बन गये थे, उन्हें अपमान और कष्ट मिल रहा था।

१८५७ के शुरूसे ही दिल्लीके मुसलमानोंमें जोश फैल रहा था। फौजोंमें भी लगातार अफवाह उड़ रही थी। फिर भी वृद्ध बहादुर शाह शान्त थे। उन्हें अपने दुःखसे ही अव-काश न मिलता था। ऐसे समयमें १० मईको मेरठकी सेनायें बिगड़ खड़ी हुईं। जब और पैदल सेना युद्धकर रही थी तब ३ नं० रिसाला अपने ८५ आदमियोंको छुड़ाकर सीधा दिल्लीकी ओर लपका। उनके पीछे पैदल सेना भी दिल्लीकी ओर चल पड़ी। आकाश साफ था, चन्द्रमा निकल आया था, मेरठकी सेनायें इस शान्त रात्रिमें आगे बढ़ीं। इस प्रकार रातभर चलकर सवेरे सिपाही दिल्ली पहुंचे। उस समय सूर्योदय हो

* Martin's Indian Empire. Vol. 11 P. 459.

रहा था, अरुणता यमुनाके जलमें विचित्र वर्ण दिखा रही थी। यमुनापर एक नावोंका पुल था। इस पुलके एक ओर सलीमगढ़का और दूसरी ओर मेरठका रास्ता था। इस पुलको पार कर लोग सलीमगढ़ पहुंच सकते थे। लाल पत्थरके कोटसे सुरक्षित दिल्लीके ग्यारह दरवाज़े थे। उस समय काश्मीरी दरवाजेके पास फौजी छावनी और तोपख़ाना था। आठ बजेके लगभग सिपाहियोंने पुल पार किया और घाटके अध्यक्षको मारकर वे किलेके पासवाले दरवाजेपर पहुंचे और पुकारकर कहने लगे कि, हम मेरठके सब अंग्रेज़ोंको मारकर आये हैं। अब अंग्रेज़के खिलाफ लड़नेके लिये बादशाहकी मदद चाहते हैं। हमें शहरमें घुसनेका हुक्म दिया जाय।

सिपाहियोंका शोर सुनकर बूढ़े बादशाहने किलेकी रक्षक सेनाके कप्तान डगलसको बुलाया। दीवानेआममें डगलस बादशाहसे मिले। डगलसने कहा कि मैं इन सिपाहियोंको वापिस जानेके लिये नीचे जाकर कहता हूं। बादशाहने डगलसको नीचे जानेसे रोका कि कहीं सिपाही उसपर हमला न कर दें। बादशाहको खुद चलनेकी ताकत न थी। वे हकीमके कन्धेका सहारा लिये हुए दीवानेआमतक आये थे। डगलसने जाना चाहा पर बादशाहने बार बार उसे रोका। इसलिये खिड़कीसे डगलसने नीचे खड़े सिपाहियोंसे कहा—"बादशाहकी तबीयत खराब है, वे नहीं चाहते कि तुम यहां खड़े रहो। तुम वापिस चले जाओ।" पर उत्तेजित

सिपाहियोंके कानमें उसकी बात न पहुंची। इस दरवाजेसे घुसनेकी सुविधा न हुई तो दूसरे दरवाजेसे वे भीतर जानेकी चेष्टा करने लगे। यमुनाकी तरफ जो दो दरवाजे थे उनमेंसे एकका नाम राजघाट और दूसरेका कलकत्ता दरवाजा था। कलकत्ता दरवाजा पुलके पास ही था। जब यह दरवाजा बन्द हो गया तब सिपाही यमुनाके किनारे किनारे राजघाट दरवाजेकी ओर लपके। वहांके मुसलमानोंने यह दरवाजा खोल दिया। उत्तेजित सिपाही दिल्लीमें घुस गये।

दिल्लीके अंग्रेज़ोंको पहलेसे यह बात मालूम ही न थी कि मेरठके अंग्रेज़ोंको मारकर उन्मत्त सिपाही दिल्ली आ रहे हैं। दिल्ली और मेरठके तार काट दिये गये थे। यह किसीको स्वप्नमें भी खयाल न था कि ११ मईको सवेरे ही अंग्रेज़के खूनके प्यासे सिपाही आकर हत्याकाण्ड करेंगे। वे सोतेसे उठकर अपने नित्य कामोंसे निवृत हो रहे थे, पर एकाएक अचिन्त्य विपत्ति आ गई।

११ मईके सवेरे टेलीग्राफ अफसरको मालूम हुआ कि दिल्ली और मेरठके बीचका तार टूट गया। इसलिये वह यमुनाके नावोंके पुलकी ओर गया। सामनेसे ३ नं० रिसाला आ रहा था। एक सिपाहीकी तलवारसे टेलीग्राफ अफसर टाड साहबके प्राणोंका अन्त हुआ था। पर यह समाचार दिल्लीके किसी अंग्रेज़को न मिला। वे अपने आवश्यक कामोंमें लगे हुए थे।

मेरठके जो सवार दिल्ली आये थे, वे संख्यामें अधिक न थे। पर

थोड़ी देर बादही मेरटकी पैदल सेना भी आ मिली। इधर दिल्लीके मुसलमान निवासी भी उनके साथ आ मिले। दिल्लीमें जो भारतीय सेना थी वह भी इनके साथ हो गई। पर दिल्लीकी सर्व-साधारण प्रजाने इनका साथ न दिया। मजदूर लोग भी इनके साथ न हुए।* पर दिल्लीके चारों ओर गूजरोंकी बस्तियाँ थीं। इनमेंसे थोड़े खेतीका काम करते थे और बाकी गाय भैंस पालते थे। मौकेपर लूटना और डाका डालनेसे भी ये लोग न चूकते थे। इस समय सिपाहियों और मुसलमानोंके साथ गूजर शामिल होगये।

सिपाहियोंके आतेही सब शहरमें शोर होने लगा। कारोबार बंद हो गया। बहुतोंकी समझमें ही न आया कि मामला क्या है। दूकानें बंद हो गई थीं। जो अंग्रेज़ोंको द्वेषकी दृष्टिसे देखते थे, जो उन्हें अपनी अवनतिका कारण समझते थे, वे सब सिपाहियोंके कामोंकी सराहना करने लगे। १० मईकी रातको जो बातें मेरटमें हो चुकी थीं वे ही ११ मईके दिन दिल्लीमें होने लगीं। सिपाहियोंको क्रोधके मारे कुछ सूझता न था, वे अंग्रेज़ जातिके नाशका निश्चय करके उठे थे। नररक्त बहाकर वे अपनी प्रतिज्ञा पूरी कर रहे थे। जब हृदय किसी बातके लिये पागल हो जाता है, जब धर्मके नामपर दिमागकी सम्पूर्ण शक्ति विक्षिप्त हो जाती है उस समय भूत और भविष्यका विचार नहीं रहता। मनुष्य केवल आगे बढ़ता है। जब विरोधीके हाथमें

* Martin's Indian Empire, Vol. II. P. 157.

हथियार देखते तब इस हिंसाकी आग जलने लगती है, फिर उस समय विरोधी चाहे स्वदेशी हो या विदेशी शत्रु ही दीखता है। उत्तेजित सिपाहियोंकी यही दशा हो गई थी।

उस समय दिल्लीमें ३८, ५४ और ७४ नं० तीन पैदल सेनायें थीं। इन तीनोंके ३५०० वीर जवान थे। इनके अलावा १६० गोलंदाज थे। इन सेनाओंमें ५२ अंग्रेज़ अफसर थे। मेरठके सिपाही बड़े झपाटेसे शहरमें घुसे और जो कोई अंग्रेज़ सामने मिला उसे मारते, उसका घर जलाते, वे कलकत्ता दरवाजेकी ओर बढ़े, क्योंकि उन्होंने सुन रखा था कि इसी ओर कमिश्नर फ्रेजर और डगलस आदि प्रधान प्रधान अंग्रेज़ोंका निवास है। वे "दीन, दीन" पुकारते कलकत्ता दरवाजेकी ओर चले। उनके साथ बहुतसे उन्मत्त मुसलमान हो गये। सिपाही जानते थे कि दिल्लीके सिपाही अपने धर्मके द्रोही गोरोंकी कभी मदद न करेंगे। जो तलवार या बंदूक उनके हाथमें है उसे वे अपने देश और धर्मके लिये काम करनेवालोंके विरुद्ध काममें न लावेंगे। इसी कारण वे अपने आपको सहायहीन नहीं समझते थे। कम्पनीके विरुद्ध खड़े होनेसे उन्हें डर भी न लगा। वे निर्भयतापूर्वक दिल्लीमें घुसकर अंग्रेज़ोंका खून करने लगे।

इस समय ३८ नं० सेनाके कुछ सिपाही शाही किलेकी रक्षामें नियत थे। जिस समय विद्रोही सिपाही कलकत्ता दरवाजेकी दूसरी ओर थे उस समय कमिश्नर फ्रेजर और डगलसने इन सिपाहियोंको अपनी ओर मिला लेनेका यत्न किया।

पर वे कामयाब न हुए। जब मेरठके सिपाही वेगसे आये तब कमिश्नर और डगलसकी बात न मानकर सिपाहियोंने उनका स्वागत किया। जातिनाश और धर्मनाशकी आशंकासे दिल्लीके सिपाही अतिशय उत्तेजित हो उठे थे। उनकी आशंका किसी प्रकार न मिटी। जब उन्होंने देखा कि मेरठके सिपाही धर्मरक्षामें दृढ़ हैं तब वे भी उनमें मिल गये। अब अफसरोंकी आज्ञा और क्षमता व्यर्थ थी। किसीकी आज्ञा न मानकर सिपाही केवल अपनी इच्छासे काम करने लगे। कमिश्नर और कप्तान निरुपाय थे। उनकी शक्ति और क्षमता इस समय समाप्त होगई। इससे वे डरे। अपने जीवनको वे आपत्तिपूर्ण देखने लगे। जिस समय सवार आरहे थे उस समय डगलस और फ्रेजर दोनों उन्हें रोकने और समझानेका उद्योग कर रहे थे। यह पहले कहा जा चुका है कि विपत्तिका आविर्भाव होते ही कोतवालने कमिश्नरको खबर दी। खबर मिलतेही कमिश्नर और डगलस बग्घीमें बैठकर, हाथमें भरी बंदूक लिये सिपाहियोंका रोकने गये। दो सवार अर्दलीमें उनके साथ थे। सामना होतेही सिपाहियोंने सवारोंसे पूछा—"तुम अंग्रेज़ोंको बचाना चाहते हो या अपने धर्मको?" पूछतेही दोनों अर्दली "दीन दीन" पुकार उठे। बहुत दिन बाद आज लड़ाईकी आवाज सुनकर फ्रेजर और डगलस साहब जरा चकित हुए। वे गाड़ीसे पुलीस चौकीमें चले गये। इधर सवार उनकी ओर बढ़ने लगे। फ्रेजर साहबने एकको गोली मारी। उनकी दूसरी गोलीसे एक घोड़ा घायल हुआ। पर इससे

सिपाही पीछे न हटे। क्रमशः भीड़ बढ़ने लगी। सिपाही लाइन बनाकर आगे बढ़े। उस समय सिवा भागनेके फ्रेजर साहबके लिये कोई अन्य उपाय न था। गाड़ीमें बैठकर वे लाहौरी दरवाज़ेकी ओर भागे।* कप्तान डगलस किलेकी खाईमें कूद पड़े।† गिरनेसे उन्हें बड़ी चोट आई। वे गोलीसे बचे पर चोटके कारण बेहोश हो गये। इसी दशामें किलेके चपरासी उन्हें उठाकर उनके घर ले गये। कमिश्नर फ्रेजर और डिप्टी कमिश्नर हकिंसन साहब भी यहीं आये।

आक्रमण करनेवाले कप्तान डगलसके घरकी ओर गये। इस समय कप्तानके घरमें एक पादरी और दो तीन मेमें ठहरी हुई थीं। शोर सुनकर पादरी नीचे आया, देखा कि हकिंसन और कप्तान वहीं हैं। वह कुछ पहरेदारोंकी मददसे इन्हें ऊपर ले गया। कमिश्नर साहब नीचे सीढ़ीके पास खड़े होकर उत्तेजित आदमियोंको रोकने लगे। नंगी तलवार लिये वे जीनेके पास खड़े थे। इसी समय एक आदमीने उनपर तलवार चलाई। उनके शरीरके दो टुकड़े होकर गिर पड़े।

कमिश्नरको मारनेके बाद उत्तेजित लोग ऊपर गये। डगलस, हकिंसन, पादरी और कुछ अंग्रेज़ स्त्रियां वहाँ थीं। पहले उन्होंने जीनेके किवाड़ बंद करके बलवाइयोंको रोका। पर ज़ोरके धक्केसे किवाड़ टूट गये। एक क्षणमें सब अंग्रेज़ मारे गये, सारा

* Martin's Indian Empire, Vol, II. P. 159.

† Travels of a Hindu; Vol II. P. 288.

कमरा खूनसे तर हो गया । इस प्रकार खूनसे बादशाहका निवासस्थान कलंकित हुआ । इस हत्याके मामलेमें बूढ़े बादशाहको अपराधी बनानेकी कोशिश की गई थी । बहुत दिनों तक अंग्रेज़ोंका विश्वास हो गया था कि बलवाई, अंग्रेज़ स्त्रियोंको पकड़कर बहादुर शाहके सामने ले गये थे और उनके हुक्मसे वे मारी गई थीं । पर इसका कुछ प्रमाण न मिला । इस मौकेपर बादशाहने अंग्रेज़ोंका पक्ष लिया था । कप्तान डगलसने मौतसे कुछ पहले अपने यहाँकी स्त्रियोंको शाही जनाने महलमें भेजनेके लिये पालकी मंगाई थी । बादशाहने पालकी देनेकी आज्ञा दे दी पर वह कुछ देरसे पहुंची । इतनेमें ही काम तमाम हो गया था ।* एक बात और थी, बलवाई सारा काम बादशाहका नाम लेकर करते थे पर बहादुर शाहने न किसीसे बातें की थीं और न किसीसे कुछ कहा ही था । उन्होंने किसीको इस कामके लिये उत्साह भी नहीं दिया था । अंग्रेज़ोंके साथ मिलकर वे मेरठसे सहायता पानेकी प्रतीक्षा कर रहे थे । जिस समय उन्मत्त सिपाही चारों ओर भयानक काण्ड कर रहे थे उस समय बहादुर शाहने आगराके कालविन साहबको पत्र लिखकर भेजा था कि दिल्लीका किला सिपाहियोंके हाथ चला गया । वे खुद भी सिपाहियोंके अधीन हैं । यहांके सिपाही मेरठके सिपाहियोंसे मिल गये हैं और फ्रेजर आदि अंग्रेज़ मारे गये । यह पत्र मिलनेपर कालविन साहबने १५ मईको कलकत्ता तार भेजा ।

* Kaye's Sepoy War. Vol. II. P. 80 note.

भारत सरकारको सबसे पहले कालविन साहबके तारसे ही दिल्लीकी दुर्घटनाका समाचार मिला।* पश्चिमोत्तर प्रदेशके लेफ्टिनेंट गवर्नरको भी इन्होंने ही तार द्वारा समाचार दिया। पर जिनकी चिट्ठीके आधारपर यह सब समाचार दिये गये थे उन्होंने सिपाहियोंको उत्साहित करके इस हत्याकाण्डके करानेमें कोई भाग लिया होगा, यह सम्भव नहीं।

अपने किलेके भीतर बलवाई सिपाहियोंका शोर सुनकर वृद्ध बादशाह चिन्तित हुए। इसी स्थानपर उनके वृद्ध पूर्वज शाह आलम एक मुसलमानकी तलवारसे मारे गये थे। यह बात बहादुर शाहको याद आ गई। बड़ी भीड़ देखकर वे घबरा गये। विद्रोही सिपाही खूनसे भरी तलवारें घुमाते हुए शहरके लोगोंको उनका साथ देनेके लिये कहते थे। किलेमें सवार, ३८ नं० सेना और मेरठकी पैदल सेना घुसी थी। साथ ही शहरके उत्तेजित मुसलमान आकर उनमें शामिल हो गये थे। महलके बाहरके मकानोंको उन्होंने अपने घोड़ोंका अस्तबल बनाया। मेरठकी पैदल सेना इतना रास्ता चलकर थक गई थी। वह बादशाहके महलमें आराम करने लगी। देखते देखते असहाय वृद्ध बहादुर शाहका किला हथियारबन्द सिपाहियोंसे भर गया।

इधर अंग्रेज़ोंकी बस्ती दरियागंजमें बड़ा भयानक काण्ड होने लगा। इन घटनाओंमें कौन सी घटना किसके बाद हुई,

* Martin's Indian Empire. Vol. II. P. 159.

यह जाननेका कोई उपाय नहीं। पर दोपहरसे पहले पहले दिल्लीके खास खास अंग्रेज़ सिपाहियोंके हाथसे मारे गये। दोपहरको दिल्लीका बंक लूटा गया, बंकके जिन आदमियोंने रोका वे घायल हुए। अंग्रेज़ोंके लिखे इतिहासमें एक यह भी घटना है, कि बंकके मैनेजर बेरेसफोर्ड साहब अपनी मेम और बच्चों सहित बंकके बरामदेकी छतपर छिपे हुए थे। साहबके हाथमें नंगी तलवार और मेमके हाथमें बरछा था। तलवारकी मददसे साहबने बहुत देरतक जान बचाई। बरछेसे मेमने एकको घायल भी किया। पर अन्तमें यह सब मारे गये। बंक लुट गया।* उस समय "दिल्ली गजट" नामक एक अंग्रेज़ी अखबार निकला करता था। दोपहरके समय इसके छापाखानापर लोगोंने धावा किया। ईसाई कम्पोजीटर घायल हुए। सब टाइप गोलियाँ ढालनेके लिये विद्रोही उठा ले गये। अंग्रेज़ोंके विरुद्ध उस समय इतनी उत्तेजना थी कि लोग उनके सहधर्मी ईसाइयोंतकको हानि पहुंचाना अपना कर्त्तव्य समझने लगे थे। शहरमें जो ईसाई थे वे भी मारे गये। उनके घर बार भी फूंक दिये गये।†

दोपहरके बाद दिल्लीके सिपाहियोंमें भी असन्तोषके लक्षण दिखाई दिये। शहरसे कुछ दूर उत्तरपश्चिम कोणमें पहाड़ (मेजला पहाड़) है। इस पहाड़ और यमुनाके बीचमें फौजी छावनी थी।

---

* Kaye's Sepoy War. Vol. II P. 81.

† Ibid War. Vol. II. P. 82 note.

इस छावनीमें ११ मईके बारह बजेतक किसी तरहकी अशान्ति न थी, पर इसके बाद शान्ति न रही। सोमवारको सवेरे ३० नं०, ५४ नं० और ७८ नं० सेनाएँ परेटके लिये खड़ी थीं। उस समय बारकपुरके मंगल पांडे और ईश्वर पांडेको फांसी देनेका विवरण पढ़कर अफ़सरोंने सिपाहियोंको सुनाया। इस हुक्मको सुनानेके लिये दिल्लीके सब सिपाही इकट्ठे किये गये थे। जमादारको फांसी देनेकी बात सुनकर सबने घृणा प्रगट की। पर इसके अलावा और किसी तरहकी उत्तेजना न थी। यह काम समाप्त करके अंग्रेज़ अफ़सर एक स्थानपर बैठकर सवेरेका भोजन करने लगे, फिर सब अपने अपने घर चले गये। उस समयतक किसीके चित्तमें किसी तरहकी शंका न थी। कोई भी न जानता था कि आजका दिन उनके जीवनका अन्तिम दिन है। १० बजे अफ़सरों-को अपने २ अर्दली और चपरासियोंसे मालूम हुआ कि मेरठसे विद्रोही सवार आये हैं। झटपट वे तैयार होकर कर्त्तव्यपालनके लिए उद्यत हुए। उस समय भी वे यही सोच रहे थे कि सिपाही जेलपर धावा करेंगे। इसके अलावा वे और कुछ न कर सकेंगे। क्योंकि यदि मेरठके सिपाही सचमुच लड़ाईके लिये तैयार हुए होते तो वहाँ गोरी सेना काफी थी और वह इन्हें हरा देती। उन्होंने सोचा कि मेरठके कुछ सिपाही भागकर चले आये होंगे। पर देखते देखते अफ़सरोंका यह ख्याल असत्य प्रमाणित हुआ, देखते देखते मतवाले सिपाहियोंके हथियारोंसे उनके प्राण जाने लगे।

ब्रिगेडियर डेवूस दिल्लीकी सेनाके सेनापति थे। उन्होंने सेना-को तैयार करके कर्त्तव्यपालनके लिये कहा। सैनिक ब्रिगेडियर-की बातसे उत्साहित हुए। फौरन ५४ नं० सेना शहरकी ओर चली। सेनापति कर्नल रिप्ले इन्हें विद्रोही सिपाहियोंके हथियार ले लेनेके लिये काश्मीरी दरवाजेकी ओर ले चले। बलवाई सिपाही इसी दरवाजेकी ओर आ रहे थे। सेनापतिने अपनी सेना-को बंदूक भरनेका हुक्म न दिया। उन्होंने केवल संगीनोंसे हमला रोकनेका इरादा किया था। उस समयतक इन सिपाहियोंके मुंहसे ऐसी कोई बात नहीं मालूम होती थी जिससे वे विश्वास-घातक सिद्ध होते एक मेम और एक नौजवान अंग्रेज़ने बादमें भी कहा था कि उस समयतक इस सेनापर हमारा विश्वास था। काश्मीरी दरवाज़ेके पास विद्रोही सवार दिखाई दिये। उस समय वे बड़े वेगसे चले आ रहे थे। उनके पीछे बहुतसी पैदल सेना थी। रास्तेकी धूलसे सबके कपड़े मैले हो गये थे। इनकी संगीनोंपर धूपकी चमक चमचमा रही थी। उस समय इनकी संख्या कितनी थी, इस बातका अधिकारियोंमेंसे किसीने उल्लेख नहीं किया है, पर किसी किसीका कहना है कि वे अधिकसे अधिक डेढ़ सौ थे। जो कुछ हो, पर इनके साथ शहरके उन्मत्त आद-मियोंकी भीड़ थी; इसमें सन्देह नहीं। यह सब छावनीकी ओर जा रहे थे। रास्तेमें ही ५४ नं० सेना सामने मिली। इन्हें देखकर वे निर्भय हो आगे बढ़े और बोले—"हम लड़ाईके लिए नहीं आये हैं, हमारी लड़ाई तो अंग्रेज़ोंके साथ है। इस सेना-

की बंदूकें भरी हुई न थीं जो पहले हुक्ममें ही चला दें। जब अफसरने बंदूक भरनेका हुक्म दिया तब वे भरी और चलाई गईं। पर तमाम बंदूकोंकी नलियां ऊपरको थीं, किसी सिपाहीको गोली न लगी। इधर विद्रोही सवारोंने लपककर अंग्रेज़ अफ़सरको मार डाला। कर्नल रिप्लेके अलावा चार और अंग्रेज़ अफसर मारे गये।*

जिस समय कर्नल रिप्लेकी अधीनतामें ५४ नं० सेना शहरकी ओर बढ़ रही थी उस समय दो तोपें ले जानेका उद्योग हो रहा था। इस सेनाकी दो रेजीमेंट छावनीमें थीं। जब दोनों तोपें तैयार हो गईं तब बाकी दोनों रेजीमेंट लेकर मेजर पिटर्सन काश्मीरी दरवाजेकी ओर चले। गोलंदाजोंने उस समयतक हुक्म माननेसे इनकार न किया था, पर वे अपने भाइयोंसे युद्ध करना नहीं चाहते थे। उस समय सबमें आपसकी हमदर्दी जाग उठी थी, सब अपने धर्म और जातिकी रक्षाके लिये सन्नद्ध थे। मेजर पिटर्सन दो तोप और दो दल सेना लेकर आगे बढ़ रहे थे पर काश्मीरी दरवाजेतक पहुँचनेसे पहले ही विद्रोही शहरमें बिखर गये थे। दरवाज़ेपर आकर पिटर्सनने उन्हें नहीं देखा, पर

* कहा जाता है कि खुद कर्नल रिप्लेने स्वीकार किया था कि वे अपनी सेनाके सिपाहीकी संगीनसे घायल हुए थे। इस दशामें ही वे फौजमें लाये गये। डोलीमें डालकर उन्हें दूसरे स्थानपर भेजनेका उद्योग किया गया। पर कहारोंने ले जानेसे इनकार किया। फिर भी इन्हें छिपाकर रक्खा गया, पर एक सिपाहीने देख लिया और उसीने मार डाला। Martin's Indian Empire Vol II. P. 160.

हमलेके सब लक्षण वहाँ थे। उनके भाइयोंके शरीरोंसे अब भी खून बह रहा था। यह हाल देखकर पिटर्सन मर्माहत हुए। काश्मीरी दरवाजेके भीतर एक मकान था। अंग्रेज़ोंने उसे "मेन गार्ड" लिखा है। कप्तान वालेस नामक एक अंग्रेज़ ३८नं० सेनाके कुछ सिपाहियोंके साथ वहाँ रहते थे। कप्तानने सिपाहियोंसे विद्रोहियोंपर गोली चलानेको कहा, पर किसीने गोली नहीं चलाई। कप्तान पिटर्सन अंग्रेज़ोंकी लाशोंको यहीं लाये। उनके साथ जो दो तोपें और ३८ नं० सेनाकी दो रेजीमेंट थीं वे भी उनके साथ साथ यहीं आईं। सम्पूर्ण सेना एकत्र होकर प्रतिपल बलवाई सिपाहियोंके आक्रमणकी आशंका कर रही थी। यहाँके अंग्रेज़ सेनापतियोंको यह मालूम न था कि शहरमें क्या हो रहा है। इस समय भी सेनापति यह उम्मेद कर रहे थे कि मेरठकी गोरी सेना हमारी सहायताके लिये आवेगी। बहुत सम्भव है कि गोरी फौज शहरके करीब आ पहुँची हो।

मेजर पिटर्सन जब दो रेजीमेंट और तोपें लेकर मेन गार्डपर पहुँचे तब कप्तान वालेसने ७४ नं० सेनाको दो तोपें लानेको भेजा था। इस स्थानपर यह कहना आवश्यक है कि ५४ नं० सेनाके चले जानेपर ७४ नं० सेनाके गोलंदाज परेटके मैदानमें लाये गये। मेजर ऐवट इस सेनाके सेनापति और डी टिसियर कप्तान थे। ११ बजे इन्होंने सुना कि ५४ नं० सेनाके अफसर मारे गये। इस खबरके सुनते ही मेजर ऐवटने जो कुछ किया वह इस प्रकार लिखा है—"मैं घोड़ेपर बैठकर उसी समय फौजमें गया। जाते

हो जिसे सामने पाया उसे कहा कि अब भरोसेके साथ काम करनेका मौका आ गया। मैं काश्मीरी दरवाजेकी ओर जाना चाहता हूं, विश्वासी सैनिक मेरे साथ चलें। इसके बाद सिपाही मेरे सामने आये। मैंने सबको बंदूक भरनेकी आज्ञा दी। एक मिनिटमें मेरी आज्ञा पालन हुई। सब जोशके साथ आगे बढ़ने लगे। हम काश्मीरी दरवाजेके मेन गार्डपर पहुँचे और बलवाई सिपाहियोंके आनेकी राह देखने लगे। पर शामके ३ बजेतक कोई न आया। शत्रु शहरमें क्या कर रहे थे सो भी हमें ज्ञात न था।"

सूरज ढल गया था। पर अबतक शहरकी बातें अंग्रेज़ सैनिकोंको मालूम न हुईं। दो एक अंग्रेज़ अपनी जान बचानेके लिये किसी तरह भाग या छिपकर यहाँ आये थे, पर उनसे और किसी तरहका कोई समाचार नहीं मिला। वे केवल यही बता सके कि बलवाइयोंके हमलेसे उन्होंने अपनी जान किस तरह बचाई। यह न मालूम हुआ कि ५४ और ३८ नं० सेनायें मेरठके सिपाहियोंका कितना साथ दे रही थीं। पर इसमें कोई सन्देह न था कि भारतके सब सैनिकोंमें परस्पर समवेदनाका भाव जाग उठा था। इस शामतक बहुतसे सैनिक अंग्रेज़ोंकी ओर थे। पर उनमेंसे भी बहुतसे धर्मनाशकी आशंका करनेवाले सिपाही विद्रोही होते जाते थे। मेन गार्डमें जो सब सिपाही थे उनपरसे भी अंग्रेज़ अफसरोंका विश्वास हटता चला जाता था। वे यह खयाल करते थे कि शत्रुओंपर चलानेके लिये हमने जो गोली

भरवाई है, वह भी शायद हमपर ही चलेगी। इस आशंका और भयके साथ अंग्रेज़ अफसर मेन गार्डमें थे। इसी समय शहरकी ओर जोरकी आवाज होने लगी। आसमानमें धुआं दिखाई देने लगा, तोपोंकी आवाजसे मेन गार्डकी जमीन थर्राने लगी। जिधरसे आवाज आ रही थी उसी ओर अंग्रेज़ देखने लगे कि गाढ़ा काला धुआं निकल रहा है और उस धुएँको भेदती हुई आगकी लपटें भी दिखाई दे रही हैं। यह देखकर सबने समझ लिया कि दिल्लीके बारूदखानेमें आग लग गई। पर यह किसने लगाई या आग अपने आप लगी सो कोई न समझ सका। जब मेन गार्डके सैनिक यह सब देख रहे थे तब दो अंग्रेज़ अफसर भागे हुए यहाँ आये। यह लोग गोलंदाजोंके अफसर थे। धुएँके कारण इनमेंसे एकका मुँह ऐसा काला हो गया था कि एकाएक यह पहचाना नहीं जाता था। इन्होंने आकर तोपखानेकी बात सुनाकर सबको स्तंभित कर दिया।

दिल्लीका तोपख़ाना किलेसे कुछ दूरपर था। इसमें हर तरहके लड़ाईका सामान था। तोपें, बारूद, गोले, कारतूल, बंदूकें सब चीजें थीं।* लेफ्टनेंट जार्ज विलोबी नामक सैनिक इसके संरक्षक थे। इनके अधीन आठ अंग्रेज़ और अनेक हिन्दुस्तानी थे। सोमवारको सवेरे विलोबी अपना काम कर रहे थे उस समय ब्रिटिश रेजीडेंट सर मेटकाफने उन्हें सूचना दी कि मेरठके उत्तेजित सिपाही नदी पार कर चुके। इन्हें रोकनेके लिये रेजीडेंट

* इस समय मेगजीनमें ५० पीपे बारूद थी।

दो तोपें चाहते हैं। इन तोपोंको यमुनाके नावोंके पुलके सामने रखकर वे बलवाइयोंको उड़ा देना चाहते हैं। पर उसी समय उन्हें मालूम हुआ कि समय बीत गया, सिपाही शहरमें आ गये। इस समय मेटकाफ साहब दूसरे स्थानपर गये और बिलोबी तोपख़ानेकी हिफाजत करने लगे। उन्हें डर था कि विद्रोही सिपाही तोपख़ानेमें घुसकर लड़ाईका सामान लूटेंगे। जो मेरठ-से गोरी सेना जल्दी न आई तो वे इसे अधिक समयतक नहीं बचा सकते। एक पहरेवालेपर बिलोबीको शक हुआ। उसका नाम करीमबक्श था। बिलोबीको शक हुआ कि यह आदमी दुश्मनोंसे मिलकर हमारा बुरा चाहता है। इसलिये बिलोबीने अपने एक गोरे साथीको हुक्म दिया था कि यदि करीमबक्श दरवाजेकी ओर बढ़े तो उसे गोलीसे मार दो। तोपख़ानेके जो और हिन्दुस्तानी सिपाही थे उन्होंने भी विद्रोहियोंके कामकी सराहना की। उस समय बिना कहे सब अपने आप अंग्रेज़ोंके विरुद्ध हो गये थे, सबकी एक ही आशंका, एक ही चिन्ता और एक ही काम था। पर अंग्रेज़ इस बातको अच्छी तरह न समझे थे। वे सोचते थे कि जो सदा हमारे अधीन रहकर काम करते थे, सदा नम्रतासे आज्ञाका पालन करते थे, वे एकाएक हमारे ख़ूनके प्यासे कैसे बन जायँगे। तोपख़ानेमें जो नौ अंग्रेज़ थे उन्होंने आत्मरक्षाकी दृढ़ प्रतिज्ञा की। वे यह सोचकर आश्वस्त थे कि हमपर विपत्ति आनेतक मेरठसे मदद आजायगी। तोपख़ा-नेका दरवाजा बंद कर लिया गया। दरवाजेपर भरी तोपें लगा

दी गईं। एक एक आदमी जलता पलीता लेकर तोपोंपर खड़ा हो गया। इसके बाद जिस घरमें बारूद थी उससे चौकतक जमीनके नीचे बारूदकी लाइन बिछा दी। उसके पास एक अंग्रेज़ पलीता लेकर खड़ा हो गया। यह सब इसलिये कि यदि हमारा कुछ बस न चला तो दरवाजेवाला टोपी खोलकर इशारा करेगा और वह आग लगाकर सब बारूद उड़ा देगा।

जिस समय तोपख़ानेके रक्षक यह सब इन्तजाम कर रहे थे, उस समय विद्रोहियोंमेंसे कई एकने आकर दिल्लीके बादशाहके नामपर तोपख़ानेको उनके कब्जेमें कर देनेके लिये कहा। अंग्रेज़ोंने कुछ उत्तर न दिया। मौन रहकर उन्होंने इसका प्रत्याख्यान किया। इसके बाद और बहुतसे विद्रोही आकर कहने लगे कि बादशाहने दरवाजा खोलनेकी आज्ञा दी है। तोपख़ानेका सामान वे सिपाहियोंको देना चाहते हैं। पर अंग्रेज़ोंने इसका भी जवाब न दिया। वे चुपचाप अपनी रक्षाका उपाय सोचते रहे। देखते देखते बहुतसे बलवाई आ गये। तोपख़ानेकी दीवारके पास खड़े होकर उन्होंने ऊपर रस्सियां फेंकी। उन्हीं रस्सियोंके सहारे, भीतरके मेगजीनके हिन्दुस्तानी नौकर, नीचे उतरकर बलवाइयोंमें मिल गये। समय आया समझकर अंग्रेज़ लोग विद्रोहियों पर गोले बरसाने लगे। गोले पर गोले बलवाइयोंपर गिरने लगे। विद्रोही भी इसका जवाब देने लगे। उनकी गोलियोंसे तोपख़ानेके रक्षक समाप्त होने लगे। भीतर कुल ६ अंग्रेज़ थे, जिनमेंसे दो घायल हो चुके थे। इधर बलवाई लगातार गोलियां

बरसा रहे थे। बहुतोंका खयाल है कि मेरठकी ११ और २० नं० सेनाने ही यह काम किया, पर दिल्लीको ३८ नं० सेना भी इनके साथ शामिल थी।* जो कुछ हो, बलवाई इस जोरसे गोलियां बरसाने लगे कि अंग्रेज़ उनका हमला न रोक सके। वे अपने अन्तिम निश्चयके लिये तैयार हुए। विलोबीने इशारा किया, इशारा करते ही वकलेने सिरसे उतारकर टोपी हिलाई, स्केलीने बारूदमें बत्ती लगा दी। क्षणभरमें महा भयानक आवाजसे तोपख़ाना उड़ गया।

इस भयानक काण्डसे ६ अंग्रेज़ोंमेंसे ६ की जान बची। विलोबी अपने एक सहायकके साथ मेन गार्डमें पहुंचे। बाकी चार दूसरे रास्तोंसे भागकर मेरठ पहुंचे। पर जिसने बारूदमें आग लगाई थी उसके शरीरकी बोटी बोटी उड़ गयी। स्केली-को बड़ी जिम्मेदारीका काम दिया गया था। इशारा होतेही उसने फौरन बारूदमें बत्ती दे दी। इस अपूर्व साहस और आत्म-त्यागके कारण स्केली इतिहासमें अमर हो गया।

इस घटनासे अंग्रेज़ तो तीनही मरे पर बलवाइयोंका सत्या-नाश हो गया। विलोबीका कहना था कि क़रीब एक हज़ार बलवाई स्वाहा हो गये। एक हिन्दुस्तानी लेखकने लिखा है कि तोपख़ानेके उड़नेसे शहरके भिन्न भिन्न रास्तोंमें लगभग ५०० आदमी मरे थे। शहरमें हर स्थानपर ईंट, पत्थर और हथियार

* Kaye's Sepoy War, Vol. II P. 90 note. Martin's Indian Empire Vol II P, 162

तथा गोलियां ही बरसती थीं। किसी किसी घरमें इतनी गोलियां आकर गिरी थीं कि लड़कोंने पांच पांच सेर सीसा इकट्ठा कर लिया था।* तोपख़ानेके उड़ जानेसे विद्रोहियोंका एक उद्देश्य विफल हुआ, क्योंकि यदि उन्हें लड़ाईका सामान मिल जाता तो वे और भी अधिक अपनी ताकत बढ़ा लेते। विलोवी और उससे भी बढ़कर स्केलीने जिस वीरता और कर्त्तव्यपरायणताका परिचय दिया इससे सब अंग्रेज़ उनकी प्रशंसा करते हैं। विलोवी दिल्लीसे मेरठ भागते समय रास्तेमें मारा गया।† इसके पांच साथी मेरठ जा पहुंचे। बादमें वे राज्यसम्मानसे सम्मानित हुए।‡

जो पहाड़ (मेजुला) शहर और छावनीके बीचमें है, उसपर उस समय एक गोलघर था। अंग्रेज़ी इतिहासमें वह फ्लैगस्टाफ टावरके नामसे प्रसिद्ध है।¶ अंग्रेज़ोंने इसीमें आकर शरण ली थी। ३१ नं० सेना इस मकानके पास रक्खी गई। दो तोपें लगा दी गईं। फौजी अफसरोंके अलावा १६ अंग्रेज़ और ईसाई थे। मेमें और बच्चे बहुतसे थे। इस गोलघरसे सबने तोपख़ानेके उड़नेका दृश्य देखा। उस समय चार बजे थे। उस समय तक अंग्रेज़ मेरठकी गोरी फौजके आनेका इन्तजार कर रहे थे। पर जब सेनाके आनेके कोई चिन्ह न दिखाई दिये, विद्रोही

* Indian Empire Vol. II. P. 157.

† ‡ Ibid Vol. II. P. 169.

¶ Kaye's Sepoy War Vol. II. P. 92. note.

सिपाही उन्हें और भी अधिक तंग करने लगे तब वे हताश हुए। मेरठकी फौज आनेकी आशा छोड़नी पड़ी। और कोई उपाय न देखकर एक अंग्रेज़ने हिम्मत करके यह खबर मेरठ ले जानेका भार लिया। यह ७४ नं० सेनाका डाक्टर था। डाक्टर वाट्सनको तैयार होते देखकर ब्रिगेडियर ग्रेवसने एक चिट्ठी लिख दी। वाट्सन स्त्रियों और बच्चोंसे मिलकर, हाथ पांवमें काला रंग पोतकर, संन्यासीके वेषमें शहरसे निकला। डाक्टरको हिन्दुस्तानी भाषा बोलनेका अच्छा अभ्यास था, इसलिये आशा थी कि वे चले जायंगे। जब वे नदी पार होनेके लिये पुल-पर आये तब पुल टूट चुका था। इसलिये वहांसे वापिस छाव-नीकी ओर आकर वे नाव द्वारा नदी पार होनेका रास्ता देखने लगे। इस समय ३ नं० सेनाके कुछ सवार उधरसे जा रहे थे। उन्होंने वाट्सनको आंखकी पुतलीके रंगसे पहचाना कि वह हिन्दुस्तानी नहीं है। उसे निशाना करके सिपाही बंदूक छोड़ने लगे। पासके गूजरोंने उसके कपड़े उतार लिये। डाक्टर वाट्सन बिलकुल नंगे हो गये। वे ऐसी दुर्दशामें ही कर्नलकी ओर भागकर अपने प्राण बचानेकी चेष्टा करने लगे।* पर जो कहीं डाक्टर वाट्सन मेरठ भी पहुंच जाते तोभी मेरठके अधिकारी दिल्लीके अंग्रेज़ोंकी सहायताके लिये न आ सकते थे। मेरठके बचे हुए अंग्रेज़ अपने सिरकी आपत्तिको छोड़कर ३५ मील दूरके देश-

* Holme's Indian Mutiny P. 11. Cave Browne's. Punjab and Delhi Vol. 1. P. 74.

वासियोंकी रक्षाके लिये आ जाते यह उस समय बहुत कठिन था। उनके सामने भी ऐसी ही भयानक घटना हो चुकी थी। उन्होंने अपने भाई, बन्धुओं और स्वजनोंकी मौत देखी थी। भयानक आग उनका सर्वस्व नाश कर चुकी थी।

धीरे धीरे सूर्य डूब गया। रात आ गई। दिल्लीमें जिन जिन स्थानोंपर जितने सिपाही थे उन सबने अपने अपने अफसरोंका साथ छोड़नेका इरादा किया। चारों ओर विद्रोहियोंके झुंडके झुंड घूम रहे थे, हथियारोंकी चमक चारों ओर चमचमा रही थी, लोग शोर मचा रहे थे कि दिल्लीके बादशाह उनकी तरफ हैं, वे बादशाहके लिये अंग्रेजोंसे लड़ रहे हैं। महाप्रतापी मुगलवंशको फिर सिंहासनपर बैठाना और अपने धर्मकी रक्षा करना ही इस समय लड़ाईका उद्देश्य है। इन बातोंसे लोगोंके हृदय और अधिक उत्तेजित होते थे। सब सोच रहे थे कि बादशाह फिर शासन करेंगे, फिर उन्हें पहलेके समान अधिकार और सम्मान मिलेगा, फिर वे अपने धर्ममें रह सकेंगे, इसीलिये लोग सिपाहियोंका साथ देने लगे। बादशाहके नामपर लोग बलवाई बने। भयानक तरंगोंसे दिल्ली शहर लहराने लगा।

सिपाहियोंने घर जलाने और लूटनेका काम नहीं किया। वे अंग्रेज़ोंको मारते और सामना होनेपर लड़ते थे। देखा जाय तो, अंग्रेज़ों और सिपाहियोंकी दिल्लीमें लड़ाई हुई थी, इस लड़ाईमें अंग्रेज़ सिपाहियोंके हथियार न ले सके।* अंग्रेज़ बहुत ही

* Martin's Indian Empire. vol II. P. 165.

कम थे। फिर उन्हें विपत्ति आने तक उसका पता न था। इस एकाएक आक्रमणसे बहुतसे मारे गये, बहुतसे रास्ता न देखकर इधर उधर भागे और छिपे। जिन अंग्रेज़ोंने ग़दरका इतिहास लिखा है उन्होंने स्वीकार किया है कि, सिपाही न लूटते थे, न घर जलाते थे और न उनमें आपसमें परस्पर फूट ही थी। उनका न कोई अफ़सर था न संचालक। फिर भी वे एक साथ हमला करते और अपने विरोधियोंको जीतते थे। उनका उद्देश्य और संकल्प अंग्रेज़ोंका नाश करना था। इसीलिये एकमत होकर अपने उद्देश्यको पूरा करनेके लिए उन्होंने अंग्रेज़ोंसे युद्ध किया।

काश्मीरी दरवाजाके मेन गार्डमें जो सब अंग्रेज़ छिपे थे उनपर ३८ नं० सेना गोली बरसाने लगी। तीन अफ़सर घायल हुए। दूसरे अंग्रेज़ोंने उपाय न देखकर भागनेका इरादा किया। मेन गार्डके सामने सिपाही गोली बरसा रहे थे। इसलिये इस ओरसे वे नहीं भाग सकते थे। तोपोंके लिए मेन गार्डका ऊपरी हिस्सा कुछ कुछ ढालू बनाया गया था। इस ढालू जगहसे खाईमें कूदकर भागनेके सिवा कोई उपाय न था। खाईकी गहराई ३० फुट थी। अफसरोंने झट यही किया। जिस समय वे भागनेका उद्योग कर रहे थे उस समय मेन गार्डके घरसे रोने और चिल्लानेकी आवाज सुनाई दी। इस घरमें जो अंग्रेज़ स्त्रियां थीं वे व्याकुल होकर रोने लगीं। इन्हें छोड़कर अफसरोंको अपनी जान बचाना भी अच्छा न लगा। साथ ही मेन गार्डमें

भी वे न रह सकते थे ; क्योंकि वहां लगातार गोलियां बरस रही थीं। इसलिये सबने खाईमें कूदकर अपनी जान बचानेका इरादा किया। अफसरोंने अपनी पेटियां खोलकर एक दूसरेसे जोड़कर रस्सीका काम लिया। उसीके सहारे वे उतरे और फिर एक दूसरेको सहारा देकर उतारने लगे। इसी तरह स्त्रियोंको भी वे खाईमें लाये। खाईके दूसरे किनारेपर जंगल था। सबने इस जंगलमें छिपकर अपने प्राण बचानेका इरादा किया। खाईमें उतरनेके समान चढ़ना भी मुश्किल था। पर जिस समय विपत्ति सिरपर आती है, आदमीमें अपार बल और साहस आजाता है। उस समय उन अफसरोंकी भी यही हालत थी। असीम साहससे उत्साहित होकर वे प्राण रक्षाके लिये तैयार थे। बड़ी कठिनाईसे सब खाईके दूसरे पार पहुंचे। पार होकर कोई जंगलमें छिप रहा, कोई छावनीकी ओर चला, कोई मेटकाफ साहबके बंगलेकी ओर जाने लगा।*

यह ऊपर कहा जा चुका है कि पहाड़पर गोलघरमें बहुतसे अंग्रेज़ थे। गोलघरसे छावनी तक जितने अंग्रेज़ रहते थे वे सब उसी मकानमें आ गये थे। जो शहरकी ओर रहते थे उनमेंसे बहुतसे न आ सके थे, क्योंकि उन्हें समयपर समाचार ही न मिला। बहुतोंको देरसे खबर लगी। जिन्हें समयपर खबर मिल गई थी वे सब आ गये थे।† ब्रिगेडियर ग्रेव्स सिपाहि-

---

* Indian Empire, Vol II, P, 165

† Mutiny of Bengal Army, P. 40

योंकी चालें देख रहे थे। उन्होंने बहुत यत्न किया पर सफल न हुए। इस स्थानपर जो सिपाही थे उनके दिल भी बदल गये। जैसे जैसे शाम नजदीक आने लगी, वैसे ही विद्रोही सिपाहियोंसे मिलनेकी उनकी इच्छा भी बढ़ने लगी। पहाड़परसे तोपखानेके उड़नेका दृश्य दिखाई दिया था, अब वे स्थिर न रह सके। पर उन्होंने अपने सामनेके अंग्रेज़ोंको न मारा। अबतक वे शान्त थे। अंग्रेज़ और अंग्रेज़ स्त्रियां उनसे विनीत भावसे अपनी रक्षाके लिये प्रार्थना करती थीं। उनमेंसे कई स्त्रियोंके भयसे विह्वल और व्याकुल चेहरोंको देखकर उन्हें सन्तोष देते थे और उन्हें विश्वास दिलानेके लिये अपनी संगीन तक उतार देते थे। विपत्तिसे डरी हुई स्त्रियोंको किसी विशेष रक्षित स्थानोंपर पहुंचा देनेके लिये भी वे तैयार हुए।*

अंग्रेज़ अधिक समय तक गोलघरमें न रह सके। विपत्ति प्रतिपल बढ़ती जा रही थी। सिपाहियोंने तोपोंपर कब्जा करके सबको उड़ा देनेका इरादा किया। अब अंग्रेज़ोंके सामने आत्मरक्षाका कोई मार्ग न था। ब्रिगेडियरने जब सुना कि मेन गार्डके अंग्रेज़ मारे गये और बलवाई सिपाहियोंने अनेक स्थानोंपर कब्जा कर लिया तब उन्होंने सबको भागकर जान बचानेके लिये कहा। यदि ब्रिगेडियरने पहले यह बात कही होती तो सम्भव था वे बच जाते। जिस समय मेरठके सिपाही दिल्ली आये थे उसी समय यदि यूरोपियन कर्नाल चले जाते तो उनके

* Boll's Indian Mutiny Vol 1. P. 78.

प्राण बच जाते। परन्तु ब्रिगेडियरने सवेरे यह आज्ञा ही नहीं दी थी।* जब सूर्य डूब गया और ब्रिगेडियरको किसी तरहकी आशा न रही तब उसने कर्नाल जानेकी आज्ञा दी। अब कोई व्यवस्था न थी, जिसको जैसा सूझा उसने वैसे ही आत्मरक्षाकी तैयारी की। गोलघरके नीचे घोड़ागाड़ियाँ खड़ी थीं। अंग्रेज़ोंने अपने घरवालोंको इन्हीं गाड़ियोंमें बैठा दिया और जिसे जो कुछ ठीक मालूम हुआ वह उसी ओर रवाना हुआ। गाड़ी और घोड़ा न होनेके कारण कितने ही पैदल ही जाने लगे। जो सिपाही अबतक इनकी रक्षाके लिये खड़े थे उनसे इनके साथ जानेको कहा गया। जान बचाकर भागते हुओंके साथ जानेके लिये सिपाही तैयार न थे फिर भी उन्होंने आज्ञा मानी। थोड़ी दूर गये भी पर इसके बाद वे शहरकी ओर चल पड़े। सिपाहियोंने अब अफसरोंसे भी कह दिया कि अपनी जान बचाओ, क्योंकि बलवाई अब छावनीकी ओर आ रहे हैं, छावनी उनके हाथ चली जायगी, इसलिये अपने प्राण बचाओ। इस तरह कहकर उन्होंने अपने अफसरोंको होशियार किया और फिर बलवाइयोंसे मिल जानेके लिये शहरकी ओर चल पड़े। उन्होंने देखा कि सब सैनिक अंग्रेज़ोंके विरुद्ध हो गये हैं। सब अंग्रेज़ोंको अपना शत्रु समझ रहे हैं।

ब्रिगेडियर ग्रेव्सने अन्त समय तक छावनीकी रक्षा करनेका

---

* Indian Mutiny to the fall of Delhi, Editor of Delhi Gazette P. 17.

इरादा किया था। इसलिये उन्होंने मेजर ऐवटसे मेन गार्डकी दो तोपें भेजनेको कहा, पर मेजर ऐवट तोपें न भेज सके। मेजर ऐवटने तोपें न भेजनेके विषयमें कहा था—"मैं इस आज्ञा-पालनके लिये तैयार हुआ था पर उसी समय मेजर पिटर्सनने कहा कि मेरे चले जानेपर वे भी यहाँसे चली जायँगी। एक डिप्टी कमिश्नरने मुझे १५ मिनिट ठहरनेको कहा। ब्रिगेडियरके आज्ञापालनमें देर होनेकी संभावना कहकर मैं आपत्ति करने लगा। अन्तमें उसके विशेष अनुरोधसे मुझे १५ मिनिट ठहरना पड़ा। मैं मेन गार्डको छोड़नेवाला ही था उसी समय तोपें लेकर सिपाही वापिस आ गये। मैंने कारण पूछा। उन्होंने कहा कि गोलन्दाज तोप छोड़कर चले गये। मैंने पूछा कि 'विद्रोही सिपाहियोंने छावनीमें गोली चलाई या नहीं।' मेरे अर्दलीने कहा 'मैंने बन्दूककी आवाज सुनी है।' उसने मुझसे छावनीमें जानेका अनुरोध किया। मैंने अपने आदमियोंको लाइनमें खड़ा होनेकी आज्ञा दी। अर्दलीने कहा—"यह लाइनमें खड़ा होनेका समय नहीं, जल्दी यहाँसे जाओ।" इसका मतलब मैंने यह समझा कि अर्दली मुझे झटपट छावनीकी हिफाजत करनेके लिये जानेको कह रहा है। मैंने अपने सिपाहियोंको जानेकी आज्ञा दी। कुछ दूर आगे बढ़ते ही मेन गार्डकी ओर बन्दूककी आवाज़ सुनाई दी। पूछनेपर मालूम हुआ कि ३८ नं० सेना अंग्रेज़ोंपर गोली चला रही है। मेरे साथ १०० आदमी थे। मैंने इन सबको मेन गार्डके अफसरोंकी मददके लिये वापिस

जानेका हुक्म दिया। उन्होंने कहा—"अब समय नहीं रहा। वहाँ सब मारे गये। हम किसीको न बचा सकेंगे, हमने केवल आपकी रक्षा की है। अब मरनेके लिये आपको फिर वापिस न जाने देंगे।" यह कहकर सबने मुझे घेर लिया और झटपट छावनीमें ले आये। छावनीमें कुछ देर ठहरकर मैंने फ्लैग-टावरके ब्रिगेडियरके विषयमें पूछा पर कुछ पता न चला।*

उस समय अंग्रेज़ अफसरोंका काम कितना अस्तव्यस्त हो गया था, यह इस विवरणसे अच्छी तरह मालूम होता है। विपत्तिने जब भयानक रूप धारण किया तब तरह तरहकी चिन्ताओंसे अंग्रेज़ोंकी बुद्धि चकरा गयी थी। वे किसी बातको पूरा ध्यान देकर सोच भी नहीं सकते थे। जिस समय गोल-घरसे सबको जान बचानेके लिये भागनेकी आज्ञा दी गयी उस समय कई अंग्रेज़ स्त्रियोंने यह कहकर भागनेसे इनकार किया कि जबतक उनके पति वापिस न आजायँगे तबतक वे न जायँगी। सवेरेसे उन्होंने उनकी शकल भी न देखी थी।† पर जब रात हो गई तब ३८ नं० सेनाके कप्तान टाइटलरने सबको भागनेकी आज्ञा दी। अंग्रेज़ स्त्रियाँ, बच्चे, ईसाई जो कोई जीते बचे थे वे सब अपनी अपनी जान बचानेके लिये भागे। भागते समय इनकी दुर्दशाका अन्त न था। जंगलों और झोलोंमें ये लोग किस प्रकार छिपे, अन्न और जलके बिना किस तरह ये लोग

* Boll's Indian Mutiny, Vol, I, P. 106-110.

† Martin's Indian Empire: Vol II P. 163,

भूख प्याससे तड़पे, कोमलांगी अंग्रेज़ स्त्रियां और सुकुमार बच्चे किस तरह बिछुड़ बिछुड़कर संकटोंमें पड़े, इनके कोमल कपड़े किस प्रकार कांटोंसे फट फटकर चीथड़े हो गये, शरीर किस तरह लहूलुहान हो गये, प्रचण्ड गर्मीमें जंगलोंमें इन्हें कितनी यातनायें भोगनी पड़ीं, यह सब बातें अंग्रेज़ इतिहास-लेखकोंने बड़े दुःखके साथ लिखी हैं। इन भागनेवालोंमेंसे अनेक बड़ी बड़ी विपत्तियाँ झेलकर कोई मेरठ, कोई अम्बाला और कोई कर्नाल पहुंचा। चल न सकनेके कारण कोई कोई अपने साथियोंसे पीछे रह गया। वह किस किस तरह आपत्तिमें पड़ा और अन्तमें जान खो बैठा, इसका सब वर्णन बड़ा ही करुणापूर्ण है।

जिस समय धर्मरक्षाके नामपर सिपाही मदमत्त होकर पागल हो गये थे, जिस समय एक अंग्रेज़की जान लेना, एक यूरोपियनको मारना वे अपना गौरव समझते थे, जिस समय बाजारके लोग भी उत्तेजनासे भड़ककर विद्रोहियोंके साथ होकर लूट मार करने और आग लगानेका भयानक कांड कर रहे थे, जिस समय प्रलयका ताण्डवनृत्य हो रहा था, उस समय बहुतसे स्थानोंपर दया, सहानुभूति और करुणाके उदाहरण भी घट रहे थे। दिल्ली और दूरके भागे हुए अंग्रेज़ोंकी बहुतोंने सहायता की। अगर ये लोग सहायता न करते, इनके हृदयोंमें दया न होती, तो शायद अपनी कथा सुनानेके लिये एक भी अंग्रेज़ न बचता। जब गोलघरसे अंग्रेज़ भागे तब बहुत

से गाड़ीवान उन्हें अपनी गाड़ियोंमें बैठाकर बस्तियोंसे दूर छोड़ आये जिससे कोई इन्हें देखने न पावे। बहुतसे हिन्दुस्तानियोंने अपनी जान हथेलीपर लेकर अंग्रेज़ोंको अपने घरमें छिपाया। एक दर्जीने पांच अंग्रेज़ोंको छिपा लिया।* इसी तरह और दिल्लीवालोंकी मददसे कई अंग्रेज़ छिप छिपकर घरोंमें रहे। इस समय दिल्ली कालेजमें एक प्रोफेसर रामचन्द्र थे। यह ईसाई हो गये थे, इस कारण सहजमें ही विद्रोहियोंकी नजर इनपर पड़ी। यदि इनका नौकर बुधसिंह अपने घरमें जगह देकर इन्हें न बचाता तो इनके प्राण न बचते। प्रोफेसर मामूली कुली-की पोशाकमें शहरसे धीरजकी पहाड़ीकी तरफ भागे। वहांसे वे अनेक विघ्नोंसे अपनी रक्षा करते छावनी पहुँचे।† दिल्लीमें वाजिद अली नामक एक मुसलमान ईसाई था। इसकी स्त्रीका नाम फातिमा था। जब यह लोग बालबच्चों सहित भाग रहे थे तब सबने उन्हें घेर लिया। उस समय सिपाहियोंमेंसे एकने कहा कि, इसे जाने दो, इसका बाप पक्का मुसलमान था और वह हज करने मक्का गया था। यह पैसेके लोभमें पड़कर ईसाई हो गया है।‡ सिपाहियोंकी आस्ता अपने धर्ममें कितनी थी यह

* Martin's Indian Empire, Vol. II. P. 174, Boll's Indian Mutiny Vol. I. P. 105.

† The Rev. Shering's the Indian church during the great Rebellion P. 67-68.

‡ Ibid P. 51.

इसी बातसे मालूम होती है। हम शुरूसे लिखते आ रहे हैं कि अपने धर्मका नाश होनेके डरसे ही सिपाही बिगड़े थे। अन्तमें वे अंग्रेज़ोंके खूनके प्यासे बन गये। फातिमाने खुद स्वीकार किया है कि वह तीन दिन तक अपने बालबच्चोंके साथ मिर्ज़ा हाजी नामक एक राजपरिवारके आदमीके घर रही। इसके बाद यह घोषणा हुई कि जो कोई ईसाइयोंको शरण देगा वह जानसे मारा जायगा। इसलिये बाध्रित होकर फातिमाको दूसरे स्थानपर जाना पड़ा। अंग्रेज़ सरकारने एक समय बेगम जिन्नतमहल-को नाराज किया था, पर इस मौकेपर बेगमने ५० अंग्रेज़ोंको अपने महलमें छिपाकर रक्खा। वह हर तरहसे शरणागतोंकी जान बचाती रहीं। पर जब बलवाई सिपाही किलेमें घुस आये तब बेगम क्या करतीं? लाचार थीं। इस प्रकार अनेक भारत-वासियोंने विपत्तिके समय अंग्रेज़ोंके प्राण बचाये। किसी किसीने दयासे उनकी जान बचाई, उन्हें छिपाकर घरमें रक्खा, किसी-की जान अपने नौकर या नौकरानीकी दयापर बची, किसी-की दूसरोंके मदद देनेपर बची।* दिल्ली शहरमें जैसे लोगोंने सहृदयता, करुणा और दयाका परिचय दिया वैसे ही दिल्लीके बाहरके गांववालोंने भी दिया। भागे हुए अंग्रेज़ बलवाइयोंसे बहुत सताये गये थे, पर गांववालोंकी सहानुभूति और दया देखकर उनको शान्ति और प्रसन्नता भी थी।

३८ नं० सेनाके एक अफसरने अपने भागनेकी कहानी इस

* Indian Empire, Vol. II. P. 161.

प्रकार लिखी है—"मैं झटपट भागनेकी कोशिश करने लगा। सिपाहियोंने अफसरोंसे भागकर जान बचानेको कहा। बल्कि सिपाहियोंने अपने घरोंमें अफसरोंको रखकर उनकी जान बचानी चाही थी। पर हम चले—चले क्या दौड़े और थककर एक पेड़के नीचे बैठ गये। कुछ मिनिट सुस्ताकर फिर चले। इस समय चन्द्रमा ऊग आये थे। पीछे छावनीमें आग लग रही थी। रातमें भी उस आगसे दिनकी तरह उजाला हो रहा था। सारी रात हमने इसी तरह बिताई। पास ही एक मिट्टीका बना टूटा हुआ घर था। हम सब दिन निकलते ही उसमें जा छिपे। इस समय कई ब्राह्मण अपने अपने कामपर जा रहे थे। हमें ऐसी भद्दी जगह छिपते देखकर वे आग्रहसे अपने गांवमें ले गये। उन्होंने हमें रोटी और दूध खानेको दिया। कुछ देर बाद उनकी सहायतासे हमने यमुनाकी एक शाखा पार की। रास्तेमें हमें गूजर मिले। उन्होंने हमारी और भी बुरी हालत की। दूसरोंके दुःखसे दुःखी होनेवाले ब्राह्मणोंने फिर हमारी सहायता की। वे हमें पास ही भीका नामक गांवमें ले गये। सोनेके लिये हमें खाटें दीं। हमारे सामने रोटी और दाल रक्खी। पढ़े लिखे न होनेपर भी गांववालोंने हमसे बड़ी दयाका व्यवहार किया। पर एक विद्रोही दल न मालूम कहांसे आ गया। उसने हमारी फिर मिट्टी खराब की। इस समय एक संन्यासीने हमपर दया की। उसने हमें अपने घरमें छिपा कर रक्खा। दिल्लीसे चलनेके दो दिन बाद एक हिन्दुस्तानी हमारी खबर मेरठ लेजानेके लिये

तैयार हुआ। फ्रेंच भाषामें एक पत्र लिखकर हमने इस आदमीको दिया। दो दिन बाद हम हरचांदपुर नामक स्थानपर पहुंचे। एक बूढ़ा जर्मन यहांका जमींदार था। इसका नाम फ्रैंसिस कोहेन था। ८५ वर्षकी इसकी अवस्था थी। बूढ़ेने हमें अपने घरमें शरण दी। आरामसे हम दो दिन रहे। इसके बाद मेरठसे दो फौजी अफसर और तीस सवार हमारी सहायताके लिए आये। यह अब तक विश्वासपात्र थे। यह सवार कप्तान ग्रेगरीकी ३ नं० सेनाके थे।* हमारे पत्रको पातेही ये लोग सहायताके लिए आये थे, इन्हें ४० मीलका सफर करना पड़ा था। दिल्लीसे भागनेके आठवें दिन हम मेरठ पहुंचे।"

३८ नं० सेनाके डाक्टर वुड साहब अपनी स्त्री और एक अन्य अंग्रेज़ महिला (लेफ्टिनेंट पिली नामक अंग्रेज़ अफसरकी स्त्री) के साथ भागे। डाक्टरके मुंहपर गोली लगी थी, इससे उनका गाल फट गया था। यह लोग कम्पनीबागमें जाकर छिपे। बागवालोंने इन्हें बैठनेके लिये खाट दी, इन्हें अपनी झोंपड़ीमें छिपा रखा। पर एक विद्रोही दलने इनकी गाड़ी तोड़ दी। घोड़ा खोलकर ले गये। यहाँ अधिक न ठहरकर यह लोग भागे। ११ मईकी रातको तीन बजे यह लोग एक गाँवमें पहुंचे। गांववालोंने इन्हें खानेको दूध रोटी और सोनेको खाट दी। गांवका चौधरी एक बूढ़ा हिन्दू था। ये लोग खुले मैदानमें पड़े थे। सिपाहियोंके आतङ्कके डरसे चौधरीने

* Martin's Indian Empire. Vol II P. 167-168. note.

इन्हें गोशालेमें छिपनेकी सलाह दी। पशु जंगलमें चरने चले गये थे। यह लोग चौधरीकी गोशालामें जा छिपे। थोड़ी देर बाद एक औरतने आकर इन्हें चुपचाप रहनेको कहा क्योंकि गांवमें भी कुछ सिपाही आ चुके थे। पहले इन्होंने समझा कि स्त्री यों ही डरा रही है, पर बात सच थी। ये जहाँ छिपे थे वहीं एक सिपाही आगया। यह सिपाही अपनी चीजें दूसरे स्थानपर ले जानेके लिये चौधरीकी गाड़ी लेने आया था। चौधरीने जरा भी देर किये बिना सिपाहीको गाड़ी दे दी। सिपाही चला गया। यदि चौधरी ऐसा न करता तो सिपाहियोंको अंग्रेज़ोंका पता लग जाता। शीघ्र ही चौधरीने इन अंग्रेज़ोंको भी बिदा किया। चलते समय गांववालोंने इन्हें रोटियाँ और पानी दिया। यह लोग रास्ता न जानते थे इसलिये एक नौजवान थोड़ी दूरतक उन्हें रास्ता दिखा आया। बहुत सी विघ्नबाधाओंको पार करते यह लोग रातको चार बजे फिर एक गांवमें पहुंचे। गांवके किनारे एक पेड़के नीचे सुस्ताने लगे। सवेरे एक बूढ़ा हिन्दू कामपर जा रहा था। इन्हें संकटमें पड़ा देखकर उसे दया आई और उसने इन्हें अपने घर ले जाकर दूध रोटी खिलाई। डाक्टरका घाव धोनेके लिये इस दयालु बूढ़ेने पानी गर्म करके दिया। पासके गांवमें एक ब्राह्मण था, उसने सुना कि आपत्तिके मारे अंग्रेज़ दूसरे गांवमें आये हैं। वह अपने साथियों सहित इन्हें देखने आया। डाक्टरका मुंह फट गया था इस कारण उससे दूध भी न पिया जाता था। इस दयालु ब्राह्मणने पतले बांसकी नली

बनाकर अपने हाथसे डाक्टरको दूध पिलाया। इस प्रकार भारतके गांवमें वहांके निवासियोंके साथ यह लोग दिनभर रहे। अन्तमें गांववाले यह आशंका करने लगे कि जो कहीं दिल्ली-के सिपाहियोंको मालूम हो गया तो वे आकर आग लगा देंगे। इसलिये बूढ़ेने अंग्रेज़ोंसे दूसरे स्थानपर जानेको कहा। अंग्रेज़ोंको कष्टमें डालनेकी बूढ़ेकी इच्छा न थी, बल्कि वह सिपाहियोंके डरसे ऐसा कह रहा था। दिनभर बड़े ज़ोरकी धूप और लू चल रही थी। अंग्रेज़ घबरा गये थे। ऐसी दशामें घायल डाक्टरको लेकर अनजान रास्तेपर चलनेकी दोनों मेमोंकी हिम्मत न पड़ी। गांवके एक दूसरे आदमीने इस मौकेपर आश्रय देकर इनकी सहायता की। उसने एक छोटे घरमें दो बिछौने बिछाकर इनसे सोनेको कहा। जब रात हो गई तब यह लोग फिर आगे चले। इन्हें चलते २ पांच दिन हो गये थे पर दिल्लीसे दस मील दूर भी वह लोग न जा सके। दूसरे दिन रातको दो बजे फिर ये लोग दूसरे गांवमें पहुंचे। इस गांववालेने भी इन्हें अच्छी तरह रक्खा। गांववालोंसे जहाँ तक हो सका इनके साथ भलाई और दयाका व्यवहार किया। यह लोग जो चीज मांगते वही गांव-की स्त्रियां झट ला देतीं। ठंढे पानीसे इन्होंने उनकी प्यास बुझाई। मेमोंने डाक्टरका मुंह धोनेके लिये एक बर्तन मांगा, हिन्दू देवियोंने झट ला दिया। इनके खानेके लिये वे अच्छे २ शाक, सब्ज़ी, दूध, दही और रोटियाँ बनाकर लाईं। मेमोंने कहा था कि दिल्ली छोड़नेके बाद हमें ऐसा स्वादिष्ट भोजन नहीं

मिला। यहाँसे चलकर ये लोग बलगढ़ नामक गांवमें पहुंचे। वहाँकी स्वामिनी एक रानी थी। रानीने इन विपत्तिग्रस्त पुरुषोंको अपने घरमें स्थान दिया, इनके खानेको उत्तम भोजन बनवाया। सन्तुष्ट होकर इन्होंने वहीं रात बिताई। उसी समय एक ओरसे मेजर पिटर्सन और दूसरी ओरसे लेफ्टिनेंट पिली भी बलगढ़पहुंचे। अपनी स्त्रीको जीती देखकर पिलीके आनन्दकी सीमा न रही। सबने प्रसन्नताके साथ यहांसे आगेकी राह ली।

इस समय डाक्टर वुडमें चलनेकी शक्ति न थी। घावके पीड़ाके कारण वे शक्तिहीन हो गये थे। इस मौकेपर रास्तेके कुछ दरिद्र मजदूरोंने अपनी सहायता और दया दिखाई। यह लोग शक्तिहीन डाक्टरको उठाकर एक गांवसे दूसरे गांव ले गये। दरिद्र और निरक्षर लोगोंने भी विपत्तिमें पड़े हुओंपर दया की। वे लोग यह भी जानते थे कि इनकी मदद करनेसे विद्रोही सिपाही उन्हें न बचने देंगे, यह भी आशा न थी कि अब फिर अंग्रेज़ोंका राज्य होगा, फिर भी विपत्तिमें पड़े हुओंकी ग्रामीण लोगोंने सहायता ही की। इस प्रकार हरगांवमें सहायता पाते, दयाका मनोहर दृश्य देखते, अंग्रेज़ लोग कर्नाल पहुंचे। इनकी विपत्तिका समाचार सुनकर पटियालाके महाराजने ४० सवार सहायताके लिये भेजे। सवार शीघ्रही इनके पास पहुंचे।*

---

* Indian Empire, Vol II. P. 168. Indian Mutiny to the fall of Delhi P. 20.

७४ नं० सेनाके डाक्टर वाट्सन हिन्दुस्तानी भाषा अच्छी तरह बोल सकते थे, यह ऊपर ही कहा जा चुका है। एक संन्यासीने डाक्टरको घोर विपत्तिमें पड़ा देखकर, उन्हें दादूपन्थी साधुके वेषमें सजाया। इसने डाक्टरके कपड़े रंग दिये और गलेमें रुद्राक्षकी माला डाल दी। इस संन्यासीने डाक्टरकी जान बचानेके लिये उसे इस वेषमें सजाया। इस तरह डाक्टरने २५ दिनतक इधर उधर छिपकर अपनी जान बचाई। एक आदमीने साफ कहा था कि—"तुम संन्यासी नहीं हो। तुम्हारी नीली आखें साफ कहती हैं कि तुम अंग्रेज़ हो।" सब हिन्दुओंने पहचानकर भी डाकृरके साथ कोई बुरा व्यवहार नहीं किया।* एक बूढ़े हिन्दूने एक असहाय मेम और उसके बच्चोंको बहुत दिन अपने घरमें छिपाकर रक्खा। सिपाहियोंके डरसे यह वृद्ध मेम और उसके बच्चोंको एक गांवसे दूसरे गांव ले गया और वहाँ छिपाकर रक्खा। वहाँ भी जब सिपाहियोंके आनेका सन्देह हुआ तब यह बूढ़ा उन्हें तीसरे स्थानपर ले गया।† भारतवासियोंने पद पदपर केवल मनुष्यत्व और दयाके नातेसे अंग्रेज़ोंकी सहायता की। इस काममें उन्होंने अपनी जानकी भी परवा न की। मेरठके कमिश्नर ग्रिथेड साहबने लिखा था—"दिल्लीसे जितने भागे हुए अंग्रेज़ आये उन सबने स्वीकार किया है कि अनेक

---

* Indian Empire, Vol II P 169. Comp. Boll's Indian Mutiny Vol. I. P. 97.

† Indian Mutiny to the fall of Delhi P. 20.

लोगोंने स्थान स्थानपर उनकी सहायता की, उन्हें आश्रय दिया, उनके साथ भला बर्ताव किया। एक संन्यासीको यमुनामें बहता एक अंग्रेज़ बच्चा मिला उसे वह मेरठ ले आया। उसे जब हम इनाम देने लगे तब उसने न लिया और कहा कि अगर मुझे कुछ देना ही है तो एक कुआं रास्तेपर खुदवा दे।"* कप्तान हेलैंड नामक एक सैनिकने लिखा है कि—"मैं जिस गांवमें पहुँचा उसमें दूध न होनेके कारण पल्टू नामक एक आदमीने दूसरे गांवसे जाकर दूध ला दिया।" इसके बाद लिखा है—"मैं जमनादास नामक एक ब्राह्मणके घर छः दिन तक रहा। मकानमें जो घर सबसे अच्छा था वही ब्राह्मणने मेरे लिये खाली कर दिया। उसे जो अच्छीसे अच्छी खानेकी चीज मिलती थी वह मेरे लिये लाता था।"† एक अंग्रेज़ डिप्टी कमिश्नरकी स्त्री जब दिल्लीसे भागी तब दो विश्वस्त चपरासियोंने उसकी विशेष सहायता की। एक चपरासी तो अजमेरी दरवाजा पार होते २ बलवाइयोंके हाथसे मारा गया। दूसरा मेमके साथ २ घूमता हुआ उसे निरापद स्थानपर ले गया।‡ जो अंग्रेज़ मेरठ न जाकर अम्बालाकी ओर भागे थे उन सबकी कर्नालके नवाबने विशेष सहायता की। दिल्लीके जज वग साहब जब भागकर कर्नाल पहुँचे तब नवाब

* Indian Empire Vol. II. P. 169,

† Kaye's Sepoy War, Vol II, P. 98 note.

‡ Boll's Indian Mutiny, Vol I P. 100. Indian Empire, Vol II, P 169.

ने उनसे कहा कि—"वर्त्तमान गदरकी बातें सोचते हुए मुझे रातको नींद नहीं आती। मैं आप लोगोंकी मददके लिये तैयार हूं; मेरी तलवार, मेरी सब सम्पत्ति और सब नौकर आपके लिये हैं।" नवाब साहबकी यह बात केवल ज़बानी ही न थी, उन्होंने पंजाबी सेनाके अनुकरणपर सौ सवार सहायताके लिये रक्खे।‡ इस मौकेपर अनेक हिन्दुस्तानी अंग्रेज़ोंकी सहायताके लिए तैयार हुए थे और बहुतोंने दया और अनुग्रहके विचारसे सहायता की थी। दरिद्र ग्रामवासी कुली, मजदूर, धनी, राजा, रईस सब दर्जेके लोगोंमेंसे सहायता करनेवाले खड़े हुए थे। मामूली झाड़ू देनेवाले भंगियोंतकने सहायता की थी। इन लोगोंने अपने घर, मुहल्ले और गांवको विपत्तिमें डालकर भी सहायतासे मुंह न मोड़ा। यदि ऐसे भयंकर समयमें भारतवासी सहायता न करते तो अंग्रेज़ लोग रक्षित स्थानोंतक पहुँच ही नहीं सकते थे। जिस समय कोमलांगी अंग्रेज़ महिलाएं और छोटे २ बच्चे प्राणोंके भयसे छिप छिप कर भागे, दरख्तों झाड़ियों, खंधकों और टूटे मकानोंमें छिप छिप कर दिन बिताते और अन-जान जंगलोंमें भटकने लगे, कांटोंसे छिद छिदकर लहूलुहान होने लगे, बैशाखकी गर्मीसे तड़पने लगे, खाने पीनेके दुःखसे बिलखने लगे, घावोंसे घायल हुए, अपने मरे हुए स्वजनोंके विरह-दुःखसे रोने लगे, उस समय यदि भारतके दरिद्र और नीचे

‡ Indian Empire, Vol II P 169-170

दर्जोंके आदमी उनकी सहायता न करते तो उन्हें उन्हीं जंगलोंमें तड़प तड़पकर प्राण छोड़ देने पड़ते।

ऊपर यह कहा जा चुका है कि हिंसा और क्रोधके कारण सिपाहियोंको भले बुरेका ज्ञान न था। साथ ही जो जोशीले आदमी इनके साथ हो लिये थे उनकी भी भविष्यपर दृष्टि न थी। उस समय वे अंग्रेजोंके नाशके लिये तुले हुए थे। सब जोशमें पागल हो गये थे। हिंसा उनके सामने थी। दिल्लीके बहुतसे अंग्रेज अपने बालबच्चोंको लेकर दूसरे स्थानोंपर चले गये थे, फिर भी बहुतसे अंग्रेज़ और ईसाई शहरमें थे। यह लोग उस समय दरियागंजमें रहते थे। जब इन्होंने ११ मईको सवेरे ही सुना कि मेरठके विद्रोही सिपाही पुल पार कर रहे हैं, तब सब एक पक्के मकानमें एकत्र हो गये। पर आखिर जब यह घर जल गया तब सबने भागकर बादशाहके किलेमें आश्रय लिया। वहाँ पांच दिन ये लोग रहे। पर १६ मईको इन सबकी जीवन-लीला समाप्त हो गई।* सिपाहियोंकी तलवारों, बन्दूकों और संगीनोंसे इनके प्राणपखेरू उड़ गये, एक भी जीता न बचा। अंग्रेज़ सरकार कड़ाईसे राज्य कर रही थी। एक एक स्वाधीन हिन्दुस्तानी राज्यको उसने अपने वश कर लिया था, एक देशके बाद दूसरा देश अपने हाथमें कर लिया था। उस कड़ी राजनीतिने सिपाहियोंको इतना कठोर बना दिया था कि उन्होंने खूनकी होली खेलकर ही इसका बदला लिया। सरकारने न्याय

* Kaye's Sepoy War. Vol. II. P. 99-100.

और शासनका नाम ले लेकर धीरे धीरे जो कड़ाई की थी उन सबका बदला सिपाहियोंने एक ही बार ले लिया। इन लोगोंमें ज्ञान न था, कोई इनका लीडर भी न था, इनका काम किसी नेतृ-बुद्धि द्वारा परिचालित न था। उनमें केवल हिम्मत, उत्साह और काम करनेकी शक्ति थी, पर सोचनेवाला मस्तिष्क न था। जब इन्हें अपनी जाति और धर्मके नाश होनेकी आशंका हुई, अंग्रेज़ोंको उन्होंने अपने धर्म और जातिका संहारक समझा, तब वे अपनी शक्तिसे अंग्रेज़ोंके प्राण लेनेके लिये उठ खड़े हुए। उनकी अन्तरात्मा इतनी कठोर हो गई कि दया और करुणा उनके दिलसे निकलकर भाग गई। केवल खून उनकी आंखोंके सामने दीखने लगा। उनमें एकता हो गई थी, एक आवाजमें एक सेना उनके साथ हो जाती थी। वे यह भी जानते थे कि अंग्रेज़ इसका बदला लेंगे। पर यह जानकर भी वे स्थिर न रह सके। कम्पनी और अंग्रेज़ जातिका निशान इस भूमिसे मिटा देनेके लिये उनमें राक्षसी बल आ गया। उन्होंने निर्भय, निर्विकार चित्तसे तलवार लिये हुए आत्मसम्मान और आत्मजीवनका उत्सर्ग किया।

उस जमानेके अखबारोंमें अनेक लोमहर्षण घटनाओंका विवरण है। मेमोंपर घोर अत्याचार और पाशविकताकी बातें लिखकर अंग्रेज़ोंने सबको चौंका दिया था। अंग्रेज़ स्त्रियों और कुमारी युवतियोंपर लोगोंने किस प्रकार बलात् पशुबलका प्रयोग किया, सरलतामयी युवतियां किस तरह दुर्दशाग्रस्त

हुईं, शरीरकी दुर्गति करके वे छुरोंसे किस तरह तड़पा तड़पा कर काटी गईं, यह सब विवरण उस समयके अखबारोंमें निकले थे। वे आज भी सहृदय पाठकोंके हृदयोंमें क्रोध, क्षोभ और घृणा पैदा करते हैं। इन लेखकोंने बहुत स्थानोंपर अपनी मोहमयी कल्पनाका सहारा लेकर, जोशमें पागल होकर ऐसे चित्र खींचे हैं जिनसे पढ़नेवालोंके हृदय घृणासे भर जायँ। एक सहृदय अंग्रेज़ इतिहासलेखकने लिखा है—"स्त्रियोंपर पाशविक अत्याचार होनेकी बातें बाजारकी अफवाहोंसे ली गई थीं या बिलकुल नीची श्रेणीवालोंका वर्णन था। यह लोग जानते थे कि बातें जितनी ही नमक मिर्च लगाकर कही जायंगी उतना ही सुनने-वालोंके दिल उनकी ओर आकृष्ट हो जायंगे। उस समयके ऊंचे दर्जेके और समझदार आदमियोंके मुंहसे इस तरहकी बातें नहीं सुनी गई थीं। छोटे आदमियोंके मुंहसे जो बातें सुनकर बादमें लेखकोंने लिखीं या छापीं वे सब गप ही थीं। स्वयं शैतान भी उन बातोंको करनेमें झिझकेगा। अंग्रेज़ स्त्रियों-पर जिस तरहके बलात्कार या अत्याचार होनेकी बातें कही गई हैं वे किसी ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्यसे तो हो ही नहीं सकतीं, क्योंकि, अंग्रेज़ोंको वे स्वयं अछूत समझते थे। उन्हें अपनी जाति और वर्णका विचार था। इसके अतिरिक्त हिन्दू जातिका पवित्र चरित्र और धार्मिक अभिमान ऐसा था कि उसके कारण उनसे ऐसा हो ही नहीं सकता था। गूजर

लूट मार करते थे, धन छीनते और जानसे भी मार डाल देते थे पर इसके बाद उन्होंने ऐसा नहीं किया। अंग्रेज़ स्त्रीकी अंगूठी लेना बड़ा पाप समझा जाता है, इससे उसका विवाह टूटा हुआ समझ लिया जाता है। जब यह बात मालूम हुई तब गूजरोंने अंगूठीतकको हाथ नहीं लगाया। मुसलमानोंकी बात दूसरी है। उनकी कुरानमें चाहे जो लिखा हो, पर जिस समय उन्होंने यूरोपके शहरोंको जीता था उस समय वे सभी अत्याचार किये थे। दिल्लीके उस भयंकर समयमें भी उनके अत्याचार बड़े भयानक थे। हिन्दू सिपाहियोंको अंग्रेज़ोंसे दुश्मनी थी इसलिये उन्होंने हथियारसे अंग्रेज़ोंकी जानें लीं, अंग्रेज़ स्त्रियों और बच्चोंतकको उन्होंने नहीं छोड़ा, अंग्रेज़ों-के मकानोंको जलाया, पर जानवरोंकी तरह स्त्रियोंपर उन्होंने जबर्दस्ती नहीं की। पर मुसलमानोंने लूट की, अपने परायेको लूटा, आग लगाई। अगर किसी अंग्रेज़ स्त्रीपर जबर्दस्ती हुई हो तो वह मुसलमानों द्वारा।"*

इसके बाद अंग्रेज़ोंके अत्याचारोंका भी विवरण है। ईसा-इयोंके अत्याचार कम नहीं हुए। इनके ज़ुल्मोंसे यूरोपके सुन्दर नगरोंका ही नाश नहीं हुआ, बल्कि इसी ग़दरके ज़मानेमें इनके अत्याचार भी इतिहासके हृदयपर अमर हैं। दिल्लीमें ग़दर होनेके बाद इन्होंने कम अत्याचार नहीं किया। अंग्रेज़ोंने रास्तेमें सात नम्बरदारोंको फांसी दे दी, चार गांवोंमें आग लगा दी।

* Martin's Indian Empire, Vol II. P. 172-173.

इन्हें यह शक हो गया था कि इन गांवोंमें अंग्रेज़ स्त्रियाँ मारी गई हैं।* एक सेनापति नील जब इलाहाबादसे चला तब वह गांवके गांव साफ करने लगा, उसके सिपाहियोंने अन्तमें कहा कि, फिर आदमियोंका मिलना कठिन हो जायगा।† अंग्रेज़ फौजियोंने निरस्त्र आदमियोंको गोलीसे मारा, हिन्दुओंके पवित्र मन्दिरोंको नाश किया। और तो क्या, शरण आये हुए बच्चेतकको जान ली।‡ इन सब बातोंका वर्णन इसी ग्रन्थमें आगे चलकर मिलेगा। दिल्लीसे भागे हुए अंग्रेज़ोंमेंसे एक किसी गांवमें पहुँचा। उसने वहाँके आदमियोंसे कहा कि जो मुझे जगह न दोगे तो तुम्हें गोलीसे मार दूंगा।¶ भागे हुए आदमीने भोले गांववालोंसे यह प्रेम दिखाया था! क्रोधसे पागल होकर ईसाइयोंने भी इस समय कुछ उठा न रक्खा था। बाजारू बातोंमें नमक मिर्च मिलाकर, खूब बढ़ा बढ़ाकर इन्होंने अखबारोंमें लिखना शुरू किया कि—गोरी स्त्रियोंपर जानवरोंकी तरह जबर्दस्ती की गई, इनके शरीरोंकी दुर्गति की गई इत्यादि।

अंग्रेज़ोंसे दिल्ली बिलकुल खाली हो गई थी। १६ मईको एक भी अंग्रेज़ दिल्लीमें न रहा। मुगल बादशाहकी राजधानी अंग्रेज़ोंसे शून्य हो गई। सिपाहियोंने बूढ़े बादशाहको दिल्लीका

* Boll's Indian Mutiny, Vol I. P. 106

† Russel's Diary Vol I. P. 222.

‡ Ibid P. P. 219, 220, 222, 348.

¶ Martin's Indian Empire, Vol II. P, 164.

कर्त्ता विधाता स्वीकार किया। अंग्रेज़ मेरठमें हारे और दिल्लीमें उनकी अतीव दुर्गति हुई। सिराजुद्दौलाके हमलाके बाद अंग्रेज़ों-की ऐसी दुर्गति कभी नहीं हुई थी। उन्होंने अपने भाइयोंको अपनी आंखों मरते देखा, अपने शासन और राजशक्तिको छोड़कर वे नंगे बदन और नंगे पैर जान लेकर भागे। विद्रोही सिपाही और उत्तेजित मुसलमानोंने बादशाहके नामपर उनकी यह दुर्दशा की। बादशाह बीमार थे, चल फिर भी नहीं सकते थे कुछ करना तो दूर रहा, पर उनके नामसे ही लोगोंमें वह जोश आ गया कि उन्होंने कठोर अंग्रेज़ शासनको भी तिनकेकी तरह उड़ा दिया। मुग़ल बादशाहका आदर लोगोंके दिलोंमें ऐसा घर कर गया था, कि प्राचीन गौरव और सम्मानकी यादने सबके हृदयोंमें साहस और शक्तिका संचार कर दिया था। मेरठके आगे आनेवाले सवारोंके घोड़ोंकी टापें जिस वक्त यमुनाके पुलपर पड़ीं तभीसे अंग्रेज़ोंका नाश होने लगा। उसी समयसे मानों सर्वसंहारक कालदूतने दिल्लीके यूरोपियनोंको बुलाया। सुबहसे शामतक वे मेरठसे गोरी सेना आनेकी आशा कर रहे थे। जब शामतक सेना आनेके कोई लक्षण न दीखे तब वे रातको अंधेरेमें जान बचानेके लिये भागे।

कहा जाता है कि दरियागंज इन विद्रोही सिपाहियोंका निवास बना। चांदनी चौक और दूसरे बाजारोंकी सब दूकानें बन्द हो गई थीं। इस तरह पांच दिन लगातार हड़ताल रही। आखिर बादशाह हाथीपर बैठकर निकले और सबसे दूकान

खोलनेको कहा। बादशाहने सिंहासनपर बैठनेसे इनकार किया था, पर सिपाहियोंने कहा कि पेशावरसे कलकत्तातक हर-जगहके अंग्रेज़ इसी तरह मारे गये, अब आप ही हमारे बादशाह हैं। आखिर बादशाह तख़्तपर बैठे।* यह कहनेकी जरूरत नहीं कि इस समय बूढ़े बहादुर शाह सिपाहियोंके अधीन थे। वे यह जानते थे कि इस मौकेपर सिपाहियोंकी बात न माननेसे जीवन विपत्तिमें पड़ जायगा, और कोई उपाय न देखकर उन्होंने सिपाहियोंके कहनेके अनुसार काम किया। सिपाहियोंने सिंहासनपर बैठाकर भारतके स्वाधीन सम्राट्की घोषणा की। कहा जाता है कि बहादुर शाहने शहरके महाजनोंको बुलाकर कहा था कि वे बलवाई सिपाहियोंकी किसी जरूरतको पूरा न करेंगे तो उनके हाथसे मारे जायंगे। महाजनोंने सिपाहियोंको बीस दिन तक दाल रोटी देनेका वादा किया, पर सिपाही इससे खुश न हुए इसलिये यह ठहरा कि हरएक सवारको रुपया रोज और पैदल सिपाहीको चार आना रोज दिया जाय। विलोबीने मेग-जीनका एक हिस्सा उड़ाया था बाकी सब बच गया था। इसमें गोले, गोली, बारूद और तलवारें थीं। यह सब सिपाहियों और बलवाइयोंके हाथ लगीं और वे इसे बाजारमें बेचने लगे।†

दिल्लीकी घटनाके विषयमें मेजर ऐबटने लिखा है—"मैंने

* Martin's Indian Empire. Vol. II P. 174.

† Martin's Indian Empire. Boll's Indian mutiny Vol. 1. P. 72.

जहाँ तक देखा, वहांतक मुझे यही मालूम हुआ कि दिल्लीके राजमहलमेंसे इस ग़दरका पौदा पैदा हुआ था। बादशाहने अपनी बादशाहत जमानेके लिये लोगोंको आश्रय दिया था। उन्होंने आसपासके राजा नवाबोंसे मददकी प्रार्थना भी की थी। अंग्रेज़ सबका धर्मनाश करते हैं, यह अफवाह उड़ाकर उन्होंने ३८ नं० सेनाको अपने दलमें मिला लिया था। इस सेनाने उत्ते-जित होकर ५८ और ७४ नं० सेनाओंको बलवाई बनाया। उन्हों-ने डर दिखाया था कि यदि यह सेना उनके साथ न मिली तो उसे समूल नाश कर देंगे। डाकखाना, टेलीग्राफ, बंक, दिल्ली-गजटका छापखाना और छावनीके सब घर जलाये गये थे। जो जिस हालतमें था वह उसी दशामें जान लेकर भाग निकला, किसीको कपड़े बदलनेतककी फुर्सत न मिली।"

ऊपर मेजर पेवटका जो बयान दिया गया है उसमें दिल्ली-के बूढ़े बादशाहपर उन्होंने जो दोष लगाया उसका कोई प्रमाण नहीं था। एक सच्चे अंग्रेज़ इतिहासलेखकने लिखा है कि अबतक ऐसा कोई आधार नहीं मिला जिसपर बूढ़े बादशाहको दोषी कहा जाय। ३ नं० सेनाकी जो बात कही गई है उसपर कुछ भी भरोसा नहीं किया जा सकता। उस समय बलवाई आदमी बादशाहका नाम लेकर जो जीमें आता था सो कहते थे। बादशाह इसके लिये जिम्मेदार क्योंकर हो सकते हैं? दूसरे, ३८ नं० सेनाका कोई अफसर भी नहीं मारा गया था।*

* Martin's Indian Empire. vol. II. P. 165.

दिल्लीके अंग्रेज़ोंकी मददके लिये मेरठसे कोई गोरी सेना नहीं आई। इसके लिये सेनापति ह्यू ट या ब्रिगेडियर विलसन—दोनोंमेंसे कौन अधिक दोषी है? सेनापतिने कहा था कि छावनीकी सेनाको ले जानेका अधिकार ब्रिगेडियरको था। ब्रिगेडियरने अपनी सफाईमें कहा था—"ब्रिगेडियरको छावनीके बहुत अधिकार दिये गये हैं। फौजी कानूनकी सत्रहवीं दफा देखनेसे यह साफ २ मालूम होगा। जब सेनापति उपस्थित थे तब मुझे फौज भेजनेका कोई अधिकार न था। मैं सेनापतिकी आज्ञासे सेनाका काम कर सकता हूं। सेनापतिके सम्बन्धमें जो कुछ मैंने कहा वह ठीक हो या न हो, जो कुछ मैंने मुनासिब समझा वह किया। पहले यह पता ही न लगा कि बलवाई सिपाही किधर गये, इसलिये मैंने जो किया वह ठीक ही था। अगर गोरी सेना ठीक पतेके विना ही सिपाहियोंकी खोजमें चल देती तो पीछे यदि अंग्रेज़ स्त्रियां, बच्चे और लड़ाईका सामान विना रक्षाके पड़ा रह जाता तो उस दशामें सेनापतिके ऊपर इससे भी अधिक दोष लगाया जाता।"*

अपनी सफाईमें ब्रिगेडियरने यह स्पष्टी करण दिया। इतिहास-लेखक'के' साहब कहते हैं कि ब्रिगेडियरका काम छावनीकी रक्षा करना था। अपने स्थानको विपत्तिपूर्ण समझकर उन्होंने मेरठकी सेनाको दूसरी जगह नहीं भेजा। पर सेनापति ह्यू ट सारी मेरठ विभागकी सेनाके सेनापति थे। दिल्लीकी छावनी

† Kaye's Sepoy War. Vol II P 101

भी उनके ही अधीन थी। इसलिये सेनापतिको दिल्लीकी बात भी सोचनी चाहिये थी। पर वे सिर्फ अपने स्थानकी रक्षाको ही कर्त्तव्यपालन समझ रहे थे। अपने अधीन दूसरे स्थानकी क्या दशा होगी यह उन्होंने नहीं सोचा। जो कुछ हो, दिल्लीके अंग्रेज़ों-की शोचनीय दशा देखकर जो चाहे जिसके सिर दोष लगावे, पर उस समयसे निश्चेष्ट बनकर वे अपने प्रति आप ही दोषी थे। सरकार जब संकुचित राजनीतिसे भारतवासियोंके दिल दुखाकर ग़दरकी बीज बो रही थी उस समय उसने यूरोपिय-नोंकी रक्षाका कोई उपाय नहीं सोचा। एक अंग्रेज़ इतिहास-लेखकने लिखा है—"हम अपने आपको झूठमूठ निरापद समझ रहे थे। विपत्तिके अनेक चिह्न हमारे सामने दीखे थे पर हम उदास रहे। हमें सब कुछ स्पष्ट दीख रहा था। तूफान आनेसे पहले जैसी शान्ति होती है, वैसी ही शान्तिको हम सच्ची शान्ति समझ रहे थे। बारकपुर और बहरामपुरमें जो कुछ हुआ उससे भी हमको चेत न हुआ। विपत्तिका रुख हम न पहचान सके। सैनिक विभागके खास खास आदमियोंने प्रधान सेना-पतिसे कहा था कि यह आपत्तिका समय बहुत जल्द निकल जायगा। यही विश्वास पश्चिमोत्तर प्रदेश, सरहद, कानपुर, मेरठ आदिके सैनिक अफसरोंका भी था। अन्तमें जब विपत्ति आ ही पहुंची तब सब घबरा गये। अपने आपके बचावका कोई उपाय न था। इस विपत्तिकी चाल कैसे रोक सकते हैं यह कोई न समझा। मौकेपर कोई उपाय न कर सकनेके कारण

हमारी बड़ी हानि हुई। सिपाहियोंने मेरठमें अंग्रेज़ोंको हराया, दिल्लीमें बादशाहको फिर तख्तपर बैठा दिया। यह खबर हर जगह फैल गई कि अंग्रेज़ मारे गये और फिर मुगल बादशाहत हो गई। इस ग़दरके सम्बन्धमें आलोचना करनेसे मालूम होता है कि सिपाहियोंमें पहलेसे, गुप्त रूपसे, निश्चय हो चुका था कि वे सब एक दिन उठेंगे। मेरठका ३ नं० रिसाला भड़ककर एकाएक उठ खड़ा हुआ और इसी कारण उसका निश्चय रद्द हो गया। इसी कारण भारतमें अंग्रेज़ी साम्राज्य बच गया। जब ग़दर समाप्त हुआ और फिरसे शान्ति स्थापित हुई तब गवर्मेंटने विलसन साहबको कमिश्नर बनाकर यह अधिकार दिया कि वे अपराधियोंको दण्ड और सहायता करनेवालोंको इनाम दें। विलसन साहबने लिखा है—"लोगोंकी बातें सुननेसे मुझे विश्वास हुआ कि ३१ मई रविवारका दिन सब सिपाहियोंने सहसा उठनेके लिये स्थिर किया था। इस कामके लिये एक सभा बनी थी। हरएक सेनाके तीन आदमी इस सभाके सभासद थे। सभाने लड़ाईका सारा प्रबन्ध कर लिया था। उन्होंने निश्चय किया था कि ३१ मईको सब यूरोपियन मारे जायं, सब खजानोंपर कब्ज़ा किया जाय, तोपखाने और किले ले लिये जायं, गुप्तरूपसे हम सबके नाशके लिये यह आयोजना की गयी थी। पर एकाएक १० मईकी रातको बलवा हो गया। १० मईकी रातको जो कुछ हुआ वह अंग्रेज़ी शासनमें कभी नहीं देखा गया।" एक योग्य आदमीका कथन था कि सिपाहियोंका

जैसा संगठन था, यदि वे अपने नियत दिन हरजगह भारतमें लड़ाई शुरू कर देते तो इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि बहुत कम अंग्रेज़ जीते बचते, फिर हिन्दुस्तानको जीतना अंग्रेज़ोंकी शक्तिसे बाहर हो जाता। बहुत सम्भव था कि यह बड़ा भारी देश ब्रिटिश जातिके हाथसे निकल जाता।। ईश्वरको यह मंजूर न था। मेरठकी दुर्घटनाके कुछ घंटे बाद ही बिजलीके तारोंसे यह खबर तमाम भारतमें जा पहुंची और हरजगहके अंग्रेज़ोंने अपनी रक्षाका उपाय कर लिया।"*

अंग्रेज इतिहासलेखकने अपनी भूमिकामें भी यह लिखा है कि भारतमें एक गुप्त षड्यन्त्र हो रहा था। अगर सिपाही अपने गुप्त निश्चयके अनुसार एक ही दिन, सारे भारतमें, अंग्रेज़ोंके विरुद्ध लड़ाई शुरू करते तो सब अंग्रेज़ मारे जाते और उस दशामें फिर हिन्दुस्तानको जीतना बड़ा कठिन हो जाता। ग़दरके इतिहासकी आलोचनासे एक बात और मालूम होती है कि बलवाई सिपाहियोंने अंग्रेज़ोंसे खुले मैदान लड़ाई नहीं की। किसी किसी लड़ाईमें उन्होंने बड़ी वीरता, दक्षता और साहस दिखाया, पर भारतके सब सिपाही किसी एक सेनापतिके नीचे काम नहीं कर रहे थे। वे तरह २ के कारणोंसे अंग्रेज़ोंके द्वेषी बने थे अंग्रेज़ोंको उखाड़ फेंकनेके लिए वे व्याकुल हो उठे थे। सबने एक होकर कोई भी काम नहीं किया। इससे हम इस निश्चय-

Kaye's Sepoy War. vol II. P. 101-110

पर नहीं पहुंचते कि सिपाहियोंमें कोई गुप्त मंत्रणा थी और पहलेसे इरादा करके वे तैयार हुए थे। अगर इरादेके साथ तैयार होते, यदि सचमुच उनका संगठन कोई होता तो वह अपना कोई न कोई प्रबन्ध करते, किसी न किसीको सेनापति बनाते; बाकायदा सेनाओंका संचालन होता। यदि कहीं ऐसा होता तो अंग्रेज़ोंके लिये बड़ी मुसीबतका मौका आजाता। पर वास्तवमें इनमेंसे एक भी बात न थी। अंग्रेज़ोंको अपने विरुद्ध जहाँ जरा भी संदेहकी बात मिल गई उसे ही उन्होंने लिख दिया है। इसी तरहकी यह बात है कि सब सिपाही गुप्त षड्यन्त्र कर रहे थे, इसका कोई भी प्रमाण नहीं। सरकारके नाजायज दबावके कारण सिपाही और सर्वसाधारणके दिलोंमें जो छाला था वह मामूली रगड़से फूट गया, उसके गन्दे मवादसे सारा इतिहास भर गया।



सातवाँ अध्याय



लार्ड कैनिंगका ढंग—कलकत्तामें हलचल—प्रधान सेनापतिसे गवर्नर जनरलका पत्रव्यवहार—स्वयंसेवक सेनाका प्रस्ताव—सहायक सेनाका आना—प्रधान सेनापतिकी मृत्यु—कर्नल नील—नया दंड-विधान।



लार्ड कैनिंगको जब दिल्लीके ग़दरका समाचार मिला तब वे उसकी गति रोकनेके लिये उद्यत हुए। पश्चिमोत्तर प्रदेशके जो स्थान सिपाहियोंके निवासस्थान थे उनकी रक्षाका उचित प्रबन्ध करना उन्होंने पहले सोचा। उन्होंने बोर्ड आव कन्ट्रोलरके सभापतिको लिखा—"बंगालके बारकपुरसे लगाकर पश्चिमोत्तर प्रदेशके आगरा तकका प्रदेश बलवाई होनेके लिये तैयार है। इस साढ़े सात सौ मीलके भीतर केवल एक गोरी सेना है। बनारसमें एक सिक्ख सेनाका दस्ता है पर गोरी सेना नहीं है। इलाहाबादकी भी यही हाल है। इन सब स्थानोंकी हिन्दुस्तानी सेनाओंपर द्रोही होनेका सन्देह है। अगर इन लोगोंको अभी खबर मिले कि दिल्ली बागी सिपाहियोंके हाथमें है और बादशाह तख्तपर बैठ गये हैं तो कलही सारे किले और खजाने इनके हो जायंगे। इसलिये मैं दो बातोंकी ओर लगा हूं, एक तो दिल्लीसे बागी सिपाहियोंको निकालना और दूसरे,

गोरी सेना इकट्ठी करना।" लार्ड कैनिंगने हर जगहसे गोरी फौज इकट्ठी करनेके लिये क्या क्या किया था वह इस भागके शुरूमें आ चुका है। अब वे दूसरी बातोंकी ओर झुके। मेरठके अंग्रेज़ सिपाहियोंके हाथसे मारे गये थे, दिल्लीके अंग्रेज़ोंकी सिपाहियोंने दुर्गति की थी। मुगल बादशाहको उन्होंने फिर तख्तपर बैठा दिया था। अब लार्ड कैनिंग अपनी प्रधानताका उद्धार करनेमें लगे।

इस समय कलकत्तेमें बड़ी गड़बड़ मची। वहाँ बहुतसे ईसाई बच्चे और स्त्रियाँ थीं, वे अबतक निरापद थे। शान्तिसे रहते रहते वे गड़बड़के नामसे डरते थे। कलकत्तेके बंगाली और अंग्रेज़ भी ऐसे ही थे। अंग्रेज़ व्यापारियोंका प्रधान स्थान कलकत्ता था। यहाँ सरकारके सब दफ्तरों और गोरोंकी प्रधानता थी। शान्तिसे रहनेके कारण सब उसके अभ्यासी हो गये थे। जब पश्चिमोत्तर प्रदेशके सिपाहियोंके उठनेकी खबर वहाँ पहुँची तब सब घबरा गये। यह लोग सोचने लगे कि मेरठमें जो कुछ हुआ और दिल्लीमें जो भयानक काण्ड मचा, वही कलकत्तामें भी होगा। अपनी रक्षाके लिये शंकित होकर यह लोग सरकारकी ओर देखने लगे। अबतक ये लोग शान्तिसे व्यापार करके, धन बढ़ाकर और अपने आपको विजयी जाति कहकर अभिमानसे भारतवासियोंको तुच्छ दृष्टिसे देखते थे। पर उन्हें यह स्वप्नमें भी विचार न था कि जिस जातिको वे तुच्छ समझ रहे हैं उसीसे भयानक विप्लवका जन्म होगा। पश्चिमोत्तर

प्रदेशकी बातें तिलका ताड़ बनकर उनके पास पहुँचने लगीं। फलतः वे लोग चारों ओरसे अपने आपको विपत्तिमें फँसा हुआ समझने लगे। ईसाइयोंमें इसका विशेष आन्दोलन हुआ। अंग्रेज़ और पुर्तगालनिवासी बहुत डरे। बहुतसे तो अपनेको बचानेके लिये जहाज़ोंपर जाकर रहने लगे, कोई कोई किलेमें जा बसे और बहुतसे मकानोंके तहख़ानोंमें बैठकर अपनेको निरापद समझने लगे। बहुतसे शहर छोड़कर पासके गांवोंमें जा बसे। बहुतोंने इंग्लैंडका टिकट कटाया और बहुतसे बन्दूक पिस्तौल खरीदकर सदा सज्जित रहने लगे।* इस समय भी लार्ड कैनिंगके स्वाभाविक धैर्यमें कोई अन्तर न आया। कोई दुश्चिन्ता या डर उन्हें कर्त्तव्यमार्गमें बाधा न डाल सका। इस आपत्तिके अवसरपर भी गवर्नर जनरलकी शान्ति देखकर सबको सन्तोष हुआ।

यह नहीं कहा जा सकता कि कलकत्ताके यूरोपियन और अंग्रेज़ बिना कारण डर गये थे। भयके अनेक कारण थे। जो सिपाही भीतर बाहरसे सहायक बनकर अबतक कम्पनीका शासन जमा रहे थे, जिनकी वीरतासे कम्पनीका राज्य बढ़ा था, वे ही अब अंग्रेज़ोंका ख़ून बहाकर बदला लेने लगे। कलकत्ताके पास ही बारकपुरमें देशी सिपाही थे। ये लोग एक रातमें कलकत्ता आकर यूरोपियनोंको मार सकते हैं। कलकत्तेकी जेल और किलापर आक्रमण करना इनके लिये कठिन नहीं।

* Friend of India, May 28. 1857.

मेरठ और दिल्लीमें जो कुछ हो चुका वही कलकत्तेमें भी हो सकता है, यह सोचकर गोरे लोगोंमें गड़बड़ मची। वे क्षण क्षण महाविप्लवकी राह देखने लगे। अपने धन प्राणोंकी रक्षाके लिये कातर होकर वे सरकारकी ओर देखने लगे।

लार्ड कैनिंग विना सोचे किसी काममें हाथ न डालते थे। वे पहले खूब सोच विचार लेते और फिर काम शुरू करते थे। जब कलकत्ताके अंग्रेज़ चिन्ताके कारण दुवले हुए जा रहे थे उस समय भी लार्ड कैनिंग निश्चिन्त थे। दिनके बाद दिन बीतने लगे, चारों ओरसे विपत्तिके समाचार आने लगे। वे सब खबरोंको इकट्ठी करने और सोचने लगे। अंग्रेज़ोंने इस समय सोचा कि शायद गवर्नर जनरलकी समझमें अभीतक यह बात नहीं आई है कि विपत्ति बहुत बड़ी है। कलकत्तापर सिपाहियोंके हमलेकी बात अभीतक वे नहीं विचार सके। यह सच है कि गवर्नर जनरलका चेहरा देखकर कोई उन्हें चिन्तित नहीं कह सकता था, पर उन्हें सब बातें मालूम थीं और वे सब कुछ समझ रहे थे।*

कलकत्तासे बहुत दूर जो लोग विपत्तिमें फँस गये थे, जिनके धन, प्राण नष्ट हो चुके थे, उनके प्रति सहानुभूति दिखानेमें लार्ड कैनिंगने किसी तरहकी कमी न की थी। उन सब नगरोंकी रक्षाकी वे पूरी कोशिश कर रहे थे। जो दूर बैठे बैठे गदरके बढ़ा बढ़ाकर कहे हुए समाचार सुन सुनकर अपने आप डरके

* Kaye's Sepoy War. vol II P. 116 note.

मारे हुए रहे थे, उनके प्रति भी गवर्नर जनरलने समवेदना दिखाई। वे उनके डर और कारणोंको समझते थे पर काम करनेके मार्गमें उनसे सहमत न हो सके। उनका सबसे पहला काम आपत्तिसे घिरे हुए नगरोंकी रक्षा करना था। पर जो डर रहे थे, वे चाहते थे कि और सब कुछ छोड़कर पहले कलकत्ताकी पूरी रक्षा कर दी जाय। पर गवर्नर जनरल उन स्थानोंकी रक्षा कर रहे थे जहाँ खूनका फाग खेला जा चुका था; या अभी खेला जानेको था। पर यह न समझकर कलकत्ताके अंग्रेज गवर्नर जनरलकी निन्दा करने लगे।

मई मास बीतते बीतते अंग्रेज़ोंकी आशंका बढ़ गई। गोरे लोग स्वयंसेवक सेना बनानेको तैयार हुए। कलकत्ताकी व्यापारिक सभाकी ओरसे लार्ड कैनिंगके पास आवेदनपत्र गया। इस सेनामें अंग्रेज फ्रेंच, अमेरिकन सब शामिल होनेके लिये तैयार हुए। पर लार्ड कैनिंगको इस समय कलकत्तेकी रक्षाकी अधिक आवश्यकता प्रतीत न हुई। उन्होंने प्रार्थियोंको जवाब दिया कि वे विशेष कानस्टेबल बनाकर नियत किये जा सकते हैं। इस जवाबसे गोरा समाज लार्ड कैनिंगसे चिढ़ गया। वे कहने लगे कि गवर्नर जनरल हम सबको मरवाना चाहते हैं। पर गवर्नर जनरलने किसी बुरे विचारसे यह प्रार्थना अस्वीकार न की थी। बल्कि वे सर्वसाधारणके सामने अपनी गम्भीरताको खोना नहीं चाहते थे। वे यह साबित करना नहीं चाहते थे कि हम घबरा गये। ऐसा करनेसे सम्भव था कि

सर्वसाधारणमें उत्तेजना फैल जाती। अंग्रेज़ोंको अपना बोरिया विस्तर उठाते देखकर सम्भव था कि सब उनके विरुद्ध हो उठते। लार्ड कैनिंग केवल एक जातिके शासक न थे, उन्हें सब देशों और जातियोंकी ओर देखकर शासनका चक्र घुमाना पड़ता था। वे जानते थे कि कलकत्ता हर जातिका निवासस्थान है। एक जातिकी रक्षाके लिये विशेष काम करते ही, सम्भव है दूसरी जातियां उसीको अहितकर समझें, यहींसे गड़बड़का सूत्रपात हो। इसलिये वे ऐसे काम कर रहे थे जिससे सब-की आशंका दूर हो और सब अपने आपको समान समझें। हिन्दुस्तानी भी बहुत डर गये थे। अपनी जाति जानेके डरसे यह लोग क्षण क्षणमें नयी नयी कल्पना करते थे। बाजारोंमें जरा जरा देरमें नयी नयी अफवाहें उड़ती थीं। अंग्रेज़ चाहते थे कि लार्ड कैनिंग कम्यूनिक निकालकर इन अफवाहोंको असत्य कहें। लार्ड कैनिंगने २० मईको लिखा—"बाजारमें अफवाह उड़ी है कि मैंने हिन्दुओंके स्नान करनेके तालावोंमें गोमांस डलवाकर, उनके धर्मनाश करनेकी आज्ञा दी है। महारानीके जन्मदिन २५ मईको सब दूकानें बन्द करनेकी आज्ञा इस विचा-रसे दी है कि मजबूर होकर हिन्दू अपवित्र चीजें खायँ। जिन लोगोंको धैर्यके साथ समझकर चलना चाहिये वे भी मुझसे कहते हैं कि इन अफवाहोंको अशुद्ध सिद्ध करनेके लिये घोषणा पत्र निकाला जाय। मैं ऐसा नहीं करता, इसलिये यह लोग पिस्तौल लेकर तैयार होते हैं। ऐसी झूठी अफवाहोंके लिये

मेरे विचारमें जो बात आती है वही मैं करता हूं। मैं आशा करता हूं कि धीरता और दृढ़तासे सब बातें शान्त हो जायँगी।" लार्ड कैनिंग इस प्रकार सब बातोंकी आलोचना करके काम करते थे।

२४ मईको महारानी विक्टोरियाका जन्मदिन पहलेके समान आडम्बरसे मनाया गया। इस समय लार्ड कैनिङ्ग इस बातपर विशेष ध्यान रख रहे थे कि किसीकी राजभक्तिमें अन्तर न आवे। किसी किसी अंग्रेज़ने प्रस्ताव किया था कि वे अपने शरीररक्षक हिन्दुस्तानियोंकी जगह यूरोपियनको रक्खें। पर लार्ड कैनिंग इससे सहमत न हुए। इस उत्सवमें नये कारतूस काममें लानेमें किसी सिपाहीको आपत्ति न हो, इसलिये सैनिकोंका एक दल पुराने कारतूस लानेके लिये बारकपुर भेजा गया। रातको गवर्मेंट हाउसमें नाच हुआ। पर बहुतसे अंग्रेज़ डरकर वहां भी न गये। उन्हें शक था कि जब सब यूरोपियन एक जगह एकत्र हों तब शायद हिन्दुस्तानी उनपर हमला कर दें। इसी मौकेपर मुसलमानोंकी ईद आई थी। अंग्रेज़ोंको भय था कि इस ईदपर सब स्थानोंके मुसलमान उठेंगे। पर कलकत्तामें शान्ति रही। अंग्रेज़ लोग बहुत ही डर गये थे और पल पलपर वे हिन्दुस्तानियोंके आक्रमणकी आशंका करते थे। लार्ड कैनिंग दिल्ली वापिस लेने और पश्चिमोत्तर प्रदेशमें शान्ति बनाये रखनेके लिये अपनी मन्त्रिसभामें सलाह कर रहे थे। उस समय

यह दोनों काम एक साथ होना बड़ा मुश्किल था। गोरी सेना बहुत कम थी। कौंसिलके मेम्बरोंकी सम्मतियां भिन्न भिन्न थीं। कौंसिलके सिविल कर्मचारी सोच रहे थे कि गोरी सेना कम है, यदि यह बागियोंके हाथसे दिल्लीको लेनेमें लग जायगी तो और देशोंकी रक्षा न होगी। उन्मत्त सिपाही बिगड़कर और स्थानोंपर कब्जा कर लेंगे। इसलिये उनकी सम्मति थी कि दिल्लीको अभी कुछ दिन बागियोंके कब्जेमें ही रहने दिया जाय। पर सर जान लो जैसे सैनिक सभासद इसके विरुद्ध थे। उनका कहना था कि सबसे पहले दिल्लीका उद्धार किया जाय। गवर्नर जनरलकी राय भी यही थी। दिल्ली वापिस हाथ आनेसे दूसरी जगहोंकी सेना न बिगड़ेगी, यह उनका विचार था। पर अगर दिल्ली लेनेमें देर की तो सर्वसाधारण समझेंगे कि सरकार अब बादशाहसे दिल्ली नहीं ले सकती। सम्भव है और सिपाही भी विद्रोही होकर बादशाहका पक्ष समर्थन करें। इससे सम्पूर्ण देशमें अशांति फैल सकती है, इसलिये जितनी जल्दी हो पहले दिल्लीपर कब्जा किया जाय। दिल्ली वापिस आते ही फिर सरकारका विरोध करनेकी किसीकी हिम्मत न होगी। इससे गदरकी नींव टूट जायगी।

इस प्रकार विचार करके गवर्नर जनरल दिल्ली वापिस लेनेकी तैयारी करने लगे। इस विषयपर अब उन्होंने देर न की। रोज प्रधान सेनापतिके पास शिमला तार पर तार जाने

लगा कि दुश्मनोंके हाथसे दिल्ली ले लो। पर इस समय पश्चिमोत्तर प्रदेशमें अधिक गोरी सेना न थी। केवल उत्तरमें कुछ दल थे। इन्हीं दलोंसे गवर्नर जनरलने दिल्लीका उद्धार करना विचारा। वे स्वयं दिल्लीसे हजार मीलपर बैठे थे, अपनी आंखों उन्होंने कभी यह प्रदेश देखा भी न था। पर पंजाब और यू० पी० के लेफ्टिनेण्ट गवर्नरोंपर उनका विश्वास था प्रधान सेनापतिपर उनकी आस्था थी। इन्हींपर भार देकर वे पत्र लिखने लगे। मेरठकी घटनाके बाद उन्होंने लण्डन पत्र लिखा था—"मैं घटनास्थलसे नौ सौ मील दूर हूं। इसलिये दिल्लीके सम्बन्धमें जो कुछ करना चाहिये उसमें असुविधा हुई है। इस समय जहां तक सम्भव है, सेनाएं एकत्र की जा रही हैं। ले० गवर्नर कालविनके कामोंपर मेरा विश्वास है। जहां तक मुमकिन होगा सभी अपने अपने कर्तव्योंका पालन करेंगे। मैंने प्रधान सेनापतिको बंगाल और पश्चिमोत्तर प्रदेशकी दशा और शीघ्र काम करनेकी आवश्यकता लिख दी है। सब बातें समय सापेक्ष हैं। एक बार दिल्लीपर कब्जा करने और बागियोंको कड़ी सजा देकर नजीर कायम करनेपर चारों ओर शान्ति हो जायगी।" लार्ड कैनिंगने जिस आशासे यह पत्र लिखा था वह कहां तक सफल हुई, यह आगे लिखेंगे।

गवर्नर जनरलने अब गोरी सेना एकत्र करनेकी ओर ध्यान दिया। जिन जिन स्थानोंपर बलवाई सिपाहियों द्वारा

आक्रमण होनेकी संभावना थी उन सब स्थानोंपर थोड़ी थोड़ी सेना रक्खी गई। इस कारण उन्हें अनेक विपत्तियां उठानी पड़ीं। कलकत्ताके पास केवल दो दल गोरी सेना थी। इनमेंसे ५३ नं० सेनाके पैदल सैनिक कलकत्ताके किलेमें थे। और ८४ नं० के चूंचड़ामें। सारे बंगालमें केवल यह दो ही दस्ते थे। कलकत्तासे ४०० मील दूर दानापुरमें गोरी सेना थी। लार्ड कैनिङ्गने इन दो दस्तोंपर निर्भर होकर ही काम करना चाहा। पर अनेक कारणोंसे कलकत्तामें गोरी सेना रखनी ज़रूरी थी। कलकत्ताके किलेमें बड़ा भारी तोपख़ाना था। इच्छापुरमें बारूद बनती थी, दमदममें सैनिक विद्यालय था। अलीपुरका जेलख़ाना दुश्चरित्र कैदियोंसे भरा था। इसके अलावा फौजी कपड़ेका गोदाम, टकसाल, बंक सब धनसे भरे थे। विरोधी आक्रमण करके जेलको तोड़कर अपने साथी बढ़ा सकते थे, हथियार और लड़ाईका सामान लूटकर सरकारको विध्वंस कर सकते थे, टकसाल और बंकोंको लूटकर अपनी शक्ति कायम कर सकते थे। इन्हीं सब कारणोंसे कलकत्तामें फौज रखना आवश्यक था।

बहुतसे लोग लार्ड कैनिङ्गपर यह दोष लगाते हैं कि वे समयके महत्वको समझकर काम नहीं करते थे। यदि पहले ही वे यूरोपियनोंको स्वयंसेवक बनने देते, बारकपुरके सिपाहियोंके हथियार ले लेते, दानापुरके सिपाहियोंको भी सेनासे निकाल देते, बँगालकी सेनाओंको जल्दी ही दिल्ली भेज देते, तो

मई मासमें ही विपत्तिसे छुटकारा मिल जाता। पर आदमी वर्तमान घटनाओंको ही देखकर काम किया करता है। भविष्य-को सामने रखकर अनिश्चित विषयपर काम नहीं होता। आज जो कुछ सामने है, उसे सोचकर अगर वह काम करे तभी उसकी प्रशंसा है। कल क्या होगा इसे आदमी नहीं समझ सकता। लार्ड कैनिंग भविष्यवक्ता न थे। मई महीनेके मध्य-बारकपुरके सिपाही सरकारकी ओरसे लड़नेको तैयार थे। दानापुरकी हिन्दुस्तानी सेनाके सेनापति लायड साहब भी अपनी सेनापर पूरा विश्वास करते थे।* इस समय हरएक छावनीके सिपाहियोंकी नजर दिल्लीपर थी। मुगल बादशाहकी राजधानी फिर कम्पनीके हाथ आती है या नहीं, यही सब देख रहे थे। इसी कारण लार्ड कैनिंग बड़ी जल्दी दिल्लीपर कब्जा करना चाहते थे। बंगालके सब सिपाहियोंसे हथियार लेनेकी जरूरत थी। पर फौजकी भी कमीके कारण ले नहीं सकते थे। लार्ड कैनिंगने इस समय लिखा था—"जब हथियार लिये जा सकते हों तो वहां ले लेनेसे ही लाभ है। पर बंगालमें, बारकपुर से कानपुर तक १५ दल हिन्दुस्तानी सिपाही और एक दल गोरे सिपाही हैं, हथियार लेना असम्भव है। हथियार लेने-से और भी बुरा फल हो सकता है।"†

उस समय सिपाहियोंका जोश बहुत अधिक बढ़ गया था

* Kaye's Sepoy War. vol II. P. 124 note.

† Kaye's Sepoy War. vol II. P. 124 note.

इसमें सन्देह नहीं, पर अनेक स्थानोंपर ऐसी शान्ति थी कि अधिकारी लोग उनकी प्रशंसा किये बिना न रह सके। गवर्नर जनरलके पास इसी आशयके तार आ रहे थे। १६ और २० मईको बनारससे समाचार आया कि किसी तरहकी अशान्ति नहीं। सेना भी शान्त है। इसी तारीखको सर हेनरी लारेंसने लखनऊसे तार भेजा कि किसी तरहकी अशान्ति नहीं। साधारणतया जोश कम हो रहा है। पश्चिमोत्तर प्रदेशके ले० गवर्नरने आगरासे तार दिया—"सब कुछ सन्तोषप्रद मालूम होता है। दिल्लीसे बलवाइयोंको बढ़नेमें समय लगेगा। सबका विश्वास है कि दिल्ली वापिस हमारे कब्जेमें आवेगी, ग़दर अधिक न बढ़ेगा।" इनके अतिरिक्त और अनेक स्थानोंसे शान्तिके समाचार आने लगे। केवल अलीगढ़से सिपाहियोंके उपद्रवका समाचार आया, पर थोड़ी देर बाद समाचार आया कि उस स्थानपर कब्जा करनेकी योजना की गई है।

मई मासमें इसी तरहके समाचार लार्ड कैनिंगके पास आ रहे थे। कहीं किसी तरहकी गड़बड़ न थी। सब शान्तिकी आशा कर रहे थे। इसलिए लार्ड कैनिंग भी भयानक ग़दरको खयालमें न ला सके। घटनास्थलसे एक हजार मील दूर बैठे हुए गवर्नर जनरल समाचारोंके आधारपर काम कर रहे थे। उनकी आज्ञासे भिन्न भिन्न स्थानोंसे गोरी फौजें आ रही थीं। विपत्ति रोकनेके लिये वे इन फौजोंको भिन्न भिन्न स्थानोंपर रखनेका प्रबन्ध कर रहे थे। लार्ड कैनिंग समझते थे कि लार्ड डलहौज़ीकी दूषित नीतिने

जो हर जगह आगका सामान इकट्ठा कर दिया था वह जगह २ भड़क रहा है,। पर चारों ओर देखकर कर्त्तव्य निश्चित करना ही उनकी नीति थी। इसी तरह वे कार्यक्षेत्रमें अवतीर्ण हुए थे। वे सोच रहे थे कि शान्तिके साथ काम करने और सरकारके प्रति लोगोंका विश्वास करानेसे बहुत कुछ सुविधा होगी। वे यह भी समझ रहे थे कि भिन्न भिन्न स्थानोंसे गोरी सेना लानेसे विपत्ति घट जायगी। लोग समझेंगे कि राज्यकी रक्षाके लिये विलायतसे सेनायें आ रही हैं, अब बलवाई न बचेंगे। इस तरह सोच सोचकर जो लोग सरकारसे थोड़े भी रुष्ट हैं वे दब जायँगे। यह सब बातें सोचकर लार्ड कैनिंग गोरी सेना एकत्र करने लगे। उनका काम निष्फल नहीं हुआ। समुद्र पार करके एक साहसी सेनापति एक दल सेना ले आया। अंग्रेज़ोंको शान्ति मिली।

कर्नल नील मद्राससे गोरी सेना लेकर कलकत्ता पहुँचे। २३ मईको इस सेनाका पहला दस्ता कलकत्ता उतरा। इसके बाद धीरे धीरे सेना जहाजोंसे उतरने और पश्चिमोत्तर प्रदेशकी ओर रवाना होने लगी। इस वक्त हवड़ासे रानीगंज तक रेल थी। सेनाको जल्दी पहुँचानेके लिये सरकारने घोड़े और बैल खरीदनेमें कमी न की। घोड़ागाड़ियों और बैलगाड़ियोंका भी प्रबन्ध किया गया। निश्चित समयपर कर्नल नील अपनी सेना लेकर हवड़ा स्टेशनपर पहुँचे। पर सारी सेना न पहुँच सकी। गाड़ी छोड़नेका समय हो चुका था। स्टेशनमास्टरने कहा कि

समय हो चुका। कर्नल और कुछ देर ठहरनेको कहने लगे पर रेलवे कर्मचारी न माने। एकने कर्नलसे कहा कि वे सेनाके सेनापति हैं। रेलवेपर शासन करनेका उन्हें कोई अधिकार नहीं है। सेनापतिने उनसे कहा कि तुम सरकारके विश्वासघातक हो। मैं तुम्हें बिना सेनाके गाड़ी न ले जाने दूंगा। यह कहकर उन्होंने सेनाद्वारा ड्राइवरको पकड़वा लिया। दस मिनिट बाद सेना आ गई। नीलकी साहसी सेनाको लेकर गाड़ी हवड़ासे चली। यह बात गवर्नर जनरलको मालूम हुई और अंग्रेज़ोंने भी सुनी। सुनकर सब आश्वस्त हुए कि योग्य आदमीके हाथमें कार्यभार दिया गया है।

मई मास जैसे जैसे बीतने लगा वैसे ही वैसे पश्चिमोत्तर प्रदेश-में भयानक ग़दरके चिह्न नजर आने लगे। अंग्रेज़ोंकी राजनीतिके कारण जो लोग उत्तेजित हुए थे, अंग्रेज़ोंके कायदे कानूनोंकी रगड़से जिनके हृदयोंपर चोट लगी थी, कल्पना द्वारा जिन्होंने भारतका मनोहर चित्र खींच रक्खा था, जो भारतसे अंग्रेज़ोंको विदा करना चाहते थे, वे सब उत्तेजित हो उठे। मई मास बीतते बीतते यह विचार होने लगा कि पश्चिमोत्तर प्रदेशके सब सिपाही अंग्रेज़ोंके विरुद्ध घोर संग्राम करनेपर तुले हुए हैं। मेरठके अंग्रेज़ सिपाहियोंके हाथसे मारे जा चुके थे। दिल्लीमें बाद-शाहका राज्य हो गया था। पश्चिमोत्तर प्रदेशके अनेक स्थानोंसे अंग्रेज़ी शासन उठ गया था। इसी समय अंग्रेज़ अपनी प्रधानताके लिये कमर कसकर तैयार हुए। अपराधियोंको

कठोर दंड देने लगे। ३० मईको गवर्नर जनरलने अपनी मंत्रि-सभामें एक कानून बनाया। इसके अनुसार जहाँ ग़दर हो वहाँके सर्वसाधारणके जीवनमरणका भार, शासनविभागके किसी अधिकारी और किसी दर्जेके कर्मचारीको होगा। इसीके अनुसार घोषणा हुई कि जो कोई महारानीकी सरकारके विरुद्ध लड़ेगा, या लड़नेका यत्न करेगा, या किसी गुप्त षड्यन्त्रमें शरीक होगा उसे फांसी, या जेल, या कालापानीकी सजा दी जायगी। जहाँ किसी तरहकी गड़बड़ होगी वहाँ इसी कानूनके अनुसार काम होगा। जो लोग सरकारकी मुखालफत या खून या चोरी या डकैती करेंगे, उन सबका विचार सरकारी कमीशनमें होगा। इस तरहके अधिकारप्राप्त कमिश्नर हर जगह और हर मौकेपर फैसला करेंगे। बिना वकील और बिना जूरीके यह लोग मौत या कालापानी या जेलका दण्ड दे सकेंगे। इनके फैसलेकी कोई अपील न होगी। ८ जूनको यह कानून सरकार द्वारा बाकायदा पास हो गया। हरएक अंग्रेज़को इस कानूनके जरियेसे असाधारण ताकत मिल गई। सेनाओंके लिये यह हो गया कि चुने हुए पांच अफसरोंकी कोर्ट उनके लिये जो फैसला कर दे वही न्याय होगा।

जब लार्ड केनिंग इस प्रकार ग़दरको रोकनेकी चेष्टामें थे तब भारतके प्रधान सेनापति एनसन शिमलामें थे। सिपाहियोंके जोशसे ग़दर हो जायगा यह वे समझे ही न थे। फिर यह ग़दर इतना बढ़ सकता है कि भारतसे अंग्रेज़ोंका राज्य ही उठ जाय,

यह उनके विचारमें ही न आया था। भविष्यकी बात न सोचकर वे गर्मीके दिनोंमें शीतल हिमालयकी हवाके झोंके ले रहे थे। पर अधिक दिन वे इस आनन्दमें न रह सके। १२ मईको अम्बालाका एक नौजवान उनके पास पत्र लेकर पहुँचा। उसमें लिखा था कि दिल्लीके अंग्रेज़ मारे गये और वहाँ फिर बादशाहत हो गयी। अब वे समझे कि मेरठकी सेना सरकारके विरुद्ध हो गई। इसके एक घंटे बाद दूसरा पत्र पहुँचा, उसमें भी वे सब घटनायें थीं। इससे भी प्रधान सेनापतिने यह न समझा कि मामला नाजुक है, पर वे यह जरूर समझ गये कि अब बैठे रहनेसे काम न चलेगा। अब उन्हें जरूर कुछ न कुछ करना ही पड़ेगा। सेनापतिने सोचा कि दिल्ली सिपाहियोंके हाथमें है और वहाँके अंग्रेज़ मारे गये। इसलिये आसपास जो कुछ गोरी सेना मिले वह एकत्र करके दिल्ली भेजनी चाहिए। यह सोचकर उसी दिन (१२ मईको) प्रधान सेनापतिने अपना एक एडीकांग मंसूरी भेजा। इस स्थानकी ७५ नं० गोरी सेनाको अम्बाला भेजनेकी आज्ञा दी गई थी। इसके अन्यान्य स्थानोंकी जो गोरी सेनायें थीं उन सबको भी तैयार रहनेकी आज्ञा हुई। सेना भेजनेका उन्होंने प्रबन्ध किया पर स्वयं शिमलामें ही रहे। लार्ड कैनिंगको उन्होंने लिखा कि इस विषयकी सब बातें जाननेका उन्हें विशेष कौतूहल है। यदि खबर अच्छी न हो तो वे अम्बाला जानेको तैयार हैं। यह पत्र लिखनेके थोड़ी देर बाद ही उनके पास मेरठका समाचार पहुँचा। इसे पढ़कर भी उन्होंने

घटनाके गुरुत्वको नहीं समझा। हिमालयकी स्निग्ध शोभाका उनसे त्याग न हो सका। उनके सामने जो कर्त्तव्य आ खड़ा हुआ था उसके लिये वे अब भी तैयार न हुए। दो अंग्रेज़ सैनिकोंको उन्होंने अम्बाला भेजा। सिमूरकी गोर्खा सेनाको देहरादूनसे मेरठ जानेकी आज्ञा मिली। प्रधान सेनापतिने समझा था कि दिल्लीका बड़ा भारी तोपख़ाना सिपाहियोंके हाथ लग गया। इसलिये वे हर जगहोंके तोपख़ानोंकी रक्षाके लिये सेनायें भेजने लगे। इसीलिए उन्होंने गवर्नर जनरलको लिखा कि फीरोजपुरका किला ६१ नं० पैदल द्वारा रक्षित रहेगा। गोविन्दगढ़को ८१ नं० सेना बचायेगी। जालन्धरकी ८ नं० सेनाके दो दल फिल्लोरके किलेकी रक्षा करेंगे। फिल्लौरकी सब तोपें तैयार रहेंगी। लसौड़ीकी ६ नं० गोर्खा और सवार तोपें लेकर अम्बाला जायँगे।

इस प्रकार आज्ञायें देकर प्रधान सेनापति १४ मईको अम्बालाके लिये रवाना हुए। दूसरे दिन सवेरे वे वहाँ पहुँचे। अब इनके पास चारों ओरसे गड़बड़के समाचार आने लगे। उन्हें मालूम हुआ कि पंजाबकी हिन्दुस्तानी सेना सरकारके विरुद्ध खड़ी होनेवाली है। इसलिये इनसे उन्हें किसी तरहकी मददकी आशा न रखनी चाहिए। इस समय उन्हें बड़ी विपत्तिका सामना करना पड़ा। तोपोंके भेजनेका उचित प्रबन्ध न था। उन्हें भारतमें रहते हुए एक सालसे अधिक हो गया था। इसी थोड़ेसे कालमें उन्हें लड़ाईकी तैयारी करनी पड़ी। अपने साथि-

योंसे उन्हें पूरी सहायता न मिली। पंजाबकी हिन्दुस्तानी सेनाओंपर उन्हें भरोसा नहीं था। इसके अलावा उनका शरीर क्षीण था, वे कमजोर थे। जब पंजाबके सिपाहियोंसे आशा न रही तब वे अम्बालाके हिन्दुस्तानी सिपाहियोंसे हथियार ले सकते थे। पंजाबके प्रधान कमिश्नर सर जान लारेंस (बादमें लार्ड लारेंस) ने उन्हें ऐसा करनेकी सलाह दी थी। उन्होंने कहा था कि इस सेनाके हथियार लेकर दिल्लीपर चढ़ाई कर दी जाय। पर प्रधान सेनापतिको यह उचित नहीं मालूम हुआ। अम्बालाके अधिकारियोंने इसका विरोध किया। क्योंकि वे सिपाहियोंसे वादा कर चुके थे कि उनका ऐसा अपमान न होने देंगे। अम्बालाकी सेनाको न साथ ही ले जा सके और न पीछे ही छोड़ सके। उस सेनाके अंग्रेज़ अफसर कहने लगे कि सिपाहियोंसे जो वादा किया गया है वह तोड़ना उचित नहीं। इसी कारण प्रधान सेनापतिने उनके हथियार न लिये। उनकी राजभक्तिपर विश्वास करके उन्होंने उन्हें वैसेही रहने दिया। अम्बालाके सिपाही पहलेके समान हथियार बंद रहे पर उन्होंने सेनापतिके समान धैर्यका परिचय न दिया। कुछ दिन बाद वे ही हथियार सरकारके विरुद्ध उठे। इस अवसरपर दो राजपुरुषोंने प्रधान सेनापतिकी विशेष सहायता की थी। एक, अम्बालाके डिप्टी कमिश्नर और दूसरे, सतलज इलाकेके कमिश्नर। दिल्लीकी गड़बड़का समाचार मिलते ही फ़ोर्स्ट साहबने कमिश्नर बार्नेसको प्रबन्ध करनेके लिये लिखा। बार्नेस इस समय कसौलीमें थे। अम्बालाकी रक्षाके लिये

इन्होंने एक दल सिक्ख पुलिस भी तैयार की। सतलजसे यमुना तक बहुतसे सिक्ख राजा और ताल्लुकदार थे। इस मौकेपर सब अंग्रेज़ोंकी तरफ़दारी करने लगे। ग़दरका इतिहास साफ़ शब्दोंमें कह रहा है कि सिपाहियोंने जब सरकारके विरुद्ध ग़दर शुरू किया उसी समय हिन्दुस्तानियोंने सरकारका पक्ष लेकर उन्हें दबाया। भारत सरकार जब ग़दरकी लहरोंसे अपनी सब सुधबुध भूल चुकी थी तब यहाँके राजाओंने आगे बढ़कर सरकारका राज्य सम्हाला। धार्मिक उत्तेजनासे उत्तेजित सिपाहियोंने जिस समय अंग्रेज़ स्त्रियों और बच्चोंतकका खून करनेके लिये तलवारें उठाईं उस समय अपने प्राण आपत्तिमें डालकर भी भारतवासियोंने उनकी रक्षा की। भारतवासियोंकी मददके विना अंग्रेज़ ग़दरमें नहीं टिक सकते थे। फिर अंग्रेज़ी राज्य हिन्दुस्तानमें नहीं हो सकता था। इस मौकेपर तमाम राजे महाराजे सरकारकी ओर होकर लड़ने लगे थे। भारतके वीर सिपाहियोंको दबानेके लिये खड़े हो गये थे। सब शिक्षित आदमी सरकारकी रक्षाके लिये उठ खड़े हुए थे, दरिद्र ग्रामीणोंने भी रक्षा की। जिस समय बार्नेस अम्बालाकी रक्षामें लगे थे उस समय डिप्टी कमिश्नरने पटियाला और जींदके राजाओंसे मदद मांगी। पटियालाके राजाने अपनी सेना थानेश्वर भेज दी। इधर जींदके राजाने दिल्लीका समाचार सुनकर अम्बालाके अधिकारियोंसे पूछा कि इस समय क्या करना होगा। बादमें बार्नेस साहबके अनुरोधसे कर्नालकी रक्षा करनेको वे तैयार हुए। कर्नालके नवाब चुप न थे। अपनी सेना,

धन और शक्ति सब कुछ वे अंग्रेज़ोंकी मददके लिए दे चुके थे। इस प्रकार भारतके राजा चारों ओरसे ब्रिटिशसिंहकी रक्षाके लिये अपने आपको उत्सर्ग कर रहे थे।

वार्नेस साहब १३ मईको अम्बाला पहुंचे। मेरठ और दिल्लीकी खबरोंने लोगोंके हृदयोंको उत्तेजित कर दिया था। वार्नेसने यमुनाके पुलकी रक्षा की और स्थानीय राजाओं तथा जागीर-दारोंकी सेना भेजकर शान्तिरक्षाका उपाय किया। इसके बाद डिप्टी और कमिश्नर दोनों प्रधान सेनापतिकी सेनाके लिये जरूरी चीजें एकत्र करने लगे। इस समय कोठीवाले, अढ़-तिये, ठेकेदार, कुली सब सोच रहे थे कि बस अब अंग्रेजोंका राज्य नाश होगा। इसीलिये कोई राजी होकर सरकारका काम करनेको तैयार न होता था। पर दोनों अफसरोंके यत्नसे फौजोंके लिये सामान इकट्ठा हुआ। जिस समय यह सहूलियत हो रही थी उसी समय एक और गड़बड़ मची। एक सप्ताह बीतते बीतते अम्बालामें खबर आई कि मंसूरीकी गोर्खा सेना उत्तेजित हो रही है। वे तोपें लेकर फिल्लौर जानेसे इनकार करते हैं और प्रधान सेनापतिकी चीजें लूटकर शिमलेपर हमला करनेका इरादा कर रहे हैं। इस मौकेपर अधिकारियोंको बड़ी होशि-यारीसे काम लेना था। किसी बातमें जरा सी गलती होनेसे मामला बहुत बढ़ जाता था और उसका परिणाम भयंकर हो जाता था। पर अधिकारी शुरूमें इतने सतर्क न थे। हरएक जातिके असन्तोषके कारणको दूर करनेका उन्होंने यत्न भी न

किया था। जब ग़दरकी सूचना मिली, मेरठ और दिल्लीकी भयानक घटनाओंका समाचार मिला, तब अंग्रेज़ घबरा गये। वे कर्त्तव्यका निश्चय न कर सके। उस समय उन्हें भारतके सब सम्प्रदाय खड्गहस्त दिखाई दिये। जब कोई कुछ कारण दिखाकर असन्तोष ज़ाहिर करने लगा, कोई किसी बातके कारण आज्ञा पालनसे इनकार करने लगा, उस समय उनके असन्तोषका सबब मालूम करने और जांचनेका अवकाश ही उन्हें न था। वे क्षण-क्षणमें चारों ओर प्रलयकी संहारमूर्ति देखकर चौंकते थे। घोर विपत्ति मानों हवापर चढ़कर उनके सामने आ खड़ी होती थी। शिमलाके पास जो गोर्खा सेना थी, उसके हुक्म न माननेके कारण शिमलाके सारे अंग्रेज़ इसी तरह घबराकर मौतकी छाया देखने लगे। जिन कारणोंसे सेनाने हुक्म माननेसे इन-कार किया था उनकी जांच किसीने नहीं की। घबराहटसे विचारशक्ति क्षीण हो गई थी। उस समय परिणामदर्शितासे किसीने काम नहीं लिया, विचार और धीरतासे किसीने रास्ता नहीं देखा। मेरठ और दिल्लीके अंग्रेज़ जिस दुर्गतिसे मारे गये उसका समाचार पाकर शिमलावालोंने सोचा कि बस गोर्खे हमारी भी वही दुर्दशा करेंगे। उस समय बहुतसे अंग्रेज़ अपने अपने परिवारोंके साथ शिमलामें थे। गर्मीसे बचनेके लिये वे हिमालयकी शरणमें समय बिता रहे थे। ठंढी हवाके झोकोंमें आनन्दसे समय बीत रहा था। पर इस खबरसे उनका आनन्द लुप्त हो गया। गोर्खोंके डरसे वे चारों ओर भागने लगे। यह पहले कहा जा

चुका है कि गोर्खे विना कारण न विगड़े थे। उनके असन्तोषका कारण यह था कि उन्हें पिछले वेतन न मिले थे। जब उन्हें फिल्लौर जानेका हुक्म हुआ तब उनके पीछे उनके बालबच्चोंकी रक्षाका कोई प्रबन्ध न था। सेनाके चपरासी उनकी रक्षाके लिये छोड़े गये थे। इससे गोर्खे विगड़ गये और सेना-पति मेजर वेगटेरसे कहा कि हमारा बाकी वेतन दो नहीं तो हम नहीं जायंगे। गोर्खोंकी आज्ञा न माननेकी बात चारों ओर फैल गई। शिमलामें यह खबर नमक मिर्च लगकर पहुंची कि, शुटोमके अंग्रेज़ मारे गये और गोर्खे शिमला पर हमला करेंगे। इस खबरसे शिमलावालोंको लेनेके देने पड़ गये। जान बचानेके लिये सब चारों ओर भागने लगे। अंग्रेज़ स्त्रियां अपने छोटे छोटे बच्चोंको गोदीमें लेकर, जागती हुई मौतका स्वप्न देखने लगीं। गोर्खोंको देखनेके लिये गिर्जेकी ऊंची ऊंची मीनारोंपर आदमी रक्खे गये। बूढ़े, जवान, बालक, स्त्री सब अपना अपना बंगला छोड़कर वंकके मजबूत मकानमें आत्मरक्षाके लिये एकत्र हो गये। इस वंकमें चार सौ अंग्रेज़ थे। इन सबके मुंह चिन्ताके मारे पीले पड़ गये थे। एक एक क्षणमें यह लोग गोर्खोंकी चमकती संगीनोंका स्वप्न देख रहे थे, मानों मौतके डरने उनके होश ढीले कर दिये थे। इस समय वहां आसपास कोई गोरी सेना न थी।* इसी कारण उनका डर चौगुना हो

* Cave Browne's Punjab and Delhi in 1857. Vol I. P. 197.

गया था। इस प्रकार यूरोपियन लोग उस बंकमें प्रार्थनायें करके रहने लगे।

अन्तमें गोर्खोंके हमलेकी बात झूठ सिद्ध हुई। शिमलावालोंकी जानमें जान आई। गोर्खे तनख्वाह न मिलनेके कारण नाराज थे पर इस नाराजगीमें भी उन्होंने अंग्रेज़ोंपर हमला न किया। जब उन्हें तनख्वाह मिल गई और परिवारकी रक्षाका प्रबन्ध भी हो गया तब वे फिर वैसेही प्रभुभक्त हो गये। जो अंग्रेज़ डरके मारे कांपते हुए अपने अपने घर छोड़कर बंकमें आ बसे थे वे सब लज्जित होकर वापिस अपने अपने घर गये।

जब गोरी सेना हिमालय प्रदेशसे कूच कर रही थी, उस समय प्रधान सेनापति एनसन पंजाबके प्रधान कमिश्नर सर जान लारेंससे लड़ाईकी प्रणाली निश्चित कर रहे थे। थोड़ी सी सेना लेकर दिल्लीपर हमला करना प्रधान सेनापतिको उचित नहीं मालूम होता था। वे सतलज और यमुनाके बीचवाले प्रदेशमें सब सेना एकत्र करके और सेनाओंकी राह देख रहे थे। १७ मईको सर जान लारेंसको उन्होंने जो कुछ लिखा उसका मतलब यह है—"जो थोड़ीसी गोरी सेना इस वक्त तैयार है उसे लेकर दिल्लीपर आक्रमण करना उचित है या नहीं, इसपर आप विचार करें। मेरे विचारसे यह सेना दिल्लीके लिये काफी नहीं है। बड़ी बड़ी तोपोंकी मददसे हम शहरपनाह तोड़कर सेनाओंके लिये रास्ता कर सकते हैं, पर शहरमें जो छोटे रास्ते हैं उन सबको थोड़ेसे आदमियोंसे हम नहीं रोक सकते। अगर यह छः सात

सौ आदमी अपर्याप्त हो गये तो फिर इनमेंसे कोई बाकी न बचेगा। अगर चारों ओरकी प्रजा हमारे विरुद्ध उठ खड़ी हो तो हम उसे कैसे वशमें करेंगे ? हमारे पास लड़ाईका सामान बहुत अच्छा नहीं है, इस सामानपर हमें पूरा भरोसा भी नहीं। अगर हमारे पास सामान बहुत अच्छा होता तो कोई परवा नहीं। मैंने यहां मेजर जनरल और ब्रिगेडियर जनरलसे सलाह की, वे भी यही कहते हैं।"*

पर लार्ड लारैंस देर करना मुनासिब न समझते थे। जरासी देर, जरासी असावधानी, जरासी चूकसे बड़े भारी भयकी संभावना थी। लार्ड लारैंस लाहौरसे और लार्ड कैनिंग कलकत्तासे बराबर प्रधान सेनापतिको दिल्ली फतह करनेको लिख रहे थे। लारैंसने भी सोचा था कि जो दिल्लीमें बादशाह अधिक समय टिक गया तो भारतवासी अंग्रेज़ोंकी शक्तिको नष्ट हुआ समझेंगे, और इस कारण जो ग़दर हो गया तो संभालना कठिन हो जायगा। फिर हरएक भारतवासी सिपाहियोंकी मदद करेगा। इस लिये चाहे जैसे हो, एक क्षणका भी विलम्बन करके दिल्लीपर आक्रमण कर दिया जाय। उन्होंने सेनापतिको पत्र लिखा,—"एक बार भारतके हमारे पिछले इतिहासपर नजर डालकर देखें, हमने

* Unpublished Memoir by Colonel Baird Smith: quoted by Kaye Vol II. P. 149 note, Comp. Bosworth Smith's Life of Lord Lawrence Vol II.P.28. and Holme's Indian Mutiny, P. 121.

जिस कामको हाथमें लिया उसमें विफलता कब हुई ? हिम्मत और उत्साहशून्य आदमियोंकी सलाहसे जब हमने काम किया तभी सफल न हुए। अपने अफसरोंका कहा न मानकर, सिर्फ बारह सौ आदमी लेकर क्लाइवने पलासीकी लड़ाईमें चालीस हजार आदमियोंको हराया, उसीने बंगालमें अंग्रेज़ी राज्य स्थापित किया। चम्बलसे सेनापति मेनसनको पीछे हटना पड़ा। आगरा लेनेसे पहले उनकी सेना अंडबंड और कुछ नष्ट भी हो गई थी। काबुलकी दुर्घटनाका विचार करें। यदि एकाग्रता और साहससे काम होता तो यह दुर्घटना कभी न होती। जो ग़ैरमुल्कवाले तनख्वाहपर हमारा काम करते हैं, वे हमारे लिये अपना सर्वस्व त्याग क्यों करेंगे ? वे जो हमारे पक्षमें हैं उसका भी कारण है। वे जानते हैं कि हम जो काम करते हैं उसमें ही सफल होते हैं। इसलिये हमारी अधीनतामें काम करना उन्हें बुरा नहीं लगता। फिर जरा यह भी सोचिये कि हर एककी नजर अपनी भलाईकी ओर होती है। पंजाबकी अनियमित सेना, लड़ाईमें अपनी सफलता दिखानेको तैयार है, वह अंग्रेज़ोंके साथ खड़ी होकर युद्ध करना चाहती है। अगर यह सेना पहुंच जाय और देखे कि गोरी सेना लड़नेसे कतराती है, तो वे अपने आप समझ जायंगे कि अंग्रेज़ हार गये। मान लीजिये कि थोड़े दिन इसी तरह बैठे रहकर हमने और सेना इकट्ठी की, पर इसी मौकेपर चलवाई . सिपाहियोंके दूत दूसरी फौजी छावनियोंमें जाकर हमारे ख़िलाफ उन सेनाओंको तैयार

कर सकते हैं। इस साल फसल अच्छी है। अम्बाला और मेरठसे सेनाओंकी रसद इकट्ठी हो जायगी। हम देशके हरएक भागमें सेना भेजते हैं। पटियाला और झींदके राजाओंपर हमें भरोसा करना चाहिये। वे हमारे पक्षमें हैं, इसके प्रमाण भी मिल रहे हैं। पर सिपाहियोंका विश्वास न करना। अगर पंजाबके किसी सैनिक अफसरकी जरूरत न हो तो शीघ्र मुझे सूचना दें।"

पंजाबके लेफ्टिनेंट गवर्नरका यह मार्मिक पत्र पाकर प्रधान सेनापति धैर्य और गम्भीरतके साथ आगे बढ़े। सर लारेंसका पत्र ओजस्विनी भाषामें लिखा होनेपर भी ऐतिहासिक सत्यसे हीन है। जिस पलासीकी लड़ाईको उन्होंने महासंग्राम लिखा है वह वास्तवमें इसके योग्य नहीं। विश्वासघातक और स्वामी-द्रोहसे लार्ड क्लाइव सफल हुए। यदि वे ऐसा न करते तो शायद मौका ही न मिलता। मीरजाफरके घोर विश्वास-घातने क्लाइवकी विजय की। खैर, यह इतिहासकी बात है, पर लार्ड लारेंसके ओजस्वी पत्रने प्रधान सेनापतिको दिल्लीपर आक्रमण करनेके लिये तत्पर कर दिया। वे दिल्लीपर आक्रमण करनेमें लग गये थे। प्रधान सेनापति शासकविभागके अधीन थे। जब गवर्नर जनरलने हमला करना ही उचित समझा तब वे बढ़े। प्रधान सेनापति एनसनने २३ मईको गवर्नर जनरलको लिखा—"दिल्ली जल्द पहुँचना कठिन है। आपने तारमें कहा है कि दिल्लीपर जल्दी अधिकार कर लेना चाहिए। पर काफी गोरी सेना यहाँ नहीं है। जहाँतक हो सका मैंने सेना

एकत्र की। एक घंटा भी मेरा व्यर्थ नहीं गया। जो गोरी सेना मेरे पास है, वह दिल्लीपर हमला करनेके लिये काफी है या नहीं, इसपर विचार कीजियेगा।" प्रधान सेनापतिने अपनी सेनाकी संख्या और उसका विवरण मेरठके सेनापति ह्यूटके पास लिख भेजा।

प्रधान सेनापति जिस समय अम्बालासे यह पत्र लिख रहे थे उस समय गवर्नर जनरलने आगराके लेफ्टिनेंट गवर्नरके मारफत उन्हें तार दिया कि, जितनी जल्दी हो सके दिल्लीपर हमला करो। वे भरसक इसमें सहायता करेंगे। पर इधर प्रधान सेनापति तरह तरहकी सेनाकी कमीकी बात कहने लगे। इससे गवरनर जनरल अस्थिर हो गये। ३१ मईको उन्होंने फिर प्रधान सेनापतिको तार दिया—"आज मैंने सुना कि आप ६ जूनसे पहले दिल्ली न पहुँच सकेंगे। यदि देर लगी तो कानपुर और लखनऊमें ग़दर हो जायगा। दिल्लीसे कानपुरतक हर जगह बलवा होगा। इस ग़दरको रोकना जरूरी है। कानपुरको बचानेकी कोशिश करो। आपका तोपख़ाना दिल्लीके लिये काफी है। मेरे खयालसे एक दस्ता पैदल गोरी सेना और एक दल गोरा रिसाला अगर आप दिल्लीके पूर्व भेज दें तो अलीगढ़ और कानपुरमें शान्ति बनी रहे।"

इस मौकेपर एक ऊंचे दर्जेके सर्दार रईस सरकारकी मददके लिये तैयार हुए। सतलज और यमुनाके प्रदेशके बहुतसे छोटे छोटे राजा जागीरदार लोग सरकारके मित्रराज्योंमें थे।

जब उन्नीसवीं सदीके शुरूमें वीर पंजाबकेसरी महाराज रणजीतसिंह अपने तेजसे राज्यका विस्तार कर रहे थे। तब इन छोटे छोटे राजाओं और जागीरदारोंने अंग्रेज़ोंसे मित्रता करके रणजीतसिंहसे अपने राज्योंकी रक्षा की थी। रणजीतसिंहसे बचनेके लिये पटियालाके महाराजने चार्ल्स मेटकाफके हाथमें अपने किलेकी चाबी देकर कहा था कि इसमें जो कुछ है. वह सब हरवक्त सरकारके लिये तैयार है। उसी समयसे यह सब राज्य सरकारके मित्रराज्य समझे जाते थे। जब ग़दरके कारण स्थान स्थानपर सिपाही अंग्रेज़ोंके जानी दुश्मन बन गये तब इन मित्रराज्योंने अपने पुराने वादोंको पूरी तरहसे निभाया। जींद और नाभाके राजाने भी पटियालाका अनुकरण किया। इस समय अम्बालासे कर्नालतक रास्तेकी रक्षा करनी जरूरी थी, क्योंकि अम्बालासे कर्नाल सेना आ रही थी। दिल्लीसे जो अंग्रेज़ भागे थे वे भी कर्नालमें जमा थे। इसके अतिरिक्त कर्नाल सरकारके अधीन रहनेसे मेरठकी छावनीसे सुगमतासे समाचार लिये दिये जा सकते थे। कर्नालके नवाब भी सरकारकी मददपर थे। जब जींदकी फौजें कर्नाल आईं तब वहाँकी प्रजाके उठनेकी जो खबरें थीं वे सब दब गईं। पटियालाकी सेना अम्बाला और कर्नालके बीच थानेश्वरपर आ गई। इस तरह इन मित्रराज्योंके कारण रास्तेकी रक्षा हुई। मेरठके समाचार आनेमें कोई दिक्कत न रही।

कर्नालसे तीन मीलपर भारतका प्रसिद्ध संग्रामक्षेत्र पानीपत

है। तीन बार इस संग्रामभूमिपर भारतका भाग्य बदला है। लाखों आदमियोंका खून इस भूमिने पीया है। बाबरकी दुरवस्था इस भूमिमें दूर हुई, अकबरके खोये हुए राज्यका यहींसे फिर उत्थान हुआ। अन्तमें अहमद शाहने मरहठोंकी आशालताको इसी मैदानमें काट गिराया। इस रणभूमिकी कथा अंग्रेज़ भूले नहीं थे। यहीं जींदकी फौज ठहरी। अम्बालासे एक गोरी सेना चली। यह बड़ी जल्दीसे पानीपत आ पहुँची। अम्बालामें जो बाकी गोरी सेना थी उसे लेकर प्रधान सेनापति २५ मईको अम्बालासे चले। पर उनका समय पूरा हो चुका था। उन्होंने जिस कर्त्तव्यका बोझ अपने ऊपर लिया था उसे पूरा करनेका अवसर न मिला। २५ मईको प्रधान सेनापति अम्बालासे चले। २६ को वे कर्नालमें मृत्युशय्यापर सुखसे आराम करने लगे। सर हेनरी बर्नार्ड रातको उनके खेमेमें गये, वे धीरे धीरे मृत्युके अधीन होते जा रहे थे। अपने मित्रको पहचानकर उन्होंने कमजोर आवाजमें कहा—"बर्नार्ड, मैं फौजोंको ले जानेका भार तुम्हारे हाथ सौंपता हूं। तुम कहना कि मैं अपना काम समाप्त करनेको बहुत उत्सुक था पर मौत मुझे दूसरे लोकमें ले जा रही है। मैं प्रार्थना करता हूं कि तुम्हें सफलता हो। ईश्वर तुम्हारा सहायक हो। अब विदा।" इसके एक घंटा बाद प्रधान सेनापति एनसनकी जीवनलीलाका संवरण हो गया।

इस प्रकार ग़दरके प्रारम्भमें ही भारतके प्रधान सेनापति

हैज़ेसे मर गये। इस समय यह कहनेकी जरूरत नहीं कि उन-पर जिस कामके सम्पादनका भार दिया गया था, उसके लिये वे कहाँतक योग्य थे। केवल यह कहना काफी होगा कि भारतके कर्मक्षेत्रमें प्रविष्ट होकर वे सबको समानरूपसे सन्तुष्ट न कर सके। वे साहसी और सीधे हृदयके थे पर कामके मौकेपर सूक्ष्मबुद्धिका परिचय न दे सके। जिस समय चारों ओर भयानक द्वेषकी आग फैल रही थी, चारों ओर अंग्रेज़ोंकी हत्या करनेके लिये उन्मत्त सिपाही घूम रहे थे, उस समय प्रधान सेनापति अपने कामका कुछ भी सम्पादन न कर सके। यदि वे घटनास्थलपर मौजूद होते तो मेरठके सिपाही दिल्लीके सिपाहियोंसे नहीं मिल सकते थे। जब मेरठकी होली हो चुकी और दिल्लीके अंग्रेज़ोंका नाश हो चुका, तब भी वे शिमलाकी हवा खा रहे थे। मेजर जनरल टूकर नामक एक सैनिकने लिखा था—"मैं हिम्मतके साथ कहता हूं कि जांच करनेपर मालूम होगा कि सेनापति एनसन योग्य न थे। वे शान्त, धीर और सभ्य थे, उनके दिलकी कमजोरीके बारेमें कोई बात नहीं कही जा सकती, पर सारी जिम्मेदारीपर विचार करते हुए सिर्फ सिफारिशपर ऐसे जिम्मेदारीका ओहदा देना उचित नहीं।* एक और कर्मचारीने इसीपर कहा था—" मौतने सेनापति एनसनको घातकके हाथसे मुक्त किया। सेना उनसे घृणा करती थी। उनका तम्बू उन्होंने जला दिया। वे योग्य न

* Martin's Indian Empire Vol. II. P. 180.

थे। केवल घुड़दौड़ उनका प्रिय आमोद था।* इस प्रकार कई बड़े २ अफसरोंने सेनापतिके विषयमें कहा था। किसी किसीने सेनापतिके गुण भी लिखे हैं पर वे गुण सर्वसम्मत नहीं हैं। समालोचककी सानपर वे नहीं टिकते। वे सहृदय और शान्त स्वभाववाले थे, सभ्यताका व्यवहार करके समाजमें अपनी प्रभुता जमा सकते थे। पर विपत्तिपूर्ण ग़दरके मौकेपर थोड़ीसी सेनासे देशभरको वश कर लेना उनका काम न था। वे प्रधान सेनापतिके पदकी रक्षा न कर सके।

प्रधान सेनापति मरते समय बर्नार्डको सेनासंचालनका भार दे गये। अपनी जिम्मेदारी समझकर बर्नार्ड दिल्लीको अग्रसर होने लगे। दिनमें चारों ओर प्रचण्ड गर्मी पड़ती थी इसलिये गोरी सेनाका चलना कठिन था, वह रातमें चलती थी। जब सूर्य छिप जाता तब यह लोग चलते थे और जहाँ सूर्य निकलता वहीं मुकाम कर देते थे। गर्मीके कारण गोरी सेनाके सैनिक व्याकुल थे। धूप निकलनेके बाद वे अपनी २ छोलदारियोंमें जा घुसते। छोलदारियोंमें भी शान्ति न थी। आगकी उबली हुई धाराकी तरह लू बहती थी, ऊपर प्रचण्ड सूर्य चौदह घंटे तपता था। छोलदारीके भीतर वे लोग मुर्देकी तरह पड़े रहते थे। जब सूर्य छिप जाता तब फिर इनमें जान आती। फिर अपना २ सामान लेकर यह लोग आगे बढ़ते। जैसे बाहरकी प्रकृति अशान्त थी वैसे ही इनके हृदय भी अशान्त थे। अपने

* Martin's Indian Empire, Vol. II. P. 180.

अपने भाइयोंका बदला लेनेके लिये इनके हृदय तड़प रहे थे। उस जोशमें वे रास्तेमें ही अनर्थ कर बैठते थे। दिल्लीसे जो अंग्रेज़ भागे थे वे रास्तोंमें बड़ी बड़ी विपत्तियोंमें पड़े थे। यह गोरी सेना आसपासके गाँवोंमें जाकर वहांकी प्रजाको अपने भाइयोंको दुःख पहुंचानेके लिये अपराधी मानकर, उनसे कठोर बदला लेती थी। वह किसीको गांवसे पकड़ लाती और उसे दोषी कहकर बड़ी निष्ठुरतासे मार डालती। इसके अफ़सर भी इसकी सहायता करते थे। एक सहृदय अंग्रेज़ लेखकने लिखा है—"सेना दिन पर दिन भयानक बनती जा रही थी। यहां तक कि अपने हिन्दुस्तानी नौकरोंपर इनका इतना अत्याचार होता था कि वे भाग जाते थे। जिसको यह लोग पकड़ लाते उसका विचार करनेमें जितनी देर लगती अर्थात् जबतक उसे मारनेका हुक्म नहीं दिया जाता, तबतक यह लोग उन्हें अधमरा कर डालते थे। इसके बाद उसकी चोटी पकड़कर खींचते, संगीनोंसे छोटे २ घाव करके उसे तड़पाते, फिर उसके मुंहमें गायका मांस देते। पास खड़े हुए अफसर उनके इस कामकी प्रशंसा करते थे।

आदमियोंके खूनकी प्यासी गोरी सेना, अपने राक्षसी भावका परिचय देती हुई, दिल्लीकी ओर बढ़ने लगी। दिल्ली अधिक दूर न था। इनका विश्वास था कि एक ही दिनमें दिल्ली फतह हो जायगा। एकही लड़ाईमें विद्रोही सेनाका नाश हो जायगा। यह लोग सवेरे लड़कर दिल्ली फतह करेंगे और

शामको बैठकर शराब पीयेंगे। तम्बुओंमें जो अस्वस्थ थे वे भी अपने आपको तन्दुरुस्त कहने लगे। वे कहने लगे कि हमारा नाम बीमारोंसे काट दो, हम संग्राम करेंगे। पर लोग जितने क्रोधसे जोशमें आ गये थे, वास्तवमें उतने शक्तिशाली न थे इस सेनामें साहस था, पर एक और सेनाकी सहायता करनी भी आवश्यक थी। सेनापति विलसनकी सेना इनकी मददके लिये मेरठसे आ रही थी। १० मईकी रातके बादसे यह सेना मेरठमें क्या कर रही थी इसका वर्णन आगे करेंगे।

१० मईकी जिस रातको सिपाही अंग्रेज़ोंको मारकर दिल्ली चले आये उसके दूसरे दिन सब मरे हुए अंग्रेज़ एक जगह इकट्ठे किये गये। तहसीलका सारा खजाना भी वहीं लाया गया। सिपाहियों और कैदियोंके अत्याचारोंसे अंग्रेज़ोंका सब कुछ विध्वंस हो गया था।* यह सब देखकर अधिकारियोंने ग़दरकी भयंकरताको खूब समझ लिया था। अपने आपको बचानेके लिये उन्होंने फौजी कानून प्रचलित कर दिया।

---

* सरकारी रिपोर्टमें प्रकाशित हुआ था कि रामदयाल नामक एक आदमी जमीनकी बाकीका रुपया न चुका सका इसलिये अदालतके सामने वह मुजरिम हुआ और उसे जेल हुई। जब मेरठमें ३ नं० रिसालेने जेल तोड़ दी तब और कैदियोंके साथ यह भी छूटा। यह छूटते ही अपने गांव भोजपुर गया और वहांसे बहुतसे आदमी लेकर उस महाजनको जिसने नालिश की थी परिवार सहित मार डाला। घर लूटकर आग लगा दी। Kaye's Sepoy War. Vol II. P. 173 note.

पर इस कानूनसे भी कोई न्याय न होता था। जिसपर जरा शक होता था उसे इस कानूनके नामपर फांसी दे दी जाती थी। सिपाहियोंके आक्रमणोंसे अंग्रेज़ोंकी जो दशा हो गई थी, इस कानूनके नामपर अधिकारियोंने प्रजाकी वही दशा कर दी। जिसे सामने पाया उसे ही शकपर फांसी दे दी। उन्होंने अपनी हिंसाका बदला उससे भी बढ़कर क्रूरतासे लिया।

मेरठसे ६० मील दूर गंगाके किनारे रुड़कीका नगर है। यहां प्रधान एंजिनियरिंग कालिज है। रुड़कीके टामसन कालिजका कारखाना तरह तरहके हथियारोंसे भरा हुआ था। रुड़की नगर शान्त था। मेजर फ्रेजर इस स्थानको सबसे अधिक शान्त कहते थे। पर जब मेरठके विद्रोहका समाचार रुड़की पहुंचा तब सब शंकित हो उठे। मेरठसे हुक्म गया कि मेजर फ्रेजर अपने अधीन सेना लेकर मेरठ पहुंचें। फ्रेजर गंगाकी नहरमें किश्तियां डलवाकर नावों द्वारा मेरठ चले। उनके साथ ७१३ फौजी एंजिनियर थे। इसी समय फिर समाचार आया कि रुड़कीकी रक्षाके लिये वहां दो दल सेना छोड़कर बाकी यहां ले आओ। इसलिये ७१३ मेंसे ५०० आदमी मेजरके साथ मेरठके लिये रवाना हुए।

इनके रवाना होनेके बाद दिल्लीके अंग्रेज़ोंके विध्वंसका तार रुड़की पहुंचा। बेयर्डस्मिथ कालिज और कारखानेकी रक्षाका प्रबन्ध करने लगे। वे पश्चिमोत्तर प्रदेशकी नहरोंके अफसर थे। वे अपने कामको अच्छी तरह जानते थे। लड़ाई

या ग़दरसे उनका कोई सरोकार न था। पर अब रुड़कीकी रक्षाका भार उनपर था। वे बड़ी जल्दी अपनी रक्षाका प्रबन्ध करने लगे। १६ मईको सब अंग्रेज़ स्त्रियां और बच्चे कालिजमें आ गये। यह सब मिलाकर १०० थे। इनमेंसे अधिक क्लर्क थे, इसलिये बंदूकसे उनका कोई सरोकार न था। ५० शिक्षित सिपाही और आठ दस अफसर थे। बेयर्ड स्मिथ इनके संचालक बनकर रुड़कीकी रक्षा करने लगे।

रुड़कीमें जो हिन्दुस्तानी सैनिक एंजिनियर थे उनपर बेयर्ड स्मिथने भरोसा न किया। तरह तरहकी बाजारू अफ-वाहोंसे उनके दिल कांप उठे थे। हड्डी मिले मैदेकी बात चल पड़ी थी। सिपाहियोंकी तरह वे भी सोचने लगे थे कि उनके भी हथियार लेकर सरकार उन्हें नाश कर देगी। वे क्षण क्षणमें अपने ऊपर हमलेकी आशंका कर रहे थे। प्रतिक्षण उन्हें यह खयाल था कि अब हमारे हथियार और वर्दी ले ली जायगी। इसलिये उनके मनमें न शान्ति थी और न हृदयमें राजभक्ति। वे अपने ही डरसे अपने संसारकी मूर्त्ति देख रहे थे। इसी समय उन्होंने सुना कि मेजर रीडकी अधीनतामें देहरादूनसे एक गोर्खा सेना आ रही है। इससे उन्होंने समझा कि उनके हथियार लेनेके लिये ही यह फौज आ रही है। यह सुनकर बेयर्ड स्मिथने रीडको लिखा कि वे अपनी सेना लेकर रुड़की न आवें। रीडने यह बात मानी। वे रुड़की न जाकर गंगाकी नहरसे मेरठको रवाना हो गये।

इधर सिपाही फ्रेजरकी अधीनतामें मेरठकी ओर जा रहे थे। रास्तेमें कोई विघ्न न हुआ। वे ठीक समयपर मेरठ पहुंचे। वहांतक वे शान्त थे, पर वहां पहुंचनेके बाद शान्त न रह सके। सेनापतिने हर तरहसे उनका विश्वास किया था। हथियार और गोली बारूद उन्हें दी गई थी। एक मजबूत मकानमें वे रक्खे गये थे। दूसरे मकानमें सेनापतिने बारूद रक्खी थी। जो यह बात सिपाहियोंसे कह दी जाती तो कोई बात न थी, पर समयपर जरासी बातसे अनर्थ होता है। सिपाहियोंने दूसरे दिन देखा कि उनकी बारूद दूसरी जगह रक्खी जा रही है। वे समझे कि हमारी बारूद लेकर अब यह लोग हथियार माँगेंगे। इससे सबने बारूदकी गाड़ी रोक ली। एक अफगान सिपाहीने पीछेसे बंदूक छोड़ी, सेनापति फ्रेजर घायल होकर गिर पड़े। बस, फिर क्या था, सेनापतिको मारकर सिपाही हथियार और बारूद लेकर इधर उधर भागे। एक गोरी सेना उन्हें पकड़ने चली। वह केवल ५०० आदमियोंको पकड़ सकी, बाकी भाग गये। यह पकड़े हुए सिपाही सब गोरोंके हाथसे मारे गये।

२७ मईको सेनापति विलसनकी अधीनतामें मेरठकी सेना दिल्लीके लिये रवाना हुई। ग्रिथेड साहब दीवानी कार्यकर्त्ताकी हैसियतसे इनके साथ चले। पहले दो दिन यह लोग आराम-से गये, रास्तेमें कोई सिपाही न मिला। सेनापतियोंने सोचा था कि बिना दिल्ली गये विद्रोहियोंसे मुकाबिला न होगा। पर

३० मईको ग्रियेड साहबका अन्दाज़ा ठीक न निकला। यह सेना हिंडन नदीके किनारे गाज़ीउद्दीन नामक मुकामपर पहुंची थी। उस समय दिल्लीके सिपाहियोंने इस सेनाको हराना सोचा। वे मेरठ और दिल्लीमें अंग्रेज़ोंके विरोधमें लड़ चुके थे, मुगल बादशाहको तख्तपर बैठाकर भारतका एकछत्र सम्राट स्वीकार कर चुके थे, इसी कारण उनकी हिम्मत बढ़ गई थी और उन्होंने दिल्ली आनेसे पहले ही गोरोंको मार भगानेका इरादा किया था। उन्होंने सोचा था कि अम्बाला और मेरठकी सेनाको मिलने न दिया जाय, क्योंकि मिलनेसे ताकत बढ़ जायगी। इसलिये एक एकको अलग अलग हराया जाय। गाज़ीउद्दीन मुकामपर पहुंचकर सिपाही लड़ाईके लिये मोर्चा बनाकर जम गये और अपने दाहिने बाज़ूपर तोपें लगाकर अंग्रेज़ोंपर गोले फेंकने लगे। गोरी सेना भी उन्हें निशाना बनाकर गोले दागने लगी। इसी समय बंदूकवाली गोरी सेना आगे बढ़ी। थोड़ी देर दोनों ओरकी बंदूकें चलीं। सिपाहियोंने इस संग्राममें पूरी हिम्मत और वीरताका परिचय दिया। पर उनका संचालक कोई योग्य सेनापति न था, उन्हें कोई अच्छी तरह लड़ानेवाला न था। इसलिये अन्तमें वे चारों ओर भाग निकले। कोई कोई पासके गांवमें चला गया, बाकी वापिस दिल्ली आये। अंग्रेज़ोंके हाथ ५ तोपें लगीं। इस लड़ाईमें अंग्रेज़ोंका बहुत नुकसान हुआ। एक सिपाहीके असीम वीरत्वसे गोरोंकी एक बारूदभरी गाड़ीमें आग लग गई। सेना-

पति और बहुतसे गोरे लूसे घायल हुए। और सिपाहियोंके चले जाने और अपनी हार होनेपर भी इस सैनिकने सामना करके यह वीरता दिखाई। इन सिपाहियोंमें सच्चे वीरों और सच्चे त्यागियों-की कमी न थी। इन्होंने अपना जीवन और धर्म स्वाधीनताके लिये दिया था। किसी स्वार्थके वशीभूत होकर इन्होंने हथियार नहीं उठाया था, इसलिये इस इतिहासमें उनकी वीरताके लक्षण स्थान स्थानपर मिलेंगे। इतिहासके पृष्ठ उनकी वीरतासे उज्ज्वल हैं। जिन अंग्रेज़ इतिहासलेखकोंने यूरोपके इतिहास लिखे हैं, उन्होंने अपने दुश्मनोंकी भी सच्ची बहादुरीके कारण तारीफ की है। जो कहीं यह सिपाही भी यूरोपमें पैदा हुए होते, तो इनकी प्रशंसाके बड़े बड़े ग्रन्थ बन जाते। पर इस अभागे देशमें इनका नामतक नहीं मिलता। अनन्त कालके गर्भमें उनके नाम और पराक्रम लुप्त हो गये।

जो सिपाही हटकर चले आये थे वे फिर अपने भाग्यकी परीक्षाके लिये तैयार हुए। हिंडनके किनारे आकर वे फिर गोरी सेनापर गोले बरसाने लगे। अंग्रेज़ी तोपखानेने आगे बढ़कर तोपें सजाईं। दो घण्टे तक दोनों ओरसे आकाशभेदी शब्दके साथ तोपें चलीं। ३१ मईकी दोपहरको यह संग्राम हुआ था। सूर्य ऊपरसे प्रचण्ड आग बरसा रहा था, जमीन तवे-की तरह जल रही थी, गर्म लूके झोके सनसन बह रहे थे। ऐसे समयमें दोनों ओरकी तोपें आग उगल रही थीं। गोरोंके प्राण कंठमें अटक रहे थे। गर्मीके मारे उनकी दुर्दशा हो रही थी।

बहुतसे प्यास और गर्मीके मारे बैठ गये। कोई कोई थककर, पानी न मिलनेके कारण मर गये। फिर भी गोरी सेना आगे बढ़ी। उसके फौजी अफसर बाकायदा उन्हें लड़ा रहे थे, पीछेसे उन्हें सामान मिलता जाता था पर सिपाहियोंकी तरफ कोई सुविधा न थी। जब उन्होंने तुलना करके देखा कि गोरोंकी ताकत अधिक है, तब वे बन्दूकोंकी झड़ी बाँधते, अपनी तोपों और बारूदको पीछे हटाते, बाकायदा योग्य सैनिकोंकी तरह पीछे हटने लगे। सिपाहियोंकी कोई तोप या बारूद अंग्रेज़ोंके हाथ न लगी। पीछे हटकर वे सहीसलामत दिल्ली आ पहुँचे। प्यास और गर्मीके मारे गोरी सेना घबरा गई थी। पीछे हटते सिपाहियोंका वह कुछ न बिगाड़ सकी।

दिल्ली लेनेके लिये जो अम्बालाकी सेना आ रही थी उसकी मददके लिये सिर्फ मेरठसे ही सेना न आ रही थी, बल्कि बुलन्दशहर होती हुई ५०० गोर्खा पल्टन भी मेजर रीडके सेनापतित्वमें आ रही थी। दूरसे अंग्रेज़ोंने जब इस सेनाको देखा तब बलवाइयोंकी सेना समझकर घबराये पर जब पास आनेसे इन्हें मालूम हुआ कि यह हमारी ही तरफदार है तब उनके आनन्दकी सीमा न रही। प्रसन्नतासे वे उनसे मिले। ५ जूनको अम्बालाकी सेना बर्नार्डके अधीन दिल्लीसे पांच मील दूर अलीपुरमें आ गई। जबतक मेरठकी मदद करनेवाली फौज न आई तबतक वे वहीं ठहरे रहे। ६ जूनको मेरठकी सेनाने बागपतके पास यमुना पार की। इस दिन तक सब बड़ी बड़ी तोपें भी पहुँच गईं।

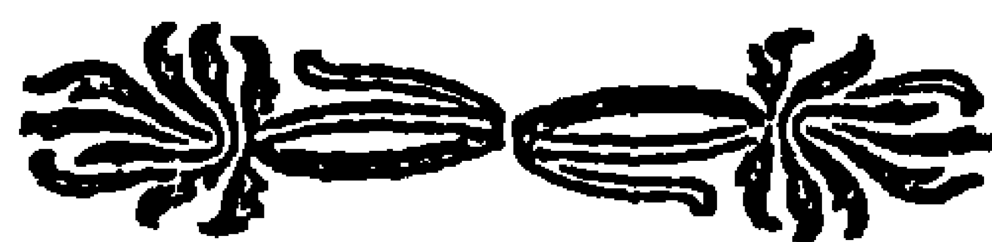
७ जूनको मेरठकी सेना अम्बालाकी सेनासे मिलनेके लिये, अलीपुरकी ओर चली। दूसरे दिन एक बजेके करीब वे दिल्ली-की ओर बढ़े। जासूसके द्वारा उन्हें मालूम हुआ कि सिपाही उन्हें रोकनेके लिये शहरसे बाहर तैयार हैं। गोरी सेना अपने गौरवके उद्धारके लिये आगे बढ़ी। दिल्लीसे छः मील दूर बदलिका सरायमें सिपाही तैयार थे। इस स्थानपर बहुतसे पुराने मकानात और बाग थे। बादशाहतके जमानेमें उनके वजीर लोग यहां रहा करते थे। सेनापति बर्नार्ड अपनी सारी सेना लेकर इसी स्थानकी ओर बढ़ने लगे। ८ जूनको सवेरे आठ बजे जैसे ही यह लोग आगे बढ़े वैसे ही सिपाहियों-की तोपोंके गोले इनपर आकर गिरने लगे। सिपाही सबसे पहले तोपोंसे लड़ाई शुरू करते थे। उसी समय गोरी सेना चार हिस्सोंमें बँट गई। बर्नार्डने दाहिनी ओरसे हमला किया, एक दूसरे सेनापतिने बाईं ओरसे धावा किया। आगे और पीछेसे बाकी दो दल सेना आने लगी। इस प्रकार सिपाही चारों ओरसे दबाये गये। इस हालतमें भी वे घबराये नहीं, उनकी वीरता उनके साथ थी, उनका साहस और पराक्रम अपार था। जब चारों ओरसे गोरी सेना गोली बरसाती हुई उनकी ओर बढ़ी, तब वे अपनी तोपोंके सहारे, बड़ी वीरतासे, चारों ओरके हमलोंका जवाब देने लगे। तोपें छोड़कर वे एक कदम भी पीछे न हटे। वे जिस महामंत्रकी साधनाके लिये तैयार हुए थे, उसकी सिद्धिके लिये खड़े खड़े प्राण देने लगे,

पर हटे नहीं। गोलियोंके बाद संगीनोंका नम्बर आया। गोरोंने उनपर संगीनें चलाईं, उन्होंने गोरोंपर चलाईं। खूनसे लथपथ होकर वे अपनी तोपोंके पास, सच्चे वीरकी तरह अनन्त निद्रामें सो गये।

जब सेनापति ग्रेव्सने बाईं बाजूसे हमला किया, अपने गोलंदाज सवारोंके साथ वे जब उनपर जा टूटे तब सिपाही पीछे हटनेके लिये बाध्य हुए। शुरूमें वे बाकायदा लड़ते हुए पीछे हटे पर बादमें वह नियम न रह सका। उनकी तोपें और बारूद अंग्रेज़ोंके हाथ लगीं। इस बदलिका सरायसे दिल्लीकी ओर दो रास्ते गये हैं, एक सब्जीमंडीकी ओर और दूसरा अजीतगढ़की छावनीकी ओर। इन दोनों रास्तोंसे सिपाही पीछे हटकर शहरमें आ गये। इस प्रकार ८ जूनकी लड़ाई समाप्त हुई। इस लड़ाईमें ३०० सिपाही मारे गये। दूसरी ओर चार गोरे अफसर और ४६ सिपाही मरे और १३४ गोरे घायल हुए। गोरी सेनाके एडजूटॅट जनरल कर्नल चेस्टर इस लड़ाईमें घायल हुए। इनके घायल होनेसे बड़ी हानि हुई। इस लड़ाईमें केवल गोरे ही न थे, बल्कि सेनापति रीडकी अधीनतामें ५०० गोर्खे भी हमला कर रहे थे। गोर्खोंके अतिरिक्त मेरठके हिन्दुस्तानी सिपाही, महाराज जींदकी फौज और जांफिसानखां नामक अफगानका हिन्दुस्तानी रिसाला भी लड़ा था। यदि केवल गोरे होते तो नहीं कहा जा सकता इस लड़ाईमें क्या होता! पर सच यह है कि हिन्दुस्तानकी सेनाओंसे हिन्दुस्तान जीता गया है। इसी देशकी

सेनायें भरती करके अंग्रेज़ शुरूमें इस देशपर कब्ज़ा करने लगे थे। यहींके सिपाहियोंकी मददसे लार्ड क्लाइवने दक्षिणमें अंग्रेज़ी राज्य स्थापित किया, यहींके सिपाहियोंकी मददसे अभागे सिराजुद्दौलाको हराकर बंगालपर कब्ज़ा किया गया। हर लड़ाई और देशपर कब्ज़ा करनेमें यहींके सिपाही थे। जब सिपाही अंग्रेज़ोंके विरुद्ध हुए, तब इसी देशकी सेनाओंने उन्हें दबाया। अपने देश, अपनी जाति और अपने धर्मवालोंके गलोंपर तलवार चलाकर, इस देशवालोंने अंग्रेज़ोंका शासन फिर जमाया। बिना हिन्दुस्तानियोंकी मददके ग़दरसे अंग्रेज़ोंका उद्धार नहीं हो सकता था।

विजयी होकर बर्नार्ड छावनीके कवायदके मैदानमें फिर सेना लेकर पड़े। एक महीने पहले जहाँसे लोगोंने अंग्रेज़ोंको बुरी तरहसे भागते देखा था वहीं फिर गोरी सेनाको दलबलके साथ देखा। दिल्लीसे अंग्रेज़ी झंडा दिखाई देता था। सिपाहियोंने फिर सेनाको शहरकी फसीलके नीचे खड़ा होते देखा, पर उन्होंने वीरताको नीचा दिखानेवाली हार न स्वीकार की। वे फिर अन्तिम बार युद्धकी तैयारीमें लगे।



आठवां अध्याय



पश्चिमोत्तर प्रदेशमें गदर—बनारस—आजमगढ़ ।

जिस समय लार्ड कैनिंग दिल्ली लेनेके लिये सेनापतियोंको नियुक्त कर रहे थे उस समय पश्चिमोत्तर प्रदेशकी खबरें पढ़ पढ़कर वे चिन्तित हो रहे थे। इस ओर गोरी सेना न थी, दूर दानापुरमें एक गोरी फौज थी। इसके अलावा कुछ गोलंदाज अंग्रेज़ोंकी ओर थे। यदि उत्तेजित सिपाही इन स्थानों पर हमला कर दें तो वहांके गोरोंका जीवन विपत्तिपूर्ण हो जाय। जिस तरह मेरठका सिपाहियोंने नाश किया, दिल्लीके अंग्रेज़ोंका जैसे उन्होंने विध्वंस किया, वैसे यदि वे गंगा यमुनाके किनारेके शहरोंकी ओर चले तो वहांके सब युरोपीय मारे जायँगे, यही चिन्ता गवर्नर जनरलको थी। जिस वक्त अंग्रेज़ मुगल राजधानीसे भाग रहे थे, उस समय दूसरी जगहोंकी हिन्दुस्तानी छावनियोंमें इतना जोश न था। और किसी स्थानपर सरकारको इतना हैरान न होना पड़ा। पर बाजार और छावनी, हर जगह जोश दिखाई देता था। इस जोशसे भयानक दुर्घटना होगी, यह सबको साफ मालूम होता था। कुछ हफ्तोंके भीतर ही यह परिवर्तन दिखाई दया और देखते देखते वह संहारक मूर्त्ति बन गया।

पश्चिमोत्तर प्रदेशमें, हिन्दुओंका पवित्र तीर्थ, बनारस या काशी है। यह स्थान तीर्थ होनेके साथ २ सदासे विद्याका घर रहा है। इसमें पृथक् पृथक् सम्प्रदायके हज़ारों मन्दिर, अतिथि-शाला, पाठशाला और विद्यालय हैं। गंगाके किनारे मीलों लंबी सीढ़ियोंकी कतारें एक सुन्दर चित्रके समान मालूम होती हैं। गंगाके किनारे निरन्तर "हर हर शिव शिव"की ध्वनि होती रहती है। सदियोंपर सदियां बीतीं—राज्योंके बाद राज्य बदले—पर काशी जैसी उस समय थी वैसी ही आज भी है। ब्राह्मणकुमार आज भी चारों ओर वेदगान करते सुनाई देते हैं, तत्त्वज्ञ आज भी वेद वेदान्तकी चर्चा करते दीखते हैं।

उस समय इस तीर्थके निवासी शान्तिसे अपना समय बिता रहे थे। जो जोश मेरठ और दिल्लीवालोंमें था वह बनारस-वालोंमें नहीं दीखा था। १८५७ की गर्मियोंमें खाने पीनेकी चीजें बहुत महंगी हुईं। लोगोंका विश्वास हुआ कि अंग्रेज़ी राज्यके कारण उनकी खाने पीनेकी चीजें महंगी हो गईं। इसी कारण सर्वसाधारणमें अंग्रेज़ोंके विरुद्ध जोश फैला। जोशका और भी कारण था, बहुतसे राज्यभ्रष्ट पुरुष और दिल्लीके राजवंश-वाले बनारसमें थे। इनलोगोंका मन्त्र भी व्यर्थ न गया था। जातीय सम्मान और जातीय धर्मनाशका भय, इन सबपर चीजों-की महंगी—जोशके लिये इतनी बातें ही बहुत थीं। शहरसे तीन मील दूर एक सिकरौल नामक स्थान है, अंग्रेज़ लोग वहीं रहते थे। वहाँ सेना, कालेज, अस्पताल, गिरजा, बाग आदि

सब कुछ है। उस समय सेनामें तीन दल भारतीय सेना और थोड़ेसे गोरे गोलन्दाज़ थे। इन सेनाओंमें एक दल ३ नं० पदल सेना, एक दल लुधियानाकी सिक्ख सेना और एक दल १३ नं रिसाला था। सब मिलाकर दो हज़ार सिपाही थे। गोरे गोलन्दाज़ोंकी तादाद ३० थी। जार्ज पन्सवी इसके कमांडर थे। टुनरी हुकर बनारसके कमिश्नर, फ्रेडरिक गबिन्स जज और लिण्डसे मजिस्ट्रेट थे। मेरठ और दिल्लीके समाचार इन्हें मिल चुके थे और इसी कारण यह सब इस प्रान्तकी रक्षामें तत्पर थे। पर इन लोगोंके यत्न विफल गये, जो दिल्लीमें हुआ था वही बनारसमें भी हो गया।

जून मासके शुरूमें सिपाहियोंके कुछ घर आगसे जल गये। इसके बाद बनारससे ६० मील दूर आज़मगढ़से समाचार आया कि वहांकी १७ नं० सेना सरकारके विरुद्ध उठ खड़ी हुई। आजमगढ़की यह सेना मेजर बरोसके अधीन थी। मेजर बरोस अधिक प्रतिभाशाली पुरुष न थे, सिपाहियोंके जोशको वे वशमें न कर सके। मई मासके अन्तमें सिपाहियोंको जो कारतूस दिये गये उन्हें छूनेसे उन्होंने भी इनकार कर दिया। जोश था ही, साथ ही उन्होंने सुना कि पांच लाख रुपया गोरखपुरसे आ रहा है, रुपयेकी रक्षाके लिये १७ नं० सेनाके कुछ सिपाही और १३ नं० रिसालाके सवार थे। लेफ्टिनेंट पालिसर सबके अफसर थे। यह रुपया आजमगढ़ पहुँचा। आज़मगढ़से दो लाख रुपया और मिलाकर यह रुपया बनारस भेजा जाने लगा। सात लाख

रुपया पास देखकर सिपाही स्थिर न रहे। इतना रुपया लेकर वह सेना ३ जूनको आजमगढ़से चली। दूसरे दिन जब अफसर लोग अपने अपने परिवारके साथ बैठकर खाना खा रहे थे तब उन्होंने तोपकी आवाज सुनी। घबराकर उन्होंने देखा कि लड़ाईका बाजा बज रहा है और सेना तैयार होकर एकत्र हो रही है। वे समझ गये कि सेना सरकारके विरुद्ध खड़ी हो गई। अंग्रेज़ोंमें घबराहट फैल गई। जिलेके मजिस्ट्रेटने पहलेसे ही कचहरीको अपना रक्षास्थान नियत किया था। अंग्रेज़ स्त्रियाँ और अफसर आकर कचहरीमें छिपे। सिपाहियोंने अपने अंग्रेज़ अफसर कार्टर मास्टर और मास्टर सर्जनको मार डाला। इनके अतिरिक्त उन्होंने और किसीसे कुछ न कहा। उन्होंने सब रुपया लूट लिया, अंग्रेज़ोंके खाली घरोंको जला दिया, जेलपर हमला करके सब कैदियोंको छोड़ दिया, पर अफसरोंको उन्होंने नहीं मारा। १३ नं० सेनाके सिपाहियोंने इस समय अफसरोंके साथ सद्य व्यवहार किया। उन्हें अपने बीचमें लेकर उन्होंने कहा कि इनकी हम रक्षा करेंगे। सिपाहियोंमेंसे किसी किसीने कहा कि आजमगढ़के सिपाहियोंने इनकी जानें लेनेकी प्रतिज्ञा की है इसलिये जल्दी गाड़ियोंमें बैठकर निकल चलना चाहिए। अफसरोंने कहा—"इस मौकेपर हमें गाड़ियाँ कौन देगा?" सिपाहियोंने कहा—"न मिलेंगी तो हम आपलोगोंको पहुंचा देंगे।" यह कहकर वे सेनासे गाजीपुरकी ओर दस मीलतक गये। उन्होंने जो रुपये ले लिये थे उसमेंसे

एक एक महीनेकी तनख्वाह सब अफसरोंको देना चाहते थे। इस समय इस सेनाने अपने अफसरोंके साथ बड़ी दयाका व्यवहार किया था।* धन लेकर वे आजमगढ़ वापिस आये। किसी किसीने अफसरोंको रक्षित स्थानतक पहुंचा दिया। आजमगढ़के अंग्रेज़ जान बचानेके लिये गाज़ीपुर भाग गये थे। सिपाहियोंने जब देखा कि आजमगढ़में कोई अंग्रेज़ नहीं है, कचहरी, छावनी सब सूनी पड़ी है, तब वे प्रसन्नताके साथ फैजाबादकी ओर चले।

आजमगढ़का समाचार बनारस पहुंचा। बनारसके अधिकारी अपनी रक्षाका प्रबन्ध करने लगे। उधर उन लोगोंकी सहायताके लिये सेनापति नील सेना लेकर चल चुके थे। रानीगंजतक रेलमें आकर नील घोड़ोंकी डाक द्वारा बनारस पहुंचे। नीलके साथ उनकी मद्रासी गोरी सेनाके अतिरिक्त दानापुरकी गोरी सेना भी थी। जब यह नीलकी सेना दलबल सहित बनारस पहुंची तब बनारसके अधिकारी हिन्दुस्तानी सेनाके हथियार लेनेपर तुल गये।

हथियार लेनेके सम्बन्धमें अधिकारियोंमें पहले यह निश्चय हुआ कि दूसरे दिन सवेरे ही परेटके मैदानमें सिपाहियोंको हथियार रख देनेकी आज्ञा दी जाय। पर किसी किसीने दूसरे दिनतक ठहरना भी उचित समझा। उन्हें एक घंटा देर करना भी अच्छा न लगता था। वे उसी समय सब कुछ करनेको तैयार हो गये। आजमगढ़का समाचार बनारसकी सेनामें

* Martin's Indian Empire. Vol. II P. 280.

पहुंच चुका था। सम्भव है इससे उत्तेजित होकर सवेरेसे पहले ही सिपाही अंग्रेज़ोंपर हमला कर दें। इसलिये हथियार लेनेमें उनके खयालसे देर करना अनुचित था। पनसवी बनारसकी सेनाके प्रधान सेनापति थे, हथियार रखा लेनेकी आज्ञा वे ही दे सकते थे। सिक्ख सेनाके अफसर गार्डनने पनसवीसे कहा था कि शहरकी बदमाशोंके साथ सिपाहियोंकी बातचीत हो रही है। कुछ देर बाद कर्नल नील इनसे मिले। नीलने फौरन हथियार लेनेकी सलाह दी। अन्तमें पनसवीने शामको पांच बजे सिपाहियोंके हथियार रखा लेनेका निश्चय किया।

विचारके बाद पनसवी गार्डनके साथ उनके बंगलेपर गये। ३७ नं० सेनाके सेनापति मेजर बारेटके साथ उनकी भेंट हुई। मेजर सिपाहियोंके अनुरक्त थे। सिपाहियोंकी सचाई, प्रभुभक्ति और वीरतापर उनका विश्वास था। वे हथियार लेनेके विरुद्ध अनेक तर्क पेश करने लगे, क्योंकि इससे सिपाहियोंके हृदय दुखेंगे, वे शत्रुता निकालनेका यत्न करेंगे। पर पनसवीने एक न सुनी। उन्होंने कहा कि जजकी जबानी जो कुछ सुना है, उसके अनुसार हथियार लेनेके सिवा और कोई मार्ग नहीं। इसलिये मजबूर होकर बारेटने शामके ५ बजे सिपाहियोंको परेटके मैदानमें एकत्र होनेको कहा। थोड़ी देरमें पनसवी और गार्डन आदि अफसर घोड़ोंपर बैठकर मैदानमें आये। उन्होंने देखा कि कर्नल नील अपनी गोरी सेनाके साथ तैयार हैं। तोपें भी तैयार हैं। सेनापतिने आज्ञा दी। पर वे यह भी समझ

रहे थे कि वह आज्ञा देने योग्य नहीं है, क्योंकि बनारसमें दो हजार हिन्दुस्तानी सेना थी, पर गोरी सेना कुल ढाई सौ ही पहुँची थी। ऐसी दशामें वे जोशमें भरे हुए सिपाहियोंसे हथियार लेना चाहते थे। आज्ञा देनेके लिये सेनापति ३६ नं० सेनाके पास गये। इस सेनाके ४१८ जवान मैदानमें खड़े थे। सेनापतिके सामने इन्होंने किसी तरहका आज्ञोल्लंघन न किया। आज्ञा मिलनेपर एक एक अपना हथियार रखने लगा। तोपें सामने भरी हुई थीं। गोरी सेना संगीन चढ़ाये तैयार थी, उनकी मददके लिये सिक्ख रिसाला खड़ा था। ऐसी भयानक अवस्थामें सिपाही शंकित थे कि इन तोपोंसे वे उड़ा दिये जायँगे या उन्हींके हथियारोंसे गोरे उनके प्राण लेंगे। इस तरहका सन्देह होनेपर भी उन्होंने आज्ञाका पालन किया। वे हथियार उतारने लगे। पर इसी क्षण उनका सन्देह और भी प्रबल हो गया। गोरी सेना जब उनके उतारे हथियार लेनेके लिये पास आने लगी तब वे स्थिर न रह सके। उन्होंने समझा कि बस अब ये लोग हमारे प्राण लेनेको आगे बढ़ रहे हैं, अब देर नहीं है। उतारे हुए हथियार उठाकर उन्होंने एक क्षणमें अफसरोंपर हमला कर दिया।

नाजुक समयमें जरा सी असावधानीसे बड़ी बड़ी भयानक घटनाओंका जन्म हुआ करता है। सिपाही पहलेसे ही नाराज थे, मौकेपर थोड़ी सी असावधनीसे वह उत्तेजना और अधिक बढ़ जाय तो कोई विचित्रता नहीं। इस समय बनारसके अधि-

कारी यदि स्वयं डरकर अधीर न हो जाते और सिपाहियोंका उन्हें स्वयं भय न होता तो वे बिना किसी तरहकी गड़बड़के हथियार रख देते।* किन्तु अधिकारियोंकी ओरसे धैर्यका परिचय न दिया गया। हथियार लेते समय उन्होंने सिपाहियोंके सामने तोपें रक्खी थीं, हथियारबंद गोरी सेना भी खड़ी थी। शंका पहलेसेही थी वह थोड़ेसे कारणसे और भी बढ़ गई।

कर्नल स्पैटिस वुडने कहा था—"परेटके मैदानमें जो ४१६ जवान एकत्र हुए थे, उनके विषयमें ६ जूनके तोसरे पहरतक मुझे विश्वास न था कि वे सरकारके विद्वेषी हैं। मैंने आदमियों-के मुंहसे सुना था कि सरकारके विद्वेषियोंकी तादाद १५० से अधिक नहीं है। कारण, जब उनसे हथियार रखनेको कहा गया, तो सबने शान्तिसे हथियार रख दिया। दो एकने कहा—"हमारे अफसरोंने हमें धोखा दिया। गोरी सेना सहजमें हमें गोलियोंसे मार ले, इसी कारण हमारे हथियार रखवा लिये जाते हैं।" मैंने कहा—"यह बात ठीक नहीं है।" मैं तीस बरससे सेनामें काम कर रहा था, मैंने पूछा—"तुम्हें याद है मैंने कभी किसीको धोखा दिया?" उनमेंसे बहुतोंने कहा-"नहीं, आप भले हैं, आपने पिताके समान हमारे साथ भलाई की है।" खैर, मैंने देखा कि गोरी सेना बड़े जोशमें है, इसलिये उस सेनाको मना करनेके लिये मैंने अपना घोड़ा बढ़ाया।" †

* Martin's Indian Empire. Vol II. P. 284.

† Martin's Indian Empire. Vol II. P. 285.

सेनापति पनसवीके हुक्मसे गोरी सेना हथियार उठानेके लिये आगे बढ़ी थी। स्पैंटिस वुड इस सेनाको आगे बढ़नेसे मना करने गये थे। स्पैंटिस वुडने सिपाहियोंसे कहा था—"तुम्हें हथियार रख देनेकी आज्ञा दी जाती है। जो शान्तिसे तुम हथियार रख दोगे तो तुम्हारा कोई नुकसान न होगा।" इस समय विश्वास पैदा करनेके लिये एक सिपाहीके कंधेपर उन्होंने हाथ रक्खा था। सिपाहियोंने कहा—"हमने कोई अपराध नहीं किया है।" पनसवीने कहा—"नहीं, तुमने कोई कसूर नहीं किया है। पर तुम्हारे भाई, दूसरे सिपाहियोंने विश्वासघात किया है। उन्होंने अपने अफसरोंको मारा है। इसलिये तुम्हें जो आज्ञा दी जाती है, उसका पालन करो।" सेनापति जब यह हुक्म दे रहे थे, तब उनके साथके सिपाही उत्तेजित हो रहे थे। दूसरे ही क्षणमें रक्खी हुई बन्दूकें सिपाहियोंने उठा लीं और गोलियां भरकर फायर करने लगे। एकाएक गोलियोंकी बौछारसे अफसर त्रस्त और उद्भ्रान्त हुए। सात आठ गोरे मैदानमें गिर पड़े। अफसरोंने तोपों द्वारा आक्रमण रोकनेकी तैयारी की। मेजर निरेट हथियार लेनेके विरुद्ध थे। वे इस घटनासे आश्चर्यचकित हो गये। वे जहां खड़े थे वहीं खड़े रहे। गोलियोंसे बचनेके लिये सेनाके सामनेसे हट गये। जोशमें भरे होनेपर भी सिपाहियोंमें भलेबुरेका ज्ञान था, जिस अफसरने सदा उनका भला किया था उसका अपमान वे नहीं कर सकते थे। अन्याय और अविचारसे दुःखी होकर वे विदेशी विधर्मियोंके प्राण लेनेपर तैयार हुए थे, पर

उन्हींमेंसे एक आदमीको अपना हितैषी समझकर उन्होंने उसकी अवमानना न की। मेजर वारेटको हिफाजतकी जगहमें ले जाकर सिपाहियोंने उनकी रक्षा की।

सिपाहियोंको इस प्रकार युद्धके लिये तैयार देखकर गोरोंने तोपोंके गोले फेंकने शुरू किये। तोपोंके सामनेसे हटकर सिपाही अपनी बारिकोंकी ओर चले। बारिकोंकी दीवारोंके सहारे होकर वे गोरोंपर गोलियां छोड़ने लगे। अंग्रेज़ सेनापतिने तोपें बंद न कीं, गोलासे वहुतसे सिपाही मरे। वहुतसे सिपाही शहरकी ओर चले गये और वहुतसे पासके गाँवोंमें जाकर वैर निकालनेका अवसर देखने लगे।

इसी मौकेपर एक हिन्दुस्तानी रिसाला और सिक्ख सेना परेटके मैदानमें आई थी। पहलेवाले सिपाहियोंकी तरह इन्हें भी सन्देह था। इनका सन्देह न गया। जोशमें आकर रिसालाके एक सिपाहीने अपने सेनापतिको गोली मारी। दूसरेने तलवार चलाई। सिक्ख लोग चुपचाप यह देखने लगे। वे सरकारके खिलाफ होनेका विचार ही न रखते थे। पर अफसरोंको उनपर भी शक हो गया था। धैर्य और विचारसे काम लेना अफसर लोग भूल गये थे। वे ऐसे घवरा गये थे कि कोई काम उनसे ठीक ठीक न होता था। सवको विद्रोही समझकर गोरी सेनाने सवपर तोपें दागनी शुरू की। इससे विगड़कर सिक्ख भी गोली चलाने लगे, उस समय हिन्दुस्तानी सेनाओंका निश्चय लड़नेका न था। सिक्खोंको तो इस वातका ध्यान भी न

था। इसी कारण वे नियमपूर्वक न लड़ सके। जो वे हमला करके पीछेसे तोपोंपर कब्जा कर लेते, तो दिल्लीकी तरह बनारस भी सिपाहियोंके हाथ आ जाता। पर सिपाहियोंको न कोई आज्ञा देनेवाल था, न सुव्यवस्थासे लड़ानेवाला। कोई चतुर सेनापति सबको चलानेवाला न था। वे अपने आप ही लड़ते थे, अपने आप ही सोचते थे, शोर करते थे। गोरी सेनाने सब तोपोंका मुँह उनकी ओर करके गोला बरसाना शुरू किया। सिपाहियोंने चारों ओरका रास्ता लिया। मैदान और छावनी गोरोंके हाथ रही।

हथियार लेनेमें जब यह गड़बड़ हुई, एकके बाद एक सेना जब इस तरह बिगड़ी, तब बनारसके सेनापति चिन्तामें पड़ गये। उनके सामने जो कर्त्तव्य आ चुका था उसमें वे अधिक आगे न बढ़ सके। सूर्य दिनभर तपकर धीरे धीरे पश्चिममें अस्त हो रहा था, बनारसका मैदान भयानक हो गया था। सेनापतिका मुँह डूबते हुए सूर्यकी तरह निस्तेज हो गया था। तीव्र हार्दिक दुःखसे उन्होंने अपना कार्यभार कर्नल नीलको दिया। बनारसके सेनापति होकर नील बदला लेनेको तैयार हुए। अपनी सेना लेकर नील छावनीमें गये, जो सिपाही घरोंमें थे वे निकालकर मारे गये, जो न निकल सके उन्हें आग लगाकर जीते ही फूंक दिया गया।

ऐसे मौकेपर सिपाहियोंका हथियार ले लेना कोई बुद्धिमानीका काम न था। यह पहले ही कहा जा चुका है कि, सिपाही

विचारवान् या दूरदर्शी नहीं थे। उनके सामने किसी तरहकी गलती या असावधानी हो जानेसे झट उन्हें शक हो जाता और इसीसे उन्हें जोश आ जाता था। यदि अधिकारी उनके सामने तोपें और बन्दूकें न रखते तो वे हथियार देनेमें कभी आपत्ति न करते, वे कभी मुखालिफ न होते। उनके साथ सहानुभूतिका व्यवहार किया जाता तो वे अपने अफसरोंपर कभी हथियार न उठाते। जब वे बन्दूकें भरकर गोरोंपर छोड़ रहे थे, तब भी उनमें खूनकी प्यास अधिक न थी। उस समय भी उन्होंने अपने दयालु सेनापति वारेटकी प्राणरक्षा की। मेजर वारेटकी तरह यदि सभी अफसर सिपाहियोंपर दया स्नेह करनेवाले होते तो उनसे जैसा चाहे कठिनसे कठिन काम लिया जाता, तब भी उन्हें इनकार न होता। सिक्ख सेना राजभक्त थी, उसपर यदि अधिकारी समयपर अपना विश्वास दिखाते तो वे बड़ा काम देते। बनारसके कमिश्नरने ६ जूनको हथियार लेनेके सम्बन्धमें पश्चिमोत्तर प्रदेशके ले० गवर्नरको पत्रमें लिखा था—"मेरे विचारसे सिपाहियोंके हथियार लेनेमें बड़ी गड़बड़ हुई थी। बहुतोंने हथियार रख दिये थे। जिनके हाथमें हथियार थे वे यह सोचकर दुःखी हुए कि हथियार रखनेके बाद हमपर आक्रमण किया जायगा। इस विषयमें एक सिविल कर्मचारी-को भला बुरा कहनेका कोई अधिकार नहीं, पर सर्वसाधारणका विचार है कि यदि धैर्यके साथ काम लिया जाता तो किसी तरहकी गड़बड़ न होती।" इस विषयमें लार्ड कैनिंगकी सम्मति

भी कमिश्नरसे मिलती है। उन्होंने दो सप्ताह बाद लण्डनको लिखा था—"बनारसमें सिपाहियोंको बड़ी जल्दी और अविवेचनासे निरस्त्र किया गया था। एक सिक्ख सेनाको तो जबर्दस्ती खींचकर दुश्मन बनाया गया। यदि इनके साथ भला व्यवहार किया जाता तो, मेरा विश्वास है कि, ये लोग हमारे प्रति विश्वासी बने रहते।" इसके सोलह मास बाद जिन दीवानी कर्मचारियोंको इसके विषयमें अनुसन्धान करके लिखनेका भार दिया गया था, उन्होंने भी इस विषयमें लिखा—"जिस समय सिक्ख सेना परेटके मैदानमें एकत्र हुई थी उस समय उसे यह मालूम न था कि क्या करना होगा, वे सब कार्रवाइयोंको आश्चर्यसे देख रहे थे। यह सेना राजभक्त थी, यदि इसके साथ कड़ाई न की जाती तो यह सरकारका पक्ष लेती।" बादमें सब बातोंको सोचकर दूरदर्शी विचारकोंने यह राय लिखी थी। किन्तु उस समय अंग्रेज़ इस मतके पोषक न थे। जहाँ धैर्य और उदारता दिखानी चाहिये थी वहाँ उन्होंने घबराहट और अनुदारताका परिचय दिया। उनके हृदयोंको कोमल वृत्तियाँ दब गईं और हिंसाके लिये वे आतुर हो उठे। उनमें कार्यकी योग्यता, परिश्रमशीलता और एकाग्रता थी, पर धैर्य और विचारके बिना सब कुछ विपत्तिपूर्ण था। वे केवल तलवारसे आत्मरक्षाके साथ साम्राज्यरक्षा करना चाहते थे। उनका विश्वास था कि भारत तलवारसे रक्षित होगा। पर अन्तमें यह धारणा निर्मूल साबित हुई।

जहाँ उन्होंने तलवारकी सहायता ली, वहीं भयानक ग़दर हुआ। भारतवासी प्रेमके साथ यदि अंग्रेज़ोंके सहायक न होते तो फिरसे अंग्रेज़ी राज्य शान्तिपूर्ण न होता। अंग्रेज़ोंने भी बादमें शान्तिसे ही काम लिया।

कवायदके मैदानसे उत्तेजित सिपाहियोंके चले जानेपर भी बनारसके अधिकारियोंको चैन न पड़ी। इन सिपाहियोंके साथ शहरके बदमाश मिलकर रातमें न मालूम क्या अनर्थ करें, यह सोचकर वे चिन्तित हुए। शहर और छावनीके बीचमें एक टकसाल थी। बहुतसे अंग्रेज़ोंने इसी घरमें शरण ली। ईसाई धर्मप्रचारक लोग चुनार जानेके लिये रामनगरकी ओर गये। सिविल कर्मचारियोंने अपने घरवालों सहित डिप्टी कमिश्नरकी कचहरीमें शरण ली। इस समय खजानेकी रक्षाका प्रबन्ध सिक्ख सेनाके सिपुर्द था। अंग्रेज़ोंको आशंका थी कि इनके बहुतसे साथी मारे गये हैं, इस कारण उत्तेजित होकर यह लोग खजाना न लूट लें। पर सिक्ख सर्दारने अफसरोंको अपनी राजभक्तिपर विश्वास दिलाया। इस सर्दारका नाम था सूरतसिंह।

जब सिक्खोंकी दूसरी लड़ाई हुई और लार्ड डलहौज़ीकी आज्ञासे पंजाबकेसरी महाराज रणजीतसिंहका राज्य अंग्रेज़ी अमलदारीमें शामिल किया गया, तब सूरतसिंह बनारसमें कैद करके भेजे गये थे। कैद होनेपर भी सूरतसिंह अपने भावको न भूले थे। जब प्रतिपल अपने नाशके डरसे अंग्रेज़ डर रहे

थे, उस समय भरी हुई बंदूक हाथमें लेकर सूरतसिंह अंग्रेज़ों-को कचहरीतक पहुंचाने गये। बूढ़े सर्दारकी अंग्रेज़ोंपर ऐसी भक्ति और आस्था देखकर खज़ानेके रक्षक सिक्ख शान्त हुए। इसी खज़ानेमें उनकी महारानी जिन्दांके गहने थे। पंजाब-के पतनका चित्र उनकी आंखोंके सामने था। नाबालिग दलीप-सिंह राज्यसे हटाये गये थे, महारानी ज़िन्दाको देशनिकाला दिया गया था, उनकी धन सम्पत्ति सरकारके खज़ानेमें जा पहुंची थी। यह मार्मिक बात वे भूले न थे, इन सबपर बिना कारण गोरोंने उनके साथियोंपर गोली चलाई थी। उनके सामने बड़ा भयानक कार्यक्षेत्र था। वे अपने जीवन अर्पण करनेका विचार कर रहे थे। पर बूढ़े सर्दारके शान्त भावसे वे भी शान्त हो गये। किसी तरहकी आपत्ति किये बिना उन्होंने सरकारके खज़ाने और लाहौरके मणिमुक्ताका भार गोरे सिपाहियोंको दिया। वे अधिकारी खज़ानेको निरापद स्थानपर ले गये। इस शान्ति और विश्वासके कारण दूसरे दिन कमि-श्नरने सिक्ख सेनाको दस हजार रुपये इनाम दिये।

केवल इस सिक्ख सर्दारने ही नहीं, बनारसके बहुतसे हिन्दुओंने इस समय अंग्रेज़ोंकी मदद की थी। पं० गोकुलचन्द इस समय बनारसमें एक प्रसिद्ध पुरुष थे। वे जजकी अदालतके नाजिर थ, इसलिये जजसे उनका घनिष्ठ सम्बन्ध था। रातदिन मिहनत करके पं०गोकुलचन्द अंग्रेज़ोंकी सहायता करने लगे। उनके समान अंग्रेज़ स्वयं भी अपनी जातिकी सहायता न कर सके। इनके

अतिरिक्त एक धनीने भी अंग्रेज़ोंकी सहायता की। इनका नाम था राव देवनारायण सिंह। यह अंग्रेज़ोंकी मददके लिये विना संकोच धन खर्च कर रहे थे। इनकी दया और सहृदयताके कारण बनारसके विपद्ग्रस्त अंग्रेज़ोंका कितना उपकार हुआ, यह शब्दोंमें नहीं कहा जा सकता। अंग्रेज़ इतिहासलेखकने कहा है कि, इनके उपकारोंके विषयमें जो कुछ कहा जाय थोड़ा होगा। राजभक्त कर्मचारी और धनी सब इस अवसरपर अंग्रेज़ोंकी सहायतासे उदासीन न थे। उन्होंने रात्रिके समय निराश्रित ईसाई धर्मप्रचारकोंको सहायता दी, अपने नौकरों और खजानेको सरकारके अधीन करके राजभक्तिका परिचय दिया। इस प्रकार हिन्दुओंकी सहायतासे बनारसमें अंग्रेज़ निरापद रहे। उन्होंने हिन्दुओंके परोपकारको देखकर आश्चर्यके साथ उनकीप्रशंसा की थी। सूरतसिंहके प्रयत्नसे कचहरीके अंग्रेज़ निश्चिन्त थे। रातको दो बजे कुछ अंग्रेज़ कचहरीसे टकसाल गये। यहाँ उन्हें बहुत कष्ट भोगना पड़ा। वे सब अनाजके बोरोंकी तरह एकपर एक पड़े रहे। जो गोरे सैनिक इनकी रक्षाके लिये नीचेके हिस्सेमें थे वे दिनभरकी मिहनतसे थक कर पड़ गये थे। घोड़े, बैल, पालकी सब विना तरतीबके इधर उधर पड़े थे, इस प्रकार तकलीफमें अंग्रेज़ोंने रात बिताई। उनको भ था कि अचानक सिपाही हमपर हमला करेंगे। क्षण क्षणमें यह डर बढ़ता था। इस कारण जागते २ सबोंने सवेरा किया। प्रातःकाल सम्पूर्ण शहर शान्त था। अंग्रेज़ इससे

खुश हुए। उनके बंगले, घर, कचहरियाँ सब पहलेके समान थीं। किसी तरहकी गड़बड़ न थी। इससे स्वस्थ होकर वे फिर अपने २ काम पर लगे।

अंग्रेज़ोंने सोचा था कि बनारस हिन्दुओंका प्रधान तीर्थ है, हिन्दू अपनी धर्मरक्षाके लिये उत्तेजित हैं, इस उत्तेजनामें वे दिल्लीकी तरह सर्वनाश करेंगे। पर उन्होंने जो कुछ सोचा था, वह कुछ भी न हुआ। इसी कारण कमिश्नरने आश्चर्य-में आकर गवर्नर जनरलको पत्र लिखा था। पर सच यह है कि अंग्रेज़ हिन्दुओंके चरित्रको नहीं समझते। हिन्दू विपत्तिमें पड़े अपने दुश्मनपर भी दया करते हैं, वे राजभक्तिमें सबसे आगे हैं और जीवकी रक्षाके लिये अपना सर्वस्व अर्पण करनेमें भी संकोच नहीं करते। घोर उत्तेजनाके समय भी हिन्दू प्रेमसे सब कुछ भूल जाते हैं! अंग्रेज़ हिन्दुओंको भिन्न जातिका समझकर अपना दुश्मन कहते थे, सदा उनके हमलेसे डरते थे। पर हिन्दुओंने विपत्तिमें पड़े हुओंका सदा उपकार किया है। अंग्रेज़ोंने अगर हिन्दुओंके जातीय चरित्र-को समझ लिया होता तो इस भयानक गदरकी उत्पत्ति ही न होती। अंग्रेज़ोंने जहां हिन्दुओंपर जरा प्रेम दिखाया, थोड़ी सी दया की, वहींके हिन्दू अंग्रेज़ोंके लिये मर मिटे। इस बातको बिना समझे बुरे मुहुर्त्तमें अंग्रेज़ोंने तलवारकी शरण ली। अंग्रेज़ोंने प्रेमके शासनकी जगह तलवार उठाई थी, इसीसे अमृतकी जगह विष पैदा हुआ।

बनारसमें अधिक अशान्ति न थी। एक ही दिनमें सब कुछ शान्त हो गया। पर अंग्रेज़ोंका बदला लेनेका भाव कम न हुआ, उनमें हिंसाका भाव बढ़ गया था। सिपाहियोंने अंग्रेज़ोंपर हमला किया था, उनमेंसे बहुतसे मारे गये थे, बाकी प्राण बचाकर भाग निकले थे, अशान्ति मिट चुकी थी। अब अंग्रेज़ बनारसवालोंका नाश करने लगे। ६ जूनको बनारसमें फौजी कानून जारी किया गया। गांव गांवमें फांसी लटका दी गई और बेंतें लगानेकी टिकटी खड़ी की गई। छोटे बड़े, बच्चे जवान, सब कुत्ते बिल्लियोंकी तरह मारे जाने लगे। रोज पचासोंको फांसी लगने लगी। एक ईसाई प्रचारकने लिखा है कि अंग्रेज़ स्त्रियां भी इन अभागे बेबसों बेकसोंको फांसीपर लटकते देखकर खुश होती थीं।* हर जगह बेतें और ठोकरें लगने लगीं और बड़ी दुर्दशा होने लगी। अब बनारसवालोंने गोरोंको मनुष्यके शरीरमें राक्षसका अवतार समझा। इन राक्षसोंके हाथसे कोई न बचा। जिसे उन्होंने पकड़ा उसीकी जान गई। अंग्रेज़ों द्वारा शान्त प्रजापर यह हत्याकाण्ड सेनापति नीलकी आज्ञासे हुआ।†

---

* Rev. James Kennedy's Empire in India Vol. II, P. 288.

† Kaye's Sepoy War, Vol II. P. 236. Holme's Indian Mutiny P. 223.

इस समय छोटे २ बच्चे खेलनेके लिये एक डमडमी बजाते हुए लाइनमें निकले। इस अपराधमें वे फौजी अदालतमें पेश किये गये। अदालतने सबको फांसीका हुक्म दे दिया। एक विचारकने बच्चोंकी भोली शकलकी ओर देखते हुए, आंसू भरकर सेनापतिसे दया करनेको कहा, पर सेनापतिने हुक्म रद्द न किया। इससे वह जज अदालतमें ऊंची आवाजसे रोने लगा, पत्थरतक पिघल गये, पर सेनापतिका हुक्म न टला। गोरोंमेंसे बहुतसे जल्लाद बन गये थे, आसपासके गांवों, बस्तियों और देहातोंमें जाकर यह लोग वहांके आदमियोंको पकड़ पकड़कर फांसियोंपर लटकाने लगे। आम और नीमके पेड़ोंपर रस्सियां डालकर फांसियां दी गई थीं। २२ जूनको अधिकारियोंको समाचार मिला कि बनारससे ३० मील दूर कुछ विद्रोही सिपाही हैं। २७ जूनको २४० गोरे कुछ सिक्खोंके साथ वहां भेजे गये। इनके आनेसे सिपाही इधर उधर भाग गये। बहुतसे गोलियोंसे मारे गये, बहुतसे फांसीपर लटकाये गये। क्रोधित गोरोंने रास्तेके बीस गांव आग लगाकर भस्म कर दिये। इन गोरोंमें एक नौजवान था उसके दिलमें राक्षसी भावोंका अभाव था, उसके हृदयमें कुछ मनुष्यत्व शेष था, उसने लिखा है—"हम ८ दिन और ६ रातमें ४२१ मील चलकर बनारस पहुंचे। २७ जूनकी शामको हम २४० गोरे (जिसमें मैं भी एक था) ११० सिक्ख और २० सवार बनारससे चले। सवारोंको छोड़कर

हम सब बैलगाड़ियोंमें चले। दूसरे दिन तीसरे पहर तीन हिस्सोंमें बटकर सिपाहियोंको तलाश करने लगे। हमारी पलटन एक गांवमें पहुंची, गांववाले गांव छोड़कर भाग गये थे। हमने उसमें आग लगा दी, गांव जल गया। जब इस गांवसे आगे चले तब एक आदमी मिला। उसने कहा कि पासवाले गांवमें वे आदमी लड़ाईके लिये तैयार हैं। हम दौड़कर वहां पहुंचे। जब हम गांववालोंसे ६०० हाथ दूर थे तभी वे हमें देखकर भागने लगे, हम भी उनपर बन्दूक छोड़ते हुए भागे। आठ मरकर गिर पड़े। जब हम गांवके पास पहुंचे तब एक आदमी आया। उसने हमारे अफ़सरको सलाम किया। वह सिपाही था। हमने इस तरह २० को कैद किया। हम फिर बैलगाड़ियोंके पास वापिस आये। एक बूढ़ा आदमी पास आकर, गांव जलानेके कारण जो हानि हुई थी, उसके रुपये मांगने लगा। हमारे साथ एक मजिस्ट्रेट था। उसे मालूम हुआ कि इसने लोगोंको खाने पीनेकी चीजें देकर मदद की थी। इसका फैसला होनेमें पांच मिनट लगे। पासके एक दरख्तपर रस्सी लटकाकर इस बूढ़े और कैदी सिपाहियोंको लटकाकर मार डाला गया। रात हमने वहीं बिताई। दरख्तोंपर मुर्दे लटकते रहे ! सवेरे ही उठकर हम आगे चले, थोड़ी देर बाद पानी बरसने लगा। हम एक गांवमें गये और उसमें आग लगाकर फिर आगे बढ़े। इस समय हमारे बाकी दो दल भी बेकार न थे, जो हम कर रहे थे वही वे भी करते थे। हमने ८०

आदमी पकड़े। उनमेंसे ६ को उसी दिन फांसी दे दी, ६० को खूब बेंतोंसे पीटा। मजिस्ट्रेटने घोषणा की कि जो प्रधान अपराधीको पकड़ावेगा उसे २००० रुपये इनाम दिये जायँगे। दूसरे दिन फिर हमने रास्तेके किनारेपर डेरा दिया। हमारे सिरहानेकी तरफ छः लाशें पेड़ोंमें लटक रही थीं। फिर सवेरे उठकर आगे चले। बड़े जोरका पानी बरस रहा था। अगले गांवमें पहुंचकर उसमें आग लगाई। कपड़े सुखाये। फिर आगे चले। अबकी बार एक बड़े गांवमें पहुंचे। यहां और हमने २०० आदमी पकड़ गाँवमें आग लगा दी। मैंने देखा, गांवमें चारों ओर आग लग गई थी, एक बूढ़ा घरमें छटपटा रहा था, शायद वह बीमार था। मैंने उससे कहा कि तू गांवके बाहर आ, नहीं तो मर जायगा। पर अभागेमें ताकत न थी। मैंने उसे उठाकर बाहर किया। उसे लेकर गलीके मोड़पर आया। चारों ओर आग जल रही थी इसलिये यह न सोच सका कि किधर जाऊं। मैं एक मिनिटके लिये खड़ा होकर सोचने लगा, इसी समय सामनेका मकान टूटकर गिरा, देखा कि एक चार सालका बच्चा जलने ही वाला है। बूढ़ेको रास्ता दिखाकर मैंने कहा कि जो तू न जायगा तो तुझे गोलीसे मार दूंगा। यह कहकर उस बच्चेको बचानेके लिये लपका। चौखट जलने लगी थी। मैंने अपने लिए कुछ न सोचा, छोटे बच्चेकी ही मुझे चिन्ता थी। मैं आगमेंसे होकर भीतर घुस गया, भीतर चारों ओर आग लग चुकी थी। मैंने वहाँ देखा दो बरससे लगाकर आठ बरस तककी उमरके छः

बच्चे और थे। इनके अतिरिक्त और एक बूढ़ी थी। वे दूसरेका सहारा लिये बिना हिलडुल न सकते थे। वहां एक बीस वर्षकी स्त्री एक छोटे बच्चेको छातीसे चिपटाये हुए पड़ी थी। मेरा दृढ़ विश्वास है कि बच्चेको पैदा हुए अभी पांच छः घण्टे ही हुए होंगे। बिचारी नवप्रसूता माता हक्कीबक्की सी पड़ी थी। इस करुणा-पूर्ण दृश्यको देखकर मैं खड़ा रह गया। पर यह ठहरनेका समय न था। मैंने बच्चोंको बाहर निकालनेकी कोशिश की, पर वे मेरे साथ जानेको राजी न हुए। मैंने उस सद्योजात बच्चेको गोदमें लिया, माताने उसे आप लेना चाहा, मैंने वापिस दे दिया। मैंने मांको उसके बच्चे सहित उठाकर आगसे बाहर निकाला। लड़-केने बूढ़े और बूढ़ीको निकाला, मैं आगे आगे चला, वे सब पीछे पीछे। चारों ओर भयानक आग हाहाकार करके गरीबोंकी झोंपड़ियां चाट रही थी। मैं ऐसी जगह आ गया जहांसे कुछ न दीखता था, बड़ी मुश्किलसे सबको बाहर निकाला × × ×। जिस कपड़ेसे उनके शरीरका आधा भाग भी ढका हुआ न था, वह आगकी लपटोंके बीच होकर आनेसे रहा सहा भी जल गया। मैं उन सबको पासके खेतमें रखकर दूसरी ओर गया। कुछ दूर जाकर देखा कि बूढ़ी बाहर पैरोंसे रेंगनेकी कोशिश कर रही है। मैं पास जाकर उसे बाहर निकालने लगा, पर उसने मेरी सहायता लेनेसे इनकार किया। बहस करना बेकार समझकर, उसे पकड़कर बाहर लाया। फिर एक जगह जाकर देखा कि एक जवान स्त्री एक बहुत ही बीमार आदमीके पास

बैठी थी। स्त्रीकी अवस्था करीब २२ वर्षकी होगी। वह आदमी मरने ही वाला था। स्त्री आदमीके मुँहमें शरबत टपका रही थी। आग चारों ओर लग रही थी, कभी सब आगही आग हो जाती थी। उस मौतकी खाटपर पड़े हुए आदमीके नजदीक मुझे चार स्त्रियां दिखाई दीं। मैं दौड़कर उनके पास गया और इस बीमार तथा स्त्रीकी मदद करनेके लिये कहा। पर उन्होंने मेरी बात न सुनकर अपना काम करना ही अधिक उचित समझा। मैंने संगीन निकालकर कहा कि जो मेरी बात न मानेगी वह मारी जायगी। तबवे इस बीमार आदमी तथा स्त्रीको बाहर लेकर आई। इन्हें बाहर छोड़कर मै दूसरी ओर चला। आगने चारों ओर हाहाकार मचा दिया था। मकान टूट टूट कर गिर रहे थे। एक स्थानपर मैंने १४० स्त्री और ६० बच्चे देखे। सब जोर जोरसे चीखकर रो रहे थे। मैं उनमेंसे बहुत सी बूढ़ियोंको बाहर निकालकर लाया, वे कह रही थीं कि हम भूखी मर रही हैं। जो कुछ बिस्कुट हमें मिले थे उनमेंसे कुछ निकालकर मैंने उन्हें देने चाहे पर उन्होंने लेनेसे इनकार किया, कहा कि इनसे हमारी जाति बिगड़ जायगी। इसी समय हम सबको इकट्ठा करनेका बिगुल बजा, मैं वापिस आ गया। स्त्रियोंने अपने घरके स्नेही आदमीकी तरह मुझे आशीर्वाद दिया। × × × जिनको हमने कैद किया था, उनमेंसे दसको फांसी दी, ६० को बेतें लगीं। उसी रातको आगे बढ़कर, हमने एक और गांव जलाया।

कैदियोंको आमके पेड़ोंपर फांसियोंसे लटकाकर हम देखने लगे। एककी रस्सी टूट जानेसे वह गिर पड़ा, गिरकर वह चारों ओर देखने लगा। हमने उसे फिर फांसीपर लटका दिया। × × × ६ जुलाईको हमें मालूम हुआ कि २००० आदमी हमारा रास्ता रोकनेको तैयार हैं। हमारे पास १८० सैनिक थे। विपक्षी तीन हिस्सोंमें बंटकर खड़े हुए थे। हम जैसे ही आगे बढ़े वैसे ही वे भागे। हमने उनके गांवको चारों ओरसे घेरकर आग लगा दी। वे आगसे बचनेके लिये जैसे ही बाहर आते वैसे ही हमारी बन्दूकका निशाना बनते। अठारह आदमी हमने पकड़े। पांच मिनटमें सबका फैसला हो गया। हमने हरएकको गोलीसे मार डाला, हमारे दलने इस ओर ५०० से भी अधिकआदमी मारे थे।"*

इस प्रकार बनारसकी शान्त, निरीह और दीन प्रजा मारी गई, उसका सर्वस्व स्वाहा किया गया। उत्तेजित सिपाहियोंने बनारसका जेलखाना भी न तोड़ा था, वह वैसे ही था। अधिकारियोंने जब बहुतसे आदमियोंको विद्रोहके कारण कैद किया तब जेलमें स्थान न रहा। वे जरा जरा देरमें सबका फैसला करने लगे। कैदियोंको फांसीके तख्तेपर लटकाकर समाप्त करने लगे। बहुतसे बुरी तरहसे बेंतोंसे पीटे जाने लगे। पर इस मनुष्यहीन निर्दयतासे भी गदर न रुका। देखते देखते जौनपुर और इलाहाबादमें भयानक काण्ड मच गया।

* यह पत्र लंडन टाइम्समें छपा था।

जौनपुर बनारससे ३४ मील उत्तरपश्चिमकी ओर है। गोमती नदीके किनारे यह नगर बसा है। १७७५ में अंग्रेज़ोंने इसपर कब्ज़ा किया था। तबसे उन्होंने इस स्थानपर अपनी जड़ मजबूत की थी। जौनपुरमें एक बड़ा किला था। शहरके पूर्वकी ओर सेनाओंके रहनेका स्थान था। उस समय लुधियानाके १६६ सिक्ख सैनिक वहांपर थे। मरे नामक अंग्रेज़ इन सबका अफसर था।

४ जूनको बनारसकी ३६,नं० सेनाकी तरह यह सिक्ख सेना भी अधिकारियोंकी नाराजगीका कारण बन गई थी। यदि अफसर लोग बुद्धिमत्ता और धीरतासे काम करते तो यह सिक्ख अंग्रेज़ोंका खून करनेपर कभी तैयार न होते। एक आदमीको जरा जोशमें देखकर सबको वैसेही समझ लेना अन्याय है। जिस समय बनारसके एक सिक्खने अफसरपर बंदूक छोड़ी, उस समय अपने प्राण आपत्तिमें डालकर भी, उसी सेनाके हवलदार चूड़ासिंहने उसे हटाकर अफसरको बचाया था। इससे हवलदारकी बांहमें गोली लगी और अफसर बच गया। अन्य सिक्ख सेनाने धैर्यपूर्वक यह सब देखा। किसीने न उत्तेजना दिखाई और न फिर कोई बंदूक ही अफसरोंपर चली। यदि इस समय अफसर सारी सिक्ख सेनाको विद्रोही न समझते, एककी उत्तेजनासे सबको दुश्मन न मानते, तो सिक्ख कभी भी अंग्रेज़ोंका खून करनेपर तय्यार न होते। पर उस समय इतना धैर्य कहाँ था! सेनापतिके अविचारसे बंगालके सिपाहियोंकी तरह सिक्खोंको

भी विश्वास हो गया था कि सरकार भारतकी हरएक जातिकी सेनाको सजा देना चाहती है।

बनारसमें जो कुछ हुआ था, उसका पूरा विवरण यदि जौनपुरके सेनापतिके पास ठीक समयपर पहुँच जाता, तो वे वहाँके सिक्खोंको सब बात समझाकर शान्त रखनेका यत्न करते। पर उस समय एक छावनीसे दूसरी छावनीमें जल्दी समाचार भेजा नहीं जा सकता था। इधर बाजारी अफवाहें हवाके कंधेपर बैठकर एक स्थानसे दूसरे स्थानपर पलभरमें जा पहुंचती थीं। सेनापतिके पास समाचार देरसे पहुँचता और सैनिकोंको सब बातें बाजारसे पहले ही मिल जातीं। इन बाजारू अफवाहोंसे वे घबरा जाते। ४ जूनको जौनपुरमें चर्चा चली कि आजमगढ़की सेना सरकारके विरुद्ध हो गई। इसके दूसरे दिन बनारसकी ३६ नं० सेनाकी बातें जौनपुर पहुंचीं। इस समाचारसे भी सिक्खोंमें किसी प्रकारकी उत्तेजना न फैली। इन भागे हुए सिपाहियोंके आक्रमणसे वे अंग्रेज़ोंको बचानेके लिये तैयार हुए।

जौनपुरके अंग्रेज़ और गोरे कचहरीमें छिपकर रहे। उनके सामने यह सिक्ख सेना तैयार खड़ी थी। डेढ़ बजेके लगभग समाचार मिला कि बनारसकी ३६ नं० सेनाके सिपाहियोंने पासकी कोठी लूटकर लखनऊकी ओर प्रस्थान किया है। इस समाचारसे प्रसन्न होकर अंग्रेज़ खाने पीनेकी तैयारी करने लगे। पर विपत्ति समाप्त न हुई थी। जौनपुरके सिक्खोंने जब सुना कि

बनारसमें सिपाहियोंके साथ सिक्खोंको भी मारा गया है, तब उनसे शान्त न रहा गया। इस समाचारसे सिक्खोंने समझा कि अंग्रेज़ हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख सबको मारना चाहते हैं। इसके कारण वे बड़े चिन्तित हुए। जिन हथियारोंसे वे अबतक अंग्रेज़ोंकी जान बचा रहे थे, उन्हींसे वे उनका खून करनेपर तुल गये।

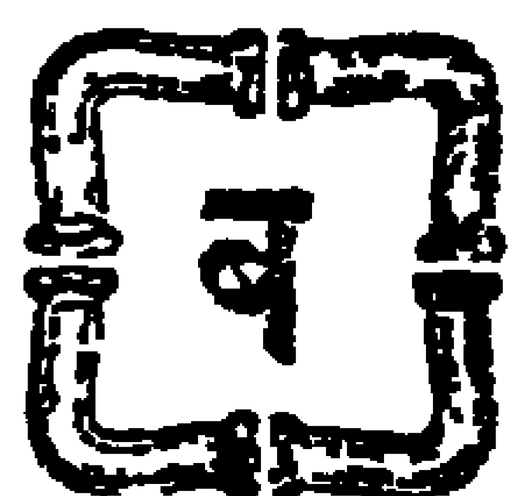
सेनापति 'मरे' जब बरामदेमें खड़े थे तब एकाएक बंदूककी आवाज हुई। अंग्रेज़ोंने चौंककर देखा कि 'मरे' बरामदेमें पड़े तड़प रहे हैं। गोली उनकी छातीमें लगी थी। अंग्रेज़ समझ गये कि सिक्ख सेनाकी गोलीसे ही सेनापतिकी मौत हुई। इसी कारण घबराकर वे घरके भीतर हो गये। सर्वसंहारक कालकी भयानक छाया उनके सामने खड़ी हो गई। वे इतने भयभीत हो गये कि अपना अन्तिम समय समझ कर ईश्वरसे प्रार्थना करने लगे। इधर जौनपुरके ज्वाइन्ट मजिस्ट्रेट जेलके रास्तेमें मारे गये। उत्तेजित सिक्ख सेनाने अब खजाना लूटनेपर कमर कसी। खजानेमें दो लाख साठ हजार रुपये थे, सिक्खोंने सबके सब ले लिये। जौनपुरमें अंग्रेज़ी शासनका कोई चिह्न शेष न रहा। सब कुछ तहसनहस हो गया। कचहरीके अंग्रेज़ोंने और कोई उपाय न देखकर भागनेका इरादा किया। सेनापति मरे जिन्दा थे, पर उनके बचनेकी कोई आशा न थी। गोलीसे पसली टूट चुकी थी। अधमरेको उसी हालतमें छोड़कर गोरे कोई घोड़ेपर, कोई गाड़ीपर, कोई पैदल ही भागे। थोड़ी देर

बाद 'मरे'ने भी प्राण छोड़ दिया। उनकी स्त्री भी हैजेसे देहत्यागकर पतिके साथ हो ली। गोमती पार कर भागे हुए गोरे किराकत नामक स्थानपर पहुंचे। रास्तेमें इनसे किसीने कुछ नहीं कहा। इस समय हिन्दुस्तानी नौकरोंने उनकी बहुत सहायता की। इन आपत्तिपीड़ितोंको वे निरापद स्थानमें ले गये। किराकतमें हिंगनलाल नामक एक राजपूत था। इस परोपकारी पुरुषने विपन्न अंग्रेज़ों और स्त्री बच्चोंको अपने घरमें शरण दी। इनके लिये उन्होंने हर तरहका सामान एकत्रित किया। स्त्रियों और बच्चोंको उन्होंने अपने अन्तःपुरमें रखा, इनके खाने पीनेका सामान उन्होंने बहुत अच्छी तरहसे तैयार कराया। उनके नौकर हथियारोंसे सजकर इनकी रक्षाके लिये तैयार रहे। उत्तेजित सिपाहियोंने तीन बार किराकत लूटा, पर वे हिंगनलालके घरकी ओर न आये। इस परम धार्मिक राजपूतके घरको वे पवित्र समझते थे, इसके अतिरिक्त यह भी भय था कि इसके घरपर हमला करनेसे अवधके सब राजपूत उनके शत्रु हो जायँगे। इसी कारण अंग्रेज़ हिंगनलालके घरमें शान्तिसे रहने लगे। जब बनारसके कमिश्नरको यह हाल मालूम हुआ तब उन्होंने अंग्रेज़ोंको लानेके लिये कुछ गोरे सिपाही भेजे। उनकी रक्षामें अंग्रेज़ बनारस पहुँचे।

इस कामके लिये हिंगनलालको पुरस्कार मिला। उन्हें डिप्टी मजिस्ट्रेटकी पदवी देकर सौ रुपये माहवारका पुरस्कार मिला। ये बुड्ढे थे इसलिये उनके बेटेके नाम यह रकम कर दी गई।

नवां अध्याय

इलाहाबादमें गदर


नारससे प्रायः ७० मीलपर एक और प्रसिद्ध हिन्दू तीर्थ है, जिस स्थानपर गंगा यमुना मिलती हैं। किसी जमानेमें सरस्वती भी आकर इसी स्थानपर गंगासे मिलती थीं। यह त्रिवेणी संगमका स्थान ही हिन्दुओंका प्रयागराज कहाता है। सर्वसाधारण इसको इलाहाबादके नामसे पुकारते हैं। महाकवि कालिदासकी कवितामें इस स्थानकी रमणीयताका बड़ा सुन्दर वर्णन है। वस्तुतः स्थान भी बड़ा रमणीक है। गंगा और यमुनाका संगम हृदयमें आह्लाद पैदा करता है। ऐतिहासिक दृष्टिसे भी यह स्थान बड़े महत्त्वका है। प्राचीन कालमें यह नगर चन्द्रवंशकी राजधानी रह चुका है। महाराज ययातिने यहीं राज्य करके अनन्त कीर्ति कमाई थी। महाराज दुष्यन्त आदि राजा इसी स्थानसे देशका शासन करते थे। उस पवित्र प्राचीन कालमें यह स्थान आर्यजातिका गौरव-शिखर था।

जब भारतपर मुसलमानोंका राज्य हुआ, जब अंग्रेज़ वैश्य इस देशमें आये, तब भी इलाहाबाद हिन्दुओंका तीर्थ था। मरनेके बाद चिताभस्म त्रिवेणीमें डालनेसे हिन्दू अपने लिये

अक्षय स्वर्ग मानते रहे। मुगल सम्राट अकबर इस स्थानकी रमणीयता देखकर मुग्ध हो गये थे। पश्चिममें अपने राज्यकी रक्षाके लिये अटकमें उन्होंने जैसा किला बनाया था, पूर्वमें इलाहाबादमें भी वैसा ही बनाया था। यह किला पहले हिन्दुओंने ही बनाया था। उसे अकबरने मरम्मत करवाकर सुधरवा लिया था। अंग्रेज़ोंके अधिकारमें यह किला और भी अधिक दृढ़ हुआ। इसके तोपख़ानेमें अनेक प्रकारके अस्त्र शस्त्रोंका प्रचुर संग्रह था। उस समय इसके खजानेमें तीस लाख रुपये थे। जब मेरठके उत्तेजित सिपाहियोंने अंग्रेज़ोंको मारा तब इलाहाबादमें कोई भी गोरी सेना न थी। किले और किलेसे ६ मील दूर ६ नं० हिन्दुस्तानी सेना थी। वहां हिन्दुस्तानी गोलंदाज और थोड़ीसी सिक्ख सेना भी थी।

किलासे बाहर जो ६ नं० सेना थी उसके आदमी अवध और विहारके निवासी थे। भारतकी जिन बड़ी बड़ी लड़ाइयोंमें अंग्रेज विजयी हुए थे उन सबमें इस सेनाने सदा साथ दिया था। अंग्रेज़ोंके बराबर कंधेसे कंधा भिड़ाये हुए इन्होंने सामनेवालोंको अपनी वीरतासे हराया था। इसके सैनिक सच्चे वीर और सम्मानित योद्धाके गौरवसे गौरवान्वित हो चुके थे। इससे पहले इनकी राजभक्तिमें कभी सन्देह नहीं हुआ था। इस समय ये खजानेकी रक्षापर नियुक्त थे। दो आदमियोंने इन्हें सरकारके विरुद्ध करनेका प्रयत्न किया था। उन दोनोंको सिपाहियोंने अफसरोंके हाथ सौंप दिया था। जब इन्हें मालूम हुआ कि

दिल्लीपर सिपाहियोंने कब्जा कर लिया, तब इन्होंने अफसरोंसे कहा कि हमें लड़नेके लिये दिल्ली भेजो। इसी कारण गवर्नर जनरलको इनकी प्रशंसा करनी पड़ी। पर अन्तमें इनकी बुद्धि भी बदल गई। जिस साहसने इन्हें सरकारके अधिकारोंकी रक्षाके लिये उत्तेजित किया था वही साहस अन्तमें अंग्रेज़ोंका खून लेनेके लिये तैयार हुआ। एकाएक हथियारोंसे तैयार होकर यह लोग सरकारके विरुद्ध खड़े हो गये। इनके आक्रमणसे अंग्रेज़ मारे गये, खजाना लूटा गया। अन्तमें यह चारों ओर बिखर गये।

इनके अतिरिक्त उस समय इलाहाबादमें एक सेना और थी। यह ऊंचे डीलडौलवाले साहसी, पराक्रमी, लंबे केशधारी थे। लार्ड डलहौज़ी अपनी विजय-सम्पत्ति समझकर जिस पंजाबको ब्रिटिश शासनमें शामिल कर गये थे यह उसी पंजाबके वीर पराक्रमी सिक्ख थे। इस समयसे नौ वर्ष पहले अपनी स्वाधीनताकी रक्षाके लिये इन्होंने घोर पराक्रमसे सुबरांव और चीलियावालांके संग्राम किये थे। अन्तमें हारकर ब्रिटिशसिंहकी अधीनता स्वीकार की थी। नौ वरस पहले जिनका नाश करनेके लिये थे लड़े थे, नौ वरस बाद ग़दरके मौकेपर, उन्हींकी रक्षाके लिये वे अपने प्राण निछावर करने लगे।

११ मईको जब दिल्लीमें सिपाहियोंके त्राससे अंग्रेज़ लोग अपनी जान बचाते फिर रहे थे, उस समय इलाहाबादके अंग्रेज़ शान्ति और आनन्दसे अपना समय बिता रहे थे। कोई आन-

न्दसे बागोंमें मजे लूट रहे थे, कोई मित्रोंके साथ बातें कर रहे थे, कोई तमाशा देख रहे थे। दिल्लीके अंग्रेज़ उस समय जान जानेके भयसे पागलकी तरह भटक रहे थे, बहुतसे तो सिपाहियोंके हाथमें पड़कर अपनी जान दे रहे थे। १२ मई-को मेरठका तार आया। १४ मईको डाक आई। शुरूसे अन्ततक सब विवरण पढ़कर अंग्रेज़ चिन्तित हुए। बाजार, गांव और कस्बोंमें इसी बातका आन्दोलन होने लगा। हरएक अपने पड़ोसीसे इसी विषयपर तर्क वितर्क करने लगा। सबमें एक प्रकारका त्रास दिखाई देता था। अंग्रेज़ जैसे अपनी मौतके डरसे डरने लगे, वैसे ही भारतवासी अपने जातिनाशके डरसे डरे। धर्मनाशके कारण मृत्युके बाद अनन्तकालतक वीभत्स नरकके भयसे सब कांपने लगे। यह सबका दृढ़ विश्वास था कि अंग्रेज़ सबका धर्मनाश करनेपर कटिबद्ध हैं। अन्तमें सरकारने प्रगटमें घोषणा कर दी कि, हम किसीके धर्ममें रुकावट डालना नहीं चाहते, तिसपर भी सर्वसाधारणकी आशंका न मिटी।

इसी समय अनाजका भाव चढ़ जानेसे लोगोंमें और भी त्रास फैला। १८ तारीखको सबको दिल्लीसे समाचार मिला कि मेरठके सिपाहियोंने दिल्ली फतह कर ली, बहादुर शाह फिर भारतके सम्राट हो गये। फिर मुगलोंका झंडा दिल्लीमें लहराने लगा। जब घर घर और गांव गांव यह आन्दोलन होने लगा तब सर्वसाधा-रणसे स्थिर न रहा गया। सिपाहियोंमें जोश फैल गया। इधर

इलाहाबादके अंग्रेज़ अपनी रक्षाका प्रबन्ध करने लगे। फिर किसी विषयकी ओर उन्होंने लक्ष्य न किया। किला किस प्रकार बच सकता है, खजानेकी रक्षा कैसे हो सकती है, आक्रमणसे जान कैसे बचेगी, इसी तरहकी बातें उनकी चिन्ताका प्रधान विषय थीं।

रोज दिल्लीसे कोई न कोई बुरी खबर पहुंचने लगी। इन खबरोंसे अंग्रेज़ोंकी चिन्ता और भी अधिक बढ़ने लगी। खजानेका सब रुपया किलेमें ले जानेका प्रस्ताव हुआ। पर किसी किसीने इसके विरुद्ध सम्मति भी दी। इसलिये खजानेका स्थान-परिवर्त्तन न हुआ। सन्देह था कि रुपया खजानेमें रखते ही जोशीले सिपाही रुपयेके लिये किलेपर कब्जा कर लेंगे। वहांके स्थानीय अंग्रेज़ स्वयंसेवक बनकर नगरकी रक्षा करने लगे। अबतक टेलीग्राफका तार लगा हुआ था इसीलिये हरएक स्थानसे समाचार आते थे। पश्चिमोत्तर देशका समाचार विशेष आशंका पैदा करने वाला था। कलकत्ताका कोई समाचार ही न था।

इसी प्रकार आशंका, उद्वेग और चिन्तामें मई मास बीत गया। जून मासके शुरूमें जो समाचार आये उनसे अंग्रेज़ोंकी घबराहट और भी अधिक बढ़ गई। ४ जूनको टेलीग्राफका तार कट गया। किसी ओरका कोई समाचार न मिला। इसी दिन तीसरे पहर सवारोंने समाचार पहुंचाया कि बनारसके सिपाहियोंने अपने अफसरोंपर आक्रमण कर दिया है। यह सब

सिपाही इलाहाबादकी ओर आ रहे हैं। इस समय अंग्रेज़ोंके सामने बड़ी विपत्तिका अवसर था। सब अंग्रेज़ आत्मरक्षाके लिये तैयार हो गये। सब काम छोड़कर वे किलेमें आगये।

बनारससे गंगाके दूसरे किनारेसे इलाहाबादका रास्ता है। इलाहाबाद पहुंचनेके लिये दारागंजके सामनेवाला नावोंका पुल पार करना पड़ता है। इलाहाबादके मजिस्ट्रेटकी आज्ञासे ६ नं० सेनाके कुछ सिपाही दो तोपें लेकर पुलकी रक्षा करने लगे। इस सेनाके सिपाहियोंने इस समयतक किसी तरहका अविश्वास-का काम न किया था। जब मेरठके सिपाहियोंने दिल्ली जाकर बहादुर शाहको सम्राट बना दिया तब भी इस सेनामें किसी प्रकारकी उत्तेजना दिखाई न दी। इनमें किसी तरहकी सलाह भी न हुई। उस समयतक अफसरोंने इन्हें राजभक्त समझा और प्रशंसा भी की। ऊपरसे उन्होंने जोश न दिखाया पर यह उन्हें मालूम था कि बनारसके उनके भाई अंग्रेज़ोंके खिलाफ उठ खड़े हुए हैं। बनारसमें सेनापति नीलने जो कुछ किया था यह भी वे सुन चुके थे। वे इस बातसे भयभीत हुए कि बनार-समें गोरोंने जैसे अत्याचार किये, सिपाहियोंको जैसी असीम यातना देकर मारा वैसी ही दुर्गति उनकी भी करेंगे। गोरोंकी बंदूकों या संगीनोंसे उन्हें मरना होगा, इस विचारने उनके भाव बदल दिये। इससे वे यहां तक डरे कि ६ जूनको सवेरे उन्होंने अंग्रेज़ोंपर हमला करनेका निश्चय कर डाला। फिर वे चुपचाप न रहे, वे भी अपने निश्चयको पूरा करनेका यत्न करने लगे।

सूर्य धीरे धीरे अस्त हुआ। सिपाहियोंकी राजभक्ति भी उसके साथ ही अस्त हो गई। सिपाहियोंकी राजभक्ति अस्त हो जानेका कारण बनारसमें गोरोंका अत्याचार था। मेरठ और दिल्लीकी घटना सुननेके बाद भी वे राजभक्त थे। दिल्लीके बादशाहका फिरसे सिंहासनपर बैठनेका समाचार सुनकर भी वे अपने व्रतसे न डिगे, अफसरोंको उनकी राजभक्तिपर पूरा विश्वास था। जब स्थानीय सरकारने उनकी राजभक्तिके विषयमें लिखा था तब कैनिंगने सबको इसके विषयमें धन्यवाद दिया था। गवर्नर जनरलका धन्यवाद सुनानेके लिये वे सिपाहियोंकी परेटके मैदानमें एकत्र किये। सब धैर्यपूर्वक आगेकी कार्रवाई देखने लगे। इलाहाबादके कमिश्नरने हिन्दुस्तानीमें एक छोटासा भाषण देकर राजभक्तिके लिये गवर्नर जनरलका धन्यवाद पढ़ सुनाया। सिपाहियोंने भी इसपर हर्ष प्रगट किया। सबको प्रसन्नता हुई। सब ६ नं० सेनाकी राजभक्तिकी चर्चा करते हुए भोजन करने लगे। इसी समय एकने प्रस्ताव किया कि नावके पुलके सामने जो तोपें लगाई गई हैं वे वापिस किलेमें लाई जायं। उसी समय दोनों तोपें वापिस किलेमें लेजानेका हुक्म हुआ।

फौजी अफसर प्रसन्नतासे भोजन करनेके टेबिलपर बैठे। कई छोटी उमरके अंग्रेज़ बालक ६ नं० सेनामें काम सीखते थे, यह लोग सब इकट्ठे ही खानेको बैठे। सबके चेहरोंपर फिर प्रसन्नता और आनन्दकी लाली झलकने लगी। इस प्रकार

बालक, वृद्ध, युवा सब मिलकर तरह तरहके स्वादिष्ट भोजन करते हुए निश्चिन्तताके साथ बातें कर रहे थे। सिविल कर्मचारी भी निश्चिन्त होकर अपने अपने घर गये और आनन्दसे भोजनपर बैठे। इस प्रकार ६ जूनकी रातको प्रसन्नता और आनन्दसे वे फूले न समाते थे। जो डरके मारे पहले दिन किलेमें सोये थे वे सब ६ नं० सेनाको राजभक्त मानकर आरामसे अपने अपने घरपर सोये। मेरठ और दिल्लीके समाचार आनेके बादसे अबतक किसी दिन भी अंग्रेज़ लोग इस तरह निश्चिन्त होकर न सोये थे। पर करीब रातके ९ बजे यह शान्तिसुख सब काफूरकी तरह उड़ गया। एकाएक बिगुलकी आवाजसे सब अंग्रेज़ चौंक उठे। सेनापति झटपट तैयार होकर घोड़ेपर बैठकर सेनाकी ओर चले। सब अफ़सर लोग तैयार होकर उनके पीछे चले। ६ नं० सेनाके हृदयकी बात अब प्रगट हुई। जिनकी राजभक्ति सदा अटल, अचल रही थी, जो किसी घटनासे विचलित न हुए थे वे एकाएक विचलित हो उठे। जो सिपाही पुलकी रक्षाके लिये नियत थे, वे ही सबसे पहले अंग्रेज़ोंके विरुद्ध हुए। उनके पास दो तोपें थीं। जब अधिकारियोंने तोपोंको किलेमें वापिस लानेका हुक्म दिया तब सहजमें उन्होंने तोपें वापिस करनी न चाहीं। बनारसमें तोपों द्वारा उनके भाई किस तरह मारे गये थे, यह वे सुन चुके थे। तोपें हाथसे निकल जानेके बाद संभव है, उन्हींसे वे भी उड़ाये जायँ, इसी विचारसे वे घबरा गये। झटपट उन्होंने तोपके रक्षक गोरे-

पर हमला किया। तोपरक्षकने अवधकी सेनाके अध्यक्षको सहायता देनेके लिये कहा। अध्यक्षने अपनी सेनाको तोपकी रक्षा करनेकी आज्ञा दी। बिलकुल अनिच्छासे सिपाही इस आज्ञाको पालन करनेके लिये खड़े हुए। तोपरक्षकने किलेमें समाचार भेज दिया। इस समय किलेमें सिपाहियोंका शोर, और बंदूकोंकी आवाज साफ सुनाई दे रही थी। तोपरक्षक और अवधसेनाके अध्यक्षने जब घोड़ोंपर बैठकर तोप लेनेवालों-पर हमला किया, उस समय भी सेनाध्यक्षके साथ कुछ आदमी आगे बढ़े। जब उनके साथी अंग्रेजोंको मारनेको अपनी तल-वार निकाल चुके थे, उस समय उनके साथ कुछ सिपाही थे। उत्तेजित सेनाकी गोलीसे सेनाध्यक्ष मारा गया। गोरा तोपर-क्षक जान लेकर भागा। सेनाध्यक्षके घायल शरीरको राजभक्त सिपाही आक्रमणसे बचाते हुए रक्षित स्थानपर ले गये। वि-द्रोही सिपाहियोंने अपने खड़े होनेकी खबर दो आदमियों द्वारा सेनामें भेज दी। कहा जाता है कि बिगुल बजाकर उन्होंने खड़े होनेकी सूचना दी। तोपें लेकर यह सैनिक छावनीकी ओर आये। जिस समय सेनापति घोड़ेपर बैठकर परेटके मैदानमें आये उस समय युद्धके लिये सम्पूर्ण सेना तैयार हो चुकी थी।

कर्नल सिमसनने सेनामें विद्रोहके लक्षण स्पष्ट देखे। इस समय वे अपने पदकी रक्षामें असमर्थ थे। वे अपनी सेनाको अपने अधीन न कर सके। दोनों परस्पर विरोधी हो गये थे। वे सेनाको जो आज्ञायें देते थे उनका उसने पालन न किया।

सेनापतिने परेटके मैदानमें तोप लानेका कारण पूछा। दो सिपाहियोंने उनकी ओर बंदूक चलाकर इसका जवाब दिया। मीठी बातों या आदेशोंसे सिपाहियोंको वशमें रखना असाध्य हो गया था। जोशमें आकर सिपाही हर बातके जवाबमें गोली दागने लगे थे। सेनापतिको मैदानमें बुलानेका उन्होंने निश्चय किया था। सेनापति हताश हो गये, उपाय न देखकर एक ओर उन्होंने घोड़ा दौड़ाया। इस स्थानपर भी कुछ सिपाहियोंने सेनापतिके प्रति सज्जनता प्रगट की। हथियार रखकर वे सिमसनके घोड़ेके चारों ओर हो गये और उनसे किलेमें जाकर जान बचानेके लिये कहने लगे। सेनापति एक सैनिकके साथ खजानेकी रक्षाके लिये गये। पर खजानेकी ओर जानेका रास्ता भी विपत्तिसे खाली न था। सेनापति जिस ओर गये उसी ओर लगातार गोलियोंकी बौछार होने लगी। ऐसी हालतमें अपना प्राण बचानाही सेनापतिको कठिन हो गया। एक गोली उनकी टोपी परसे होकर गई। उन्होंने किलेकी ओर अपना घोड़ा बढ़ाया। इस समय भी सिपाही उनकी ओर बंदूकें छोड़नेसे बाज न आये। कई गोलियोंसे घोड़ा घायल हो गया। इस हालतमें भी वह अपने सवारको लेकर किलेके दरवाजेपर जा पहुंचा। घोड़ेके खूनसे भींग कर सेनापति किलेमें चले गये। घोड़ा दरवाजेमें ही लेट गया।

सेनापति सिमसनके भाग जानेपर भी सिपाही न रुके। जिस किसी गोरेको वे पाने लगे उसीपर बंदूकें छोड़ने लगे।

बहुतोंने बचकर प्राणरक्षा की और कई उनके गोलियोंके शिकार हुए। जो बालक सेनामें काम सीखते थे, उनमेंसे ७ मारे गये। एक बुरी तरहसे घायल होकर भी पासके गढ़ेमें छिप रहा। इसकी अवस्था १६ वर्षकी थी, यह लड़का चार दिन तक इस गढ़ेमें छिपा रहा। उसकी रक्षाके लिये कोई भी वहां न था। जो अंग्रेज़ किलेमें जा छिपे थे, उन्हें किलेके बाहरका कुछ भी हाल मालूम न था। हमलेके डरसे कोई किलेसे बाहर जानेकी हिम्मत नहीं करता था। इस प्रकार घायल बालक चार दिनतक असहाय दशामें पड़ा रहा। भूख और प्यासके कारण उसकी दुर्दशाका ठिकाना न था। प्रचण्ड धूप उसके सिर पर पड़ रही थी। पांचवें दिन सिपाहियोंने उसे देखा। वे उसे सरायमें ले गये वहाँ और भी ईसाई कैदी थे। गोपीनाथ नामक एक ईसाईने भूख और प्याससे व्याकुल देखकर पानी और रोटी दी। बालकने रोटी खाकर पानी पी लिया। पर उसे शान्ति न हुई। उसका घाव बहुत पीड़ा दे रहा था। इसी समय कुछ जोशीले मुसलमान आ पहुँचे। उन्होंने गोपीनाथको ईसाईधर्म छोड़कर इसलामधर्म ग्रहण करनेको कहा। अंग्रेज़ बालकने यह सुना। उस कष्टमें भी उसने गोपीनाथसे कहा—"पादरी, पादरी! अपना धर्म न छोड़ना!" यह बालक बादमें सिपाहियोंसे छुड़ाकर किलेमें पहुंचाया गया था। पर उसकी जान न बची। भूख, प्यास और घावकी तीव्र वेदनाके कारण खुले मैदानमें पड़े पड़े उसकी जीवनशक्ति क्षीण हो गई थी। १६ जूनको वह किलेमें मर गया।

किलेमें एक भाग ६. नं० सेनाका और एक भाग सिक्ख सेनाका था। जब यह लोग बार बार किलेके बाहर बन्दूकोंकी आवाज सुनने लगे तब समझे कि बनारसके सिपाही आ गये और उनके साथ उनसे मिल गये। पर जब घोड़ेके खूनसे लथपथ सेनापति सिमसन किलेमें पहुँचे तब वे हताश हुए। उन्हें मालूम हो गया कि बनारसके सिपाही नहीं आये। अपने साथियोंका क्या हाल होगा, यह सोचकर वे चिन्तित हुए। इधर किलेमें पहुँचते ही सेनापति ६. नं० सेनाके हथियार ले लेनेको तैयार हुए। सिक्ख सेनाके सेनापतिपर हथियार लेनेका भार दिया गया। इस सेनापतिने पंजाबकी लड़ाइयोंमें विशेष वीरता दिखाई थी। सिक्ख सेनाको उसने झट तैयार किया। इस समय सेना किलेके दरवाजेकी रक्षापर नियुक्त थी। बाहर बार बार बन्दूकोंकी आवाज सुनकर इसने भी अपनी बन्दूकें भर ली थीं। जो कहीं सिक्ख सेना जरा भी अपने कर्त्तव्यपालनसे पीछे हटती तो किलेके अंग्रेज़ोंमेंसे एककी भी जान न बचती, या कहीं खजाना किलेमें ले गये होते तो सिपाही और शहरके गुण्डे उसे लूटनेके लिये वहां जा टूटते और इस प्रकार भी अंग्रेज़ोंका विध्वंस हो जाता। पर पंजाबी सेना हिन्दुस्तानी सेनासे न मिली। खजाना किलेमें था ही नहीं, इसलिये किले पर हमलेकी किसीको जरूरत भी न पड़ी। जहां भरी बन्दूकें लिये सिपाही खड़े थे वहां सिक्ख आकर खड़े हो गये। उनके सामने चुनारसे आई हुई तोपें खड़ी कर दी गई। पास ही स्वयं-

सेवक गोरी सेना अस्त्रशस्त्रोंसे सज्जित होकर खड़ी हो गई। तोपोंपर गोरे जलती बत्ती लेकर खड़े हो गये। पर सिपाहियोंने किसी प्रकारकी उच्छृंखलता प्रगट न की। सेनापतिकी आज्ञासे उन्होंने हथियार रख दिया और किलेसे निकलकर अपने साथियोंके साथ मिल गये।

इलाहाबादका किला हर तरहके हथियारोंसे भरा हुआ था। यदि किला अंग्रेज़ोंके हाथसे निकल जाता तो यह सब सामान सिपाहियोंके हाथ लगता जिससे उनकी शक्ति बहुत अधिक बढ़ जाती। एक अंग्रेज़ गोलन्दाजने यह सोचकर तोपख़ानामें आग लगानेका इरादा किया। कप्तान विलोबीने जैसे दिल्लीका तोपख़ाना उड़ाकर सुयश कमाया था, यह बात सबको मालूम थी। विलोबीकी तरह इस वीरने भी तोपख़ाना उड़ाकर शत्रुके हाथ अपनी शक्ति जानेसे रोकनेका पक्का निश्चय कर लिया था, पर इसकी जरूरत न पड़ी। किलेपर पहलेके समान ब्रिटिश झंडा लहराने लगा।

इलाहाबादकी ६ नं० सेनाके अभ्युत्थानका इतिहास इस प्रकार है। इस सेनामें न तो सिपाहियोंमें ऐक्य दिखाई देता था और न किसी एक उद्देश्यकी पूर्ति करनेका आग्रह ही था। जब पुलके रक्षक सिपाहियोंने तोपरक्षक गोरोंपर हमला किया और छावनीके सिपाहियोंने अपने गोरे अफसरोंपर गोलियां दागीं, उस समय किलेके सिपाहियोंको किसी बातकी ख़बर ही न थी। वे सोच रहे थे कि बनारसके सिपाही उनसे मिलनेके

लिये आगे बढ़ रहे हैं। न उनमें कोई आपसमें सलाह थी, न किसी कामके करनेका निश्चय था। किलेके बाहरसे उन्होंने अपने साथियोंको कार्य शुरू करनेका कोई इशारा भी न किया। जब सेनापति सिमसन किलेमें घुसे तब सिपाही चौकन्ने हुए। पहुँचते ही सेनापतिने उनके हथियार ले लेनेका हुक्म दे दिया। जब हथियार लिया जाने लगा तब सिक्खोंने सिपाहियोंकी कुछ भी तरफदारी न की। यदि कहीं किलेके बाहरवाले सिपाही अपने अंग्रेज़ अफसरोंपर हमला करते और किलेके भीतरके सिपाही वहांके यूरोपियनोंको मारते तो इलाहाबादमें अंग्रेज़ोंकी रक्षा होनी असम्भव थी। संभव था कि हथियारोंसे भरा हुआ किला सिपाहियोंके हाथ लगता। पर सिपाहियोंने पहलेसे किसी प्रकारकी सम्मति या निश्चयसे कोई काम नहीं किया, उनका कोई संचालक न था, हरएक अपने आपको सर्दार समझता था। इस प्रकार इलाहाबादके सिपाहियोंका उत्थान थोड़ेसा शोर शराबा और बन्दूकोंकी आवाजोंमें ही समाप्त हुआ। गदरके इतिहासमें हर जगह यही बात मिलेगी। सब जगह सञ्चालककी कमी, सब जगह स्वयंप्रधानताने उनको सफल नहीं होने दिया। सिपाहियोंके उठते ही शहरमें भी यह जोड़ा दिखाई दिया, अड़ोस पड़ोसके गांवोंके किसान भी जाग उठे। जोश था, काम करनेकी ताकत भी थी, वीरता भी थी, पर नियम न था, व्यवस्था न थी, कोई नियमके अनुसार व्यवस्थामें चलानेवाला न था। यही कारण था जो हर जगहका उत्थान थोड़ी देरमें शान्त हो जाता

था। हर एक अपने आपको आज़ाद समझकर दूसरोंको अपनी इच्छाके अनुसार काम करनेको कहता था। कोई किसीके कहनेका पालन ही न करता था। कोई किसीको अपनेसे बड़ा या नेता माननेको तैयार न था। कोई अपने उद्देश्यकी सिद्धिकी किसीसे सलाह ही न लेता था। सब अपने आपको मालिक समझकर जो जीमें आता सो करते, उनका काम आग लगाना, लूटना, या अपने शत्रुको मारना था। वे पागल होकर सब कुछ भूल गये थे, राक्षसी प्रवृत्ति उनसे जो कुछ करवा रही थी, वही उन्होंने किया।

इलाहाबादमें सब जातियाँ और सब सम्प्रदाय बसे थे। इस स्थानपर जैसे हिन्दू प्रधान थे वैसे ही मुसलमान भी प्रधान थे। अधिकांश मुसलमान दिल्लीके बादशाहके आश्रित और प्रतिपालित थे। पहलेका सुखी जीवन उन्हें याद था। मुगल बादशाहतके ज़मानेसे इन्हें जैसी शक्ति और क्षमता मिली हुई थी, वैसी ही शक्ति और क्षमताके लिये ये लोग भी लालायित थे। इसी कारण अंग्रेज़ोंके राज्यसे ये खुश न थे। जब सिपाही उठ खड़े हुए तब यह लोग भी अपने नष्टगौरवके उद्धारके लिये शान्त न रहे। पर जैसे सिपाहियोंमें कोई नियम न था वैसे ही यह लोग भी नियमहीन थे। ये लोग काल्पनिक विमानोंपर चढ़कर जिस सुखको तरंग ले रहे थे उसकी कल्पनामें ही मोहित होकर वे अपना कर्त्तव्य ही भूल गये। जिस समय किलेमें अंग्रेज़ आत्मरक्षा कर रहे थे, उस समय शहरभरमें और आसपासके

सब गांवोंमें गड़बड़ और शोर हो रहा था। ६ जूनकी सारी रात भर बराबर खून और मार काट होती रही। जेल टूट गई, कैदी छूट गये। चोर, उचक्के, बदमाश और ठगोंको स्वाधीनता मिलते ही वे शहरमें लूटने लगे। जोशमें आकर सर्वसाधारण अंग्रेज़ोंकी बस्तीकी ओर गये। रास्तेमें वे जिस गोरे या यूरेशियनको देखते उसीपर हथियार चलाते। ईसाइयोंके घर लूटे और जलाये गये। रात्रिमें भयानक आग चारों ओर और भी भयानक दृश्य दिखाने लगी। ईसाइयोंकी दूकानें, रेलवेका कारखाना, तारका दफ्तर सबका सब विध्वंस हुआ। किलेसे बाहर जो अंग्रेज़ थे उनमेंसे कोई ही बचा होगा। लोग लूटने और अंग्रेज़ोंको मारनेपर तुले हुए थे। इसीको वे अपनी सम्पूर्णशक्ति लगाकर पूरा कर रहे थे। सिपाहियोंने एक दिन जिनकी अधीनतामें वीरता दिखाई थी, वे इस समय उनके मारनेमें ही वीरता समझने लगे। कहा जाता है कि, काम समाप्त करके जो सिपाही इस समय पेंशन खा रहे थे वे भी जोशमें आकर अपने भाइयोंका साथ देने लगे।* उनकी जवानी ढल गई थी। बूढ़े की सलाहोंसे और भी अधिक भयानक काण्ड हुए। इस प्रकार बूढ़ोंकी सलाह और जवानोंके पराक्रमसे इलाहाबादमें रुद्रगणका भयानक ताण्डव होने लगा। सरकारका राज्य थोड़ी देरके लिये उठ गया। मुगल बादशाहतकी शान, चन्द्रमा और तारोंसे अंकित हरी पताका थोड़ी देरके लिये कोतवालीपर फहराने लगी।

*Kaye's Sepoy War. Vol II. P. 257 note.

जोशमें आकर लोगोंने यूरोपियनों और अंग्रेज़ोंके साथ साथ ईसाइयोंको तो मारा ही, उनके साथ बहुतसे भोले हिन्दू और बहुतसे शान्त बंगाली भी लूटे और मारे गये। अन्तमें बंगालियों-ने मुगल बादशाहकी बादशाहत स्वीकार की तब उनकी जान बची। इस तरह जान बचाकर बंगालियोंने किलेके अंग्रेज़ोंको अपनी रक्षाके लिये लिखा पर अंग्रेज़ खुद अपनी जान बचानेकी चिन्तामें थे। अन्तमें एक हिन्दुस्तानीकी मददसे बंगाली स्वयं-सेवक बनकर अपनी रक्षा करने लगे।

सिपाही और सर्वसाधारणका सबसे बड़ा लक्ष्य खजानेको लूटना था, पर ६ जूनको कोई इसमें हाथ न लगा सका। किसी किसीका प्रस्ताव था कि यह धन दिल्ली ले जाकर बादशाहत-की रक्षाके लिये बादशाहको दिया जाय। पर यह भाव सिर्फ ६ जूनको था। ७ जूनको कवायदके मैदानमें एकत्र होकर सिपा-हियोंने इसके विरुद्ध आवाज उठाई। इस दिन दोपहरके बाद सब खजानेपर पहुंचे और किवाड़ तोड़कर सब थैलियां उठाने लगे। जिससे जितना बन पड़ा वह उठा ले गया, जो बाकी रहा वह शहरके बदमाशोंने लूट लिया। इस खजानेमें ३० लाख रुपया था। एक एक सिपाही तीन तीन चार चार थैली उठा ले गया। एक थैलीमें एक एक हजार रुपया था। इस प्रकार धन ले लेकर सिपाहियोंने अपने अपने गांवों और घरोंका रास्ता लिया। पर शहरमें शान्ति न हुई। रास्ते, मुहल्ले और आसपासके बदमाशोंको रोकनेवाला कोई न था, वे डाके डालने

और अत्याचार करने लगे। कोई निवासी आपत्तिसे बचा न रहा।

शहरकी देखादेखी यही बात गांवोंमें भी होने लगी। जिन ताल्लुकदारोंकी जमीनें छीनी गई थीं, उन्होंने किसानोंको तैयार किया। गंगा यमुनाके बीचके प्रदेशमें मुसलमान ताल्लुक-दार ही प्रधान थे। यह सब मुगल बादशाहतको चाहते थे। इस प्रदेशमें ब्राह्मण और क्षत्रियोंकी भी कमी न थी, पर बहुतोंने किसीका भी पक्ष न लिया। इस प्रकार गंगा यमुनाके बीचके प्रदेशसे कुछ दिनोंके लिये अंग्रेज़ी शासनका लोप हो गया। कुछ दिन बाद लूटमार बंद हो गई। जो कुछ था लुट गया था। किसीके पास कुछ न था, पर विद्रोहका अन्त न हुआ। विद्रोह उसी प्रकारकी धाराप्रवाहसे चलता बच गया। जिस समय सर्व-साधारणकी उत्तेजना बढ़ जाती है, वे अपने आपको स्वामी समझने लगते हैं, उस समय उनकी इच्छाओंको उद्दीप्त करने वालोंकी भी कमी नहीं होती। इस समय भी ऐसे लोगोंकी कमी न थी। गंगा यमुनाके बीचके प्रदेशकी एक मुसलमान बस्तीमें, एक मौलवी रहता था। यह इलाहाबादके खुसरो बागमें जाकर रहा। बागके चारों ओर दीवार और वहां कुछ कबरें थी, कबरोंके कारण मुसलमान उस बागको पवित्र समझते थे। इस पवित्र बागमें रहकर मौलवीने अपने आपको दैवीशक्ति-सम्पन्न प्रसिद्ध किया। बहुतसे कौतूहली मुसलमान इनके भक्त बने। जब ग़दरके समय मौलवीने कहा कि दिल्लीपर फिर बादशाही

अधिकार हो गया, तब सबने उसकी बात आश्चर्यसे सुनी। इसने बड़ी जोशीली भाषामें मुसलमानोंको भड़काया। जोशमें भरकर मुसलमान स्थिर न रह सके। मौलवीने कहा कि, बस अंग्रेज़ी राज्य समाप्त हो गया, दिल्लीकी बादशाहत बदल गई। इलाहाबादमें भी इस्लामी झंडा लहरानेवाला है। मुसलमान लोग इस प्रकार मनोमोदकोंसे ही तृप्त होने लगे। मौलवी साहब इलाहाबादके शासक बनाये गये। मौलवी साहबकी हुकूमत होने लगी। उनके शिष्य लोग उनकी प्रशंसा करने लगे। उसकी बातोंसे अंग्रेज़ोंके विरुद्ध मुसलमानोंकी और भी शत्रुता बढ़ी। वे कहने लगे, बस अब हिन्दुस्तानमें सफेद आदमी न रहेंगे। हर जगह मुसलमानोंकी हुकूमत होगी। ऐसी बातोंसे वह सबको किलेपर हमला करने और उसे लेनेकी सलाह देने लगे। उसके कहनेसे लोगोंने किलेपर हमला किया, पर कोई फल न निकला। तोपोंकी मारके सामने मौलवीकी सेना न टिक सकी। किलेमें अंग्रेज़ रहे। इस मौलवीका नाम लियाक़त अली था। यह कौमका जुलाहा और एक मुसलमान मदरसाका शिक्षक था। दिल्लीके बादशाहके नामपर इसने इलाहाबादका राज्य किया।

इलाहाबादपर इस प्रकार मौलवीकी प्रधानता अधिक समयतक न रही। अंग्रेज़ी शासन फिर इलाहाबादमें आया। जिस समय मेरठ और दिल्लीमें अंग्रेज़ोंकी दुर्दशा हुई थी उसी समयसे इलाहाबादपर सबकी नजर थी। जनरल आउटरामने

इस स्थानको हाथमें रखनेके लिये विशेष रूपसे कहा था। राजनीतिज्ञ हेनरी लारेंसने भी इस स्थानका महत्व समझकर रक्षाके लिये कहा था। उनके सौभाग्यसे इलाहाबाद फिर हस्तगत हुआ। जो कहीं इलाहाबादका किला अंग्रेज़ोंके हाथसे चला जाता तो कानपुर और लखनऊपर फिर कब्ज़ा करना कठिन होता। फिर शायद सारे भारतमें गदर होता।* अंग्रेज़ोंकी क्षमता और बुद्धिका बल चाहे इस स्थानपर प्रगट हो या न हो, पर ईश्वरकी इच्छासे इलाहाबादके किलेपर अंग्रेज़ी झण्डा लहराता रहा। बनारसकी सिक्ख सेनाने अंग्रेज़ोंपर हथियार उठाये थे। इलाहाबादकी सिक्ख सेनाने सिपाहियोंके हथियार लेकर अंग्रेज़ोंकी रक्षा की। यदि कहीं बनारसकी तरह इलाहाबादके सिक्ख भी विरोधी होते तो न मालूम घटनाका स्रोत किस ओर बहता। खैर जो कुछ हो, बहुत जल्द किलेमें अंग्रेज़ोंका भाग्य उदय हुआ। जिन साहसी, वीर, स्वदेशहितैषी साथही कठोर पुरुषोंने बनारसकी रक्षा की थी, वे शीघ्र ही सेना सहित इलाहाबादके किलेमें जा पहुंचे।

११ जूनको सेनापति नील इलाहाबाद पहुंचे। जब वे बनारससे चले तब उन्हें कुछ भी मालूम न था कि इलाहाबादमें क्या हो रहा है। तार कट चुके थे, इसलिये खबर जानेका कोई जरिया न था। फिर भी सेनापति बड़ी तेजीसे आगे बढ़े। प्रचण्ड धूपकी गर्मी भी उस सेनाकी गतिको न रोक

* Russel's Diary in India, Vol. I. P. 155.

सकी। सब विघ्न बाधाओंको पार करके सेनापति शीघ्र गंगा किनारे आये। किलेके अंग्रेज़ोंको उनके आनेका कुछ भी हाल मालूम न था, इसलिये गंगापर उनके लिये नाव आदि कुछ न थी। पर इससे नीलकी गति न रुक सकी। परन्तु कुछ मल्लाहोंको इनामके लालचमें फंसा लिया। एक नावमें सेनापति कुछ सैनिकोंके साथ दूसरे किनारे पहुंचे। किलेके अंग्रेज़ोंको समाचार मिलते ही उन्होंने नावें एकत्र कर दीं। नीलकी सम्पूर्ण सेना नदी पार हुई। सब किलेके भीतर गये। रास्तेमें सेनापतिने विद्रोहके लक्षण स्पष्ट देखे थे, कहीं भी अंग्रेज़ोंके धन तथा प्राण रक्षित न थे। चारों ओर अशान्ति और उच्छृंखलता थी। इलाहाबाद आकर उन्होंने गदरका प्रत्यक्ष रूप देखा। अंग्रेज़ोंके घर, दूकानें, दफ्तर सब राखके ढेर हो चुके थे। जोशमें सार्वजनिक नियम नहीं रहते। यूरोपके प्रसिद्ध बालक्लावा नामक स्थानमें जो युद्ध हुआ था उसमें सभ्य सैनिकने इससे भी अधिक उद्दण्डताका परिचय दिया था*। इसलिये इलाहाबादके आदमी खोटी सलाहोंमें पड़कर यदि इस प्रकारका परिचय दें तो आश्चर्यकी क्या बात थी? खैर नीलको यह देखकर आश्चर्य हुआ कि किला अंग्रेज़ोंके हाथमें है। किलेकी सिक्ख सेनाने अंग्रेज़ोंपर हमला न किया, यही आश्चर्य था। किलेके चारों ओर

* बालक्लावा क्रीमियाके पश्चिम है। इसमें एक ओर रूस दूसरी ओर अंग्रेज, फरासीसी, तुर्क और सार्डिनिया थे। Russell's Diary in India Vol I. P. 156

विद्रोही थे, विद्रोही सिपाही प्रतिपल अपने कामको पूरा करना चाहते थे। भीतर बैठे अंग्रेज़ क्षण २ के लिये चिन्तित हो रहे थे। सेनापतिने सोचा कि ईश्वरकी अपार करुणासे ही किला बचा। किलेमें भी किसी तरहका नियम न था। बाहर जैसे उत्तेजित जनता किसीकी अधीनता स्वीकार न करके मनमाना कर रही थी, उसी प्रकार भीतर भी अंग्रेज़ोंमें उत्तेजना थी और भीतर भी सब कुछ अनियमित हो गया था। जो अंग्रेज़ स्वयंसेवक बने थे वे भी एक दूसरेके अधीन न थे, वे शराब पी पीकर मत्त होकर यथेच्छाचार कर रहे थे। गरीबोंको मारना लूटना उनमें भी जारी था। एकने पिस्तौल लेकर सिक्ख सेनाध्यक्षको मारनेकी धमकी दी। किलेकी चीजें उन्होंने लूटीं। शराबकी बोतलें लूटकर सिक्खोंने अंग्रेज़ोंके हाथ कम कीमतमें बेची। इस प्रकार बाहर-की उत्तेजित जनतासे भी अधिक अव्यवस्था और अशान्ति किलेके भीतर थी। सिक्ख और अंग्रेज़ सबने मिलकर किला लूटा था। व्यवस्थाका यह हाल था कि सारे दिन जो रक्षापर खड़े थे उन्हें खाने तकको न मिलता था। वे स्त्री पुत्र सहित भूखों मर रहे थे। यह देखकर ईसाई धर्मप्रचारकोंने सेनापति सिमसनसे कहा। सेनापतिने उन्हें मालगोदाममें ले जाकर एक एक रोटी दी। पर मालगोदामका एक आदमी यह रोटी देनेको भी तैयार न था। वह कहता था कि यह कमजोर हैं लड़ नहीं सकते। इस तरह किलेके भीतर हरएक अपने

आपको स्वयं प्रभु समझ रहा था। सेनापति भी इस यथेच्छा-चारको न रोक सके। भले बुरेका ज्ञान भूलकर आदमी जब उत्तेजनाके अधीन होता है तब वह ऐसा ही करता है। फिर कोई शासन उसे नियममें नहीं रख सकता। एक सेना-पतिकी अधीनतामें ऐसा व्यवहार हो रहा था, फिर बाहर लोगोंने बिना किसीकी अधीनताके जो कुछ किया उसकी निन्दा कैसे की जा सकती है। सेनापति नीलने किलेमें जाते ही अपनी मर्यादाकी रक्षा करनेकी प्रतिज्ञा की। उन्होंने असंयत अंग्रेज़ोंको शीघ्र ही वशमें किया।

सबसे पहले सेनापतिने किलेको सुरक्षित और निरापद किया। दारागंज नामक स्थानमें शहरके सब जोशमें भरे आदमी एकत्र हो रहे थे। उन्हें दण्ड देनेके लिये सेनापतिने कुछ गोरी सेनाके साथ सिक्खोंको भेजा। इस सेनाने दारागंजके आदमियोंको समुचित दण्ड दिया, एक गांव जला दिया। नावोंका पुल अपने कब्जेमें कर लिया। इस पुलकी मरम्मत करवाकर नीलने उसकी रक्षाका भार सिक्ख सेनाको दिया। अबतक सिक्ख किलेके भीतर थे। हिन्दुस्तानी सिपाहियोंके हथियार लेलेनेमें इन्होंने बड़ी दक्षताका परिचय दिया था। इन्होंने सोचा था कि वे इसी तरह किलेमें रहकर शराब पीयेंगे और अंग्रेज़ोंकी तरह मालगोदामका माल हजम करेंगे। जब नीलने इन्हें पुलके प्रबन्धपर जानेकी आज्ञा दी तब वे शंकित हुए। वे इस आज्ञाको पालन करनेके लिये सहसा तैयार न

हुए। सेनापति नील क्लाइवके समान दृढ़प्रतिज्ञ थे, उन्होंने अपना इरादा न छोड़ा। यह पहले ही कहा जा चुका है कि किलेमें कोई नियम न था, सैनिकोंको वारुणी अपना कृत्य सिखा रही थी। गोदामकी अच्छीसे अच्छी शराब सिक्खोंने अपने हाथमें कर ली थी और पी पीकर अद्भुत नाच नाच रहे थे। सेनापति नीलने आज्ञा दी कि इनके पास जितनी बोतलें हैं वे जिस कीमतमें दें लेकर गोदाममें रख लो। इससे सिक्ख प्रसन्न हुए। उनसे किलेके बाहरके हिस्सेमें रहनेको कहा गया, वे बाहर रहने लगे, पर लूटने खसोटनेकी आदत न गई। अब वे अंग्रेज़ोंकी चीजें न लूटते बल्कि गांवोंपर धावा करते, उन्हें लूटते और जला देते। उनका सेनापति उनके इस अनियमको दूर न कर सका। सिक्खोंकी इस अवज्ञाको देखकर गोरी सेना भी अफसरोंकी बातोंपर अधिक कान न देती। इस समय सामान लाने और लेजानेके लिये बैलगाड़ियों और बैलोंकी बहुत अधिक आवश्यकता थी। बहुत बार गाड़ियां और बैल मिलते ही न थे। पर स्वयंसेवक अंग्रेज़ मदके नशेमें ऐसे चूर थे कि वे बैलको देखकर भी गोली मार देते थे। सेनापति नीलको ऐसी अव्यवस्था बहुत खटकी और उसने सबसे कहा कि जो वे नियम अनुसार न चलेंगे तो अंग्रेज़ोंको भी फांसीपर लटकाया जायगा।

सिक्खोंको किलेसे निकालकर नील विद्रोहियोंको दबानेके लिये निकले। १५ और १७ जूनको दो जहाजोंमें उन्होंने अपने

बच्चों और अंग्रेज़ स्त्रियोंको कलकत्ते भेज दिया। जहाजोंके नाविक मुसलमान थे। उनपर पूरा विश्वास न होनेके कारण १७ रक्षक यात्रियोंके साथ रहे। सेनापतिने इधर यमुनाके बायें किनारेकी बस्ती कीटगंज और मूलगंजपर हमला किया। वहाँके निवासी भाग गये। एक जहाजपर दो तोपें लगाकर नीलने जलमार्गको रक्षित किया। खुश्कीके रास्तेपर सेना और सवार रहे। पैदलोंमें सिक्ख थे। जब यह आगे बढ़े तब विद्रोहियोंने हमला किया, पर सिक्खोंको बंदूकोंकी मारसे वे भाग गये। रातको विद्रोही ईसाई कैदियों और तोपोंको छोड़कर भाग गये। इन कैदियोंमें वह १६ सालका अंग्रेज़ बालक भी था। सेनापति नीलने इस प्रकार हमला करके एक एक स्थानपर अपना अधिकार जमाया। १७ जूनको मजिस्ट्रेट साहब कोतवाली पहुंचे। यहांसे भी बलवाई भाग गये थे। इसी समय लोगोंमें अफवाह फैली कि अंग्रेज़ो तोपोंसे सारा शहर उड़ाया जायगा। संभव है यह बात डरे हुए लोगोंने या जिन्हें अंग्रेज़ गिरफ्तार करना चाहते थे उन्होंने फैलाई हो। चाहे जहांसे यह बात चली हो, पर देखते देखते चारों ओर फैल गई। नगरवासी इससे डर गये। मौलवी और उनके साथियोंने यह डर दूर करनेका प्रयत्न किया पर डर दूर न हुआ। शहर छोड़कर लोग भागने लगे। सारा शहर खाली हो गया, एक भी आदमी न रहा। शामको एक घरमें भी चिराग नजर न आया। मौलवी लियाकत अली शहर छोड़कर कानपुरकी

ओर चले ।* उनके दो साथी लड़ाईमें मारे गये थे। एक सुन्दर कपड़े पहने हुए नौजवान हाथ बांधकर सिक्ख सेनाके सेनापति-के सामने लाया गया। यह मौलवीका भतीजा था। इससे कुछ बातें पूछकर ही सेनापतिने इसे जेल भेज दिया। जब सैनिक इसे जेल ले जा रहे थे तब जबर्दस्ती अपनेको छुड़ाकर इसने ले जानेवालोंमेंसे एकको चोट पहुंचाई। यह देखकर सेनापति झट घोड़ा दौड़ाकर इसके पास गये और तलवारसे उसके दो टुकड़े कर दिये। फिर इसकी लाश बाहर फेंक दी गई।

तमाम अंदरूनी इन्तजाम करके सेनापति नील १८ जूनको अपनी सारी सेनाके साथ निकले। एक सेनाको उन्होंने दरियाबाद, सैदरबाद, रसूलपुर नामक गांवोंपर हमला करनेके लिये भेजा। बाकी सेना लेकर शहरकी ओर बढ़े। शहरके निवासी बस्ती छोड़कर भाग गये थे। बड़े भारी तूफानके बाद जैसे प्रकृति शान्त रूप धारण करती है, वैसे ही कवायदका मैदान और फौजी छावनी भी शान्त थी। फिरसे छावनीपर सेनापतिका कब्जा हुआ। शासनविभागके राजकर्मचारियोंका काम फिरसे शुरू हुआ। परेटके मैदानमें फिर राजभक्त सिपाहियोंका समागम हुआ। इलाहाबादका युद्ध समाप्त हुआ, पर अंग्रेजोंकी

* मौलवीने अफवाहके सम्बन्धमें लिखा है कि—"कुछ दुष्ट आदमियोंने शत्रुओंका पक्ष लेकर कहा था कि अंग्रेज सारे शहरको उड़ानेके लिये तोपें तैयार कर रहे हैं। वह खुद भी अपने आदमियोंके साथ भाग गये। मैंने लोगोंको बहुत समझाया, पर किसीने न सुना।"

प्रतिहिंसाकी समाप्ति अबतक न हुई। जोशमें आकर जैसा लोगोंने अंग्रेज़ोंकी हत्या की थी, उनके घर जलाये थे, अब अंग्रेज़ उनसे अधिक हत्या करके उनके घर जलाने लगे। दो सप्ताह पहले वे लोग शहरसे भागकर किलेमें छिपे थे, उनके घर, दूकानें लूटी और भस्म की गयी थीं। उनके स्वजन बन्धु मारे और सताये गये थे। दो सप्ताह बाद जब विपत्तिसे उनका उद्धार हुआ, जब फिरसे उनका राज्य स्थापित हुआ, तब वे बिना किसी तरहके संकोचके अनपढ़, शान्त और गरीब प्रजाको मारने लगे, उनके घर और गांव जलाने लगे। जितना भयंकर कांड हिन्दुस्तानियोंने किया था उससे चौगुना घोर वीभत्स काम अब अंग्रेज़ोंने करना शुरू किया। उदारता, न्याय और दयाका तो कहीं नाम भी न रहा। चारों ओर घोर हिंसा, बदला और खून ही खून हो गया।

अंग्रेज़ जब पश्चिमोत्तर प्रदेशमें अपनी जीवनरक्षाके लिये चिन्तित थे तब कलकत्तेकी सरकार अपराधियोंको कड़ी सज़ा देनेके लिये कठोर कानूनोंका निर्माण कर रही थी, इन कानूनोंके द्वारा सर्वसाधारण प्रजाका संकटमय जीवन मजिस्ट्रेटोंके हाथका खिलौना था। मजिस्ट्रेट, सेनापति, उनके सहायक और साधारण गोरेको भी जान लेनेका अधिकार मिल गया था। वे मनुष्यके अमूल्य जीवनको एक पलमें ले सकते थे। हिंसा इनके हृदयोंमें त्रिकट रूपसे जाग रही थी। जो बदला लेनेके लिये पागल हो रहे थे, उन्हींके हाथमें ताकत और कानून था।

उस समय इन सब आदमियोंके हाथमें इस तरहकी शक्ति देकर सरकारने उचित कार्य नहीं किया। जो गदरके नेता थे या जिन्होंने उसमें किसी तरहका भाग लिया था, उन्हें सजा देना उचित था, पर उसमें न्यायकी मर्यादा भी होनी चाहिए थी। सौ अपराधी चाहे छूट जायँ, पर एक भी निरपराधीको सजा न मिले, यह सरकारका आदर्श उस समय लुप्त हो गया था। सरकारके कानून यदि विचारशील पुरुषोंके हाथमें होते तो फिर भी कुछ आशा थी, पर जिन्हें अधिकार मिला था वे अदूरदर्शी और हिंसापरायण थे। अपराधी निरपराधी सभीपर उनका कठोर वज्र समानरूपसे गिरा था। वे लोग प्रजाकी हत्या करनेवाली मैशीनें बन गये थे। रोज सैकड़ों निरपराधोंके प्राणघात हो रहे थे। पश्चिमोत्तर प्रदेशके ले० गवर्नरने घोषणा की थी कि बिना गवर्नर जनरलकी आज्ञाके किसीकी जान न ली जायगी, पर सेनापति नीलने इसपर कुछ भी ध्यान न दिया। उस समय एक अखबार "हिन्दू पैट्रियट" अंग्रेज़ीमें निकलता था। उसके सम्पादक हरिश्चन्द्र मुखोपाध्यायने अपने पत्रमें लिखा था कि—"यदि गवर्नर जनरल उत्तरपश्चिम प्रदेशके ले० गवर्नर ग्रान्ट साहबकी घोपणाकी रक्षा न करें तो उन्हें चाहिये कि वे अपने पदसे इस्तीफा दे दें। अगर सेनापति नील उनके कामको, या उनकी शत्रुता निकालनेकी इस रीतिको अच्छा समझते हों, तो गवर्नर जनरलको चाहिये कि कुछ कसाइयोंके हाथमें देशभरको सौंपकर यहाँसे विदा हो जायं। पर यदि वे भारतको राज्यका मुकुट

समझते हों तो यहांके निवासियोंके साथ दया और करुणाके साथ काम लेना चाहिए। पश्चिमोत्तर प्रदेशमें लोगोंका सर्वनाश हो रहा है, उसका अन्त होना चाहिए।" स्वदेशहितैषी लेखककी कलमसे उस समय यह शब्द निकले थे। पर उस समय सेनापति नीलके समान और भी बहुतसे अंग्रेज़ थे, वे सब हिन्दुस्तानियोंका नाश करनेपर तुल गये थे। केवल बदला उनकी नज़रके सामने था, उनकी उदारताका कहीं पता भी न था।

विचारविभागके अलावा जिन आदमियोंको फौजी कानूनका अधिकार दिया गया था, उनमेंसे एकने ६० को, दूसरेने ६४ को और सिविल सर्जनने ५४ को फांसीका हुक्म दिया। इन लोगोंका बयान या गवाही आदि कागजपर भी नहीं लिखी गई। एक आदमीके पास एक पैसोंकी थैली थी, इसी अपराधमें उसे फांसी दी गई। यह कहा गया था कि इसने खज़ाना लूटा होगा। इसके एक महीने बाद एक दिन २८ आदमियोंको, दूसरे दिन १५ और तीसरे दिन १३ को फांसी दी गई। पर इनके अपराधी होनेका कोई भी प्रमाण न था।

सिपाहियोंको पुलपार करने देनेके अपराधमें छः आदमियोंको फांसी दी गई। उस समय एकमात्र फांसी ही अपराधियोंके लिये दण्ड था। न्याय करते समय यदि अपराधीके अपराधपर विचार किया जाता तो कोई बात न थी, किन्तु अंग्रेज़ और अधिकारियोंने फांसीको अंग्रेज़ी रोआबका एकमात्र मुख्य साधन समझ लिया था। इन्साफ करनेवालेकी दृष्टि अपराधीके अपराधपर न होकर

अपने हृदयकी हिंसाकी ओर इङ्गित थी। गदरके छः महीने बाद जजकी आज्ञासे १०० आदमियोंको और मजिस्ट्रेटकी आज्ञासे ५० को फांसी दी गई थी। इलाहाबाद और पश्चिमोत्तर प्रदेशके अन्यान्य स्थानोंपर एक बहुत बड़ा फांसीका लट्टा खड़ा किया गया था। इनके पास लेजाकर हिन्दुस्तानियोंको नम्बरवार रस्सियोंसे लटका २ कर मार डाला जाता था। उक्त फौजी न्यायकर्त्ताओंमेंसे एकने लिखा था—"जिन गांववालोंने हमारा विरोध किया था, उन सबको हमने जलाकर नाश कर दिया, निवासियोंको मार डाला। हमने खूब अच्छी तरहसे बदला लिया। जिन्होंने सरकार और उसके अनुयायियोंका विरोध किया उनका न्याय करनेके लिये मैं जज बनाया गया। मैं रोज़ आठ दसको फांसी देता था। जान लेने और बचानेका अधिकार हमारे हाथमें है। मैं निश्चय कह सकता हूं कि, अपराधियोंमें-से एक भी न बचेगा। हरएक अपराधीको फांसीकी सज़ा दी जाती है। अपराधीको गाड़ीपर खड़ा करके, दरख्तपर बँधी हुई रस्सीसे उसका गला बांधकर नीचेसे गाड़ी हटा ली, वह झूलने लगा।"* अपने हृदयकी छिपी हिंसाको पूर्ण करके इस अंग्रेज़-ने प्रसन्नतासे यह लिखा था। फांसी देनेका अधिकार फौजी और दीवानी दोनों विभागोंके अंग्रेज़ोंको मिला था। फौजियोंने तो सत्यानाश किया ही और दीवानीवालोंने उनसे भी बढ़कर किया। जल्लादों और मुर्दाफरोशोंकी तनख्वाहें कम कर दी गई

* Martin's Indian Empire. Vol II. P. 361

थीं। मजिस्ट्रेटने सरकारको इसका यह कारण लिखा था कि, "अगर ऐसा न किया जाय तो फी आदमीकी फांसीकी क़ीमत अधिक बैठेगी ! ।" अर्थात् जल्लादोंकी तनख्वाहके साथ आदमीकी जानकी क़ीमत भी बहुत कम कर दी गई थी !

इस समय इलाहाबादमें एक बंगाली मुंसिफ थे, इनका नाम था प्यारेमोहन बन्द्योपाध्याय। इन्होंने बड़े साहसका परिचय दिया। अपने अधीन और दूसरे लोगोंको स्वयंसेवक बनाकर इन्होंने अपने स्थानकी रक्षा की, विद्रोहियोंसे लड़ाई की और आक्रमण करनेके लिये पड़ोसके गांवोंमें जाकर आग लगा दी। फिर अपनी रिपोर्ट अंग्रेज़ीमें लिखी और अपने जो सहायक थे उन सबको धन्यवाद दिया। ग़दरके बाद सरकार इनके कामसे बहुत खुश हुई, इन्हें डिप्टी मजिस्ट्रेटका पद मिला। अखबारवालोंने इनका नाम "लड़ाकू मुंसिफ" रक्खा। इस समय पश्चिमोत्तर देशमें दीवानी कचहरियोंमें अधिकांश बंगाली ही थे। बंगालियोंने किसी प्रकार सरकारका विरोध नहीं किया। वे वैसे ही राजभक्त बने रहे।*

इस प्रकार हिन्दुस्तानियोंका विध्वंस करके अंग्रेज़ोंने अपनी सभ्यताका परिचय दिया। हिन्दुस्तानी उनके समान गम्भीर गौरवसे गौरवान्वित न थे, उनके समान हिताहित ज्ञानके पारदर्शी न थे, उनके समान अस्त्र शस्त्रोंसे सज्जित भी न थे। उनमें स्वाधीन होनेकी बू हो सकती है, देशप्रेमके कारण एका-

* Ibid P. 68

ग्रता भी हो सकती है, धर्मरक्षाके लिये ऐक्य भी हो सकता है, पर इसमें सन्देह नहीं कि उन्होंने अंग्रेज़ी सभ्यताका बीज नाश कर दिया था। हिंसाकी आगमें उन्होंने यूरोपियनोंको भस्म किया. शफाखाने, स्कूल, तारघर सब जलाकर राख कर दिये थे, अंग्रेज़ स्त्रियों और बच्चोंको तलवारकी धारसे परलोक पहुँचा दिया था। वाणिज्य व्यापारके कारण जो स्थान सदा धन सम्पतिपूर्ण थे, जहाँ शान्तिकी महिमाका गुणगान होता था, सभ्यताका गौरव जिन स्थानोंपर प्रगट था, उन सबका नाश करके उन्होंने वहां निर्जन कवरिस्तान बना दिया था। पर इन सब बातोंके साथ यह भी सत्य है कि केवल भारत ही नहीं, संसारके जिस भागमें जब जब विप्लव हुआ है तब तब वहां भी यह सब बातें हुई हैं। यह तो विप्लवका अवश्यम्भावी फल है। बाइबिलके प्राचीन इतिहासमें स्त्री पुरुष और बच्चोंकी लोमहर्षण घटनाका विवरण है। सभ्यताभिमानी रोम साम्राज्यमें भी यह सब बातें होती थीं, इतिहासके पाठक यह जानते हैं। सत्रहवीं सदीमें, इंग्लैंडके राजा पहले चार्ल्सके जमानेमें, आयर्लैण्डके कैथलिक सम्प्रदायवालोंको प्रोटेस्टैंट लोगोंने जिस निर्दयतासे मारा, घर जलाये और पैशाचिक काण्ड किये उन्हें पढ़कर आज भी स्तम्भित रह जाना पड़ता है। जो देश और जातियाँ अपने आपको सभ्य कहती हैं उनमें जब विप्लवके समय यह सब बातें हो सकती हैं, निरपराध स्त्रियां और सुकुमार बच्चोंतक जब उनके निर्दयताके शिकार बनकर प्राण खोये हैं,

तब अनपढ़ सिपाहियोंकी उत्तेजना और धर्मरक्षाके जोशमें उनके हाथसे जो कुछ हुआ, वह कुछ भी विस्मयकारी न था। वे संदिग्ध और भ्रान्त थे। उनका ज्ञान अधिक न था, धीरता विवेचना द्वारा उनके हृदय शान्त न थे। अंग्रेज़ी कूट राजनीतिके मर्मको समझनेमें वे असमर्थ थे, भयानक कल्पनासे वे उन्मत्त हो गये थे। अंग्रेज़ोंकी कार्यप्रणालीको वे अपने नाशका कारण समझते थे। बहुतोंको दूसरोंने बहकाया था, बहुतसे इच्छा न होनेपर भी अपनी सम्पत्ति बचानेकी गरजसे विद्रोहियोंके साथ हुए थे, बहुतसे लूटकर अपनी दशा सुधारनेके विचारसे विद्रोहियोंसे मिले थे, कोई कोई दूसरेके दबावमें आकर आ मिले थे। जब बड़े बड़े शहरोंके सिपाही सरकारके विरुद्ध हथियार उठा रहे थे, गोरी सेना जब मौकेपर पहुंचनेमें असमर्थ थी, तब उपाय न देखकर प्रजा सिपाहियोंका साथ देती थी। उन्हें कोई नेक सलाह देनेवाला न था, कोई उद्धारकर्त्ता न था, सम्पत्ति और सम्मानरक्षाका कोई उपाय न था। दूसरा कोई उपाय न देखकर, जो कुछ सामने हो रहा था उसीमें लोग मिल गये। अन्तमें अंग्रेज़ोंके हाथसे उनका सर्वनाश हुआ। यह लोग अपने जिन राजवंशों और धन सम्पत्तियोंकी रक्षाके लिये सिपाहियोंके साथ हुए थे अन्तमें अंग्रेज़ोंके हाथसे उन राजवंशों और धन सम्पत्तियोंका समूल नाश हुआ। उनका घर बारतक जल गया, नामोनिशान भी मिट गया, वे सब अन्तमें फांसीपर लटकाये गये। अंग्रेज़ जातिने इनकी अदूरदर्शिता-

पर किसी प्रकारकी दया या मनुष्यत्वका परिचय न दिया। बूढ़े, जवान, बालक सबको उन्होंने मृत्युका ग्रास बना दिया। गांवके गांव जला दिये, जिनमें न मालूम कितने कोमल शरीर बच्चे और निरपराध स्त्रियाँ बलि हो गईं। अंग्रेज़ उस समय अभिमानसे कहते थे कि "नेटिवोंको" समूल विध्वंस करना एक बड़ा मनोहर विनोद है। उन्होंने प्रसन्नतापूर्वक इसका सुख भोगा है।* एक ग्रन्थकारने लिखा है कि जो मुर्दे रास्तोंके दरख्तोंपर झूलते थे उन्हें उतारकर गङ्गामें फेंकनेके लिये आठ गाड़ियाँ लगायी गई थीं। तीन महीनेतक रोज सुबहसे शामतक यह आठों गाड़ियाँ मुर्दे ढोकर गङ्गामें फेंकती रहीं। प्रायः ६ हजार आदमियोंको फांसी दी गई थी।† गदरके बाद इस प्रकार अंग्रेज़ोंने खूनपर खून करके अपना जी सन्तुष्ट किया, गांव जलाकर न मालूम कितने निरपराध जीते जलाये गये और कितने गोलियोंसे मारे गये, इसका कोई हिसाब ही नहीं। लोगोंके जोशका यह भयानक बदला उनसे लिया गया और राज्यपालनके नामपर राक्षसी कठोरता प्रदर्शित की गई।

इलाहाबाद विभागके गदरके सम्बन्धमें, उसी समय एक सहृदय लेखकने "कलकत्ता रिव्यू" में एक लेख लिखा था। उसके उपसंहारमें उसने लिखा था—"हर एक अंग्रेज़ केवल

---

* Kaye's Sepoy War. Vol II. P. 270

† Bholanath chandra, Travels of a Hindu. Vol II. P. 324.

स्वाधीन मनुष्य नहीं है, बल्कि स्वाधीनताका प्रचारक है। वे स्वेच्छाचारी सरकारके कर्मचारी होकर भी, यह कहकर सन्तोष करते हैं कि, सरकार पिताके समान अपनी प्रजाका पालन करती है। पर सरकार और उसके कर्मचारियोंने जो, सर्वथा निर्दोष भारतीयोंका खून बहाया, वह गंगाके पानीसे भी धुल नहीं सकता। चाहे जितना जमाना बीत जाय पर १८५७ की याद कोई भूल नहीं सकता। इस समय हजारोंके प्राण जबरदस्ती हरण किये गये। भारतवासी चारों ओरसे आक्रान्त, अपमानित और निहत हुए। इसके बदलेमें हमने भी उनपर आक्रमण किया, हमने भी उन्हें नाश किया। वे हमारे मित्र नहीं बने इसलिये हमसे भी मित्रताकी आशा करनी व्यर्थ थी। उन्होंने जैसे हमारा खून बहाया वैसे ही हमने उनके प्राण लिये। हमारी मौतसे वे खुश हुए, इसलिये हमने भी उनपर अपनी घृणा प्रगट की × × ×।"

"ईसाई धर्मावलम्बियोंको यह घृणा और हिंसा देख स्तम्भित होना पड़ता है। जो लोग अभी इंगलैंडसे आये हैं, उन्होंने जब करुणामयी देवियोंके मुंहसे यह सुना कि इस तरह कतार की कतार फांसियोंपर लटकाये जाते थे तब वे आश्चर्यसे चकित रह गये, मनुष्यत्व और सार्वजनिक धर्म हमसे विदा हो चुका। इन आदमियोंको हमने जंगली जानवरोंसे भी नीच समझा। पर हमारे जीवनका अधिक समय इन्हींमें बीता है। इन्हींके हाथ हमने भोजन किया। हमने जो कुछ किया उसके

बदलेमें यह लोग फिर हमारी हत्या न करें तो ही अच्छा है। × × × जो हमारे विरुद्ध हथियार लेकर खड़े हुए थे या हमारी तलवार, तोप और बन्दूकोंसे मारे गये थे, उनके सम्बन्धमें हमने कोई विचार नहीं किया, क्योंकि उन्होंने स्पष्ट बातोंकी तरह स्पर्द्धाके साथ मौतको अपने गले लगाया था। वे कितने वीर और साहसी थे यह केवल अन्तर्यामी परमात्मा ही जानता है। वे जयके उल्लासमें अपने अन्तिम समयकी प्रतीक्षा कर रहे थे। उनमेंसे किसीने अपने जीवनकी भिक्षा नहीं मांगी, या किसी वस्तुके बदलेमें उन्होंने जीवन नहीं चाहा। उन्होंने दूसरोंकी जान जैसे तुच्छ समझकर ली थी, वैसे ही अपनी जान देना भी वे तुच्छ समझते थे। हजारों आदमी हमारे विरुद्ध खड़े हुए थे, क्योंकि उनके लिये इसके सिवा और कोई मार्ग न था, आत्मरक्षाका और कोई मार्ग न था, आत्मरक्षाका और कोई उपाय न था, कहीं कोमलता और करुणाका विकास न था।

"हमारे शासकगण सोचें, उन्होंने अनुन्नत और असभ्य आदमियोंका शासनभार नहीं ग्रहण किया था। बहुतसे सम्पत्ति-पूर्ण नगरों और ग्रामोंमें उनका निवास था। वे कार्यमें चतुर, व्यवहारमें सभ्य, युद्धमें साहसी, मृत्युसे निर्भय और धर्मके अनुयायी थे। यह हो सकता है कि अपने विचारोंके कारण उन्होंने हमारे विरुद्ध पक्ष लिया। कारण, उनकी और हमारी धारणा एक नहीं, उनके देवता और हमारे देवता एक नहीं, वे जिस भावसे न्याय अन्यायका विचार करते हैं उस तरहसे हम

नहीं करते। इन सब आदमियोंका नाश करके इनके स्थानपर हम अंग्रेज़ोंको नहीं बसा सकते। सारे भारतवर्षको आदमियोंसे खाली करके हम उसे शान्त नहीं कर सकेंगे। हमने बहुत नीच काम किया यह स्वीकार करना होगा। परमात्माके दयामय हाथने हमारी रक्षा की और वही अब भी कर रहा है। हमारी शक्ति, विद्याबुद्धि, क्षमता और ज्ञानके रहते हुए हमें इन दुर्बल, निरीह और शान्त लोगोंपर दया करनी चाहिए।"*

उदारप्रकृति सहृदय लेखकने इलाहाबाद विभागके हत्याकाण्डके विषयमें इस प्रकार अपनी सम्मति दी थी। जब तक संसारमें न्यायका सम्मान रहेगा, दया और उदारताका परिचय मिलता रहेगा, तब तक इस लेखकके यह शब्द न भूले जायंगे। जिस समय इस प्रकार सेनापति नील इलाहाबादमें फिरसे सरकारके राज्यकी प्रतिष्ठा कर रहे थे उस समय कानपुर और लखनऊकी बात सोचकर वे चिन्तित हो रहे थे। इन दोनों स्थानोंपर उन्हें सहायक सेना भेजनेकी आवश्यकता मालूम हो रही थी, पर वे इस विषयमें जल्दी नहीं कर सकते थे। आदमियोंकी कमी न होनेपर भी सामानकी कमी थी। खाने पीनेकी चीजें यथेष्ट न थीं। इसके अलावा घोड़े और बैल भी पर्याप्त न थे। रसद पहुंचानेके लिये बैल एकत्र किये गये थे, पर वह सब विद्रोही सिपाही ले गये थे। इस प्रकार बैलगाड़ियोंकी

* Calcutta Review, Vol. XXXI. A district during a Rebellion. PP. 82-84.

कमी रही। तम्बू भी काफी न थे। मौसिमका यह हाल था कि एक दिन धूपके मारे ज़मीन तावेकी तरह जलती थी, दूसरे दिन मूसलधार पानी बरसता था। विना सामानके, ऐसी हालतमें जल्दीसे एक स्थानसे दूसरे स्थानपर पहुंच न सकते थे। इलाहावादके संग्राममें सब सम्पत्ति नाश हो गई थी, किसान भाग गये थे, व्यापारी हानियोंसे बेहद दबे जा रहे थे। इसपर अधिकारियोंकी ओरसे जो सर्वसंहारक नीतिका प्रयोग हुआ इससे सब अपने प्राण लेकर भाग गये थे। इसलिये न जल्दीसे रसद मिली और न खाद्य सामग्री।

इसके अतिरिक्त एक विपत्ति उनके मार्गमें और आई। जिस समय सेनापति नील खाद्य सामग्री एकत्र कर रहे थे, उसी समय उनकी सेनामें हैजा प्रगट हुआ। गर्मीमें रहना, पुष्टिकर भोजनकी कमी और शराबकी अधिकतासे हैजा होने लगा। एक रातमें २० गोरे सिपाही मरे। शफाखाना हैजेके बीमारोंसे भर गया। इस आकस्मिक विपत्तिके कारण सेनापति बहुत चिन्तित हुए। विना भारतवासियोंकी सहायताके और कोई मार्ग न था। बीमारोंको ले जानेके लिये डोलियां न थीं, डोलियां मिलतीं तो कहार न मिलते। जरूरी कामोंके लिये नौकरोंका मिलना कठिन हो गया। अंग्रेज़ोंके सामने आने और उनके साथ रहनेके लिये कोई भी राजी न था। चारों ओर डर फैल गया था। सबको अपने प्राणनाश की आशंका थी। इस समय एक रेलवे कर्मचारीने लिखा था—"सेनापति नीलने हम सबको